দর্শনীয় মিথিলা
DARSHNIYA MITHILA

यदि मैं संस्कृत का महान् पंडित होता या इतिहास का बहुत बड़ा विद्वान, पुरातत्त्व के प्रति आकर्षण होते हुए भी मैं कलाकार नहीं होता तो इस तरह की अन्य कृतियाँ मैं कभी नहीं दे पाता । विद्यापति की निम्नलिखित पंक्तियाँ कितनी सही हैं ?

जायते न भुवि विद्ययाऽपि या,
वेदशास्त्र विदुषं महेश्वरात् ।
चित्रगीतकविताकलाविदां,
सापि सिद्धिरुपविद्याया भवेत् ।।

महेश्वर–प्रसादात् वेदशास्त्रसे जो विद्वान को नहीं मिलता है, वह भी उपविद्या चित्र, गीत, कविता और कला की सिद्धि से प्राप्त किया जा सकता है ।

कृतिरेषा तत्त्वविदां कृतिनां पुरातत्त्वविषयान्वेषकाणां [illegible] श्रीमती [illegible] महोदयं [illegible] ।

— सुरेन्द्र झा सुमन
2/9/2000

मानचित्र

प्राचीन मूर्त्तिप्राप्ति स्थान
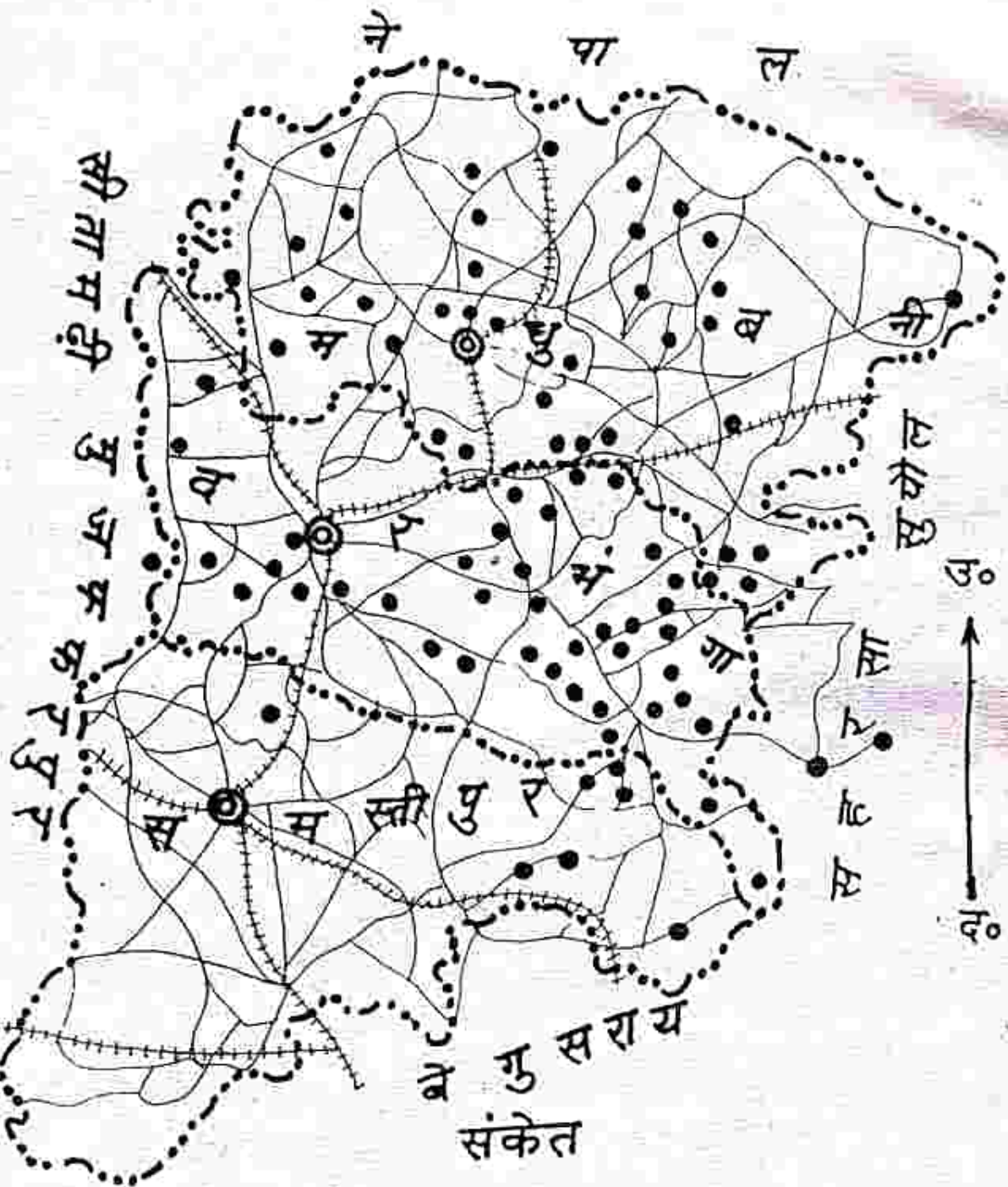
दर्शनीय मिथिला

नौ खण्ड

एस० एन० सत्यार्थी

द्वितीय संस्करण मई, 2003 ई०
3 प्रति

पुस्तक प्राप्ति–स्थान
विस्मृत मिथिला प्रकाशन
E/44, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी
लहेरियासराय, दरभंगा (बिहार)-846001
दूरभाष : (06272) 240114

शिल्प, छायांकन एवं प्रकाशन
एस० एन० 'सत्यार्थी'

कम्प्यूटर संयोजन
अपर्णा कम्प्यूटर
न्यू बिहार प्रेस
बेलवागंज, लहेरियासराय, दरभंगा-846001
दूरभाष : (06272) 240512

फोटो स्कैनिंग
'डिजीटल कम्प्यूटर्स एण्ड कम्यूनिकेशन'
जी० एन० गंज (निकट पंजाब नेशनल बैंक)
लहेरियासराय, दरभंगा-846001
दूरभाष : (06272) 241782 (नि)
e-mail : avinash5@sancharnet.in

DARSHNIYA MITHILA

S. N. SATYARTHI

साधारण संस्करण Rs. 1100/- पुस्तकालय संस्करण – Rs. 1600/-

दर्शनीय मिथिला, पुष्प नौ

विषय-सूची

दर्शनीय मिथिला के नौ पुष्प

दर्शनीय मिथिला,

विषय सूची

आमुख

दूर्वाक्षत सामग्री बनने का सौभाग्य हर किसी दूभ या उपज के दाने को प्राप्त नहीं होता । विश्वामित्र को महर्षि बनाया मिथिला की धरती ने । राम को सीता यहीं मिली । विदेह कहीं क्यों नहीं हुए । गौतम, कपिल, याज्ञयवल्क्य यहीं के थे । विश्व का पहला गणतन्त्र यहीं अंकुरित हुआ । प्राचीन मिथिला भारत का मंदिर रहा था । इसके दर्शनरूप साक्ष्य हैं, 'दर्शनीय मिथिला' ।

'दर्शनीय मिथिला' अभी तक खण्डों में निकलती रही है । यह पुस्तक इन्हीं खण्डों का संकलित रूप है जिसमें लगभग 100 स्थानों के पुरातात्त्विक इतिहास फोटोग्राफों के साथ मुद्रित हैं । जिन स्थानों का चयन हुआ है, उन स्थानों में विगत कुछ सौ वर्षों के मध्य मिट्टी के नीचे से, खण्डहरों से या जलाशयों में पत्थर की मूर्त्तियाँ मिली हैं । मिली मूर्त्तियों में 98 प्रतिशत मूर्त्तियाँ धार्मिक हैं । मिथिला पंचदेवोपासक रही है, अतः शतप्रतिशत मूर्त्तियाँ इस उपासना से सम्बन्धित देवी–देवताओं की हैं । कई मूर्त्तियों में अभिलेख भी हैं । इन मूर्त्तियों के निर्माण से सम्बन्धित जो तथ्य मिले हैं, इससे प्रमाणित होता है कि पत्थर की मूर्त्तियाँ यहाँ स्थानीय रूप से उत्कीर्ण की जाती थीं । प्राप्त मूर्त्तियाँ किसी एक काल की नहीं है और न यह परिणाम है किसी सुनियोजित योजना का । यह स्वतः और अनायास मिली है । मिली मूर्त्तियों में सर्वाधिक संख्या है कर्णाट काल की । मिथिला का यह काल 1097 ई० से 1324 या 1326 ई० तक माना जाता है । मिथिला का यह शासन प्रणाली राजतन्त्रातमक रही थी । वैदिक धर्म में कई समप्रदाय हैं । एक भी समप्रदाय ऐसा नहीं, जिनसे सम्बन्धित मूर्त्तियाँ यहाँ कर्णाट काल की नहीं हों । लेकिन वैष्णव सम्प्रदाय की मूर्त्तियाँ गणेश, विष्णु और सूर्य सर्वाधिक हैं । इसके बाद संख्या है उमा महेश्वर की । मूर्त्ति विशेषज्ञ अभी तक इन मूर्त्तियों को **पालकाल**

(आठवीं शताब्दी से दशवीं शताब्दी) और **पालशैली** की मूर्तियाँ मानते रहे हैं । मैं समझता हूँ यह सतही विचार है । ये सभी मूर्तियाँ **कर्णाट काल और मिथिला शैली** की हैं ।

कर्णाट काल की कुछ मूर्तियाँ राजा–रानी की भी मिली हैं । इस तरह की मूर्तियाँ **कोर्थ और कपिलेश्वर स्थान** में हैं । कर्णाट काल में जितने भी राजा हुए थे, सबों की अपनी–अपनी विशेषता रही थी और सबके सब लोकप्रिय प्रजापालक तथा धार्मिक प्रवृति के हुए थे । राजा–रानी की मिली मूर्तियों के मात्र शिर उपलब्ध हैं । किसी पर नाम खुदा नहीं है । इस स्थिति में इनका नामकरण करना असम्भव है । कोर्थ और कपिलेश्वर स्थान की ये मूर्तियाँ मात्र मिथिला के इतिहास की ही धरोहर नहीं, भारतीय इतिहास का एक गौरव है । इस गौरव की उपेक्षा अभी तक होती रही है । यहाँ सैकड़ों की संख्या में सिर्फ मूर्तियाँ ही नहीं मिली हैं, वृहत की संख्या में प्राचीन मंदिर अवशेष भी मिले हैं जो पत्थरों के हैं । यहाँ राज्य सम्पोषित मंदिरों के दरवाजे पत्थरों के हुआ करते थे । इस तरह के पत्थर अवशेष **कोर्थ, भीठभगवानपुर, महिषी, अन्धराठाढ़ी, रतनपुर, अन्दामा, देकुली, भच्छी, बहेड़ा और नवादा** में मिले हैं । इस तरह का मंदिर अवशेष **शाहपुर गोनौन** में और **देकुली** में एक चमत्कारिक दृश्य लेकर उपस्थित है । इन दोनों स्थानों में इन अवशेषों को पीपल का पेड़ अपने कन्धों पर उठाये सतह से करीब 5 फीट ऊपर हैं । इन भारी–भरकम शिलाओं को पेड़ इस तरह जकड़ रखा है, जिस तरह साँप अपने विशाल शिकार को कुंडली में लपेट लेता है । **अहिरैन** का मंदिर अवशेष अर्धनिर्मित है । **तिलकेश्वर स्थान, भीठभगवानपुर और देकुली** के मंदिर अवशेषों में नग्न, नारी–पुरूष मूर्तियाँ हैं । **वसुदेवा, वारी और परोरिया भरिहर** में अनगिनत मंदिर–पत्थर–अवशेष यत्रतत्र बिखरे पड़े हैं । भीठभगवानपुर एक अघोषित विशाल संग्रहालय है । यहाँ के मंदिर अवशेष की शिलाएँ सौ–सौ मन की हैं जिन पर अनेकों तरह के देवी–देवता उत्कीर्ण हैं ।

मिथिला में नदियों का जाल है । यहाँ का जीवन ही जल है । गंगा–यमुना भारत की प्रसिद्ध नदियाँ हैं । गंगा–यमुना मिथिला की प्रसिद्ध

प्राचीन देवी रही हैं । इनकी पूजा यहाँ बड़े पैमाने पर होती रही है । ये देवियाँ यहाँ स्वतन्त्र मंदिरों में पूजित थीं । इनके अवशेष **नगरडीह** और **बरसाम** में मिले हैं । मंदिरों के मुख्य द्वार पर भी ये मूर्तियाँ उत्कीर्ण होती थीं । इस तरह की मूर्तियाँ अन्धराठाढ़ी में मिली हैं । अभी और भी कितने इस तरह की मूर्तियाँ धरती के गर्भ में हैं, कुछ भी नहीं कहा जा सकता । मंदिर अवशेष उतने ही नहीं मिले हैं, जिनका मैंने नाम लिया है । एक देकुली लहेरियासराय के निकट भी है । इसे **देवकली** कहा जाता है । इस देवकली के निकट ही है होरलपट्टी । इन दोनों स्थानों में भी मंदिर अवशेष मिले हैं । **नवादा** और **दामोदरपुर** में मृद्‌भाण्ड मिले हैं । सिरुआ में 40 किलो चाँदी के **पंचमार्का** सिक्के मिले थे ।

मूर्त्ति अभिलेख, भीठभगवानपुर, अन्धराठाढ़ी, कोर्थ, लदहो, पोखराम, बिरौल, भैरव बलिया, भच्छी, हाबीडीह और वसुदेवा में मिले हैं । कुछ ऐसे भी प्रमाण मिले हैं, जिससे पता चलता है, यहाँ मूर्तिकला की शिक्षा का उत्तम प्रबन्ध था । मूर्ति निर्माण से पूर्व आज की तरह ही पहले **प्रोटोटाइप** (नमूना) मूर्ति तैयार की जाती थी । इस तरह की मूर्तियाँ भच्छी और गाण्डीवेशर स्थान (शिवनगर) में मिली हैं । यही प्रक्रिया वास्तुकला में भी अपनाई जाती थी । मंदिर का एक प्रोटोटाइप उच्चैठ में उपलब्ध है । एक विष्णुमूर्त्ति अधूरी उत्कीर्ण है कनहई नामक गाँव में । पुरातात्त्विक उपलब्धि में मिथिला की यह स्थिति तब है जबकि मूल्यवान वस्तुएँ प्रकाश में आने से पूर्व ही नष्ट कर दी जाती हैं और कुछ तो बगैर डकार के ही पचा ली जाती हैं ।

यहाँ जो भी पुरातात्त्विक वस्तुएँ, मूर्त्ति, मंदिर अवशेष, मूर्त्तिअभिलेख, शिलालेख, मृदभाण्ड, सिक्के आदि मिले है– किसी एक स्थान में या एक ही काल में नहीं मिथिला के इतिहास की यह अमूल्य धरोहर सैकड़ों वर्षों की देन है । ऐसा होते हुए भी मिथिला के इतिहास को अभी तक इससे कुछ भी लाभ नहीं मिला है । लाभ नहीं मिलने के पीछे इसके महत्त्व से अनभिज्ञ होना रहा है । इससे लाभ उठाने का प्रयास कभी हुआ ही नहीं । ऐतिहासिक लाभ तो दूर, यदि किसी ने आध्यात्मिक लाभ की चर्चा भी की है तो उन्हें मूर्त्ति की ही

पहिचान नहीं । आध्यात्मिक महत्त्व के अन्तर्गत मूर्त्ति निर्माण में मिथिला की परिकल्पना विशिष्ट थी । इसका अपना शिल्पशास्त्र था जो अब अनुपलब्ध है । आज जिन मूर्त्तियों के दर्शन हमें हो रहे हैं, वह पंडा और पुजारियों के कारण ही हो रहे हैं– प्राचीन मूर्त्तियाँ मिलती रहीं, पण्डा–पुजारी इन्हें पूजागृह पहुँचाते रहे । उन्हें मूर्त्ति की पहिचान तो थी नहीं, कुछ भी नाम रखकर अपनी दुकानदारी प्रारम्भ कर दी । इन मूर्त्तियों का यही नाम आज भी प्रचलित है । महिषी (सहरसा) में बौद्धधर्म से सम्बन्धित तारा की मूर्त्ति को उग्रतारा या नील सरस्वती कहा गया । कपिलेश्वर स्थान में राजा की मूर्त्ति को भगवान विष्णु मानकर पूजा होती है । तारालाही में भगवान शंकर (नटराज) भगवती के नाम से और उच्चैठ में देवी पार्वती छिन्नमस्ता के नाम से पूजी जाती हैं । बनगाँव की देवी वैष्णवी (भगवती स्थान) का पूजा विधान छागल के रक्त से प्रारम्भ होता है । हर कहीं प्राचीन मूर्त्तियाँ आवृत (वस्त्र, फूल या सिन्दूर से ढकी) रहती हैं । दूर–दराज कस्बे की बात तो दूर, लहेरियासराय शहर के मध्य एक गाँव है **कबिलपुर** । यहाँ है एक भगवती स्थान । यहाँ प्रतिदिन आबाल–वृद्ध सैकड़ों लोग पूजा करने पहुँचते हैं, लेकिन आज तक किसी ने देवी की मूर्त्ति को मूर्त्तिरूप में नहीं देखा है । इस तरह की अन्धपूजा यहाँ आम है । मूर्त्ति हर समय वस्त्र से ढकी रहती है । किसी में इतना साहस ही कहाँ, संरक्षक से मूर्त्ति देखने का आग्रह कर सके ? मिथिला का एक प्रसिद्ध गाँव (कभी प्रसिद्ध रहा था) है कोइलख । यहाँ भी देवी मंदिर है । इस मंदिर में वस्त्र–आवृत एक पोटली नजर आती है, जिसे **कोकिलाक्षी** कहा जाता है । मैं नहीं जानता यह नाम किस शास्त्र–पुराण या शिल्पशास्त्र से लिया गया है ? हर तरह के प्रयास के बाद भी यह मूर्त्ति मुझे देखने को नहीं मिली । पुरातात्त्विक अकूत भंडार होते हुए भी मिथिला को न तो अभी तक इससे आध्यात्मिक लाभ मिले हैं और न पुरातात्त्विक । ऐसा नहीं मिलने का एक प्रमुख कारण है, मूर्त्तियों का आवृत होना । यदि हम इससे पुरातात्त्विक लाभ उठाना चाहते हैं, मूर्त्ति, मूर्त्तिरूप में प्रदर्शित होना आवश्यक है ।

वर्षों से मिथिलावासी केन्द्रीय सरकार से दो मांग करते रहे हैं, मैथिली
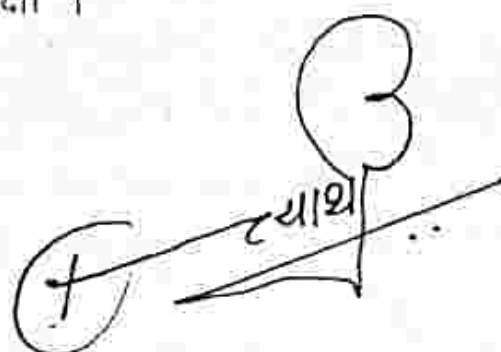
भाषा को **अष्टम सूची** में स्थान और मिथिला को पृथक राज्य घोषित करना । मिथिला का इतिहास जनकवंश से आरम्भ होता है जब यह स्वतन्त्र राज्य रहा था । जनक काल का इसका गौरव जगजाहिर है । विश्व का प्रथम गणतन्त्र **वज्जिमहासंघ** था, मिथिला इसका प्रथम घटक थी । कर्णाटकाल में मिथिला का चहुमुखी विकास हुआ, जिनके साक्षी हैं, कर्णाटकालीन सैंकड़ों प्राचीन पाषाण प्रतिमायें । मेरा अन्वेषण इस मांग का एक सशक्त प्रमाण है । इसके लिये मेरी पुस्तक– **मिथिला की प्राचीन देवी–देवताएँ** प्रमाण रूप प्रस्तुत की जा सकती हैं । मैथिली भाषा अत्यन्त प्राचीन है । इसकी अपनी लिपि रही है । इसे प्रमाणित करती है मेरी पुस्तक **मिथिलाक्षर उद्भव और विकास** । यह पुस्तक प्राचीन मूर्त्तिअभिलेख और कुछ प्राचीन पाण्डुलिपि पर आधारित है । मुझे खुशी है, यह पुस्तक भाषा की मांग के लिये केन्द्रीय सरकार के समक्ष प्रमाण के रूप में प्रस्तुत की गई हैं । इसी तरह यदि **दर्शनीय मिथिला,** मिथिला राज्य की मांग के औचित्य–रूप में प्रस्तुत की जाय तो और किसी भी प्रमाण की आवश्यकता नहीं । प्राचीन मिथिला के चिन्तन से सैकड़ों वर्षो तक भारत की सांस्कृतिक एकता और सभ्यता का विकास प्रभावित होता रहा था । यह पुस्तक इसका दर्शन है । इस पुस्तक का एक–एक लेख, इसके एक–एक प्रमाण हैं और इस तरह के सौ के लगभग पुरातात्त्विक महत्त्वपूर्ण स्थानों का सर्वेक्षण इस में संकलित है । मुझे विश्वास है आज नहीं तो कल मिथिला वासी इस विषय का महत्त्व समझेगें और इससे पुरातात्त्विक लाभ उठाने का प्रयास करेगें । सर्वेक्षण जिन स्थानों के हुए हैं, मानचित्र एवं सूची हैं । यही कार्यक्रम मेरा सम्पूर्ण मिथिला का है । आगे ईश्वरेक्षा ।

E/44, हाउसिंग बोर्ड कोलनी
लहेरियासराय, दरभंगा
जेष्ठ, 30 मई, 2003 ई०

सत्यार्थी

पुरातात्विक
एवं
आध्यात्मिक

DARSHNIYA MITHILA

प्रथम पुष्प

सत्यनारायण झा 'सत्यार्थी'

कोर्थ

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्व–दक्षिण की ओर करीव 45 कि0 मी0 दूर ब्राह्मण बहुल यह जनपद 87 हजार बीघे के रकबा में फैला हुआ है । खण्डबला कुल के प्रथम राजा थे महेश ठाकुर । इन्हें अकवर बादशाह से दानस्वरूप मिथिला राज्य 1556 ई0 में मिला था । महेश ठाकुर को अकबर बादशाह से मिला मिथिला राज्य की सीमा जो उस समय रही थी, दानपत्र में इस प्रकार है– **अज कोष ता गोस व अज गङ्ग. ता सङ्ग.।** इस खण्डवला वंश के ग्यारहवें राजा थे – राजा नरेन्द्र सिंह । इन्हें कोई संतान नहीं थी और इनकी रानी थीं– महारानी पद्मावती जिनकी मिलकियत (अठगामा) कोर्थु, बघाँत, महिनाम, हाबी, अन्धराठाढ़ी, महिसी, रामपुर, भतखोरा और हाटी थी । इनकी मृत्यु के बाद यह मिलकियत इनके कर्त्ता पुत्र महाराजा प्रताप सिंह को मिली । मैथिल ब्राह्मण का 168 मूल और 19 गोत्र रहा है । इनमें से कोर्थ मूल के ब्राह्मणों का गोत्र कौण्डिल्य रहा था जो अब लुप्तप्राय है । इस समय इस गाँव में 75 मूल के ब्राह्मण हैं, लेकिन सम्पूर्ण मिथिला में कोर्थ या कोर्थु मूल का ब्राह्मण कहीं नहीं है । 1324 ई0 के मुसलमानी आक्रमण ने इस गाँव को बिल्कुल ही खण्डहर में बदल दिया था । इस समय के वासी, इस गाँव के वे लोग हैं जो चौदहवीं शताब्दी के अन्त में यहाँ बसना प्रारम्भ किये थे ।

प्राचीन पुरातात्विक अवशेष जो कोर्थ और इसके आस–पास के गाँव– **पूर्व कसरर, बोरबा, नारी, कुमई, महुआर, कनहई, आसी,**

भदौन, दक्षिण कसरर, रोहार, तपसी, सोनहद, शिवनगर, दाथ, हरसिंहपुर, नवानगर, नभरपट्टी आदि में बिखरा पड़ा है । यह अवशेष इस क्षेत्र को प्राचीन मिथिला का महत्त्वपूर्ण स्थान साबित करता है । जिस 87 हजार बीघा रकबा की चर्चा ऊपर की गई है, वह कोर्थ पंचायत का है । इस रकबा के अन्दर 208 तालाबें, दो प्राचीन नदी के अवशेष, अनेकों खण्डहर, यथा– कोर्थ के मूल निवास–स्थान के अतिरिक्त **तपशी, बड़की भीड़ी, छोटकी भीड़ी, रबाही (खुदा का स्थान) सोनहद, शिवनगर, कल्याणों, खेरहन, गोढ़ियारी, छोटी इटगढ़िया, बड़ी इटगढ़िया, गोसाउनिक स्थान, तिलकेश्वर स्थान, बसाढ़, बोरबा, नारी** आदि–आदि हैं । इनमें से **खेरहन** एक किला जैसा स्थान था, जहाँ से **एक सुरंग** गोसाउनिक स्थान (करीब 2 कि0 मी0) तक पाया गया था । **पारसमणि महादेव** स्थान के निकट एक **अष्टकोण कुआँ** में अनेकों मानव कंकाल मिला था । इसी तरह गोसाउनिक स्थान से दक्षिण–पश्चिम स्थान के डीह में कंकाल मिलता रहा है । **बसाढ़** नामक स्थान सैकड़ों एकड़ में फैला हुआा है जहाँ कुछ दशक पूर्व तक विशाल आकार के ईंटों से बना अनेकों चबूतरे उपलब्ध थे । विशाल तालाबों के नाम हैं – **महादेई, गुणसागर, गोसाईं पोखरि, सुरसागर** आदि–आदि । खेरहन जंगल जिसे किला का अवशेष समझा जाता है, इसके निकट के चौर का नाम है, **बुद्ध–चौर** और **गोढ़ियारी** के निकट का चौर है– **साकम** । साकम की मिट्टी कोयला जैसी काली है और गोंद जैसी लसीली । यह सूखने पर सिमेंट को भी मात करती है ।

दरभंगा जिला और मधुबनी जिला के महत्त्वपूर्ण खण्डहरों में प्रथम स्थान बलिराजगढ़ का है और इसके बाद समतुल्य स्थान है– कोर्थ, भीठभगवानपुर और अन्धराठाढ़ी । इनमें से अन्धराठाढ़ी को मैं बलिराजगढ़ का ही अंग मानता हूँ । इस तरह कोर्थ और भीठभगवानपुर पुरातात्विक गतिविधियों से अभी तक वंचित रहा है । लेकिन इन दोनों स्थानों की उपलब्धि ऐसी हैं जो मिलकर अन्य सभी स्थानों की उपलब्धि के समतुल्य

हैं । प्राचीन मिथिला अपने चिन्तन, मनन और अनुशीलन के लिये प्रसिद्ध रही है और धर्म इसका प्रधान अंग रहा है । धर्म के अन्तर्गत मूर्त्ति का स्थान सर्वोपरि है, विशेषकर सर्व साधारण के लिये । हमारे मनीषियों ने मूर्त्ति के लिये पत्थर का चुनाव बहुत सोच–समझ कर किया था । पत्थर की मूर्त्तियाँ मात्र मूर्त्ति ही नहीं होती हैं और इसका महत्त्व तब और अधिक बढ़ जाता है, जब यह प्राचीन हो । मिथिला की उपलब्ध प्राचीन मूर्त्तियाँ शतप्रतिशत कसौटी पत्थर की हैं । ये मूर्त्तियाँ धार्मिक तो हैं ही साथ ही इनके शिल्प–संयोजन और विषय वस्तु के विस्तृत अध्ययन से पता चलता है कि धर्म के साथ ही साथ इन मूर्त्तियों में सामाजिक और राजनीतिक इतिहास भी अंकित है । यह ऐतिहासिक विवरण अनायास ही अंकित नहीं हैं । यह अंकन और चुनाव हमारे मनीषियों के सतत अध्ययन, मनन और चिन्तन का ही प्रतिफल है जो इतिहास के रूप में अमिट रेखा बनकर पत्थर पर उभरी है । यदि मूर्त्ति में अभिलेख भी हो तो वह पत्थर या पत्थर टुकड़ा मात्र मूर्ति या पत्थर ही नहीं रहकर अमूल्य हीरा बन जाता है और मिथिला में इस प्रकार के अनेकों हीरें, हैं जिनकी कीमत कोहेनूर से भी अधिक है ।

कोर्थ में कई काल और शैलियों की मूर्त्तियाँ मिली हैं । 14वीं शताब्दी के बाद जब यहाँ लोग बसना प्रारम्भ किया तो कई तरह के साधारण खुदाई में ये मूर्तियाँ समय–समय पर मिलती रहीं । इनमें से कुछ तो रक्षित हैं और कुछ अरक्षित । लेकिन सबके सब किसी न किसी देवस्थान अथवा व्यक्ति विशेष के अधिकार में हैं । गणेश की एक छोटी मूर्त्ति रबाही नामक खण्डहर में मिली थी और **गोसाउनिक स्थान** की मूर्त्तियाँ **गोसाई–पोखरि** नामक तालाब में । इसी तरह अष्टभुज गणेश **पारसमणि** महादेव के सामने के तालाब, दह में और मूर्त्ति का दो शिरो भाग, गाँव के ही एक तालाब, जो पछवारी टोले में पश्चिमोत्तर दिशा में हैं, उसी में खुदाई के समय मिली । कई मूर्त्तित शिला–स्तम्भ भी हैं जो गोसाउनिक स्थान में हैं । ये शिला–स्तम्भ प्राचीन मंदिर के हैं । प्राचीन मंदिर से सम्बन्धित एक
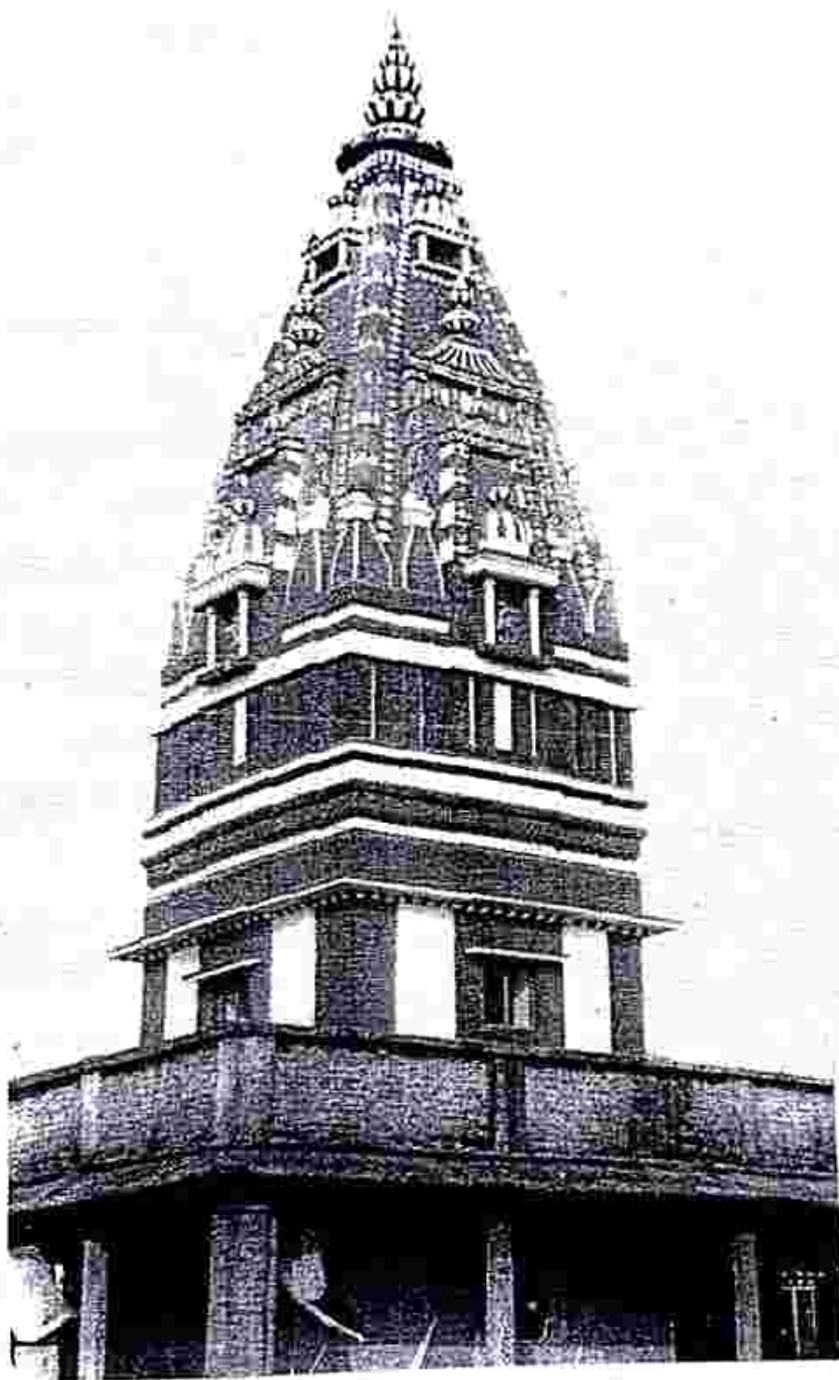
1. मंदिर, गोसाउनिक स्थान (कोर्थ)

2. अष्टभुज गणेश (कोर्थ)

शिलालेख भी था जो अब गाँव वालों की आज्ञानता के कारण नष्टप्राय है । बड़ी ईटगढ़िया की खुदाई के समय प्राचीन देव–स्थान की नींव मिली थी और छोटी ईटगढ़िया में अनायास ही किसी मूर्ति की अर्धनिर्मित हथेली जो वरदमुद्रा में है । एक मूर्त्ति के शिरोभाग में और भगवान विष्णु के पाँव के नीचे अभिलेख है जो अभी तक ठीक से पढ़ा नहीं जा सका है । इस गाँव के पूवारीटोला में एक व्यक्ति के घर में मिथिलाक्षर में लिखित एक **पाण्डुलिपि** भी मैंने देखी है, जो रघुवंश की पाण्डुलिपि कही जाती हैं । समय–समय पर यहाँ कौड़ी से भरा वर्त्तन और कई प्रकार की मुद्रा भी मिलती रही हैं जो प्रकाश में आने से पूर्व ही नष्ट कर दी जाती हैं । यहाँ **बेहड्डी** नामक खण्डहर जो गुणसायर तालाब से पूरब है– बहुत प्रसिद्ध रहा है । कौड़ी भरा वर्त्तन इसी खण्डहर पर तब मिला था जब एक प्राचीन पीपल का पेड़ सड़गल कर समाप्त हो गया । इसकी जड़ खोदने पर ही यह वर्त्तन मिला था । **खेरहन** नामक खण्डहर जिसे प्राचीन किला का अवशेष माना जाता है, चारों ओर से जलाशयों के अवशेष से घिरा है । यहाँ समय–समय पर कई लोगों को खुदाई में मुद्राएँ मिलती रही हैं, लेकिन यह बात प्रकाश में तब आती है जब यह नष्ट हो चुका होता है । **महादेई** नामक विशाल **तालाब** के पास ही है **बसाढ़** नामक प्राचीन खण्डहर । यहाँ से **खेरहन** तक स्थान–स्थान पर नदी की तरह गड्ढा जो गाँव के मध्य से गुजरा है, प्राचीन नदी के अवशेष जैसा है । इसकी लम्बाई करीब एक कि0 मी0 होगी ।

इस गाँव के पुरातात्विक अवशेष की यह स्थिति तो तब है जबकि 1942 ई0 में (निलहा साहेब) एक बैलगाड़ी प्राचीन मूर्तियाँ और स्तम्भ यहाँ से उठाकर एक अंग्रेज बिरौल ले गया । कामेश्वरसिंह संग्रहालय, दरभंगा में प्रदर्शित एक ध्वज–स्तम्भ इसी निलहा साहेब के आवास पर पाया गया था जो कोर्थ का ही है ।

नारी नामक एक गाँव जो कभी कोर्थ का ही अंग रहा था आज एक मुसलिम बहुल गाँव है । इस गाँव के पश्चिम एक प्राचीन तालाब

के दक्षिणी भिण्डे को कर्णाट कालीन धर्माधिकारी वर्धमान का निवास स्थान माना जाता है । वर्धमान के सम्बन्ध में पं0 परमेश्वर झा 'मिथिलातत्त्वविमर्श' में लिखते हैं कि ये कर्णाट वंशीय शासक गंगदेव के समकालीन ही नहीं बल्कि इनकी सभा के धर्माधिकारी भी रहे थे । इन्होने न्याय विषयक पुस्तक–**दण्डविवेक** और **स्मृति विवेक** तथा **शान्तिपौष्टिक विवेक** पुस्तक की रचना के अतिरिक्त और भी कई पुस्तके लिखी थीं । आसी (महुआर) गाँव में **मठाही तालाब** के यज्ञ में **तड़ागामृतलता** नामक ग्रन्थ की रचना भी इन्होने ही की थी । इनके पिता का नाम भवेश और माता का नाम गौरी था । ये **नारी–भदौन** के रहने वाले थे । जिस तालाब का इन्होंने यज्ञ किया उसके प्रांगण में एक विष्णु मंदिर और एक गरूड़–स्तम्भ भी था । एक दूसरे वर्धमान उपाध्याय बाद में हुए जिनके पिता का नाम था जगद्गुरू महामहो0 गंगेश और इन्होंने **न्यायचिन्तामणि** की रचना की थी । उपरोक्त स्तम्भ में एक श्लोक उत्कीर्ण है —

''जातोवंशे बिल्वपंचाभिधाने धर्माध्यक्षोवर्धमानो भवेशात् ।
देवस्याग्रे देवयष्टिध्वजाग्रा रूढ़ंकृत्वाऽस्थापयद्वैनतेयम् ।।''

उच्च स्तर का यह नारी गाँव का वास स्थान सैकड़ों एकड़ में फैला हुआ है । नारी गाँव से उत्तर है बोरबा नामक एक गाँव जो पुरातात्विक दृष्ट से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और यह कोर्थ का ही एक टोला है । इसके सम्बन्ध में आगे चर्चा हुई है और कई फोटोग्राफ भी प्रस्तुत किये गये हैं ।

सहायक पुस्तकें :–

1. मिथिला की पौराणिक मूर्तिकला (भाग – 1) – सत्यार्थी
2. मिथिलातत्त्व विमर्श – पंडित परमेश्वर झा
3. मैथिल साहित्यक इतिहास – डॉ0 श्री दुर्गानाथ झा 'श्रीश'
4. मिथिलाक इतिहास – डॉ0 उपेन्द्र ठाकुर

३. लघु गणेश (कोर्थ)
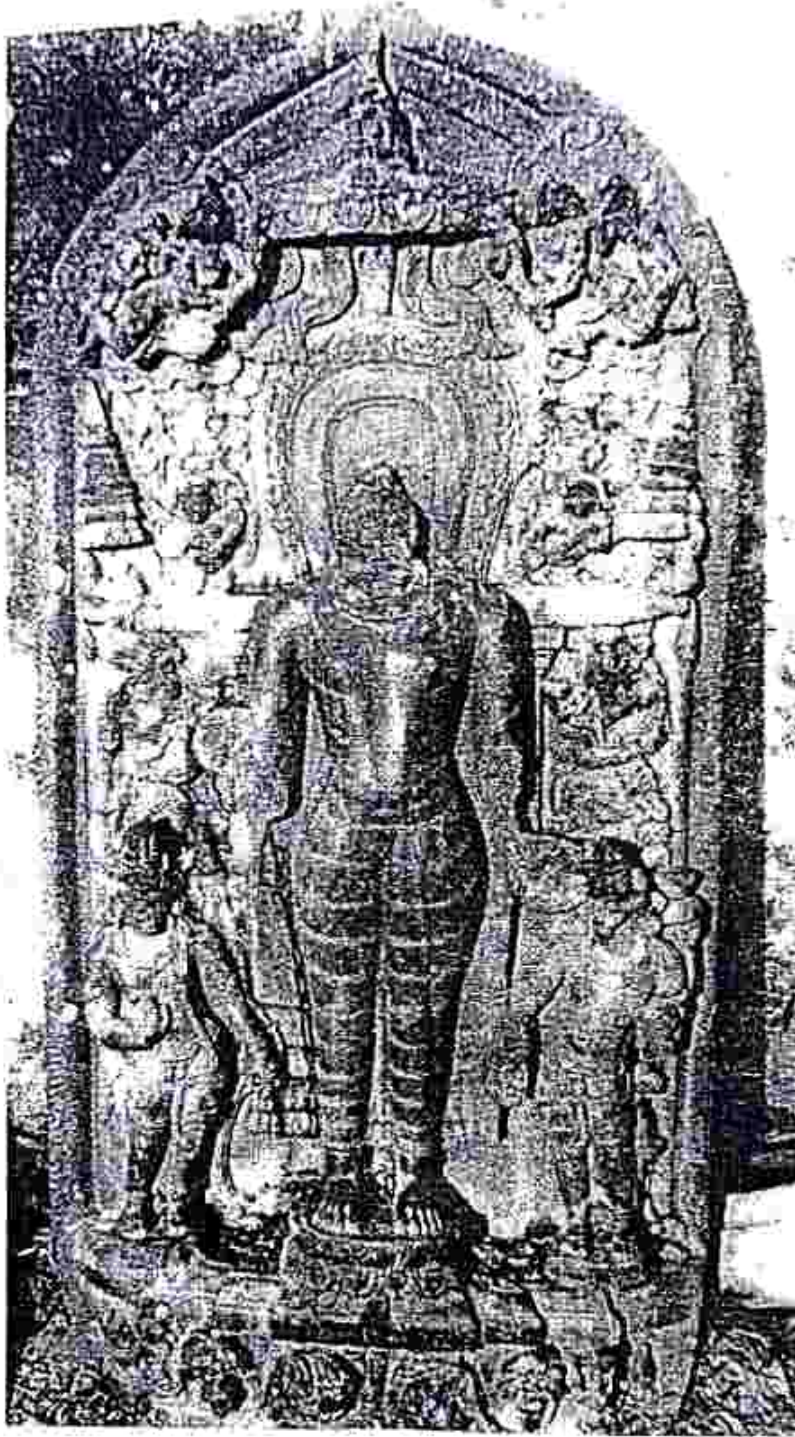
4. भगवान विष्णु (कोर्थ)

5. गजलक्ष्मी (कोर्थ)
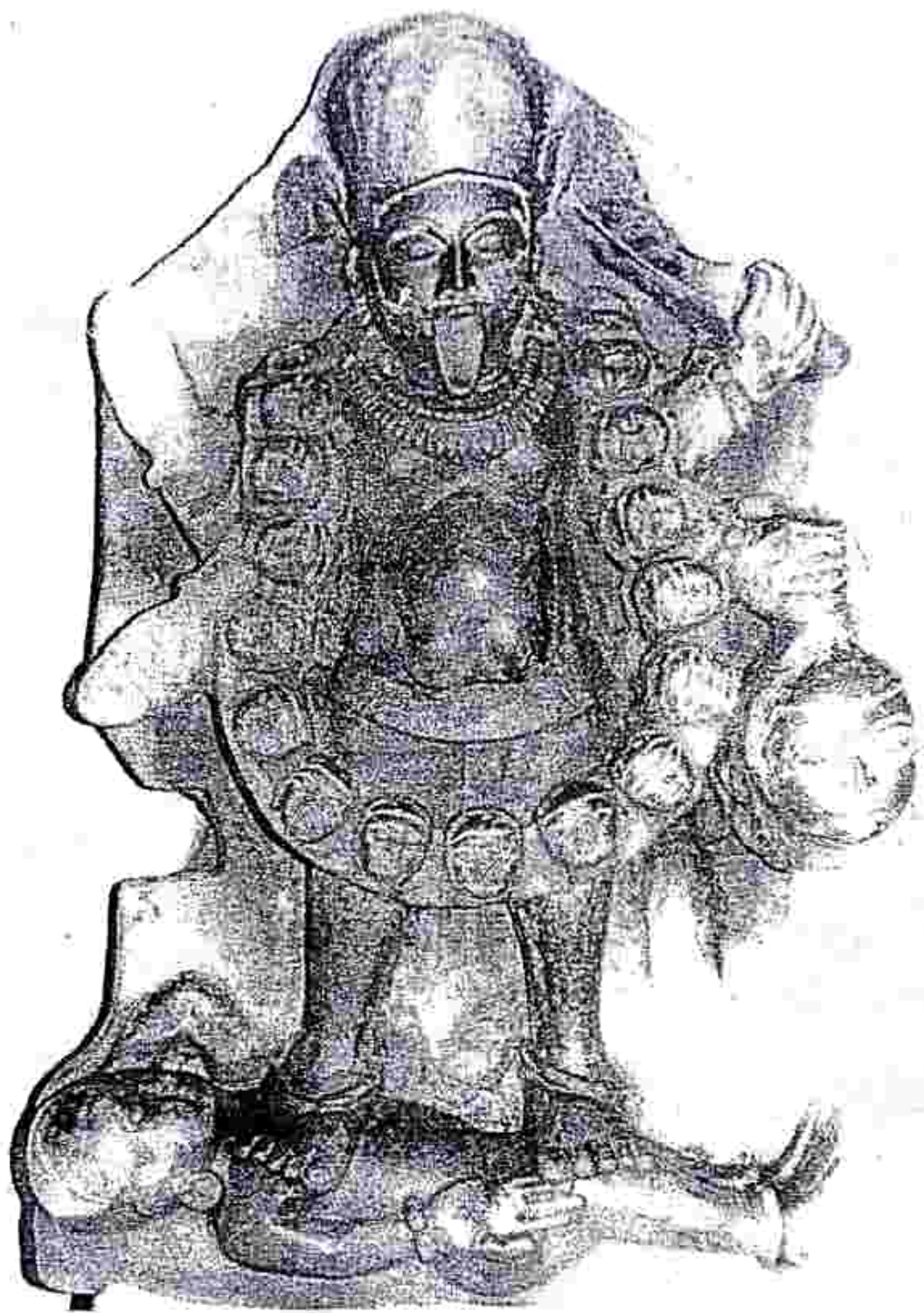
6. देवी काली (कोर्थ)
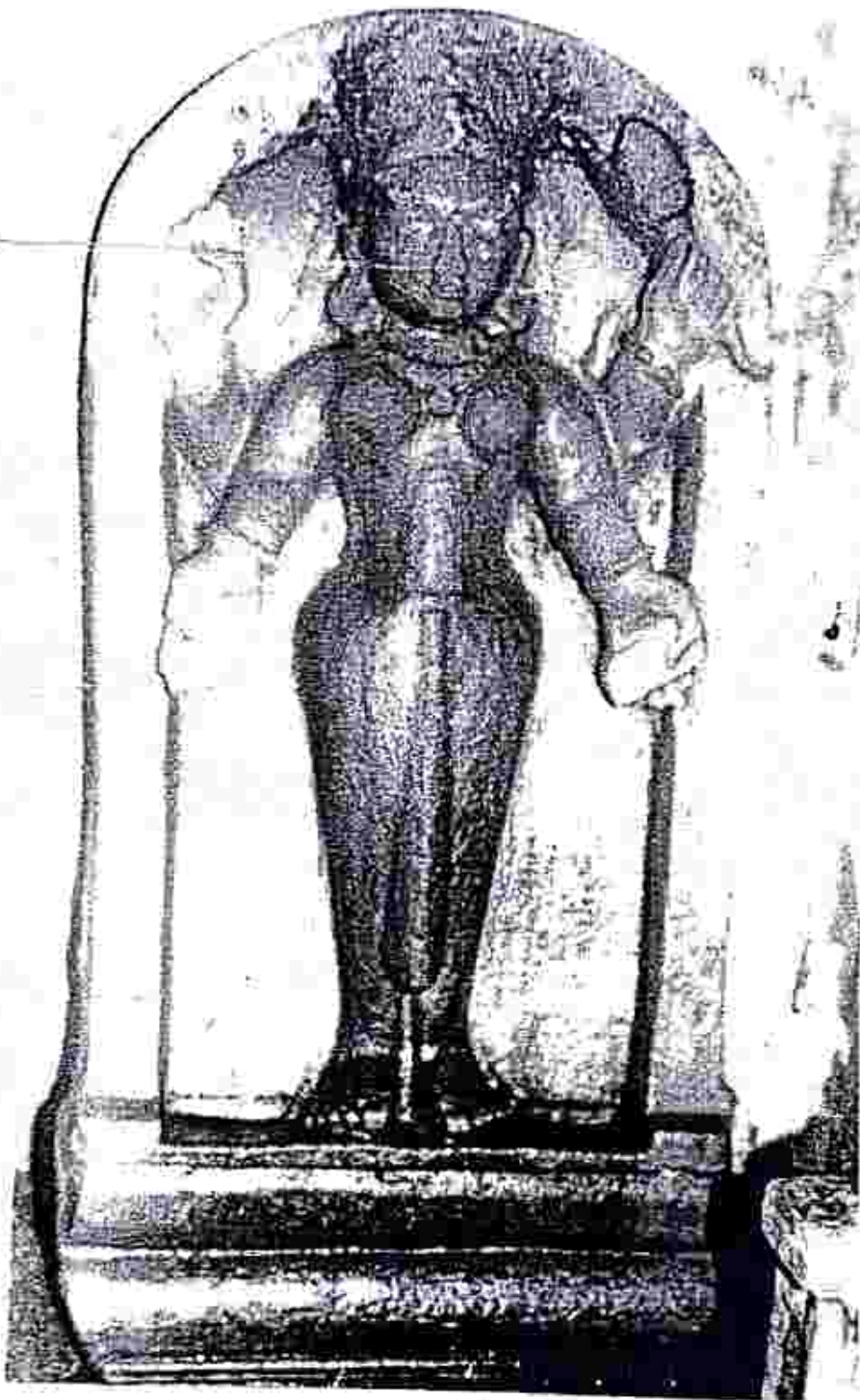
7. भुवनेश्वरी (कोर्थ)
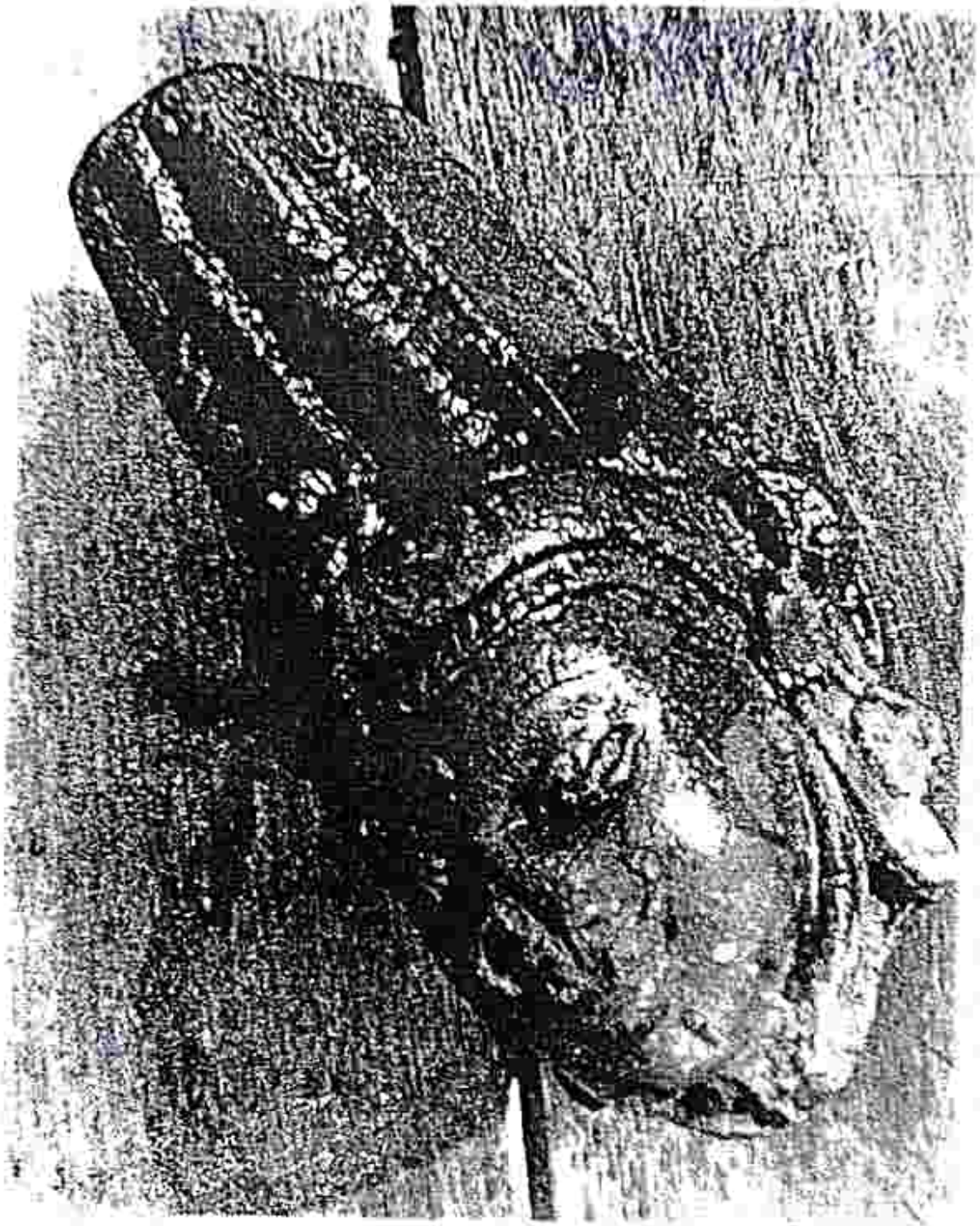
८. पुरुष शिरोभाग (कोर्थ)
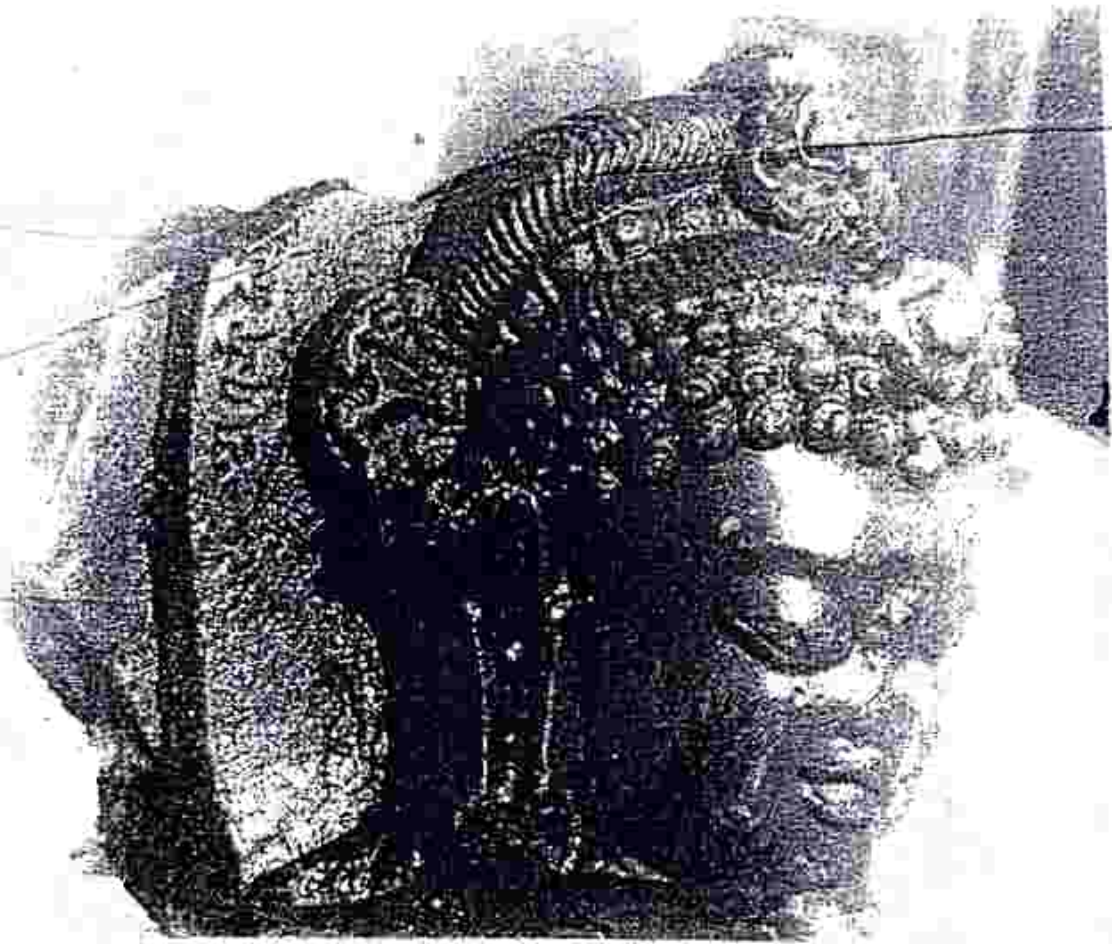
9. भगवान बुद्ध या नारी शिरोभाग (कोर्थ)
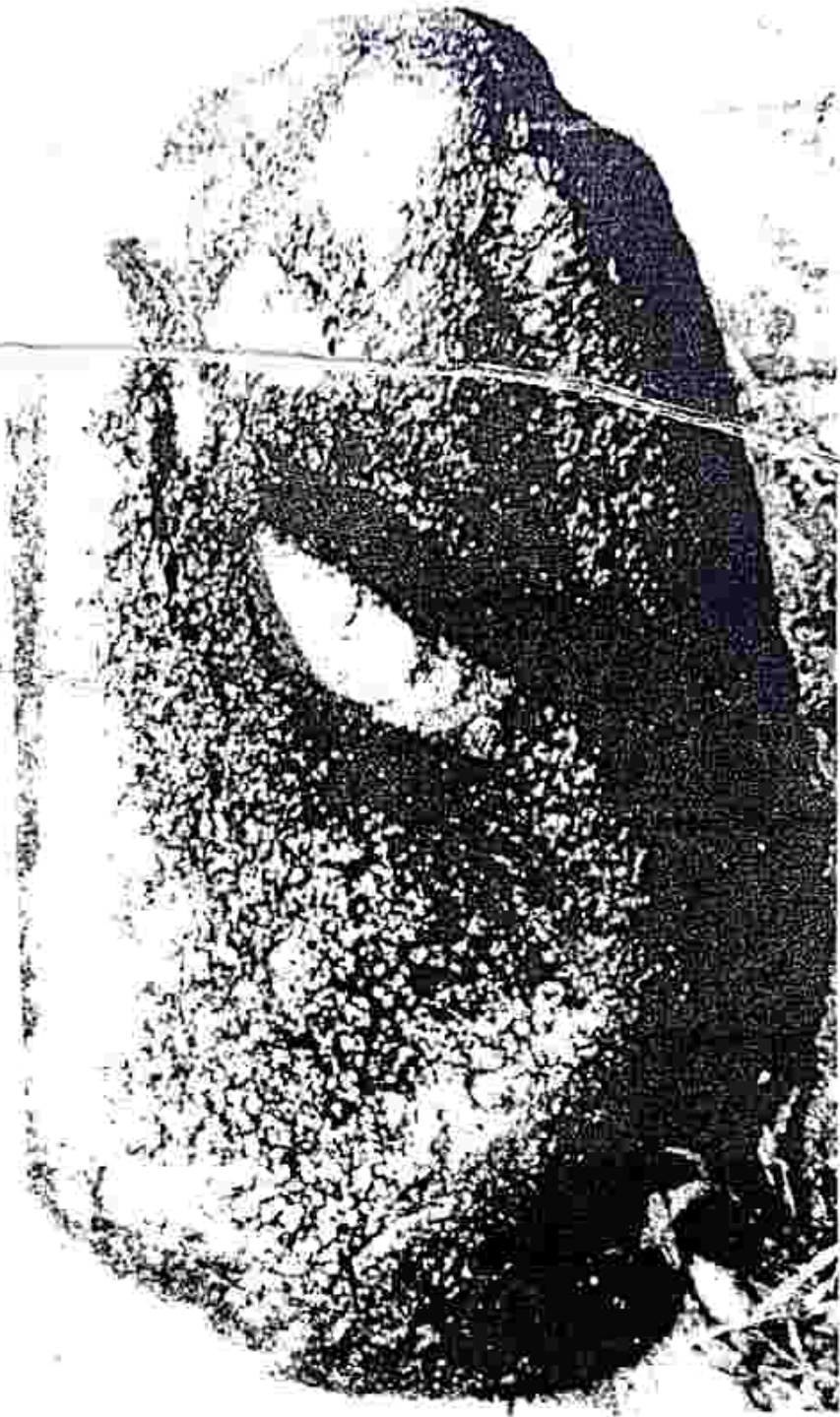
10. अर्धनिर्मित हथेली (कोर्थ)

चौकठ स्तम्भ अंश (कोर्थ)

11. अभिलेख, भगवान विष्णु (कोर्थ)
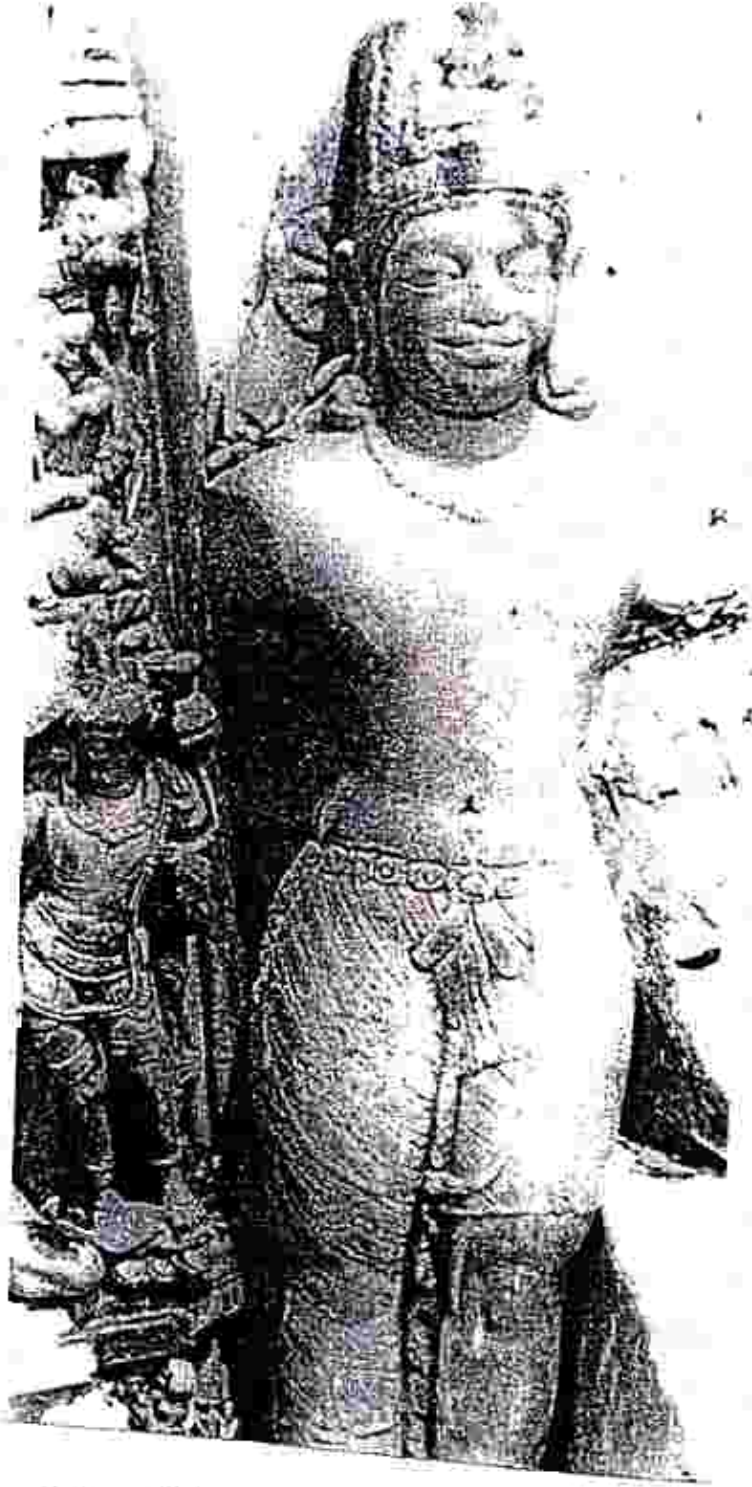
12. कथित इन्द्र या विदूषक (कोर्थ)

13. ध्वज स्तम्भ अंश (कोर्थ)

बोरबा

कोर्थ शीर्षक के अन्तर्गत बोरबा का भी नाम लिया गया है । कोर्थ पंचायत का ही एक टोला है बोरबा । यह गाँव कोर्थ जनपद से करीब एक कि० मी० पूरब, यादव और लोहार जाति के करीब 50 घरों का एक टोला है । यहाँ प्रमुख दो तालाब हैं– गाँव से पूर्वोत्तर की ओर सुरबे तालाब और एक तालाब गाँव के दक्षिण-पश्चिम में प्राचीन खण्डहर के पास । यह खण्डहर भिण्ड के रूप में इस तालाब के बिल्कुल सटे पश्चिम की ओर है । तालाब के पश्चिमी भिण्डे पर एक नवीन मंदिर है । इस मंदिर में कई प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं के खण्डित अंश के साथ ही एक लक्ष्मीनारायण (विष्णु) की मूर्त्ति भी देखने को मिलती हैं । मूर्त्ति अत्यन्त प्राचीन है, क्योंकि इसका शिल्प बहुत विकसित नहीं है और नारी-मूर्त्ति को भगवा (कोपीन) पहनाया गया हैं । गुप्तकाल से पूर्व की यह मूर्त्तियाँ लगती हैं ।

खेत सींचने के क्रम में नाली खोदते समय यह मूर्त्ति यहाँ स्थित खण्डहर के पास ही करीब 90 वर्ष पूर्व मिली थी, जब कि खण्डित मूर्त्तियों का अंश इसी तालाब में कई दशक पूर्व नवीकरण के समय मिला। वर्ष 1997 ई० में इसी खण्डहर के दक्षिणी किनारे, गड्ढा खोदने के समय दो रंगों के कई पत्थर मिलें । काले (कसौटी) और हरे रंग के ये पत्थर लगते तो हैं **जीवाश्म** जैसे पर इन पत्थरों पर जो चिह्न अंकित हैं, वे कुछ और कहते हैं । गीली मिट्टी की लुगदी अगर घास–फूस पर रख दी जाय तो मिट्टी सूखने के बाद जो चिह्न (स्ट्रकचर) लुगदी पर उभड़ आता है, ठीक इसी प्रकार का चिह्न कई पत्थरों पर अंकित हैं । मेरा अनुमान है कि यहाँ

कभी कृत्रिम पत्थर बनाया जाता रहा था । कोर्थ जनपद में भी एक साधारण खुदाई के अन्तर्गत बसबरिया गोविन्दझा को इसी प्रकार का एक बहुत बड़े पत्थर का अनगढ़ गोला कई दशक पूर्व मिला था । कोर्थ शीर्षक के अन्तर्गत मैनें साकम चौर की और इस चौर के मिट्टी की विशेष रूप से चर्चा की है । यह स्थान बोरबा के इस खण्डहर से बिल्कुल ही निकट है । सम्भावना तो यह भी है कि इसी चौर की मिट्टी से यहाँ का काला पत्थर (कसौटी पत्थर) बना हो । लेकिन जब तक इन पत्थरों का वैज्ञानिक परीक्षण नहीं हो जाता, कुछ भी कहना या विश्वास कर लेना कठिन है । मिथिला में कसौटी पत्थर की पहाड़ या पहाड़ियाँ नहीं हैं, इस अभाव के होते हुए भी यहाँ जिस अनुपात में काले पत्थर की मूर्तियाँ मिली हैं और मिल रही हैं, इससे कृत्रिम पत्थर के अनुमान को थोड़ा बल मिलता है । जब **अन्दौली** में मिले **'ओप-अवशेष'** का मिलान इस अवशेष के साथ जोड़ा जाता है तो यह विश्वास होना स्वभाविक है । अन्दौली जनपद यहाँ से करीब 10 कि0 मी0 उत्तर एक कसबा है । यहाँ गाँव के उत्तर एक प्राचीन तालाब के उत्तरी भिण्डे पर इस 'ओप-अवशेष का दर्शन किया जा सकता है ।
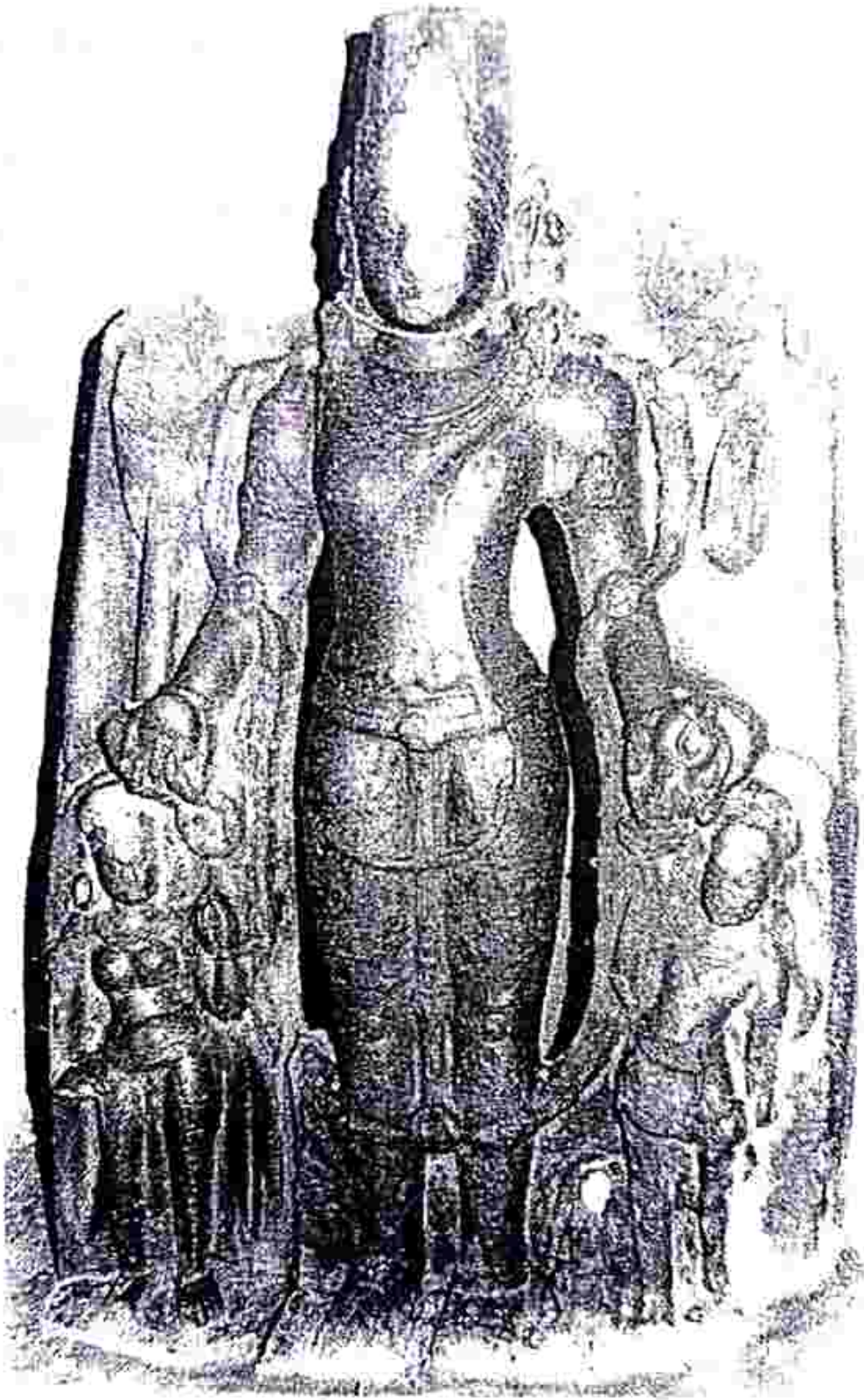
14. भगवान विष्णु (बोरबा)
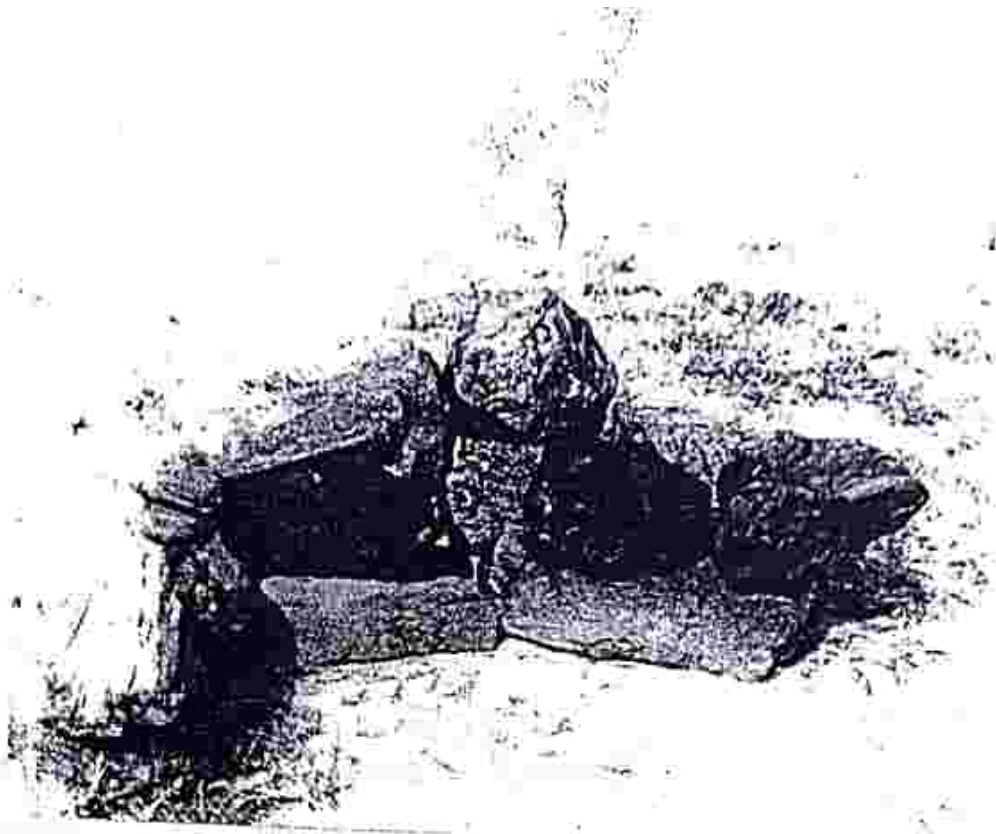
कृत्रिम पत्थर (बोरबा)

15. हरा पत्थर (बोरबा)
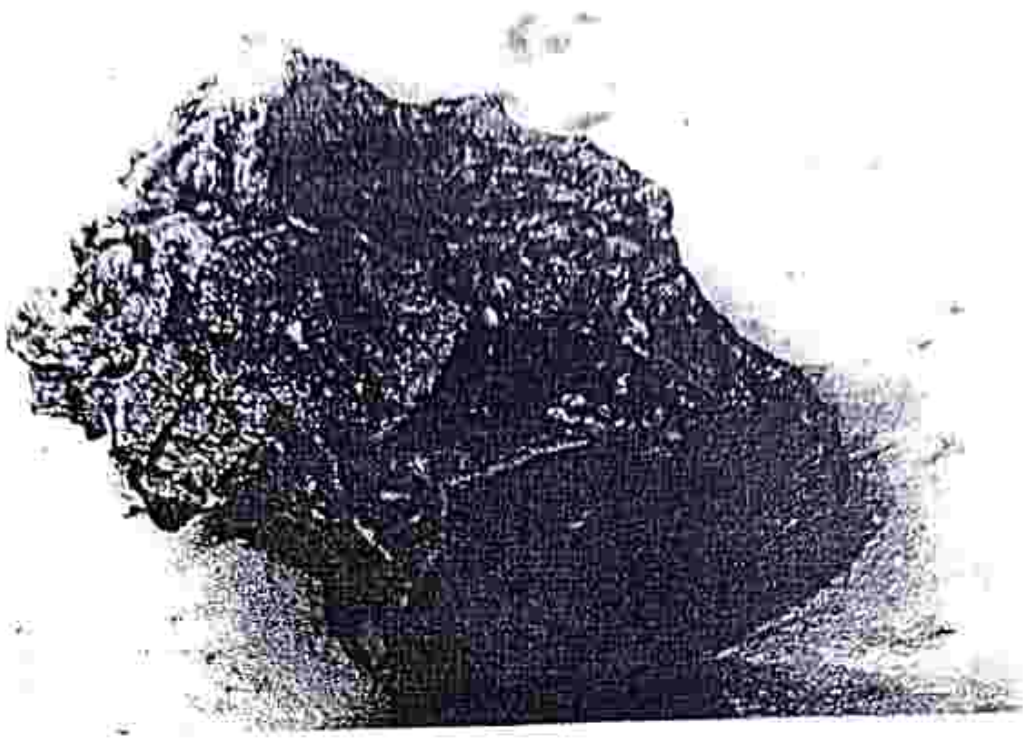
काला पत्थर (बोरबा)
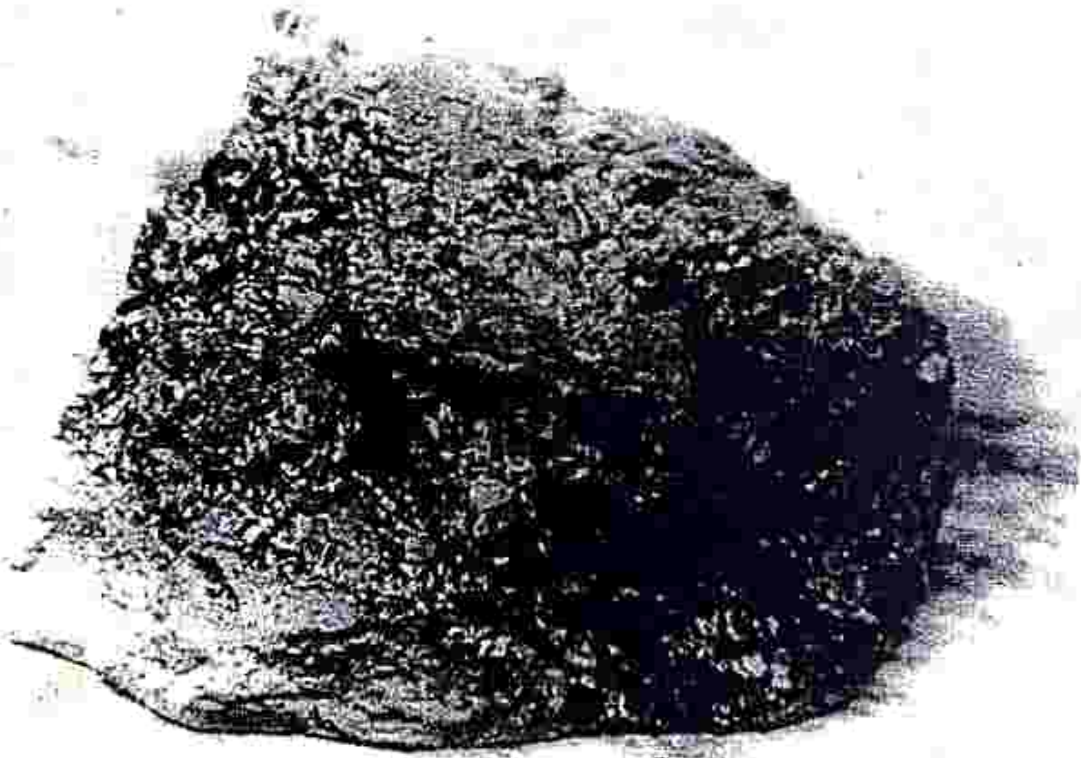
16. ओप (अन्दौली)

कनहई

कनहई जनपद की भी चर्चा कोर्थ शीर्षक के अन्तर्गत हुई है । कोर्थ से इस गाँव की दूरी करीब 8 कि0 मी0 पूर्व-दक्षिण की ओर है । कई जातियों से विभूषित यह गाँव एक लम्बे अर्से तक कोशी की बाढ से ग्रसित रहा है । यहाँ गाँव से पूरब एक प्राचीन तालाब के पूर्व-दक्षिण कोने पर एक देव-मंदिर है । प्रथम बार बीसवीं शताब्दी के सत्तरवें दशक में जब मैं यहाँ पहुँचा था तो इस देव-मंदिर के आगे बलि प्रदान की व्यवस्था थी । जबकि इस मंदिर में एक अर्ध निर्मित भगवान विष्णु की मूर्त्ति है । मेरे पहचान के बाद अब बलि की परिपाटी बदल दी गई है और भगवान विष्णु की पूजा होती है । उस समय एक और विष्णु मूर्त्ति मैंने इस प्रांगण में उपेक्षित पड़ी देखी थी । मैंने इसे कुछ लोगों के सहयोग से एक पेड़ के पास, तालाब के दक्षिणी भिण्डे पर खड़ा कर दिया । कुछ समय पश्चात् पेड़ की डाल गिरने के कारण यह और अधिक क्षतिग्रस्त हो गई है । पालशैली की यह विष्णुमूर्त्ति विशाल ही नहीं भव्य भी है । मंदिर की विष्णु-मूर्त्ति मिथिला-शैली की हैं और निर्माण काल चौदहवीं शताब्दी है ।

पालशैली की खण्डित मूर्त्ति प्राप्ति के सम्बन्ध में यहाँ मुझे कइ लोगों से कई तरह की बातें सुनने को मिली हैं, जिससे पता चलता है कि यह मूर्त्ति इसी गाँव के उत्तर स्थित किसी तालाब में मिली थी । अन्य दूसरे व्यक्ति के अनुसार यह मूर्त्ति इस गाँव के पश्चिम स्थित प्राचीन नदी अवशेष के किनारे मिली भी। लेकिन मेरा अनुमान है कि यह मूर्त्ति **मठाही तालाब** (महुआर) से उठा कर लाई गई थी जबकि मंदिर स्थित विष्णु-मूर्त्ति

मैंने चालिस के दशक में इस गाँव से दक्षिण नदई नामक गाँव से पश्चिम, मंदिर के पास एक पेड़ के नीचे देखी थी । गाँव वालों ने भी यही बात कबूल की । कन्हई से करीब तीन कि० मी० पश्चिम है एक गाँव **महुआर** । इस गाँव के पश्चिम के तालाब को **'मठाही'** कहा जाता है । यह तालाब प्राचीन है और इसके आस-पास मुसलमानों की सघन आवादी है । कहा जाता है कि महाराजा कामेश्वरसिंह संग्रहालय, दरभंगा में प्रदर्शित ध्वज-सतम्भ इसी तालाब में पाया गया था । महुआर और कोर्थ के मध्य है **नारी** वस्ती । जिसकी चर्चा मैंने कोर्थ शीर्षक के अन्तर्गत की है और कहा है कि यहाँ **वर्धमानेश्वर** का वास-स्थान रहा था । वर्धमानेश्वर के सम्बन्ध में एक मिथिलाक्षर अभिलेख भी कोर्थ या मठाही तालाब से प्राप्त ध्वज-स्तम्भ में उत्कीर्ण है । यह लेख है :—

> **"जातो वंशे बिल्व पञ्चाभिधाने**
> **धर्माध्यक्षोवर्धमानो भवेशात् ।**
> **देवस्याग्रे देवयष्टिध्वजाग्रा**
> **रूढ़ं कृत्वाऽस्थापयद्वैनतेयम् ।।"**

मठाही तालाब से प्राप्त इस स्तम्भ की चर्चा मिथिलातत्त्व विमर्श के अतिरिक्त हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना से प्रकाशित **बिहार की नदियाँ** में भी हुई है । जब कि एक स्तम्भ के सम्बन्ध में स्व० **यदूनझा** से मुझे बचपन (पच्चास के दशक) में जो जानकारी मिली थी उसकी रूप रेखा इस स्तम्भ से बिल्कुल मिलती-जुलती है । यह स्तम्भ और कई अन्य पाषाण प्रतिमायें एक अंग्रेज निलहा साहेब, कोर्थ से बैलगाड़ी पर लाद कर अपने निवास स्थान हाटी (बिरौल) ले गया था । बाद में यह स्तम्भ उसी के निवास पर पाया गया । लेकिन इस स्तम्भ के अतिरिक्त और कोई मूर्त्ति वहाँ नहीं मिली थी ।

17. भगवान विष्णु (कनहई)
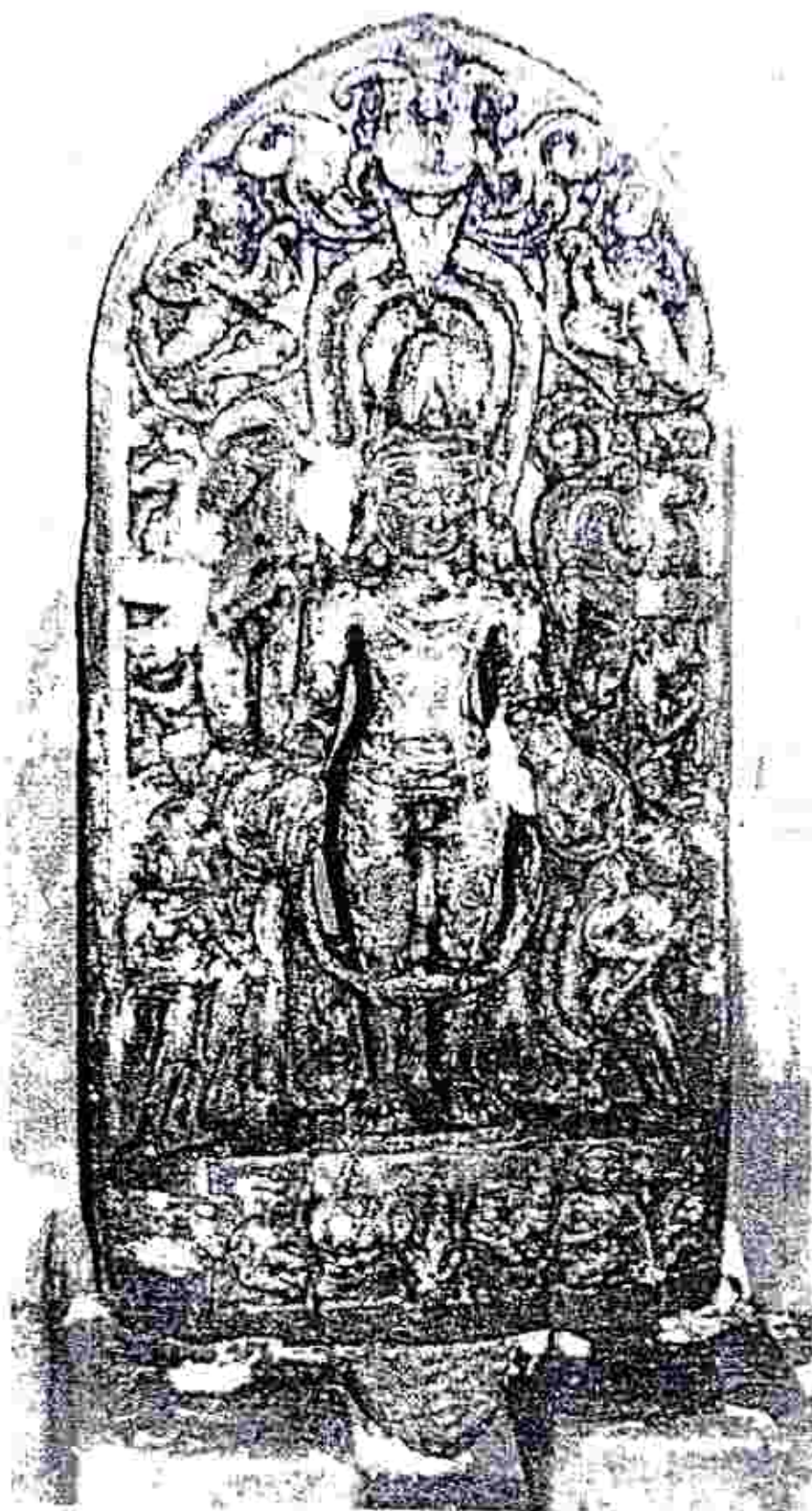
18. अर्धनिर्मित भगवान विष्णु (कनहई)
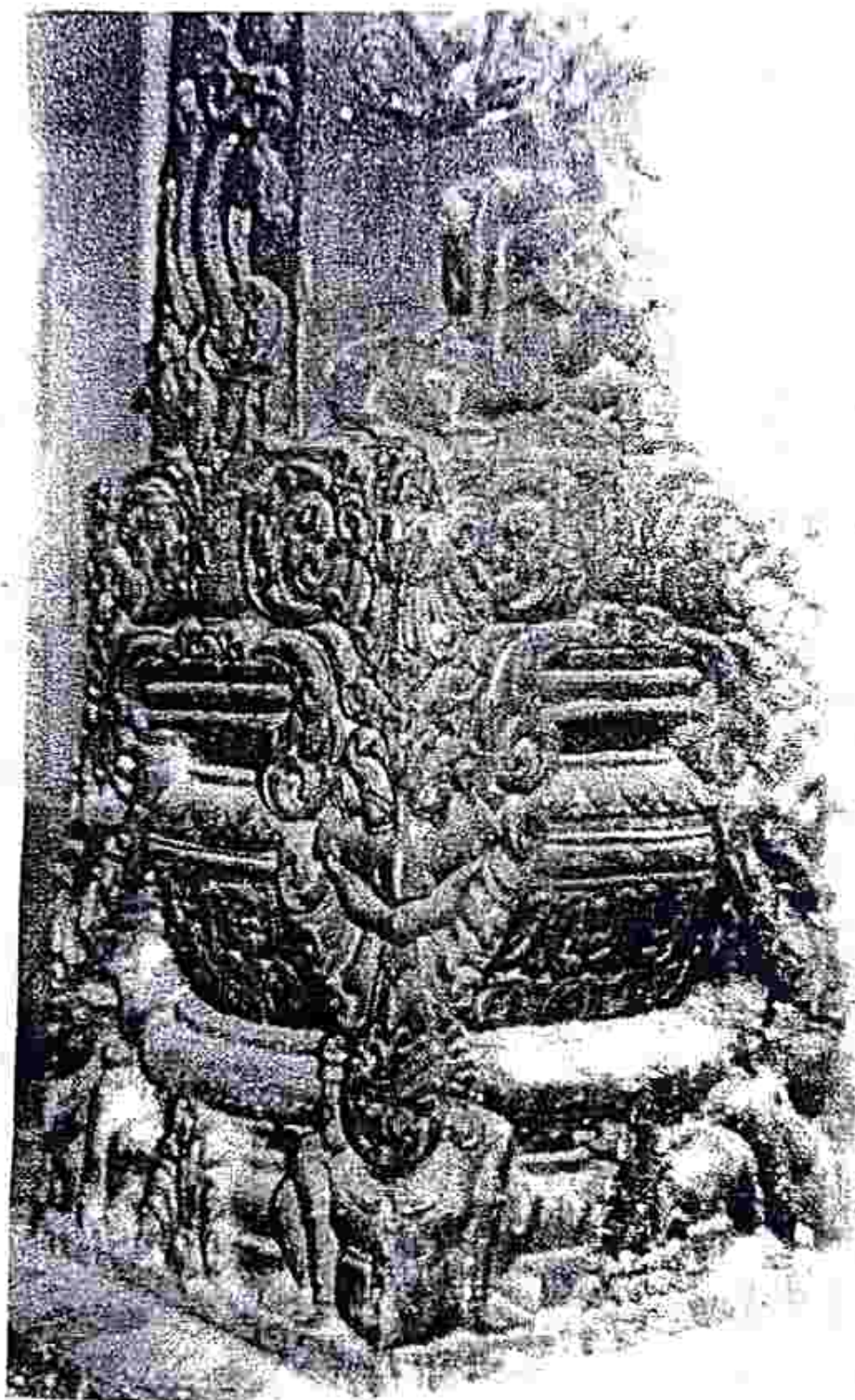
19. ध्वज स्तम्भ अंश (महुआर)

पोखराम और लदहो

दरभंगा जिला मुख्यालय से दक्षिण-पूर्व की ओर दरभंगा-बिरौल पथ पर भाया पररी, पोखराम एक ब्राह्मण बहुल जनपद है । दरभंगा से यहाँ की दूरी करीब 50 कि0 मी0 होगी । कमला नदी और जीवछ नदी का संगम बहेड़ा से मात्र 3 कि0 मी0 दक्षिण त्रिमुहानी गाँव के पास हुआ है । यहाँ से यह नदी कटबासा गाँव के उत्तर-पूरब से आगे बढ़कर दो हिस्सों में बँट जाती है । इन्हीं दोनों धाराओं के मध्य बसा है गाँव पोखराम । पश्चिमी धारा पोखराम जनपद के महत्त्वपूर्ण आवासीय स्थान को चीर कर आगे बढ़ती है जब कि पूर्वी धारा एक कि0 मी0 उत्तर-पूर्व से और लदहो गाँव के निकट-पूर्व होकर प्रवाहित है । यद्यपि इस समय की स्थिति यही है, तथापि सर्वेक्षण से पता चलता है कि पश्चिमी धारा नवीन है । इस गाँव के पश्चिम से भी नदी बहती रही थी, लेकिन उसका मार्ग यह नहीं था । प्राचीन नदी का अवशेष पटनियाँ के पूर्व-दक्षिण और भारबन नामक खण्डहर के पश्चिम अभी भी देखा जा सकता है । इस अवशेष के पाट की चौड़ाई और गहराई से तो यही विश्वास उतपन्न लेता है कि कमला नदी की मुख्यधारा कभी यहीं होकर बहती रही थी जो अब अपना रूख बदलकर बहने लगी है । पोखराम का खण्डहर (आवासीय स्थान) और उपलब्ध पुरातात्विक अवशेष की समीक्षा तो यही साबित करता है कि यह भूखण्ड हजारों वर्ष प्राचीन और महत्त्वपूर्ण रहा था । प्राचीन काल में प्रत्येक नगर की उन्नति जलमार्ग की उपस्थिति पर निर्भर रही थी । इस भूखण्ड के लिये यह साधन सुलभ रहा है । यहाँ कई काल और कई शैलियों की पाषाण प्रतिमाऐं मिली हैं । प्राचीन नगर के अवशेष के साथ

हीं यह भी साबित होता है कि इस समय का वासी चौदहवीं शताब्दी में यहाँ नहीं रहा था । बाद में बसने के बाद भी मुसलमानी शासन के समय जो यहाँ अत्याचार हुआ वह भी अभी तक लोगों की जुबान पर है । हर तरह के छल-बल का प्रयोग मुसलमानों द्वारा जमीन-जायदाद हड़पने के लिये यहाँ हुआ । एक ही गाँव का यहाँ दो हिस्सा है– पोखराम और शैदाबाद । शैदाबाद उस भूखण्ड का नाम है, जो मुसलमान शासकों द्वारा बलपूर्वक हड़पा गया था । स्व0 रामेश्वर चौधरी के पूर्वज इसके भुक्तभोगी रहे थे । इसी परिवार की एक विधवा द्वारा गाँव से पूरब एक देवालय के निकट तालाब खुदबाने के समय एक विशाल मूर्त्ति भगवान विष्णु की और एक महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति यहाँ से मिली जो सम्प्रति यहीं एक मंदिर में स्थापित है ।

इस गाँव के पश्चिम से जो नदी बहती है, वह नवीन है, जिसकी चर्चा मैंने पहले ही की है । नदी पार (पश्चिम) एक खण्डहर है– **भारबन** । भारबन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इसका पूर्व नाम **भैरव-बन** था । यहाँ की उपलब्धि भी यही बात कहती है । आवासीय खुदाई के अन्तर्गत भारबन में शिवलिंग, जाँता, शिल्ला, मूर्त्तिलेख, विष्णु-मूर्त्ति, गणेश की मूर्त्ति और कई अन्य मूर्त्तियों के अवशेष के साथ ही साथ एक चित्रित ईंट भी मुझे इसके पास ही देखने को मिली हैं । मूर्त्तियों के अध्ययन से पता चलता है कि गुप्त शासन और इसके पूर्व भी यह स्थान महत्त्वपूर्ण रहा था । भारबन या इसके आस-पास मिली मूर्त्तियाँ, मूर्त्ति-अवशेष, शिला, चक्की और तालाब की खुदाई से प्राप्त विष्णु तथा महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति ; सबके– सब शतप्रतिशत कसौटी पत्थर (श्यामवर्णीय–प्रस्तर) की हैं । तालाब में मिली भगवान विष्णु की मूर्त्ति तो पालशैली की हैं, पर महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति 60 प्रतिशत क्षतिग्रस्त है, अतः इसका काल-निर्धारण आसान नहीं ।

पोखराम एक पंचायत है । इस पंचायत में इससे मात्र एक कि0 मी0 पूरब-दक्षिण एक गाँव है– **लदहो** और लदहो से मात्र 200 मीटर पश्चिम एक प्राचीन खण्डहर है– **चनबार या ओइनबार** । चनबार से उत्तर होकर वह सड़क गुजरती है जो पोखराम और लदहो की है । इस

सड़क के दक्षिण और चनबार के उत्तर एक खेत में करीब 80 वर्ष पूर्व भगवान विष्णु की एक मूर्त्ति हल जोतने के समय मिली जो सम्प्रति लदहो गाँव के पश्चिम और चनबार के पूरब एक मंदिर में स्थापित हैं । कसौटी पत्थर की यह मूर्त्ति मिथिला-शैली और कर्णाट काल की है । प्रतीक चिह्न से यह मूर्त्ति भगवान सत्यनारायण की लगती हैं । इस मूर्त्ति में अभिलेख भी है । अभिलेख का अंश वहीं से प्राप्त हुआ था जहाँ पोखराम में तालाब खोदने के समय मूर्त्तियाँ मिली थीं । इस मूर्त्ति के नीचे का कुछ अंश उस समय इसके साथ नहीं था, जब यह मिली थीं, लेकिन जब इसका टूटा अंश मिला और इसके साथ मिलाया गया तो साबित हुआ कि वह अंश इसी मूर्त्ति का है । इससे पता चलता है कि यह मूर्त्ति भी उसी स्थान की रही थी । भगवान सत्य नारायण की मूर्त्ति का अभिलेख है—

श्रीरामनाथो राजन्यो विष्णुसेवक सेवकः ।
(नान्य) रेरदेव तल्यो विष्णुर्नाम करिष्यते ।।

इस मूर्त्ति के स्थान (लदहो) में ही, जैसा कि यहाँ के तत्कालीन पुजारी का कहना है– झाड़ू लगाते समय एक **स्वर्ण-मुद्रा** मिली । यह स्थान विष्णु-मूर्त्ति-स्थापित होने से पूर्व से भी देव-स्थान रहा है, अतः स्वर्ण-मुद्रा का मिलना यद्यपि कोई अलौकिक घटना नहीं है तथापि स्वर्ण-मुद्रा का शिल्प, विषय-वस्तु और इस पर उत्कीर्ण अभिलेख उल्लेखनीय है । स्वर्ण-मुद्रा के एक ओर है, राम-दरबार और दूसरी ओर धनुष वाण के साथ राम-लक्ष्मण । राम-लक्ष्मण और दरबार की मूर्त्तियों का शिल्प प्राचीन है तथा देवनागरी लिपि में उत्कीर्ण अभिलेख के साथ का अंक, कुछ सोचने को विवश करता है । यह अंक दो हैं– **517** और **401**, सम्भवतः **517** फसली संवत है जो **590** ई0 से प्रारम्भ होता है और **40** किसी वंश का प्रारम्भ काल ।

इस स्वर्ण मुद्रा का अभिलेख है–

राम लछमण जानक जवत हनमनक

517 ■ 40
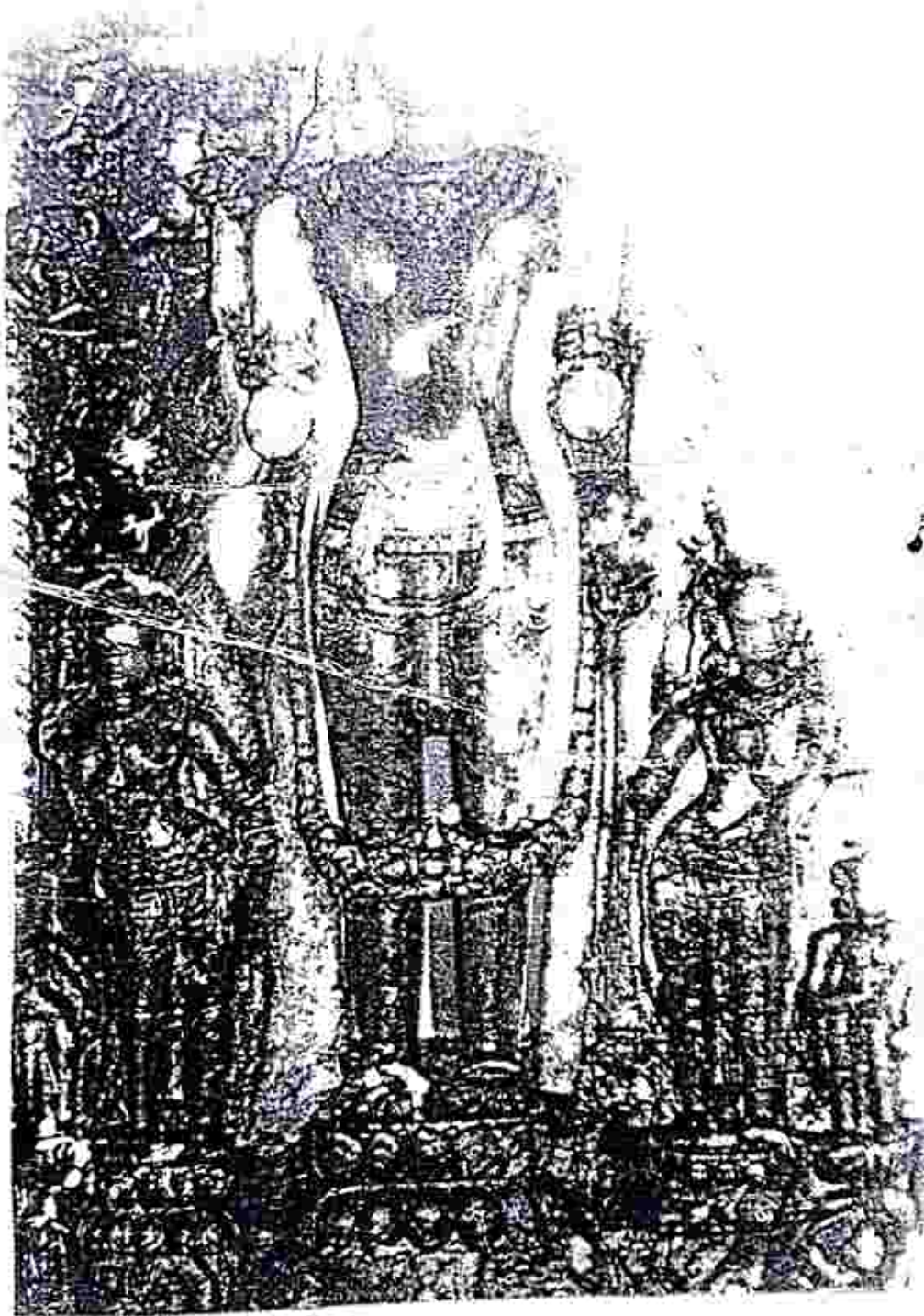
20. भगवान विष्णु (पोखराम)
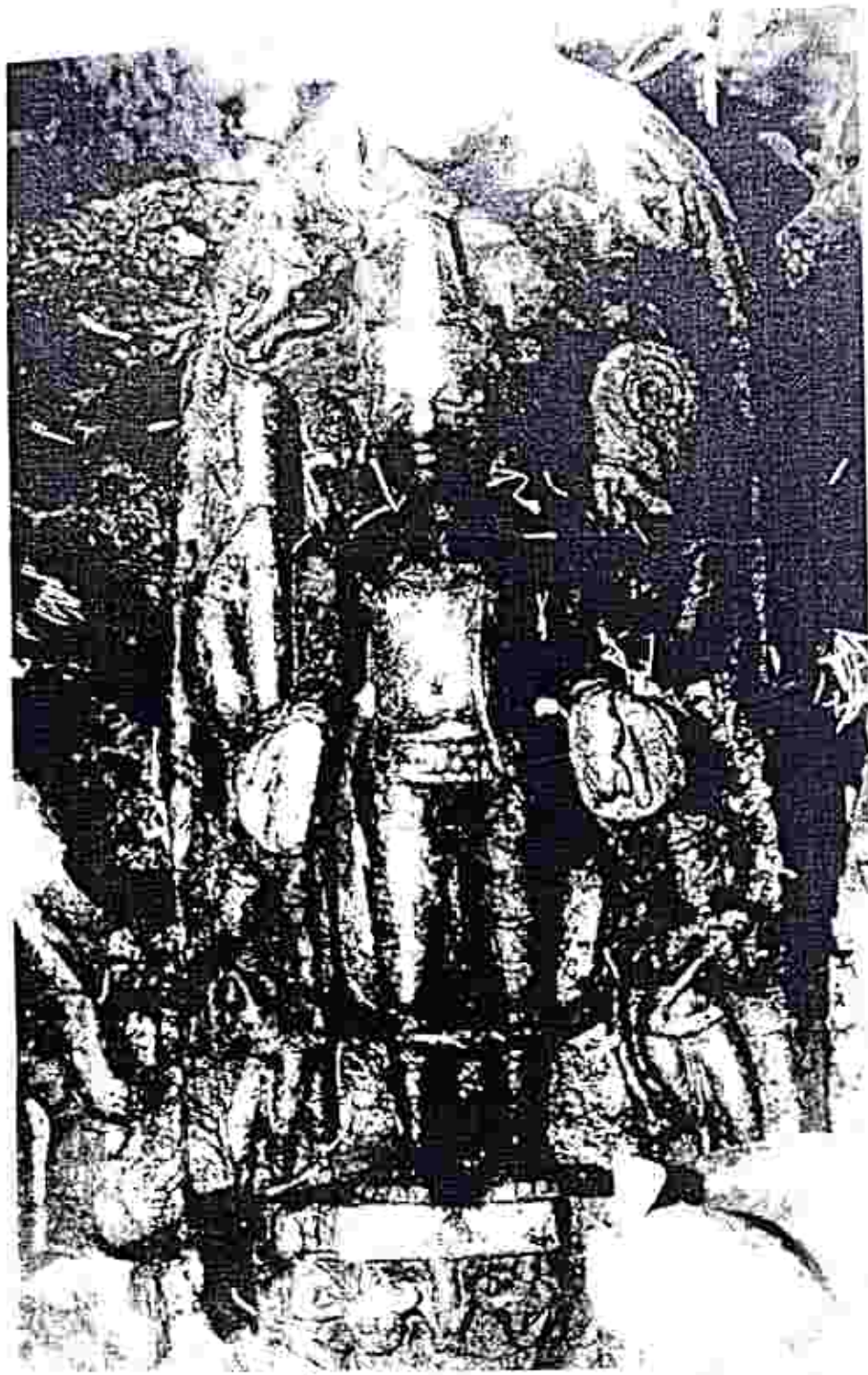
21. भगवान विष्णु (शैदाबाद, पोखराम)

22. महिषासुर मर्दिनी (पोखराम)

अभिलेख, भगवान विष्णु (भारवन, पोखराम)

23. चित्रित ईंट (भारवन, पोखराम)

24. भगवान विष्णु (लदहो)

स्वर्णमुद्रा (लदहो)

25. अभिलेख, भगवान विष्णु (लदहो)

साहो (पररी)

परसी होते हुए दरभंगा-बिरौल पथ पर अनेकों ब्राह्मण बहुल गाँव-डुमरी, पोखराम, पटनियाँ, सहसराम, अथार-महबा, साहो-परसी, इटबा-शिवनगर, हाबीडीह, बिठौली, देकुली आदि है । मिथिलातत्त्व विमर्श में 168 मूल और 19 गोत्र की चर्चा मिथिला के ब्राह्मणों की हुई है जो पंजी में अंकित है और ये ब्राह्मण कर्णाट-राजवंश के हरिसिंह देव के समय यहाँ थे । तात्पर्य यह कि चौदहवीं शताब्दी के प्रथम दशक में 168 ऐसा महत्वपूर्ण ब्राह्मणों का गाँव था जहाँ देवी-देवताओं की भरमार रही थी । ये सभी गाँव मुसलमानी आक्रमण, जो 1324 ई0 में हुआ था– इनके कोप के भाजन बने । इन में से कुछ ही गाँव अभी तक पहचान में आया है, जो प्राचीन मूल स्थान के नाम से पहचाना जा सकता है । बाँकी सभी गाँव अभी तक अंधकार के गर्त में छिपा हुआ है । इसी तरह के गाँवों में से इस पथ का गाँव है– पोखराम, साहो, ईटबा–शिवनगर, हाबीडीह और देकुली ।

साहो के भी उस तालाब में जो गाँव के पश्चिम में है और जिसके पूर्वी भिण्डे पर मुसलमानों का अधिकार है, महाराजाधिराज कामेश्वरसिंह के समय में गणेश, विष्णु और सूर्य की प्राचीन पाषाण प्रतिमाऐं मिली थीं जो सम्प्रति हाबीडीह के एक विष्णु मंदिर में, गाँव के दक्षिण स्थापित हैं । उस समय इस तालाब के निकट की बहुत सारी जमीन दरभंगा-राज के ही अधिकार में थी और यह हाबीडीह स्थित राज-कचहरी द्वारा नियंत्रित थी । इस मूर्त्ति के संबंध में हाबीडीह शीर्षक के अन्तर्गत विस्तृत चर्चा हुई है । संक्षेप में इसकी कहानी इस प्रकार है कि एक धोबी को ये मूर्त्तियाँ इस तालाब में मिली और उसके ही द्वारा हाबीडीह-राज-कचहरी को सूचित किये जाने के बाद मूर्त्तियाँ यहाँ से उठाकर हाबीडीह पहुँचा दी गई ।

26. गणेश (साहो–पररी)

स्थापित, हाबीडीह

27. भगवान विष्णु (सहो–पररी)
स्थापित, हाबीडीह

इटबा–शिवनगर

भाया परसी दरभंगा बिरौल मुख्य पथ पर ही परसी से मात्र एक कि0 मी0 पश्चिम एक प्राचीन गाँव है इटबा-शिवनगर । पुरातात्विक दृष्टि से यह गाँव अत्यन्त महत्वपूर्ण है, लेकिन कुछ निम्न स्तर की जातियाँ इसके पुरातात्विक अवशेष को अज्ञानता-वश नष्ट करने के पीछे तुली हुई हैं । इस पुनीत कार्य में इन अशिक्षित लोगों की अपेक्षा तत्कालीन सरकार का योगदान विशेषरूप से रहा है । मिथिला की कला संस्कृति से जिसे दूर का भी रिश्ता नहीं, ऐसे सरकारी अधिकारी और मंत्री गरीबों के मध्य भू-आबंटन करते हैं और इस आबंटन में मुसलमानों द्वारा बनाये गये खण्डहर जिसमें प्राचीन मिथिला की गौरव-गरिमा दफन है, इन भूमिहीनों को खेती करने या बसने के लिये दिया जाता है । इस तरह मिथिला की सद्‌गति वहाँ तक हो रही है, जहाँ तक मुसलमानों ने भी नहीं कर पाई थी । ये अशिक्षित लोग इन खण्डहरों को खोदकर पुरावशेषों को जान या अनजान में भी दुरूपयोग करने से नहीं चूकते । यह सम्पूर्ण गाँव ही एक महत्त्वपूर्ण प्राचीन खण्डहर पर बसा हुआ है ।

मैंने ऊपर जो आक्रोश व्यक्त किया है वह यों ही नहीं, यहाँ तक कि सर्वेक्षण के अन्तर्गत वह प्राचीन ईंट भी जो इन खण्डहरों से निकाल-निकाल कर लोग अपना-अपना घर बना रहे हैं, दिखाने को तैयार नहीं होते हैं और फोटोग्राफ लेने की बात तो दूर । यहाँ वह अवशेष जो स्वतः दिखाई पड़ने वाला है और सबसे ऊपरी सतह पर है, गुप्त-कालीन है । एक छोटे शिव-मंदिर में एक छोटी मूर्त्ति और पंचमुख शिवलिंग का दर्शन मुझे हुआ है जो किसी साधारण खुदाई में इसी मंदिर के निकट दक्षिण में मिले थे और इस मंदिर में पूजित है ।

कसौटी पत्थर की एक मूर्त्ति मात्र 8 ईंच ऊँची है जो किसी देवी (सम्भवतः गौरी) की लगती है, लेकिन शिवलिंग की जलढरी विशाल है । एक ही जलढरी में तीन बिन्दु पर तीन शिवलिंगें है, इनमें से एक शिवलिंग के चारों ओर चार देव–मुखाकृति है । प्रत्येक शिवलिंग और जलढरी कसौटी पत्थर का है । विषय–वस्तु और उत्कीर्ण आकृति गुप्तकाल की लगती हैं ।

29. पंचमुख शिवलिंग (इटबा–शिवनगर)

30. देवी पार्वती (इटबा–शिवनगर)

हाबीडीह

बहेड़ा से पाँच कि० मी० और त्रिमोहनी से 3 कि० मी० पूरब-दक्षिण दिशा में हाबीडीह ग्राम, एक टीला पर बसा हुआ है । यह टीला करीब दो सौ एकड़ में फैला हुआ और कछुआ के पीठ जैसा इसका आकार है । दरभंगा-बिरौल पथ, इस गाँव होकर ही गुजरा है । इस गाँव या इससे पूर्व इटवा-शिवनगर, साहो और पोखराम की जो चर्चा हुई है, इसका पुरातात्विक महत्व तब और बढ़ जाता है, जब हम दूर से इसके प्राचीन भौगोलिक बनाबट पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं । उघरा गाँव से पोखराम तक, इस मुख्य सड़क जो दरभंगा से बिरौल तक गई है, दायें-बायें कई जल-जमाव का क्षेत्र नजर आता है । कई जगह तो यह विशाल चौर के रूप में दिखाई पड़ता है । यदि इस जल-जमाव के क्षेत्र को हम प्राचीन नदी का अवशेष मानकर चलें तो इसके किनारे ही सभी वे गाँव हैं जो पुरातात्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं । इस समय हाबीडीह के निकट पूर्व होकर ही त्रिमोहानी बाली नदी बहती है, लेकिन यह नदी प्राचीन नहीं है । प्राचीन वही नदी रहीं थी जिसके अवशेष की चर्चा मैनें की है । त्रिमोहानी घाट में मिलनें वाली जीवछ और कमला की धारा या इससे आगे पोखराम के पूरब और पश्चिम से बहने बाली धारा, दोनो ऊँचे स्थान को चीर कर बहती है । यह संकेत है अतीत में घटने वाली किसी विशेष आपदा का जो भूकम्प के रूप में रही होगी । वैसे भी मिथिला की नदियाँ प्रत्येक डेढ़-दो सौ वर्ष के बाद अपना रूख बदलती रही है ।

यह संयोग ही है कि हाबीडीह की प्राचीनता से संबंधित अभिलेख भी उपलब्ध है जो इस स्थान को कम से कम आठ-नौ

सौ वर्ष प्राचीन घोषित करता है । इस संबंध में डॉ0 उपेन्द्र ठाकुर लिखित **'मिथिलाक इतिहास'** का कहना है कि चंडेश्वर कृत, कृत चिन्तामणि में उल्लखित है–

"अब्दे नेत्रशशांकपक्ष (212) गणितेश्री लक्ष्मणक्ष्मापर्तेमासि श्रावणसंज्ञके मुनितिथौ स्वात्यां गुरौ शोभने (।) हाबीप (त्त) ट्टनसंज्ञके सुविदिते हैहट्टदेवी शिवा कर्मादित्यसुमन्त्रिणेह विहिता सौभाग्यदेव्याज्ञया" ।।

जबकि इस लेख के संबंध में पंडित परमेश्वर झा कृत **मिथिलातत्व विमर्श** में हैहट्ट देवी की मूर्त्ति में ही अंकित इसे कहा गया है । यहाँ अभी भी हैहट्ट देवी की मूर्त्ति है, लेकिन इसमें लेख उत्कीर्ण नहीं है । मिथिलातत्व विमर्श कहता है– 'महाराज रामसिंह देव (कर्णार्ट–वंश, 1225 से 1275 ई0 तक) के मंत्री कर्मादित्य ठाकुर द्वारा और रामसिंह की पत्नी महारानी सौभाग्य (सुहब) देवी की आज्ञा से हैहट्ट देवी की स्थापना की गई थी ।

इस गाँव में मुख्य सड़क के उत्तर और गाँव के पश्चिम एक ऊँचे स्थान पर एक भव्य, नवीन मंदिर दूर से ही नजर आता है । इस मंदिर में हैहट्ट देवी की एक, महिषासुर मर्दिनी की एक और एक 60 प्रतिशत खंडित सूर्य-मूर्त्ति स्थापित हैं । तीनों ही मूर्त्तियाँ आंशिक–रूप से खंडित हैं । महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति को नवादा से जोड़ने की पुरानी कहानी भी सुनने को मिलती है । इस मंदिर के प्रांगण में कुछ मूर्त्ति–खण्ड भी एक स्थान पर जमा है जो अन्य सूर्य-मूर्त्ति का खंडित अंश है । ये सभी मूर्त्तियाँ कसौटी पत्थर की हैं । यहाँ उपलब्ध वह मूर्त्ति जिसे हैहट्ट देवी की मूर्त्ति कही जाती है, कर्णाट–शैली और कर्णाट–काल में व्यवहार किया गया कसौटी पत्थर का नहीं है । कर्णाट काल की अनेकों मूर्त्तियाँ मुझे मिथिला में मिली हैं । इस गाँव में भी गाँव के दक्षिण विष्णु मंदिर में, भगवान विष्णु, गणेश और आंशिक रूप से खंडित सूर्य की मूर्त्ति उपलब्ध है । इन मूर्त्तियों में हैहट्ट

देवी की मूर्त्ति का शिल्प बिल्कुल भिन्न है । पंडित परमेश्वर झा ने मिथिलातत्त्व विमर्श में (पृष्ठ 118) मूर्त्ति पर ही अभिलेख-उत्कीर्ण की चर्चा की है, वह भी नही है । कर्णाट कालीन मिथिला-शैली की मूर्त्तियों का शिल्प अत्यन्त उत्कृष्ट है, लेकिन यह मूर्त्ति मिथिला-शैली की होती हुई भी कर्णाट काल से पूर्व की लगती है । सर्वेक्षण से यह भी पता चलता है कि यह गाँव ब्राह्मण बहुल होते हुए भी चौदहवीं शताब्दी में खण्डहर रहा था, इस स्थिति में स्वयं पाठक तय करें कि क्या यह मूर्त्ति वही है जो कर्णाट राजवंश की देख-रेख में स्थापित की गई थी ? यहाँ कुछ और शोध की आवश्यकता है ।

साहो शीर्षक लेख के अन्तर्गत मूर्त्ति की चर्चा हुई है जो **महाराजा कामेश्वर सिंह** (दरभंगा) के समय की बात है । साहो से तीन मूर्त्तियाँ-भगवान विष्णु, गणेश और सूर्य तो उठाकर दरभंगा ले जाने के लिये लाई गई थी, लेकिन रात में गाँव वालों ने इन मूर्त्तियों को पुआल के नीचे ढककर गाँव में ही कहीं अन्यत्र छिपा दिया । स्वयं महाराजा मूर्त्ति देखने और ले जाने के लिए दरभंगा से यहाँ आये थे । सवेरे जब मूर्त्ति नहीं मिली तो उनके समझ में सारी बात आ गई कि गाँव वालें मूर्त्ति यहीं रहने देना पसंद करते हैं । वे इसके लिए कोई बड़ा कदम नहीं उठाकर, जो वे उठा सकते थे और इसका अधिकार भी उन्हें था– गाँव में छोड़कर ही वापस दरभंगा लौट गये-विवेक हो तो ऐसा जिसमें राजसीपुट है । ये मूर्त्तियाँ इस समय गाँव के दक्षिण एक तालाब के उत्तरी भिण्डे पर और मुख्य सड़क के पश्चिम एक मंदिर में पूजित हैं । विष्णु मूर्त्ति में अभिलेख भी है । अभिलेख है–

श्री मद्मदन माधव :

ऐतिहासिक विवरण की पुस्तकें :–

1. मिथिलातत्त्व विमर्श – पं० परमेश्र झा
2. मिथिलाक इतिहास – डॉ० उपेन्द्र ठाकुर
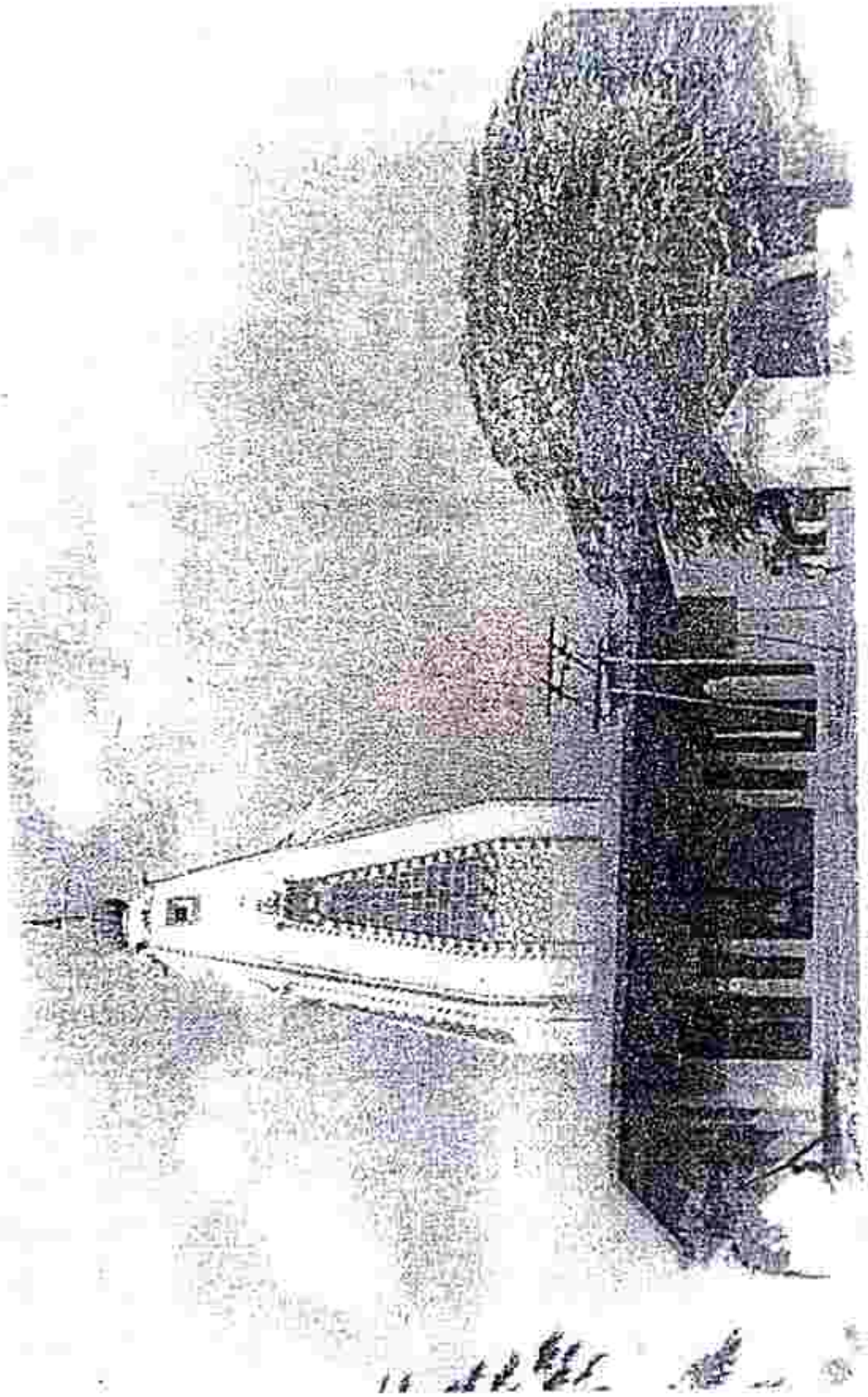
31. हैहट्ट देवी मंदिर (हाबीडीह)
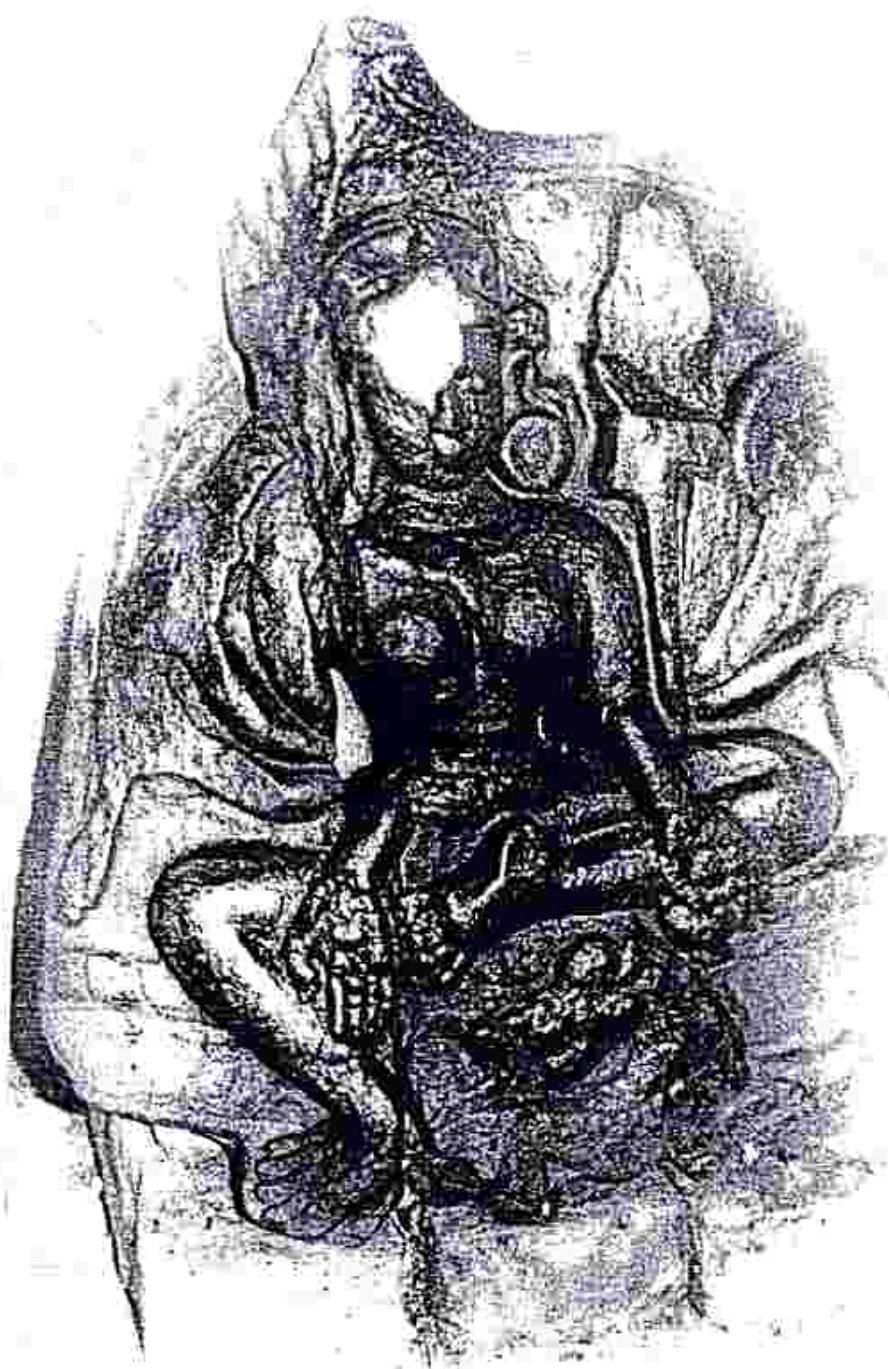
32. हैहट्ट देवी (हाबीडीह)
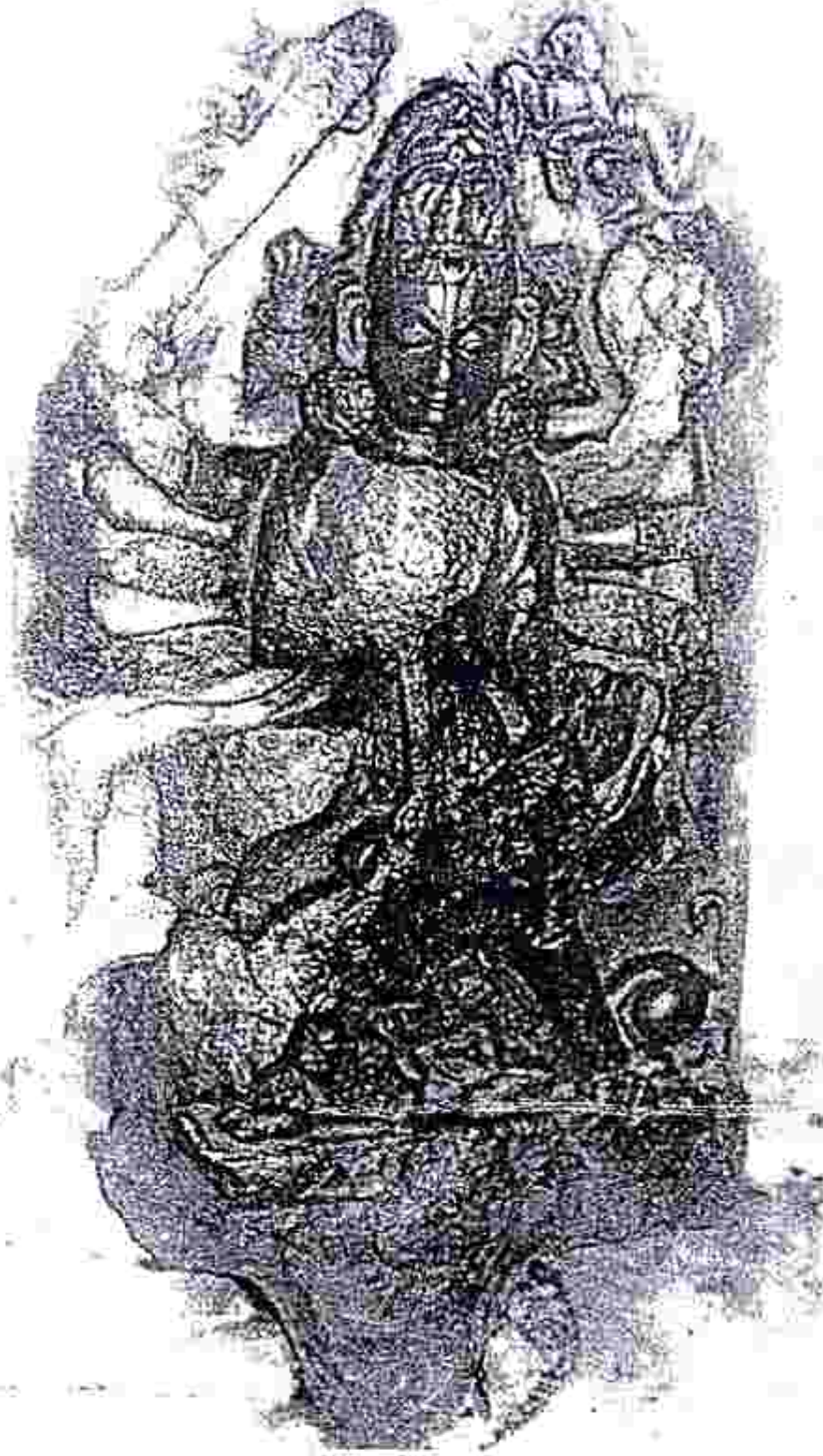
33. महिषासुर मर्दिनी (हाबीडीह)
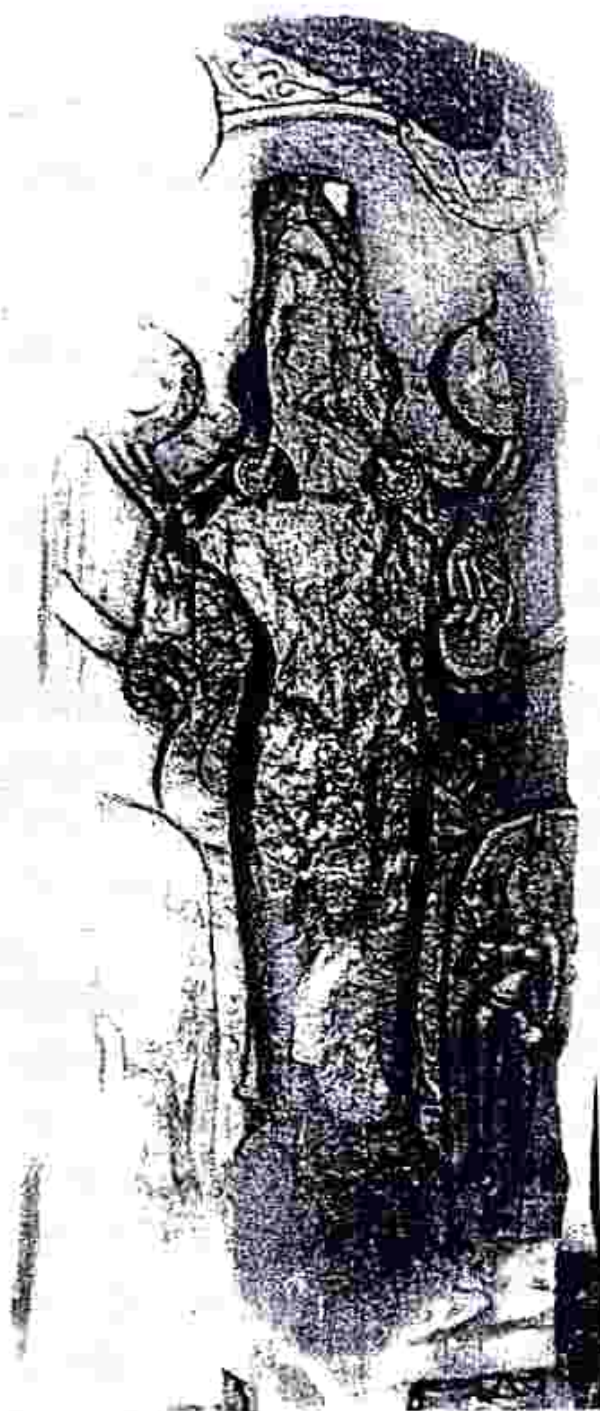
34. सूर्य (हाबीडीह)

देकुली

देकुली दरभंगा जिला के अन्तर्गत तीन हैं :– एक देकुली दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्व की ओर और सोनकी बहेड़ा सड़क पर सोनकी से आगे, जिसकी दूरी जिला मुख्यालाय से करीब 20 कि0 मी0 है । वास स्थान यहाँ का प्राचीन है, लेकिन पुरातात्विक उपलब्धि अभी तक कुछ भी प्रकाश में नहीं आया है । दूसरी देकुली दरभंगा मुख्यालय से दक्षिण–पूर्व की ओर करीब 40 कि0 मी0 की दूरी पर । यहाँ कई दशक पूर्व एक पीपल के पुराने पेड़ की जड़ में एक प्राचीन शिवलिंग मिला था जो सम्प्रति एक मंदिर में पूजित है । इस देकुली के निकट के गाँव हैं– जगन्नाथपुर, बैरमपुर, फुलहरा, बन्दा और दसौत । लेकिन मैं जिस देकुली की चर्चा कर रहा हूँ, वह तीसरी देकुली दरभंगा जिला मुख्यालय से मात्र तीन कि0 मी0 की दूरी पर दक्षिर्ण–पूर्व की ओर उस मुख्य पथ पर अवस्थित है जो दरभंगा, हाबीडीह–पोखराम होते हुए बिरौल जाती है ।

ब्राह्मण बहुल गाँव होते हुए भी इस गाँव में अन्य कई जातियाँ भी हैं । लेकिन प्राचीन वास स्थान अभी भी ब्राह्मणों के ही अधीन है । सर्वेक्षण से पता चला है कि सोलहवीं शताब्दी के तीसरे दशक में यह स्थान खण्डहर था । इसके बाद ही यह स्थान आबाद हुआ है । यहाँ से कुछ ही दूर पश्चिम शिवेसिंहपुर गाँव है जिसे लोग प्रसिद्ध राजा शिवसिंह (विद्यापति के समकालीन) का बास स्थान मानतें हैं । यद्यपि इस गाँव का बास स्थान और इसके आसपास की भूमि उत्तम किस्म का आबासीय हैं तथापि उल्लेखनीय पुरातात्विक राजकीय सामग्रीयाँ यहाँ नहीं मिली हैं । यह मात्र किमबदन्ति के अन्तर्गत है । गाँव के पूर्व देकुली में एक शिव मंदिर है,

जिसमें एक प्राचीन शिवलिंग है । लोग इस शिवलिंग को वर्धमानेश्वर महादेव के नाम से पुकारते हैं । कहा जाता है कि अभिनव वर्धमान द्वारा इस शिवलिंग की स्थापना हुई थी । यहाँ शिवरात्रि के अवसर पर मेला लगता है । एक प्राचीन तालाब भी इस मंदिर के पूरब है ।

मिथिला में वर्धमान नाम के दो यशस्वी विद्वान हो चुके हैं । प्रथम तो वह जो मवेश और गौरी के पुत्र थे । कोर्थ के निकट नारी गाँव में इनका बास स्थान था । कर्णाट-वंशीय राजा गंगदेव के समय में ये हुए थें । और इनकी लिखी प्रसिद्ध पुस्तक है– स्मृति-विवेक, शांतिपौष्टिक-विवेक, तड़ागामृतलता और दण्डविवेक । दूसरे वर्धमान हैं जगदगुरू महामहो0 गंगेश के पुत्र । गंगेश उपाध्य नैयायिक और मिमांशी थे जिनकी लिखी पुस्तक है– **न्यायतत्व चिंतामणि** ये दूसरे वर्धमान उपाध्याय ओइनवार वंशीय राजा देव सिंह के धर्माधिकारी थे । महाराजा शिव सिंह के पिता थे– देवसिंह । देकुली का वर्धमानेश्वर महादेव इसी वर्द्धमान उपाधय के द्वारा स्थापित माना जाता है । विसपी-ताम्रपत्र में गजरथपुर की चर्चा हुई है,यह गजरथपुर कहीं इसी देकुली के आस-पास रहा था, जैसा कि कई विद्वानो का मत है । इस आधार पर परम्परा को देखते हुए देकुली का वर्धमानेश्वर महादेव, वर्धमान उपाधाय द्वारा स्थापित साबित होता है लेकिन यहाँ उपलब्द्ध पुरातात्विक अवशेष इस स्थान को और अधिक प्राचीन साबित करता है ।

वर्धमानेश्वर मंदिर के प्रागंण में सत्तर के दशक मे मैंने एक स्तम्भ-खण्ड देखा था । इस स्तम्भ का शिल्प वही है जो मठाही से प्राप्त और कामेश्वरसिंह संग्राहालय दरभंगा में प्रदर्शित स्तम्भ का है । लेकिन संग्राहालय में प्रदर्शित स्तम्भ का पत्थर है, कसौटी जबकि यहाँ के स्तम्भ-खण्ड का पत्थर था मटमैला या बलुआही । अब यह स्तम्भ-खण्ड यहीं एक पीपल के पेड़ की जड़ में दब गया है और पीपल का जड़ इसे बूरी तरह अपने अंक में ले लिया हैं । यह स्तम्भ खण्ड–यहीं के प्राचीन तालाब

में, तालाब के नवीकरण के समय मिला था । इसके अतिरिक्त वर्धमानेश्वर महादेव के मंदिर में कसौटी पत्थर की तीन मूर्त्तियाँ और एक मूर्त्तित शिला-खण्ड भी है । मूर्त्तियों में, गणेश, सूर्य और भगवती की मूर्त्ति तथा चित्रित शिला, जिस पर सर्प भी उत्कीर्ण है, 10 वीं शताब्दी की हैं । मूर्त्तियाँ तो कर्णाट-पूर्व मिथिला शैली की हैं, पर चित्रित-शिला कर्णाट-कालीण मिथिला शैली की । ये सभी मूर्त्तियाँ और चित्रित-शिला इसी गाँव के उस तालाब में मिली थी जो इस गाँव के दक्षिण और दरभंगा-बहेड़ी मुख्य पथ के किनारे बायीं ओर है । यह तालाब प्राचीन है, लेकिन मूर्त्ति तब मिली थी, जब इस तालाब का नवीकरण किया जा रहा था । अतः यह गाँव और आस-पास के अन्य गाँव ओइनवार वंश या कर्णाट-शासन के समय ही नहीं बल्कि इस से पूर्व भी महत्वपूर्ण रहा था ।

सहायक पुस्तकें

1. मिथिलातत्त्व विमर्श– पं0 परमेश्वर झा
2. मिथिलाक इतिहास – डॉ0 उपेन्द्र ठाकुर
3. मिथिलाक्षरः उद्‌भव और विकास– सत्यार्थी
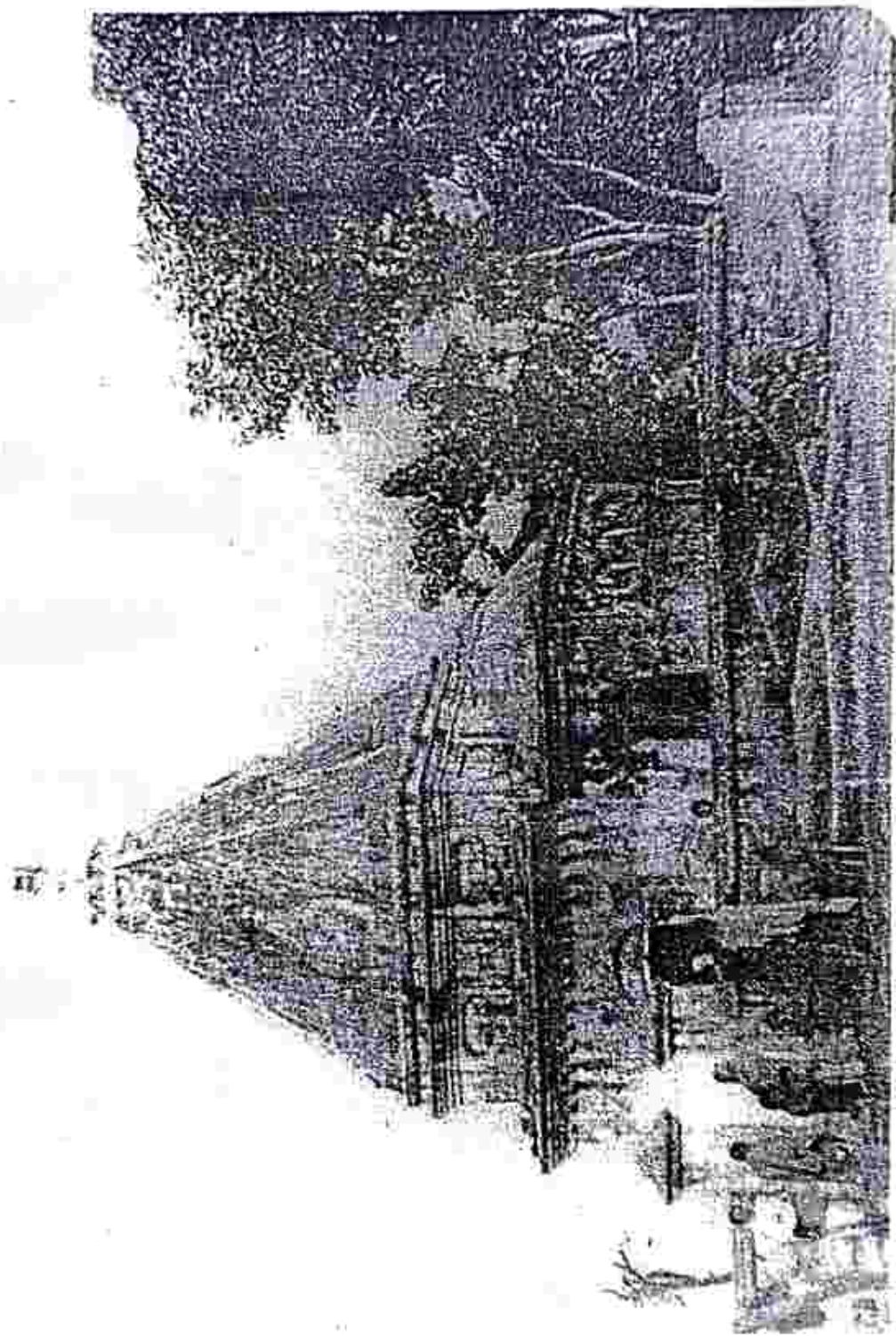
35. वर्धमानेश्वर मंदिर (देकुली)

36. गणेश (देकुली)

37. सूर्य (देकुली)

38. भगवती (देकुली)

39. चित्रित शिला (देकुली)

पुरातात्त्विक एवं आध्यात्मिक

DARSHNIYA MITHILA

दर्शनीय मिथिला

लेखक

सत्यनारायण 'सत्यार्थी'

द्वितीय पुष्प

अन्दामा

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूरब करीब 8 किलोमीटर दूर राजपूत बहुल एक गाँव अन्दामा एक ऊँची भूमि पर बसा हुआ है । सर्वेक्षण से साबित होता है कि अन्य प्राचीन महत्वपूर्ण गाँवों की तरह ही यह गाँव भी चौदहवीं शताब्दी के तीसरे दशक में खण्डहर रहा था । इस गाँव के पश्चिम एक बहुत बड़ा चौर है । इस चौर के आस-पास दो ओर – उत्तर और पश्चिम कुछ ऐसा जल-जमाव का क्षेत्र दूर से चला आया है, यथा प्राचीन समय में इस चौर में दो नदियाँ आकर संगम करती हों । संगम के बाद पूरब की ओर कुछ ही आगे बढ़ने पर उत्तर की ओर से आकर एक नदी इसमें मिलती है । इस तरह दो संगम के मध्य यह गाँव बसा हुआ है ।

उत्तर की ओर से आकर संगम करने वाली नदी के बायें किनारे **मनेनाडीह** में कई दशक पूर्व हल जोतने के समय एक अखंड महिषासुर-मर्दिनी की मूर्ति मिली थी जो इस समय इसी गाँव के मध्य एक तालाब के दक्षिणी किनारे पर एक मन्दिर में स्थापित है । यह मूर्ति मिथिला-शैली की है और बारहवीं शताब्दी के आस-पास उत्त्कीर्ण की गई होगी । कसौटी पत्थर की यह मूर्ति करीब ढाई फीट ऊँची और चौदह इंच चौड़ी है । जहाँ यह मूर्ति मिली थी वहाँ दूर तक एक प्राचीन आवासीय स्थान फैला हुआ है । और मिलने वाले स्थान पर प्राचीन मन्दिर की नीव अभी भी जमीन के नीचे है । जिस मन्दिर में सम्प्रति यह देवी स्थापित हैं, उसके निकट ही एक प्राचीन बरगद का पेड़ है । तालाब के किनारे इस पेड़ की जड़ में भी एक खण्डित महिषासुर-मर्दिनी की मूर्ति देखने को मिली है ।

कभी-कभी कुछ ऐसा चमत्कार कई देवस्थानों में होने लगता है, जिसे किसी भी तरह वैज्ञानिक कसौटी पर कसा नहीं जा सकता। कुछ ऐसा ही चमत्कार इस वर्ष दुर्गापूजा के आस-पास यहाँ हुआ था। यहाँ देवी के ऊपर मौड़ (एक विशेष प्रकार का मुकुट) लटकाया गया है। यद्यपि यह मौड़ किसी प्राचीन पाषाण प्रतिमा के ऊपर लटकाया नहीं जाता, तथापि यहाँ लटकाया जाता है। यह मौड़ बगैर हवा के एक सप्ताह तक जोड़ों से दाँए-बाँए हिलता रहा। इसी तरह की एक घटना जो स्वयं मैंने देखी थी, कोर्थ गाँव की है। इस गाँव के मध्य एक ऊँचे स्थान पर महावीर स्थान है जहाँ प्रतिवर्ष हनुमान का प्रतीक-चिह्न एक सम्पूर्ण बाँस में लगाकर गाड़ी जाती है और यह क्रम लगातार प्रतिवर्ष चलता रहता है। प्रायः रामनवमी के अवसर पर प्रतिवर्ष चैत महीने में यह आयोजन होता है। यह ध्वजा बगैर हवा के जोर-जोर से हिलने लगी थी और यह क्रम करीब 5 दिनों तक चलता रहा। इसके मध्य यहाँ की जमीन में भी दरार नजर आने लगी थी। पूजा-पाठ के बाद ध्वजा का हिलना स्वतः बन्द हो गया था। इस तरह की घटना आध्यात्मिक शक्ति को बल प्रदान करती है और इससे अध्यात्म के प्रति लोगों में आसक्ति बढ़ती है।

अन्दामा गाँव के उत्तर-पूर्व एक महादेव स्थान है। यहाँ मन्दिर में शिवलिंग स्थापित है। मन्दिर तो नवीन ही है लेकिन इस मन्दिर के बरामदे में मुझे एक प्रस्तर का चौकोर स्तम्भ मिला जो किसी मन्दिर का चौकठ है। इस चौकठ के मध्य में गणेश की मूर्ति उत्कीर्ण है। गणेश मूर्ति का शिल्प गुप्तकालीन है। इस चौकोर स्तम्भ के सहारे इस गाँव की प्राचीनता आँकी जा सकती है। इस प्रकार के स्तम्भ मुझे तिलकेश्वरस्थान, मिलन महादेव, रतनपुर और कोर्थ में देखने को मिले है। इन सभी स्थानों का यह स्तम्भ जो प्रस्तर का है, प्राचीन मन्दिर का चौकठ रहा होगा। सबों का शिल्प गुप्तकालीन ही है।

40. महिषासुरमर्दिनी (अन्दामा)

41. गणेश स्तम्भ (अन्दामा)
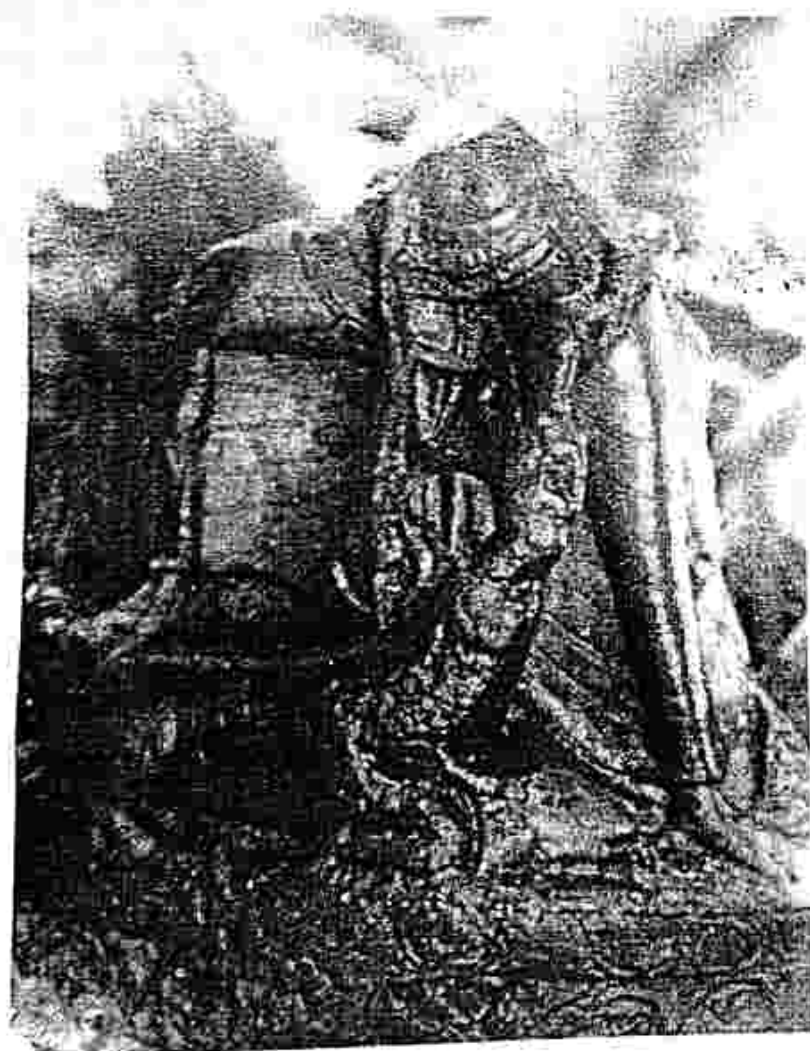
42. खंडित महिषासुरमर्दिनी (अन्दामा)

असगाँव–धर्मपुर

दरभंगा मुख्यालय से पाँच किलोमीटर दूर, पूर्वोत्तर दिशा में एक अमराई के किनारे 16 जुलाई, 1998 ई० को एक चार फीट आठ ईंच ऊँची कसौटी पत्थर और मिथिला-शैली की मूर्ति, सूर्य की मिली थी । प्रसिद्ध गाँव गोविन्दपुर से यह स्थान कुछ ही दूर पूर्वोत्तर दिशा में है । और जहाँ मूर्ति मिली वह जमीन भी गोविन्दपुर वालों की ही है । यद्यपि इस स्थान का नाम असगाँव-धर्मपुर नहीं तथापि यह इसी गाँव के क्षेत्र के अन्दर पड़ता है । यह मूर्ति सतह से करीब आठ फीट दस इंच मिट्टी के नीचे थी । मिट्टी निकालने के क्रम में मूर्ति मिली और इसके निकट के गाँव रघेपुरावालों ने इसे एक गह्वर में स्थापित कर इसकी पूजा प्रारम्भ कर दी । गोविन्दपुर वालों ने दावा तो इस पर किया लेकिन यह प्राप्त नहीं कर सके ।

18 जुलाई, 1998 ई० को मैंने इसका सर्वेक्षण किया था । सर्वेक्षण में मैंने पाया कि जहाँ मूर्ति मिली वह स्थान मन्दिर के किनारे का नदी अवशेष है, जिसमें सुरक्षा की दृष्टि से किसी समय मूर्ति छिपाई गयी थी । मन्दिर का अवशेष ईंट की नींव के रूप में प्राप्ति स्थान से करीब 30 फीट पश्चिमोत्तर कोने पर अमराई के किनारे मैंने देखा था । यह नींव 20 जुलाई, 1998 ई० को पुनः मुझे देखने को नहीं मिली । ईंटें उखाड़ ली गई थी और नींव के स्थान पर गड्ढा था । इस मूर्ति की ऐतिहासिक और पुरातात्विक पृष्ठभूमि में जाने की अपेक्षा प्रचार-प्रसार और राजनैतिक दावपेंच खेलने पर उस समय लोगों ने विशेष ध्यान दिया था । फलतः उत्तर प्रदेश की पुलिस इस पर दावा लेकर पहुँची तो लेकिन वह यहाँ से उसे ले जाने में असफल रही ।

उसी समय मैंने इस मूर्ति की ऐतिहासिक और पुरातात्विक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत "असगाँव-धर्मपुर से प्राप्त भगवान भास्कर की प्रस्तर प्रतिमा" नाम से एक पाँच पृष्ठ का बुकलेट भी निकाला था जिसमें कुछ सम्भावना इस मूर्ति के अतीत के सम्बन्ध में है । वही बात मैं पुनः दुहरा रहा हूँ ।

मेरा अनुमान है कि 1526 ई० के आस-पास यह मूर्ति मन्दिर के पास ही जल में छिपाई गई थी । जहाँ मूर्ति पाई गई वहाँ यह मूर्ति सीधी लेटी थी और मूर्ति के सामने का हिस्सा आसमान की ओर था । सर दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर और पाँव पूर्वोत्तर दिशा में थे । जहाँ यह पाई गई वह स्थान जलाशय के मध्य में है, अत: जलार्पण के समय इसमें पानी का स्तर नगण्य रहा था । ओइनवार वंश के अन्तिम राजा थे लक्ष्मीनाथ सिंह देव "कंसनारायण" । इनकी राजधानी थी आधुनिक रामभद्रपुर जहाँ ये नसरत शाह के हाथों 1526 ई0 में मारे गये । इसी मुसलमानी आक्रमण के समय या ओइनवार वंश से पूर्व कर्णाट शासन के समय 1324 ई० से 1326 ई० के मध्य मिथिला पर भीषण मुसलमानी आक्रमण हुआ था, उस समय यह मूर्ति छिपाई गई थी । रामभद्रपुर यहाँ से दक्षिण दिशा में मात्र पाँच किलोमीटर की दूरी पर है, अतः अधिक सम्भावना तो यही है कि यह मूर्ति उसी समय छिपाई गई थी । सम्भवतः मूर्ति छिपाने की जानकारी जिन लोगों को थी वे जीवित नहीं रहे और मूर्ति जल-विश्राम के अन्तर्गत ही समाधिस्थ हो गई – मिट्टी जमती गई, समय बीतता रहा । जहाँ मूर्ति मिली है, इसके आस-पास कई प्राचीन खण्डहर हैं ।

सहायक पुस्तक –

1. असगाँव-धर्मपुर से प्राप्त भगवान भास्कर की प्रस्तर प्रतिमा - सत्यार्थी

43. सूर्य मूर्ति (असगाँव-धर्मपुर)

दरभंगा शहर

दरभंगा शहर दो खंडों में बँटा हुआ है – दरभंगा और लहेरियासराय । दरभंगा में महाराज दरभंगा के किला के अतिरिक्त जिला का प्रमुख व्यापारिक नगर भी है । दरभंगा राज तो अब रहा नहीं अतः इस परिसर में ही दो विश्वविद्यालय हैं – कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय और ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय । दरभंगा मात्र जिला ही नहीं, प्रमंडल का मुख्यालय भी है । सरकारी कार्यालय लहेरियासराय में हैं, यथा – प्रमंडल मुख्यालय, जिला मुख्यालय, न्यायालय आदि-आदि । इस शहर का नाम दरभंगा कैसे पड़ा इस सम्बन्ध में अनेकों किंवदंतियाँ होते हुए भी ठोस प्रमाण एक भी नहीं है । लोग इसे दरभंगी खाँ द्वारा बसाये जाने के कारण, बंगाली इसे बंग द्वार और इतिहास इसे गंडकीगढ़, प्राचीन नाम मानता है जो आगे चलकर दरभंगा के नाम से विख्यात हुआ । लेकिन एक प्राचीन साहित्य में इसका नाम है – दर्भङ्गा । दर्भङ्गा का अर्थ है – दर्भ + अङ्गा, अर्थात कुशाच्छादित स्थान । प्राचीन काल में दरभंगा यज्ञ स्थली रही है । मुसलमानी आक्रमण के समय यह खंडहर बनी, जिसका प्रमाण है मलेक्षमर्दिनी और असगाँव-धर्मपुर की सूर्य-मूर्ति । आबाद होने से पूर्व यह स्थान **कुशाच्छादित किला** के रूप में रहा होगा जो आगे चलकर दरभंगा के नाम से प्रचलित हुआ । यहाँ के प्रमुख चार तालाब – **हड़ाहीं, गंगासागर, दिग्घी** और **मिर्जा खाँ** तालाब प्राचीन नदी के अवशेष पर ही हैं । उत्तर की ओर से आकर संस्कृत विश्वविद्यालय के पास का तालाब भी नदी के रूप में इन्हीं तालाबों से मिलती थी । किलाघाट में प्राचीन किला का अवशेष अब नष्टप्राय है । सत्तर के दशक में प्राचीन किला का वह अंतिम

अवशेष जो किलाघाट चन्द्रधारी महाविद्यालय के पास और मस्जिद के पीछे धारा की पेटी में गिड़ी पड़ी थी, मैंने देखा था । इसके निकट ही एक प्राचीन कुँआ भी था और पुस्ताघाट तो अभी तक लोगों के जुबान पर है ।

आध्यात्मिक दृष्टि से तो यहाँ कई प्रमुख स्थान हैं, यथा – कालीस्थान, महावीरस्थान, दुर्गास्थान, श्यामाकाली स्थान आदि–आदि । लेकिन पुरातात्त्विक अवशेष के रूप में किला अवशेष के अतिरिक्त मलेक्षमर्दिनी की मूर्ति ही उपलब्ध है । अनेकता में एकता ही भारतीय संस्कृति का मूल–मंत्र रहा है जिसका उदाहरण है मिथिला का दो परिवार – एक महथा परिवार और दूसरा राजस्थान से आये जाजोदिया परिवार । महथा परिवार पंजाब से आकर यहाँ बसा था । इन्हीं दो परिवारों के कारण आज मलेक्षमर्दिनी स्थान शहर में सबसे अधिक सुन्दर और दर्शनीय है । यदि एक सृजक तो दूसरा पालक इसके लिये साबित हुआ है । करीब तीन या साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व, जहाँ आज मलेक्षमर्दिनी स्थापित हैं, इससे कुछ ही दूर पश्चिम मिट्टी के नीचे यह मूर्ति मिली थी । यह जमीन एक दूसरे वर्ग की थी जो इसे हिन्दुओं को सौंपना नहीं चाहता था । लेकिन इस महथा परिवार का ही एक व्यक्ति स्वर्गीय धनीराम महथा ने अपने प्राण पर खेल कर इस मूर्ति को नष्ट होने से बचाया । यद्यपि यह स्थान एक न्यास की देख–रेख में है, तथापि जाजोदिया परिवार ही इसका कार्यकारी सक्रिय सदस्य हैं ।

अनुपम मलेक्षमर्दिनी की मूर्ति प्रमुख रूप से पार्वती की है, लेकिन इस एक ही मूर्ति में तीन देवियाँ परिकल्पित हैं – माँ, पत्नी और प्रेयसी । यह मूर्ति यदि बालस्वरूप गणेश और कार्तिक की माँ है तो कृष्ण की प्रेयसी राधा और शिव की अर्द्धांगिनी पार्वती भी । यह सब प्रतीक के माध्यम से स्पष्ट हुआ है । मूर्ति की चार भुजाएँ हैं – नीचे की दो भुजाओं से गणेश और कार्तिक को फल और मिठाइयाँ देती हैं तो दायीं ओर के ऊपर की भुजा में मुरली और बायीं ओर के ऊपर की भुजा में आरसी है । कसौटी पत्थर, मिथिला मूर्ति शैली और अखंड यह मूर्ति प्रत्येक दृष्टि से अद्वितीय है । मिथिला शैली की यह मूर्ति

बारहवीं या तेरहवीं शताब्दी के आसपास उत्कृण हुई होगी । यह काल था, कर्णाट शासन का ।

आधुनिक बागमती नदी बहुत प्राचीन नहीं है । यह नदी किसी विशेष प्राकृतिक आपदा की देन है जो भूकम्प हो सकती है । अभी यहाँ यह जिस रास्ते से बहती है, वह ठोस भूमि है और लगता है यह नदी किला तोड़कर बह रही हो जबकि प्राचीन नदी का अवशेष जिसकी चर्चा ऊपर की गई है कुँवर सिंह कॉलेज के पश्चिम की खाई तथा अस्पताल कैम्पस का जल-जमाव क्षेत्र स्वाभाविक पथ है । इस तरह से प्राचीन नदी–अवशेष का पश्चिमी और दक्षिणी तट ही यहाँ का महत्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्थल रहा है । प्राचीन नदी का अवशेष यत्र-तत्र दरभंगा शहर से लेकर यहाँ से पूर्व-दक्षिण करीब बारह किलोमीटर की दूरी पर स्थित अन्दामा गाँव के पश्चिम के चौर तक है । यह पश्चिम दिशा से इस चौर में गिरती रही है ।

सहायक पुस्तकें -

1. मिथिलाक इतिहास - डॉ० उपेन्द्र ठाकुर
2. प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ - दरभंगा जिला, और
3. मिथिला की पौराणिक मूर्तिकला (भाग-1) - सत्यार्थी

44. मलेक्षमर्दिनी (मिर्जापुर)
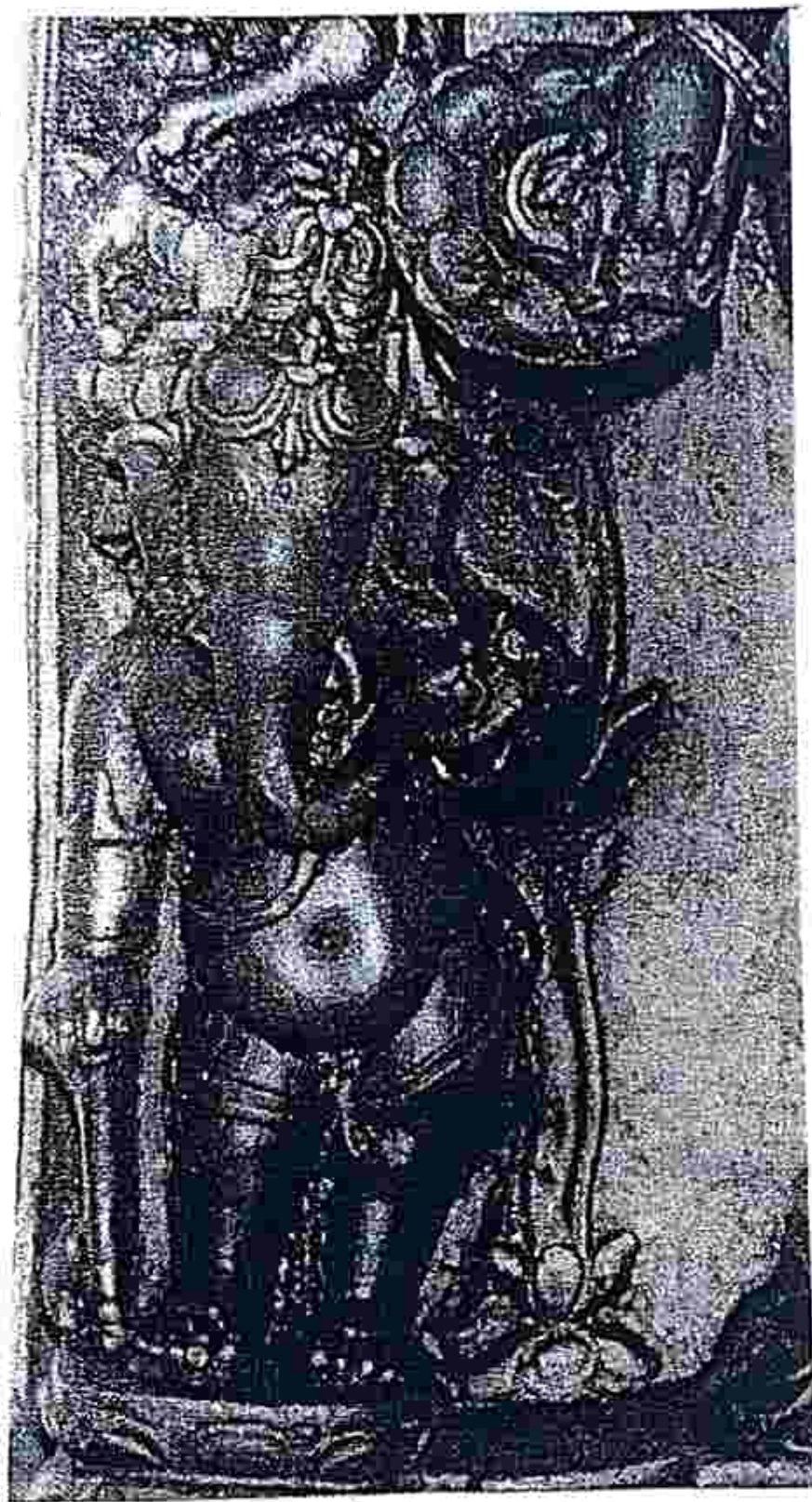
45. गणेश (मलेक्षमर्दिनी मूर्ति का अंश)
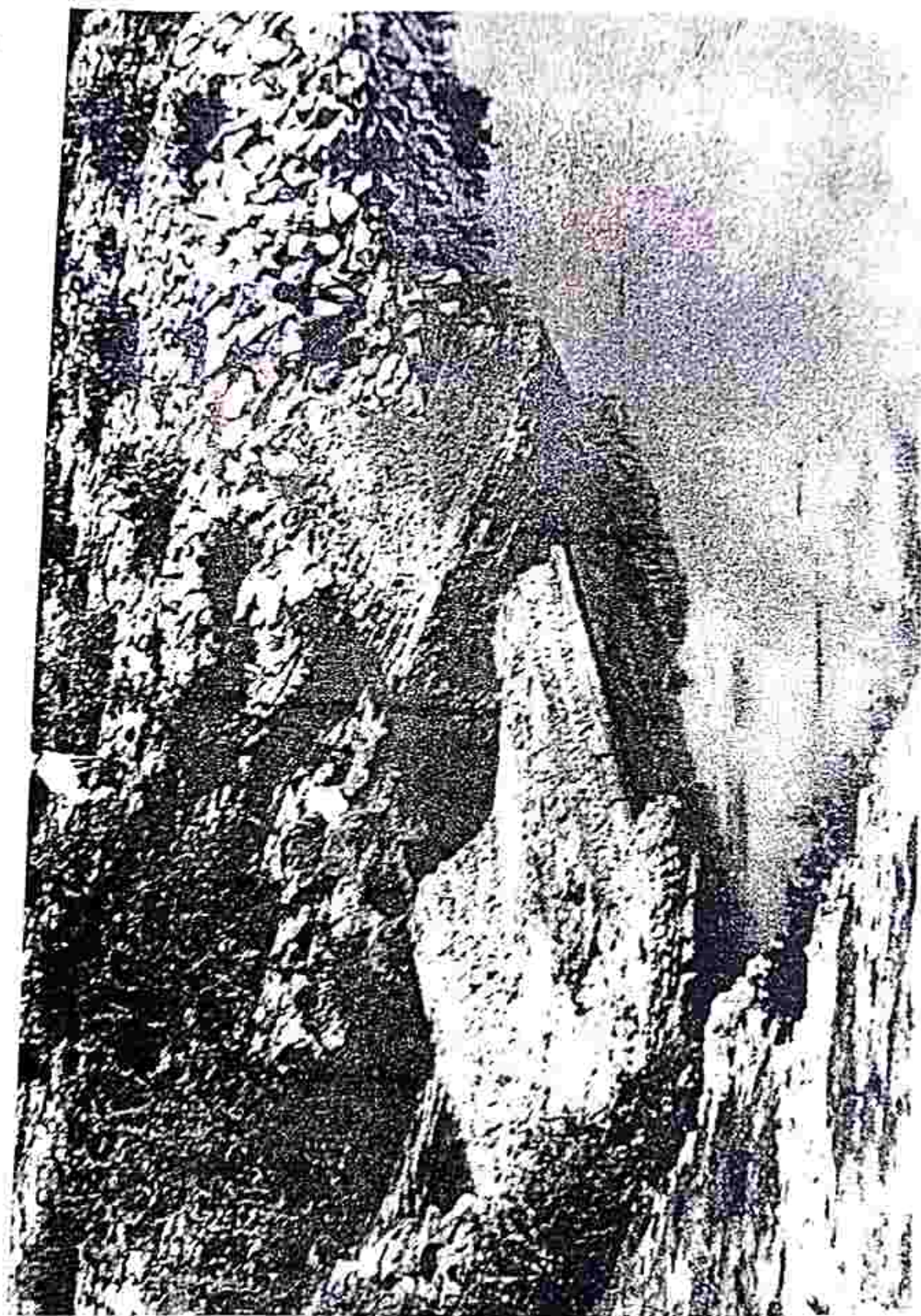
46. प्राचीन किला–अवशेष (किलाघाट, दरभंगा)

तारालाही

यदि आप में योग्यता और इच्छाशक्ति है तब भी तीन अनुकूल परिस्थिति का होना अत्यावश्यक है, शारीरिक, मानसिक और आर्थिक । इन तीनों में से मेरी एक भी ऐसी परिस्थिति नहीं जिसे मैं अनुकूल कहूँ । इसके बाद भी मैं दौड़ रहा हूँ और पीछे मुड़कर नहीं देखता । यह सब ईश्वरीय प्रेरणा की देन है । किसी आध्यात्मिक शक्ति को जब मुझे दर्शन देने की इच्छा होती है तो वे किसी न किसी माध्यम से इसकी सूचना मुझ तक पहुँचा देती है । इसी प्रकार की एक सूचना मुझे श्री रामदेव झा से 25 जनवरी 2001 ई० को मिली कि उन्होंने विगत साठ के दशक में एक प्राचीन मूर्ति तारालाही में एक पुराने पीपल की जड़ के खोल में देखा था । उनका अनुमान था कि यह मूर्ति ग्राम के नाम के अनुकूल भगवती की ही हो सकती है । तारालाही दरभंगा जिला मुख्यालय से मात्र साढ़े तीन किलोमीटर पश्चिम, दरभंगा-समस्तीपुर मुख्य सड़क पर एक मजदूर वर्ग बहुल हिन्दु गाँव है । यहाँ के प्रत्येक निवासी नवीन हैं, कभी यह स्थान खंडहर रहा था । प्रत्येक वर्षा ऋतु में यह गाँव जलप्लावित रहता है । कुछ ही ऐसा वास-स्थान है जो वर्षा ऋतु में भी सिर ताने पानी पर झाँकने का दु:साहस कर सकता हो ।

जिला मुख्यालय के निकट ही रहने के कारण यहाँ तक पहुँचना मेरे लिए कोई कठिन कार्य नहीं था और 27 जनवरी को मैं भगवती की खोज में यहाँ पहुँच भी गया । भगवती की मूर्ति तो नहीं मिली लेकिन जो मूर्ति मिली वह कल्पनातीत थी । यह मूर्ति थी नटराज की जो अभी तक भगवती के नाम पर पूजी जाती रही थी । कसौटी पत्थर और गुप्तपूर्व शैली की यह अनुपम मूर्ति

पीठिका सहित 14 × 18 इंच की है । गजासुर-वध के समय का तांडव नृत्य की परिकल्पना इस मूर्ति पीठिका पर उकेरी गयी है । प्राचीनता ही नहीं, विषय-वस्तु और शिल्प की दृष्टि से भी यह मूर्ति उत्तर भारत की अद्वितीय मूर्ति साबित हो सकती है । शहर के इतना निकट होते हुए भी अभी तक यह मूर्ति अपरिचित रही थी । गलत पहचान से पूजित होने का कुछ कारण भी है ।

प्राचीन पाषाण मूर्तियों पर सिन्दूर-लेपन एक परम्परा बन चुकी है । जब यह मूर्ति पेड़ की जड़ में दिखाई पड़ी थी तब से अब तक लेपित सिन्दूर की परत इतनी मोटी जम चुकी थी कि यह मात्र बुत दिखाई पड़ती थी । पुराने पीपल का पेड़ जब गिर गया तो मूर्ति उठाकर इसी गाँव के एक ब्रह्मस्थान में सुरक्षित रख दी गई है । यहाँ भी किसी ऐसे व्यक्ति की कमी है जो इस मूर्ति को प्रतिदिन साफ सुथरा कर सके । लेकिन सिन्दूर लेपन के लिए पुजारियों की कमी नहीं है । मुझे यहाँ करीब दो घंटे का समय और कुछ लोगों की सहायता लेनी पड़ी, जिनके सहयोग से मैं मूर्ति सफाई के बाद ही मूर्ति को पहचान पाया ।

मूर्ति-पीठिका का वह अंश जो आसन के नीचे होता है और जिसमें अलंकरण के अतिरिक्त कुछ प्रतीक चिह्न भी उत्कीर्ण करने की परम्परा रही है, प्राचीनता के कारण घिसा हुआ है । इससे ऊपर के अंश को पाँच हिस्सों में बाँटकर इस पर पाँच पूर्ण प्रस्फुटित कमलदल उत्कीर्ण हैं । मध्य में बाल शिव दिगम्बर नर्तित हैं और इनके दोनो ओर दो कृशकाय अनुचर भी उसी मुद्रा में दिखाई पड़ते हैं । दिगम्बर रूप बाल शिव की दोनो बाहें ही आधार हैं तांडव नृत्यरत अष्टभुज नटराज का । सम्पूर्ण पीठिका में यह मूर्ति सबसे बड़ी और प्रमुख भी है । पीठिका की प्रत्येक मूर्ति में न्यूनत्तम आभूषण का व्यवहार हुआ है और वस्त्र का तो व्यवहार बिल्कुल ही नहीं । नटराज का रौद्र रूप स्पष्ट करने के लिये अंग-प्रत्यंग की माँसपेशियाँ उभारी गई हैं । बायीं ओर के हाथ की एक हथेली चेहरे के निकट है जिसकी दो अंगुलियाँ, तर्जनी और कनिष्ठा तनी हुई हैं, यह एक भाव प्रदर्शन है, जिसका अर्थ है – 'एकोहं

द्वितीयो नास्ति' । नटराज के दो दाएँ हाथ पूर्ण रूप से खंडित हैं और एक बायाँ हाथ आंशिक रूप से जिसमें घंटी है । दायीं ओर के एक हाथ में है डमरू और बायीं ओर के एक हाथ में त्रिशूल । दाएँ-बाएँ एक-एक हाथ सर के ऊपर जुड़ा हुआ है जिसने गजासुर को उठा रखा है । मूर्ति पीठिका के अतिरिक्त नटराज का चेहरा और कमर भी आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त है । मूर्ति पीठिका में कुल पाँच आकृति उभरी हुई हैं – गजासुर, नटराज, दिगम्बर शिव ओर दो अनुचर । यह सब के सब नर्त्तित हैं । कुल मिलाकर कुछ ऐसा दृश्य उपस्थित है कि मूर्ति पीठिका का वातावरण ही नर्त्तित प्रतीत होता है । इस मूर्ति पीठिका में यदि कुछ स्थिर है तो वह है कमलासन और इससे नीचे का अंश । देश के अन्य हिस्सों में नटराज की जो मूर्तियाँ मिली हैं, उनमें से अधिकतर धातु की हैं और इस मूर्ति से नवीन भी । नटराज की पत्थर की मूर्ति अभी तक देश में अनुपलब्ध रही थी और विषय-वस्तु तथा शैली की दृष्टि से तो यह मूर्ति सम्पूर्ण भारत में अद्वितीय कही जा सकती है ।

प्रमुख रूप से तो मिथिला पंचदेव उपासक रही है लेकिन आध्यात्मिक क्षेत्र में इससे सम्बन्धित एक भी ऐसी मूर्ति नहीं जिसकी परिकल्पना और परिदर्शन यहाँ नहीं हुआ हो । प्राचीनकाल में मिथिला इस क्षेत्र में भारतीय संस्कृति के लिये विशेषज्ञ और मार्गदर्शक रही है । मिथिला में प्रत्येक किलोमीटर पर एक शिवलिंग है । पंचमुख शिवलिंग के अतिरिक्त अनुपम विशाल भैरव की भी मूर्ति मिली है । उमामहेश्वर की मूर्तियाँ तो अनेकों पाई गईं है । यदि कुछ कमी थी तो नटराज और दिगम्बर की, जिस स्थान की पूर्ति यह मूर्ति करती है । अभी तक इस मूर्ति का महत्त्व आँका नहीं गया था, अत: जिस रूप में यह मूर्ति सुरक्षित की गई है, परिदर्शन की व्यवस्था के अनुकूल नहीं । इससे और अधिक सुरक्षित करने की आवश्यकता के अतिरिक्त उत्तम ढंग से परिदर्शन की व्यवस्था की भी आवश्यकता है । यह मूर्ति तारालाही का नाम अमर करने में सक्षम है ।

47. नटराज (तारालाही)

48. नटराज मूर्ति अंश (तारालाही)

डिलाही

दरभंगा जिला मुख्यालय से समस्तीपुर जाने वाली मुख्य सड़क पर करीब पाँच किलोमीटर दूर, बड़ी डिलाही एक गाँव है । इस गाँव के उत्तर-पूर्व और दक्षिण दूर-दूर तक चौर ही चौर नजर आता है । लेकिन मिट्टी का एक ऊँचा भूखण्ड सड़क के दोनो ओर पूर्व और पश्चिम दूर तक चला गया है । प्राचीनकाल में यह भूखण्ड सांस्कृतिक दृष्टि से धनी रहा था जिसका अवशेष अब बाहर आने लगा है ।

कुछ दशक पूर्व घर बनाने के लिए मिट्टी खोदते समय करीब पाँच फीट गहराई में एक खंडित मूर्ति मिली । यह मूर्ति इस समय मुख्य पथ पर ही सड़क के पूरब एक मंदिर में पूजित है । यह मूर्ति आधारशिला (पीठिका) सहित नीचे की ओर से टूटी हुई है । फिर भी इतना अंश तो है ही कि मूर्ति की पहचान की जा सके । प्रतीक चिह्न से यह मूर्ति भगवान सूर्य की लगती है । कसौटी पत्थर और मिथिला शैली की इस मूर्ति की ऊँचाई करीब तीन फीट रही होगी । यह मूर्ति शैली के अनुरूप बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी की लगती है ।

सूर्य मूर्ति के बाहर आने से पूर्व इसी गाँव के एक तालाब (चमराही) में एक और मूर्ति मिली थी । यह तालाब गाँव के पश्चिम है । अग्नि की यह मूर्ति कसौटी पत्थर और सूर्य मूर्ति से पूर्व आठवीं-नवीं शताब्दी की लगती है । मुख्य सड़क के किनारे ही यह मूर्ति भी एक छोटे मन्दिर में स्थापित है ।

49. सूर्य मूर्ति (डिलाही)
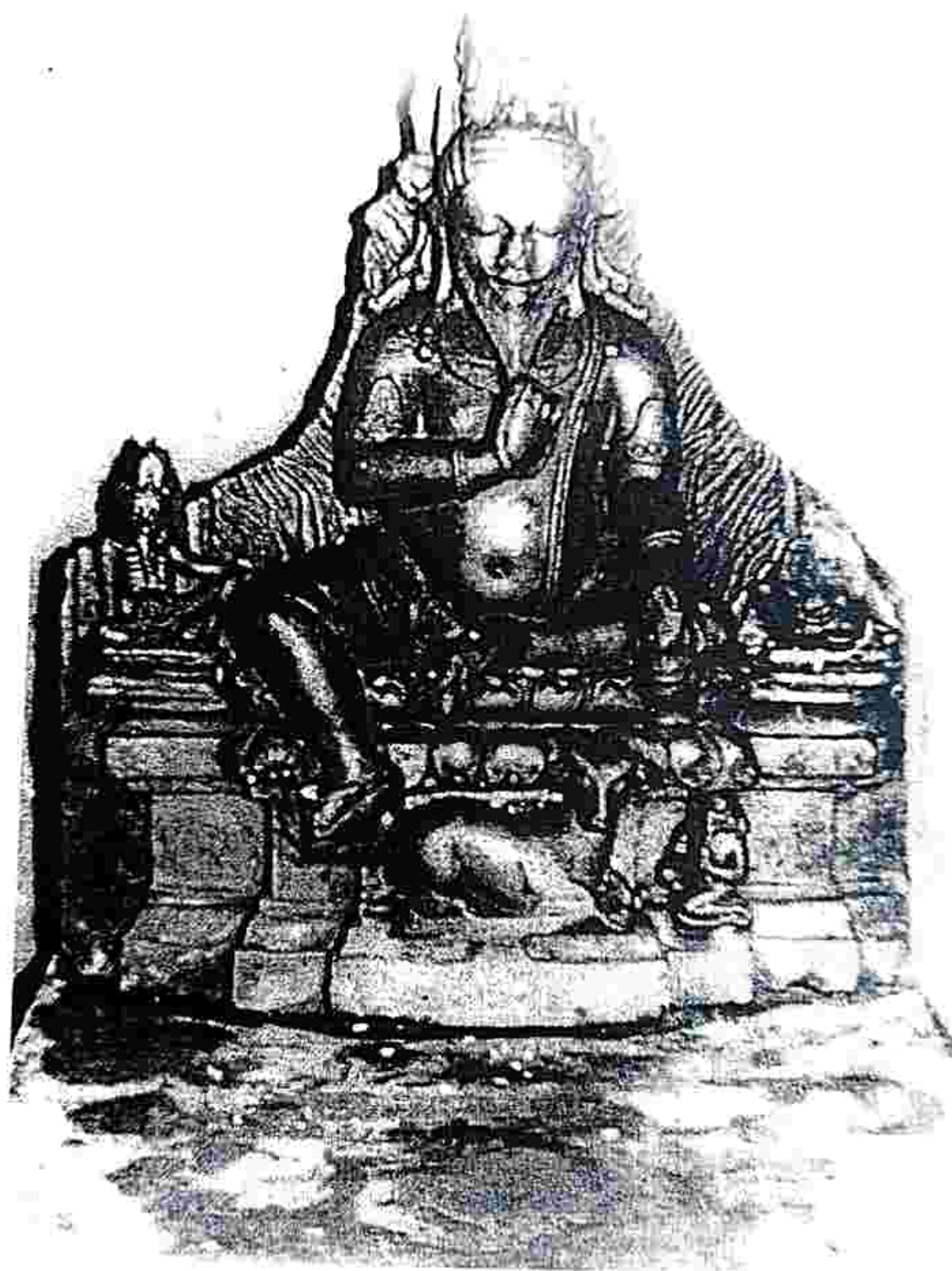
50. अग्नि (डिलाही)

रामपुर

इससे पूर्व डिलाही गाँव की चर्चा हुई है । डिलाही एक पंचायत भी है और इसी पंचायत में है गाँव रामपुर । रामपुर की दूरी डिलाही से मात्र एक किलोमीटर पश्चिम है । डिलाही और रामपुर दोनों ही पूर्व में खण्डहर रहे थे । इस समय की आबादी नवीन है और रामपुर तो बिलकुल ही नवीन । रामपुर से मात्र दो किलोमीटर उत्तर है, प्रसिद्ध गाँव पनिचोभ । रामपुर गाँव के मध्य एक प्राचीन तालाब मात्र है । यह तालाब वर्ष 1998 ई० में सूख गया था । मिट्टी निकालने के समय इस तालाब में एक मूर्ति-खण्ड मिला जो इसी तालाब के उत्तरी भिण्डे पर एक पेड़ की जड़ में रख दिया गया है ।

प्राचीन मूर्तियों की पीठिका में सबसे ऊपर माला लिये गन्धर्व, विशेषकर देवी-देवताओं की पीठिका में उत्कीर्ण करने की परम्परा रही है । यह मूर्ति-खण्ड भी एक गन्धर्व वाला अंश ही है जिसने दोनों हाथों से एक माला को थाम रखा है । जिस मूर्ति का यह अंश है, उस मूर्ति की ऊँचाई पाँच फीट से कम नहीं होगी । क्योंकि यह मूर्ति-खण्ड करीब 9 इंच का है । कसौटी पत्थर, मिथिला शैली और बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी में उत्कीर्ण मूर्ति का यह अंश है । हो सकता है वह मूर्ति भी इसी तालाब में या इसी तालाब के आसपास कहीं दबी पड़ी हो ।

51. गन्धर्व (रामपुर)

सिमरिया–भिण्डी

जिला समस्तीपुर और प्रखण्ड कल्याणपुर का एक गाँव है सिमरिया-भिण्डी । सर्वेक्षण से पता चला है कि यह गाँव भी चौदहवीं शताब्दी के मुसलमानी आक्रमण के समय खण्डहर बना था । सिमरिया-भिण्डी एक पंचायत है, लेकिन जब गाँव के रूप में लिया जाएगा तो सिमरिया और भिण्डी दोनों ही दो गाँव हैं । सिमरिया से एक किलोमीटर पूर्व है गाँव भिण्डी, जिसे पुरातात्विक दृष्टि से मैं अत्यन्त महत्वपूर्ण मानता हूँ । भिण्डी, भिण्ड शब्द से बना है । मैथिली में भिण्ड शब्द का अर्थ है टीला । अतः नवीन आबादी से पूर्व यह मात्र टीला रहा था । यहाँ की पुरातात्विक उपलब्धि जो अनायास है, देखा जाय तब इस गाँव का महत्त्व उभरकर सामने आता है । एक बहुत बड़ा भूभाग जो दूर से ही उठता चला गया है और मध्य का भाग सबसे ऊँचा है, इसी पर गाँव भिण्डी बसा हुआ है । यहाँ कई जातियाँ हैं जिनमें कुछ सुखी-सम्पन्न घर ब्राह्मणों के भी हैं । ब्राह्मण अधिकृत क्षेत्र सबसे ऊँचा है, अतः स्पष्ट है कि नवीन आबादी में सबसे पहले ब्राह्मणों ने ही इस गाँव में अपना घर बनाया होगा । अन्य जातियाँ बाद में आकर यहाँ बसी हैं । इस टीला के निकट पश्चिम-दक्षिण से एक प्राचीन नदी भी बहती रही थी, जिसका अवशेष आज भी कई जगह है ।

सिमरिया-भिण्डी गाँव समस्तीपुर जिला मुख्यालय और दरभंगा मुख्यालय से करीब-करीब समान दूरी पर है । दरभंगा-समस्तीपुर पथ पर दरभंगा से दक्षिण-पश्चिम 25वें किलोमीटर पर एक चौक है मिर्जापुर । यहाँ से मात्र पाँच कि.मी. पूरब है गाँव सिमरिया-भिण्डी । मिर्जापुर चौक से सिमरिया-भिण्डी तक हर प्रकार के वाहन जाने की सड़क है । भिण्डी गाँव के

पश्चिम जहाँ यह सड़क गाँव में प्रवेश करती है, एक भगवती मन्दिर बाँयी ओर सबसे पहले नजर आता है । गुप्तपूर्व शैली की आंशिक रूप से खण्डित, कसौटी पत्थर की महिषासुरमर्दिनी, इस मन्दिर में स्थापित हैं जो कई दशक पूर्व यहीं एक पुराने पेड़ के गिरने के बाद उसी पेड़ की जड़ में मिली थी । इस देवीस्थान से कुछ ही कदम पूर्वोत्तर दिशा में एक ऊँचे स्थान पर बरसात के बाद मिट्टी बहने के कारण इसी वर्ष (2-9-2000) दो चरवाहों को बकरी चराने के क्रम में उमा-महेश्वर की एक खण्डित मूर्ति मिली । इस मूर्ति का आकार है, 44 × 20 से० मी० और यह मूर्ति भी कसौटी पत्थर की ही, लेकिन गुप्तशैली की है । महिषासुरमर्दिनी की मूर्ति का आकार है 48 × 30 से० मी० । मिथिला शैली की एक सूर्यमूर्ति जो 70-80 प्रतिशत झड़ी हुई है, भिण्ड गाँव के ही ब्राह्मण-टोली के अन्तर्गत एक पेड़ की जड़ में खड़ी है । पेड़ की जड़ ने इसे इस तरह से जकड़ लिया है कि मूर्ति का मात्र 50 प्रतिशत अंश ही मिट्टी से बाहर है । कसौटी पत्थर की यह मूर्ति करीब 80 वर्ष पहले तब इस पेड़ के नीचे रख दी गई जब यह इसी गाँव के एक चौर में मिली थी । यह चौर गाँव से दक्षिण-पूर्व की ओर है । इसके अतिरिक्त कुछ स्थानों पर मिट्टी खोदने के समय अनाज पीसने की शिला और एक शिला मसाला पीसने की भी मिली है । पोखराम नामक गाँव में भारबन से जिस प्रकार की दो शिलाएँ मिली हैं, यहाँ की शिला भी उससे मिलती-जुलती है । पोखराम गाँव इस स्थान से करीब 60 कि.मी. पूर्व दिशा में दरभंगा जिला और बिरौल प्रखण्ड में है । वहाँ शिला के साथ जो मूर्ति मिली है या अन्य पुरातात्विक सामग्रियाँ मिली हैं, वे सब गुप्तकालीन हैं, अतः ये शिलाएँ भी इसी काल की प्रतीत होती हैं ।

भिण्डी गाँव के किनारे ही पूर्वोत्तर दिशा में एक प्राचीन खण्डहर है, टीला जैसा । यहाँ एक प्राचीन कुँआ भी है । इस कुँआ के नवीकरण करने के समय, इसमें हिरण का एक कंकाल मिला था जिसका सिंग अभी भी गाँव के एक व्यक्ति के पास है । यद्यपि अब इस कुँए को आंशिक रूप से पाट दिया गया है, फिर भी अवशेष बाकी है ।

52. महिषासुरमर्दिनी (सिमरिया-भिण्डी)

53. उमा–महेश्वर (सिमरिया–भिण्डी)

54. सूर्य मूर्ति (सिमरिया–भिण्डी)

55. पाषाण अवशेष (सिमरिया-भिण्डी)

अरई

दरभंगा जिला और सिंहवाड़ा प्रखण्ड के अरई एक मुस्लिम बहुल गाँव है, लेकिन यहाँ कुछ घर हिन्दुओं के भी हैं । दरभंगा से मुजफ्फरपुर जाने की मुख्य सड़क पर सिमरी से आगे एक सड़क दक्षिण की ओर मुड़ गई है । यह गाँव इसी सड़क पर यहाँ से करीब पाँच कि०मी० दक्षिण में है । दरभंगा मुख्यालय से यहाँ की दूरी है 30 कि०मी० । कई दशक पूर्व इस गाँव के पूरब स्थित एक बाँस के झुरमुट से करीब पाँच फीट ऊँची पालशैली की एक सूर्यमूर्ति प्राप्त की गई जो बुरी तरह क्षतिग्रस्त है । यह मूर्ति मटमैले पत्थर की है । यह मूर्ति इस समय प्राप्ति स्थान के निकट ही आकाश के नीचे एक ईंट की चहारदिवारी के मध्य खड़ी है । इस घेरा के उत्तर है एक प्राचीन तालाब जिसका प्रत्येक भिण्डा मुसलमानों के अधीन है । अरई गाँव चौदहवीं शताब्दी में खण्डहर बना था । क्योंकि अरईवार मूल के कई ब्राह्मण मिथिला में हैं, लेकिन यहाँ एक भी घर ब्राह्मणों का नहीं है ।

प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं के सर्वेक्षण के क्रम में कुछ ऐसे तथ्य मुझे मिले हैं जो विशेष रूप से शोचनीय हैं । पुरातात्विक दृष्टि से अनेकों महत्त्वपूर्ण खण्डहर और प्राचीन तालाबों के भिण्डे पर आज भी मुसलमानों का अधिकार है ।

56. सूर्य (अरई)

सवास

दरभंगा जिला मुख्यालय से पश्चिम-दक्षिण की ओर सिमरी से आगे दरभंगा-मुजफ्फरपुर सड़क पर सवास नाम का एक चौक है। सवास गाँव इस चौक से मात्र दो कि॰मी॰ पूर्व-दक्षिण दिशा में एक टीले पर अवस्थित है। यह गाँव भी चौदहवीं सदी में खण्डहर रहा था और इसका प्राचीन नाम सबसाडीह रहा है। ब्राह्मण बहुल इस गाँव की प्राचीनता इससे भी आँकी जा सकती है कि ब्राह्मण और यादवों का एक मूल कुसमारय सवास अभी भी उपलब्ध है। यहाँ बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी और मिथिला-शैली की दो प्राचीन मूर्तियाँ कसौटी पत्थर की हैं। गाँव के मध्य हरिमाधव बाबा की मूर्ति बुरी तरह क्षतिग्रस्त है। यह मूर्ति एक प्राचीन पीपल के पेड़ के नीचे मिली थी और इसी स्थान पर अभी भी एक मन्दिर में पूजित हैं। गाँव के दक्षिण एक बहुत बड़ा प्राचीन तालाब है जिसे तपस्वी कहा जाता है। 1884 ई॰ में जब इस तालाब का नवीकरण हो रहा था तो एक मूर्ति मिली जो भगवान सूर्य की है। हरिमाधवबाबा नामक मूर्ति भगवान विष्णु की है, जबकि भगवान सूर्य को यहाँ लोग शेषशायी विष्णु के नाम से पुकारते हैं। यह सूर्य मूर्ति इस तालाब के किनारे ही पश्चिम उत्तर कोने पर एक मन्दिर में स्थापित है। सबास गाँव के चारो ओर दूर-दूर तक जलजमाव का क्षेत्र है। लगता है यह स्थान किसी प्राचीन नदी से घिरा रहा था।

57. सूर्य (सबास)

58. भगवान विष्णु (सबास)

रतनपुर

जिला दरभंगा और प्रखण्ड जाले का एक भूमिहार बहुल गाँव है रतनपुर । सिंहवाड़ा से आगे है भरवाड़ा, प्रसिद्ध मैथिल-धूर्तराज गोनू झा यहीं के निवासी थे । भरवाड़ा से कुछ ही दूरी पर रतनपुर गाँव है । दरभंगा जिला मुख्यालय से यहाँ की दूरी करीब 50 कि०मी० है । इस गाँव से पश्चिम करीब 1 कि०मी० की दूरी पर एक भव्य मन्दिर दूर से ही दिखाई पड़ता है । यह मन्दिर शिवालय है । इस मन्दिर में शिवलिंग सतह से करीब 5 फीट नीचे है । मुख्य मन्दिर के दक्षिण एक प्राचीन तालाब है । इस तालाब में नवीकरण के समय कई पाषाण शिलाएँ मिली थी जो प्राचीन मन्दिर के चौखटें जैसी हैं । यह देवस्थान बहुत ही एकांत स्थान पर और साफ-सुथरा तथा भव्य है ।

यहाँ अमराइयों से घिरे विस्तृत क्षेत्र में छोटे-बड़े तीन मन्दिर हैं । पूर्व का मन्दिर शिवालय है और पश्चिम की ओर के मन्दिर में एक गणेश की मूर्ति जो आंशिक रूप से खंडित है, स्थापित है । मध्य में एक और बिल्कुल ही छोटा मन्दिर है, जिसमें सूर्य की प्राचीन प्रतिमा है । इस देवालय के प्रांगण में यत्र-तत्र कई पाषाण खंड बिखरे पड़े हैं । एक पेड़ के नीचे खंडित शिवलिंग तो दूसरे पेड़ के नीचे एक मकरमुख जलटोटी ।इस जलटोटी की भी यहाँ पूजा होती है । सूर्य मूर्ति को विष्णु मूर्ति माना जाता है । यह सूर्य मूर्ति जो कसौटी पत्थर की और गुप्तकालीन है, शिव मन्दिर से पूरब हल जोतने के समय एक खेत में पायी गई थी । यह मूर्ति करीब ढाई फीट ऊँची है । गणेश की मूर्ति भूरे पत्थर की, और प्राचीन है । यह मूर्ति इस मन्दिर से पश्चिम एक प्राचीन नदी के अवशेष के किनारे पायी गई थी । मूर्ति की ऊँचाई करीब दो फीट है । मकरमुख जलटोटी में मुखाकृति मकर जैसा है । इस प्रकार की जलटोटी प्राचीन

मन्दिरों में या तो शिवलिंग की जलढरी के आगे या फिर मन्दिर से पानी निकलने के स्थान लगाने की परम्परा रही थी । इसी तरह की जलटोटी नेउरी और उच्चैठ में भी मुझे देखने को मिली हैं । बहेड़ा की वह मूर्ति जिसे वराह भगवान कहा जाता है, इसी प्रकार की लेकिन विकसित पालकालीन मकरमुख जलटोटी है । सम्भवत: भैरव-बलिया का वह मूर्ति-अंश जिसे वराह भगवान कहा जाता है, मकरमुख जलटोटी ही है ।
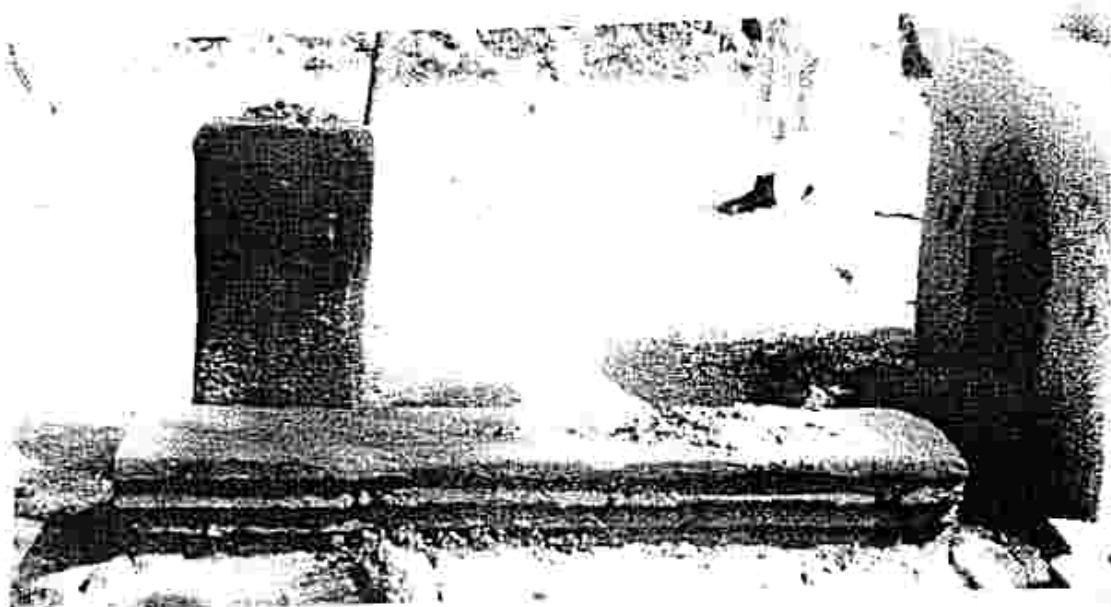
59. चौखट अवशेष (रतनपुर)

60. गणेश (रतनपुर)

61. सूर्य (रतनपुर)
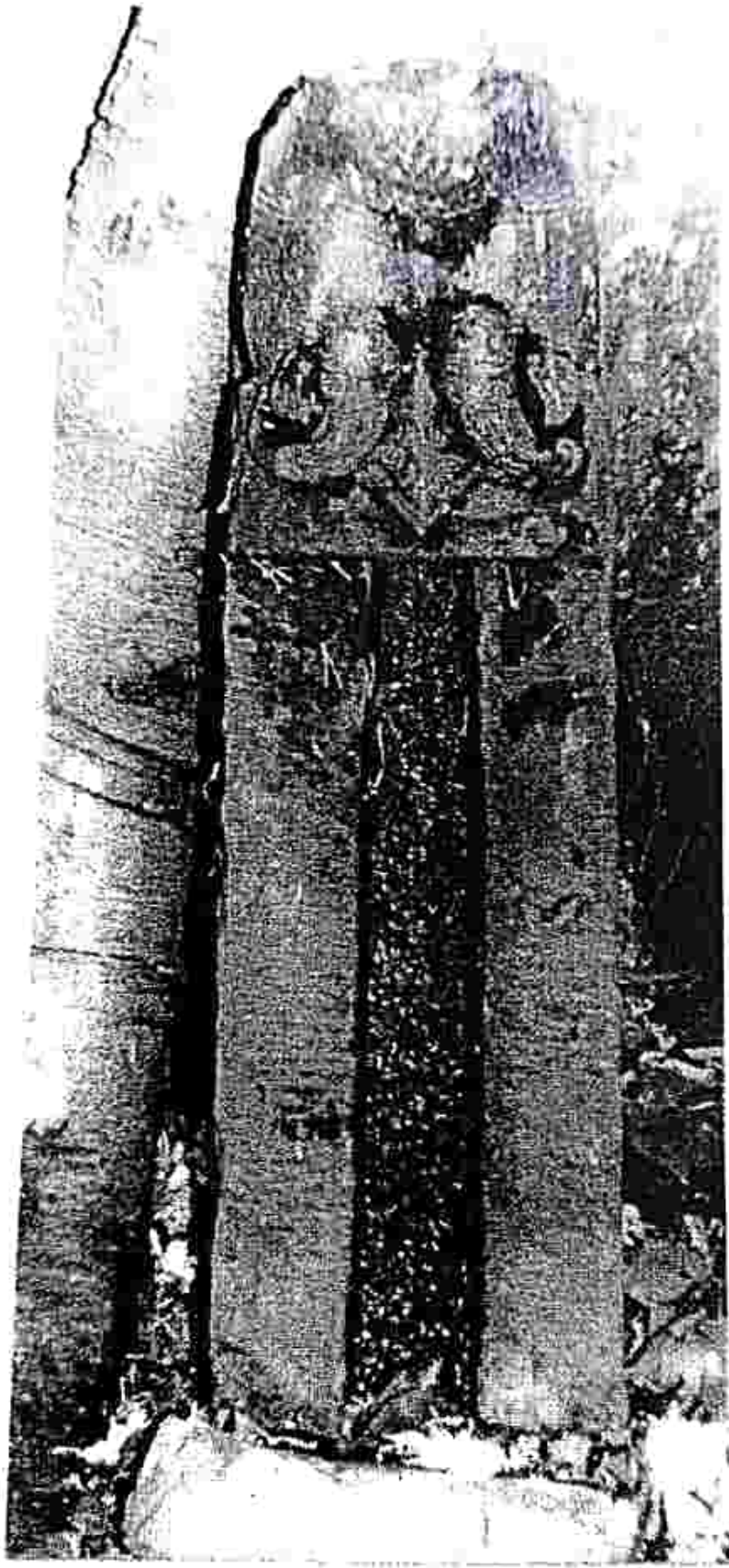
62. मकरमुख जलटोटी (रतनपुर)

बनवारी

दरभंगा-जयनगर पथ पर दरभंगा जिला का एक प्रखण्ड मुख्यालय है केवटी । जिला मुख्यालय से उत्तर की ओर करीब 25 कि॰मी॰ दूर, केवटी के निकट बनवारी एक गाँव है । यहाँ मुख्य पथ से पश्चिम एक हाईस्कूल है और इस स्कूल से मात्र 200 कदम उत्तर की ओर एक तालाब के पूर्वी भिण्डे पर पीपल के पेड़ के नीचे उमा-महेश्वर की एक मूर्ति देखने को मिलती है । कसौटी पत्थर की इस मूर्ति की ऊँचाई है करीब 45 इंच । कुछ ईंटों के सहारे यह मूर्ति खड़ी है । मिथिला शैली की यह मूर्ति आज से करीब 5 वर्ष पहले किसी ने रातो-रात यहाँ रख दिया था । यह मूर्ति 30 प्रतिशत क्षतिग्रस्त है । मूर्ति को समझदारी के साथ प्रत्येक प्रमुख अंग को तोड़ा गया है । ऐसा किसने किया और रातो-रात यहाँ किसने रख दिया, कोई नहीं जानता । तबसे सर्दी, गर्मी और बरसात झेलती यह मूर्ति यहाँ खड़ी है । इस मूर्ति के निकट एक चापाकल भी है और तालाब तो है ही, अत: किसी श्रद्धालु की तबियत हुई तो माथे पर एक लोटा जल उड़ेल दिया । मुस्लिम बहुल क्षेत्र होते हुए भी यहाँ कुछ घर हिन्दुओं के भी हैं ।

63. उमा–महेश्वर (बनवारी)
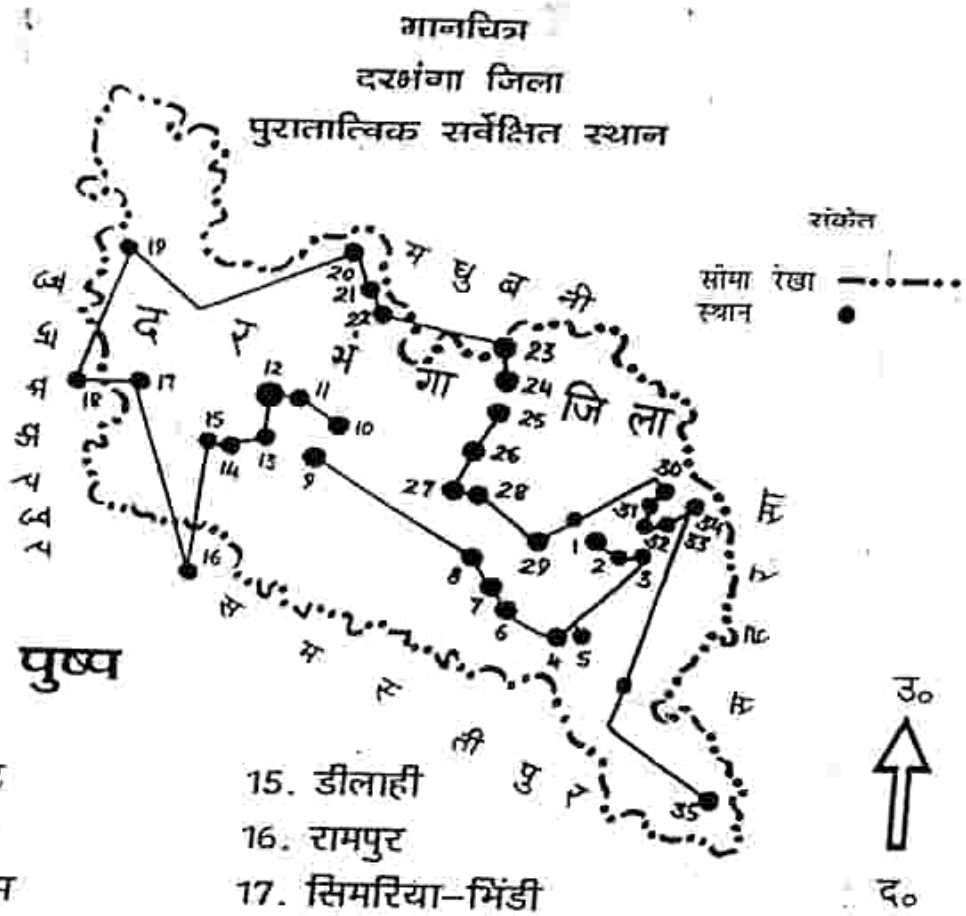
प्रथम पुष्प

1. कोर्थ
2. महुआर
3. कनहई
4. पोखराम
5. लदहो
6. साहो–पररी
7. ईटवा–शिवनगर
8. हाबीडीह
9. सिरूआ
10. देकुली

द्वितीय पुष्प

11. अन्दामा
12. असगाँव–धर्मपुर
13. दरभंगा शहर
14. तारालाही
15. डीलाही
16. रामपुर
17. सिमरिया–भिंडी
18. अरई
19. सबास
20. रतनपुर
21. बनवारी
22. गंधवारि
23. जरहटिया
24. भैरव–बलिया
25. भंडारिसम

तृतीय पुष्प

26. नेहरा
27. हाबी भौआड़
28. धरौरा
29. बहेड़ा
30. रूपनगर
31. सोनहद
32. छर्रापट्टी
33. तुमौल
34. अहिरैन
35. पाली
36. बुढ़ेब
37. बैद्यनाथपुर
38. तिलकेश्वर स्थान

गन्धवारि

केवटी प्रखंड मुख्यालय से पूर्व की ओर मात्र 7 कि०मी० की दूरी पर जीवछ नदी बहती है । इसके किनारे ही एक गाँव है गन्धवारि । इस गाँव के पश्चिम होकर जीवछ आगे बढ़ गई है । गाँव से पश्चिम की ओर एक सड़क इस नदी पर से रैयाम की ओर जाती है । नदी के पूर्वी तट पर गन्धवारि पंचायत का ही एक ग्राम है, सोनौर-धुनकी । 13 मार्च 2000 को इस सड़क के लिये पुल बनाने के क्रम में मिट्टी खोदते समय नदी की पेटी में पाँच फीट नीचे भगवती की एक मूर्ति मिली । यह मूर्ति आंशिक रूप से खण्डित होते हुए भी इस इलाके में बहुत प्रसिद्ध हो चुकी है । जब मूर्ति मिली थी, दुर्गापूजा निकट थी और विधिवत यह मूर्ति स्थापित कर यहाँ मन्दिर निर्माण भी प्रारम्भ कर दिया गया । इस अवसर पर बहुत बड़ा मेला लगा था । सोनौर-धुनकी और बनवारी गाँव के मध्य मात्र पाँच-सात कि०मी० की दूरी है लेकिन आस्था की दूरी इन दोनों गाँवों के मध्य, जमीन-आसमान का है । मिथिला में जहाँ सैकड़ों दुर्लभ प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ बनवारी और अरई की तरह ही सर्दी, गर्मी और बरसात झेलने को विवश है, धुनकी में मिट्टी की मूर्ति के लिए हजारों के खर्च से मन्दिर बनता है और मेला लगता है ।

जीवछ नदी में प्राप्त मूर्ति नेपाली शैली की है; जिसे या तो नदी में फेंक दिया गया था या यह गिर गई होगी । मूर्ति प्राचीन है जो विवशता की घड़ी में कभी पूजन के लिये मिथिला लाई गई थी । यह विवशता चौदहवीं शताब्दी के बाद की है, जब मूर्तिपूजक मिथिला, मूर्ति दर्शन के लिये भी तरस रही थी ।

64. भगवती (मृण्मूर्ति, गन्धवारि)
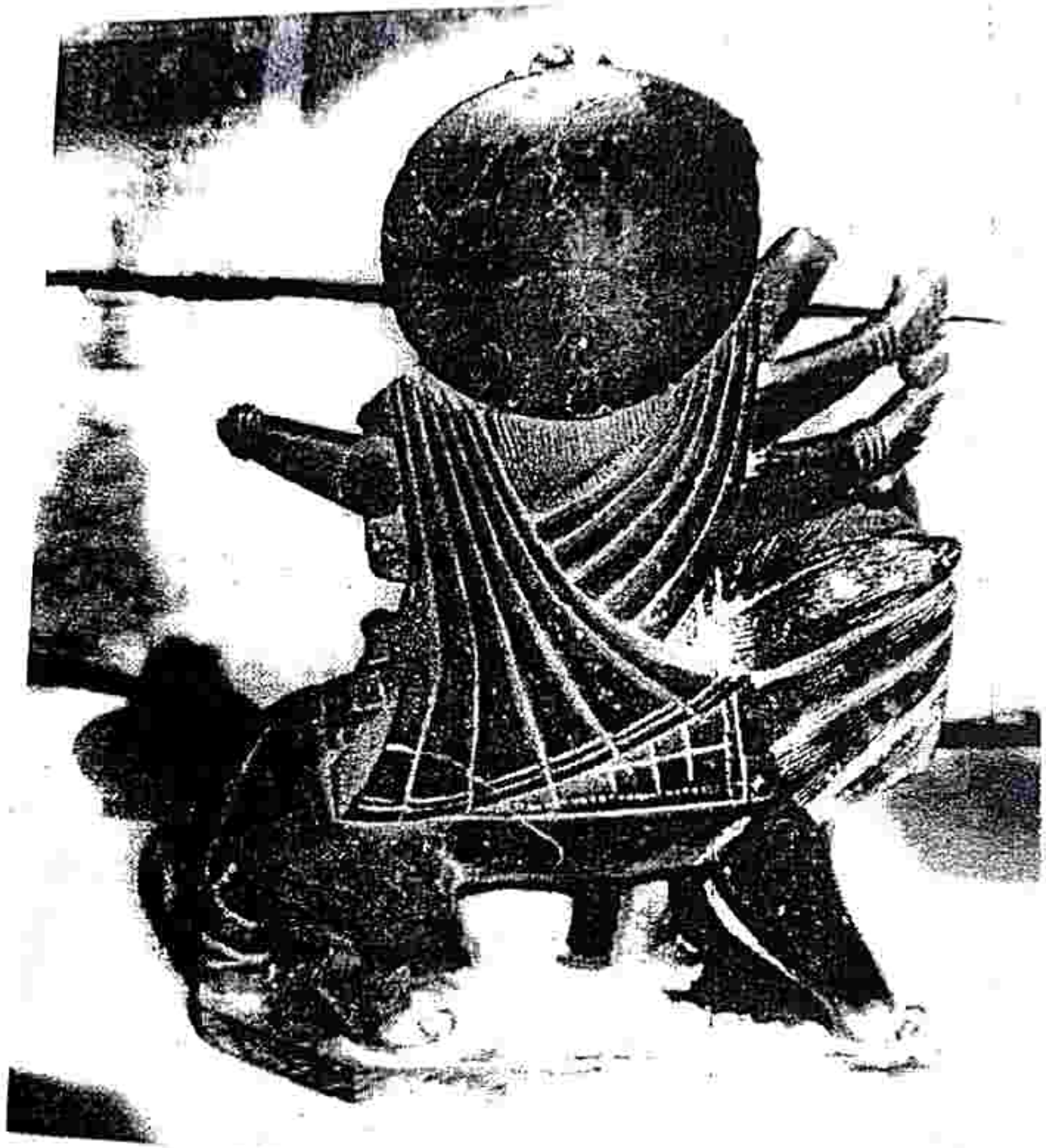
65. पृष्ठ–शिल्प (मृण्मूर्ति, गन्धवारि)

जरहटिया

दरभंगा सकड़ी पथ पर तारसराय से पूर्व की ओर बढ़ने पर एक पक्की सड़क उत्तर की ओर चली गई है । इसी सड़क पर तीन कि०मी० आगे एक गाँव है जरहटिया । जरहटिया गाँव के दक्षिण का तालाब बहुत बड़ा है । यह तालाब पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त और सोलहवीं शताब्दी के प्रथम दशक में सुर्खियों में रहा था । ओइनवार वंश के अन्तिम शासक थे लक्ष्मीनाथ सिंह देव, इनसे दो पीढ़ी पहले इसी वंश में भैरव सिंह राजा हुए थे । भैरव सिंह ने ही यह तालाब खुदवाया था । इस तालाब के यज्ञ में देश के हजारो विद्वानों ने भाग लिया था और मिथिला के प्रसिद्ध विद्वान वाचस्पति मिश्र, पक्षधर मिश्र, शंकर मिश्र, बंगाली रघुनाथ शिरोमणि आदि-आदि की देखरेख में तो यह यज्ञ सम्पन्न हुआ ही था, कहा तो ऐसा भी गया है कि लंका भी आमंत्रण भेजा गया था और वहाँ से ही इसका स्तम्भ (जाठ) पत्थर का आया था । इन बातों की चर्चा षोडश महादान निर्णय ग्रन्थ में की गई है ।

इसी तालाब के पश्चिम एक खेत में हल जोतने के समय भगवान बुद्ध की विशाल मूर्ति मिली थी जो आजकल कामेश्वर सिंह संग्रहालय के आगे प्रदर्शित है । यह मूर्ति फसली संवत 1305 में मिली थी । इस समय यह मूर्ति सर विहीन है, लेकिन एक प्रत्यक्षदर्शी (पंडित परमेश्वर झा) के कथन के अनुसार जिस समय यह मूर्ति मिली थी, सरविहीन नहीं थी और इस मूर्ति के तल भाग में देवनागरी लिपि में अभिलेख भी था । इस समय इसका तल भाग प्रदर्शन के अन्तर्गत छिपा हुआ है । मिथिला के मध्य भगवान बुद्ध की विशाल मूर्ति जरहटिया में पाया जाना संयोग मात्र नहीं है और "प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ, दरभंगा जिला" में मैंने इस विषय में जो चर्चा की है - उसे बल मिलता है ।

66. भगवान बुद्ध (जरहटिया)

भैरवबलिया

संकरी रेलवे स्टेशन से पूरब 4 कि०मी० की दूरी पर और सकरी-मनीगाछी पथ पर मनिगाछी से मात्र एक कि०मी० पश्चिम अत्यन्त उर्वर भूमि के विशाल टुकड़े के मध्य एक ऊँचे वास-स्थान पर यह गाँव बसा हुआ है । इस गाँव की कुछ भूमि मधुबनी जिला में और अधिकांश दरभंगा जिला में पड़ती है । गाँव के उत्तर एक रमणीय स्थान जिसमें कई तालाब, भैरव-स्थान और विष्णु-स्थान हैं । अनेकों प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ इन दोनों स्थानों के मन्दिरों में पूजित हैं । यह गाँव ब्राह्मण बहुल है अतः पूजाविधि और रख-रखाव भी अति उत्तम है । मूर्तियों की अधिकता होते हुए भी एक भी मूर्ति अखंड नहीं है । प्रत्येक मूर्ति पर तोड़-फोड़ के स्पष्ट चिह्न अंकित है । इस गाँव के इस समय के वासी नवीन हैं, क्योंकि मूर्ति प्राप्ति के सम्बन्ध में संतोषजनक उत्तर मुझे यहाँ नहीं मिला । विष्णुमूर्ति में मिथिलाक्षर में अभिलेख है – **श्री वयदेव या श्री वयदन्तु माधवः** जिसकी जानकारी मुझसे पूर्व गाँववालों को नहीं थी । यह तथ्य भी इसी ओर इशारा करता है कि यहाँ के वासी नवीन हैं ।

पूर्व की ओर है, एक तालाब के पूर्वी भिण्डे पर भैरव मन्दिर । इस मन्दिर में भैरव की विशाल मूर्ति के अतिरिक्त एक और अलंकृत मूर्तिअंश भी है, जिसे वराह भगवान कहा जाता है । अलंकृत मूर्तिअंश की जो छवि उभरती है, इससे अनुमान भी यही होता है कि यह वराहमूर्ति है । यह अलंकृत मूर्ति अंश और भैरव मूर्ति पालशैली और कसौटी पत्थर की है । अलंकृत मूर्तिअंश में कान और आँख स्पष्ट है, लेकिन इसका नीचे और ऊपर का अंश कुछ इस तरह खंडित है कि वराहमूर्ति, विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता ।

मकरमुख जलटोटी भी संदेहास्पद है । भैरव मूर्ति मिथिला में मुझे मिली प्रत्येक मूर्ति से विशाल है । यह मूर्ति तीस प्रतिशत खंडित है और इसकी पीठिका तो बिल्कुल ही भग्न है । यदि पीठिका होती तो यह मूर्ति सात फीट से कम ऊँचाई की नहीं होती । भैरव मनिदर से कुछ ही कदम पश्चिमोत्तर की ओर एक दूसरे तालाब के पूर्वोत्तर भिण्डे पर विष्णु मन्दिर है । यद्यपि यह मन्दिर तो शिवलिंग का है तथापि इस मन्दिर में विष्णु की ही प्रमुखता मुझे दिखाई पड़ी थी । विष्णु मूर्ति की पीठिका ऊपर की ओर से कुछ खंडित है, लेकिन मुख्य मूर्ति अखंड है । इस मूर्ति के अतिरिक्त और भी कई खंडित विष्णु मूर्ति के टुकड़े इस मूर्ति के पास ही मुझे दिखाई दिये थे । यह सब मूर्तिखंड भी कहीं इसी गाँव के किसी खण्डहर या निकट के तालाब में मिले होंगे । विष्णुमूर्ति और सब के सब मूर्तिखंड कसौटी पत्थर तथा बारहवीं से चौदहवीं शताब्दी के मध्य के तथा मिथिला शैली के हैं ।
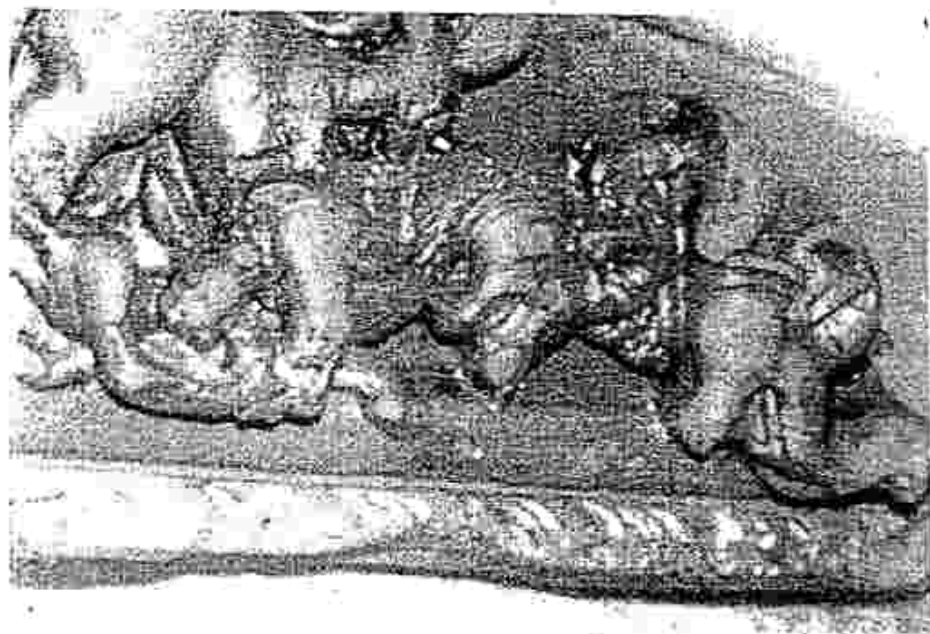
67. विष्णुमूर्ति अंश (भैरव–बलिया)
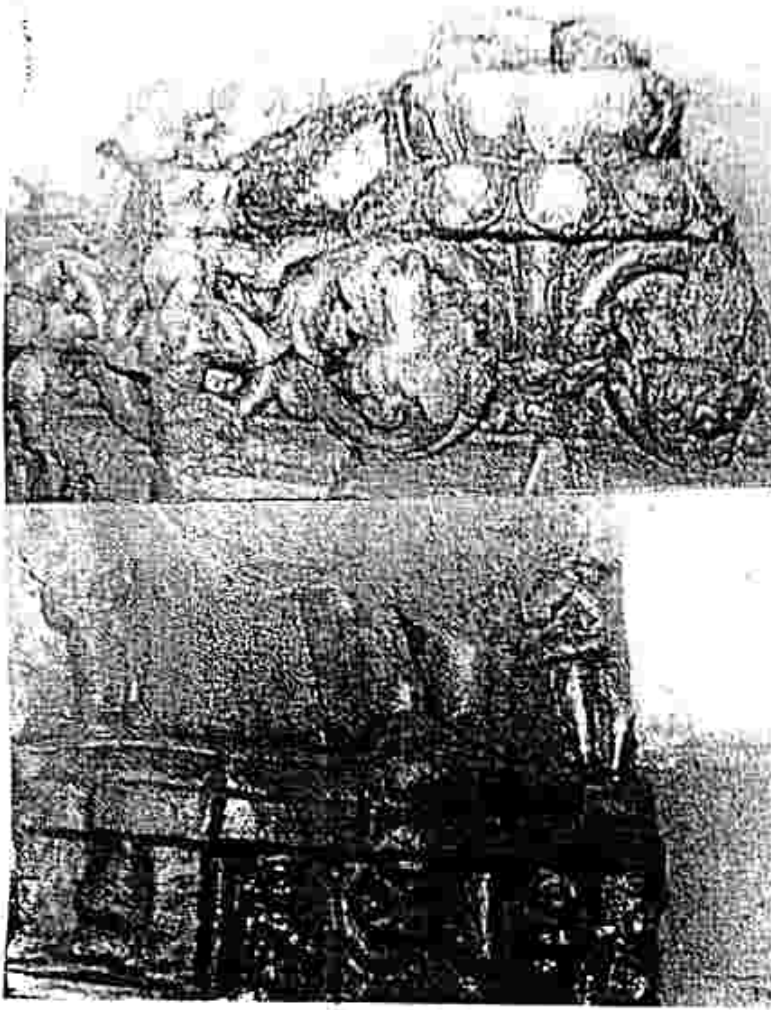
68. विष्णुमूर्ति अंश (भैरव–बलिया)

69. विष्णु–अभिलेख (भैरव–बलिया)

70. भैरव (भैरव–बलिया)
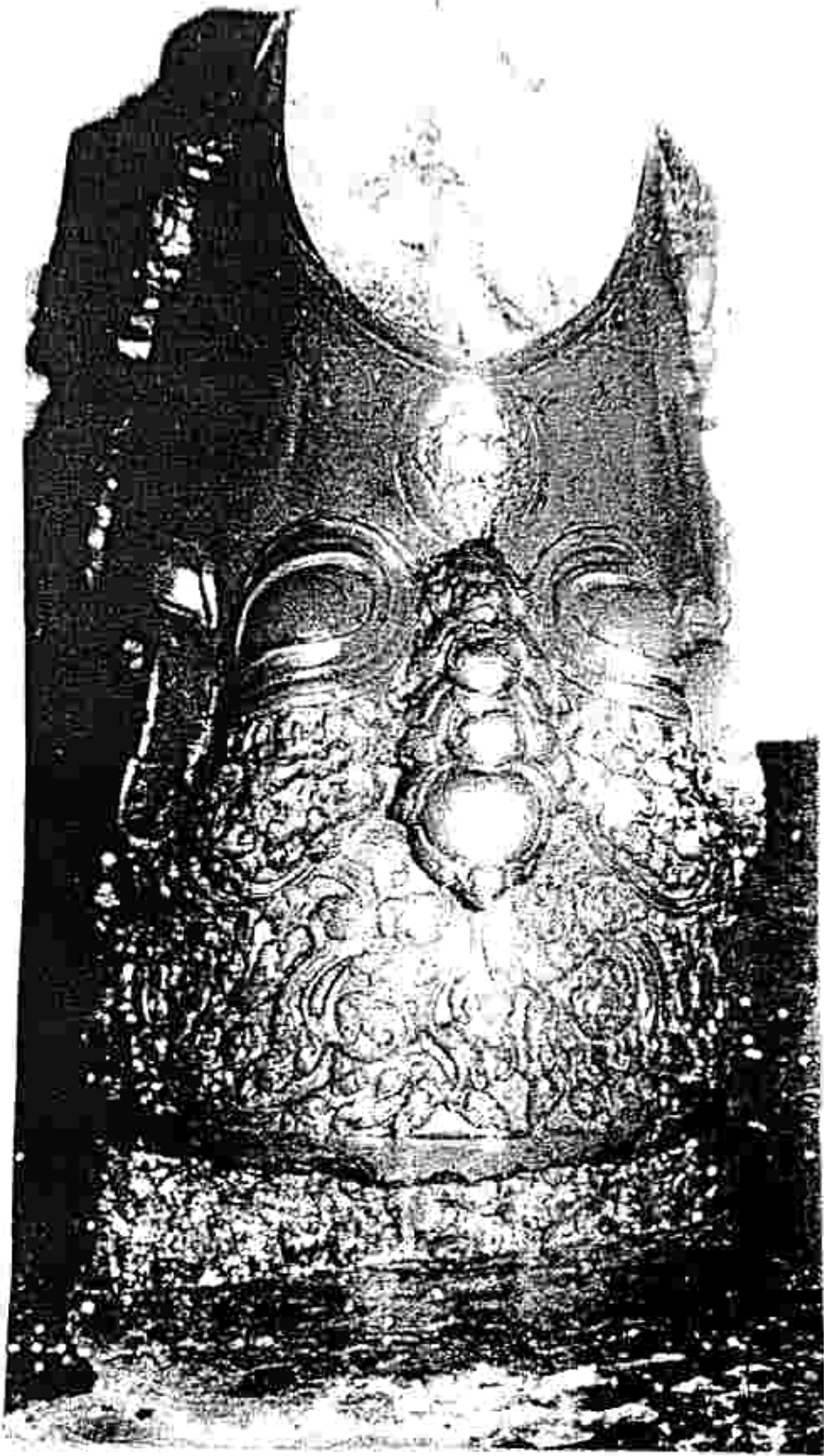
71. वराह मूर्ति (भैरव–बलिया)

72. विष्णु (भैरव–बलिया)

भंडारिसम (मकरन्दा)

ब्राह्मण बहुल दो गाँव, मकरन्दा और भंडारिसम कभी दो गाँव रहे होंगे, लेकिन इस समय एक-दूसरे में कोई भेद नहीं है । दरभंगा जिला मुख्यालय से पूरब की ओर करीब 45 कि०मी० दूर, मनीगाछी प्रखंड मुख्यालय से मात्र 1 कि०मी० दूर यह गाँव है । इस गाँव के पश्चिम से कभी एक प्राचीन नदी बहती रही थी, लेकिन अब इस नदी का अवशेष मात्र है । इस नदी अवशेष के पश्चिम दूर-दूर तक फैला हुआ प्राचीन खंडहर है । इनमें से कुछ तो खंडहर के रूप में हैं और कुछ पर आम के बगीचे फैले हुए हैं । कहीं-कहीं जंगल जैसा दृश्य भी इन खंडहरों पर दिखाई पड़ता है । शाक-सब्जियों की खेती-बाड़ी भी कहीं-कहीं होने लगी है । इस दृश्य के मध्य ही भगवती वाणेश्वरी का दरभंगा राज द्वारा निर्मित मन्दिर दूर से ही दिखाई पड़ता है । भगवती वाणेश्वरी स्थान अत्यन्त रमणीय और कमनीय है । इनकी आध्यात्मिक ख्याति इतनी अधिक है कि यहाँ प्रतिदिन सबेरे से शाम तक पुजारियों का ताँता लगा ही रहता है । इनके आध्यात्मिक महत्व के सम्बन्ध में यहाँ कई दंतकथाएँ प्रचलित हैं ।

कसौटी पत्थर और मिथिला शैली की भगवती की यह मूर्ति नववीं से ग्यारहवीं के मध्य की लगती है । करीब 150 वर्ष पूर्व यह मूर्ति निकट के नदी-अवशेष में मिली थी । बहुत दिनों तक तो यह एक बरगद के पेड़ के नीचे रही, तदुपरान्त एक कुटिया में और अब मन्दिर में स्थानान्तरित कर दी गई है । दरभंगा राज द्वारा यहाँ मन्दिर का निर्माण एक मनता (मनौती) के अन्तर्गत किया गया था । भगवती की यह मूर्ति आंशिक रूप से खण्डित है जो सम्भवतः प्राप्ति के समय हुई होगी । इस मन्दिर से कुछ ही दूर पश्चिम होकर कमला नदी की

एक नवीन धारा बहती है । इस धारा के दोनों ओर, उच्च स्तर का वास-स्थान है - जिसकी चर्चा अन्यत्र की गई है । भगवती वाणेश्वरी के मन्दिर के प्रांगण में एक पेड़ के नीचे कई मूर्तियाँ भी पड़ी हुई हैं जो इन्ही खण्डहरों में मिली थीं । इन खण्डित मूर्तियों में गणेश की दो, विष्णु की एक और सिंहवाहिनी भगवती की एक छोटी मूर्ति मैंने देखी है ।
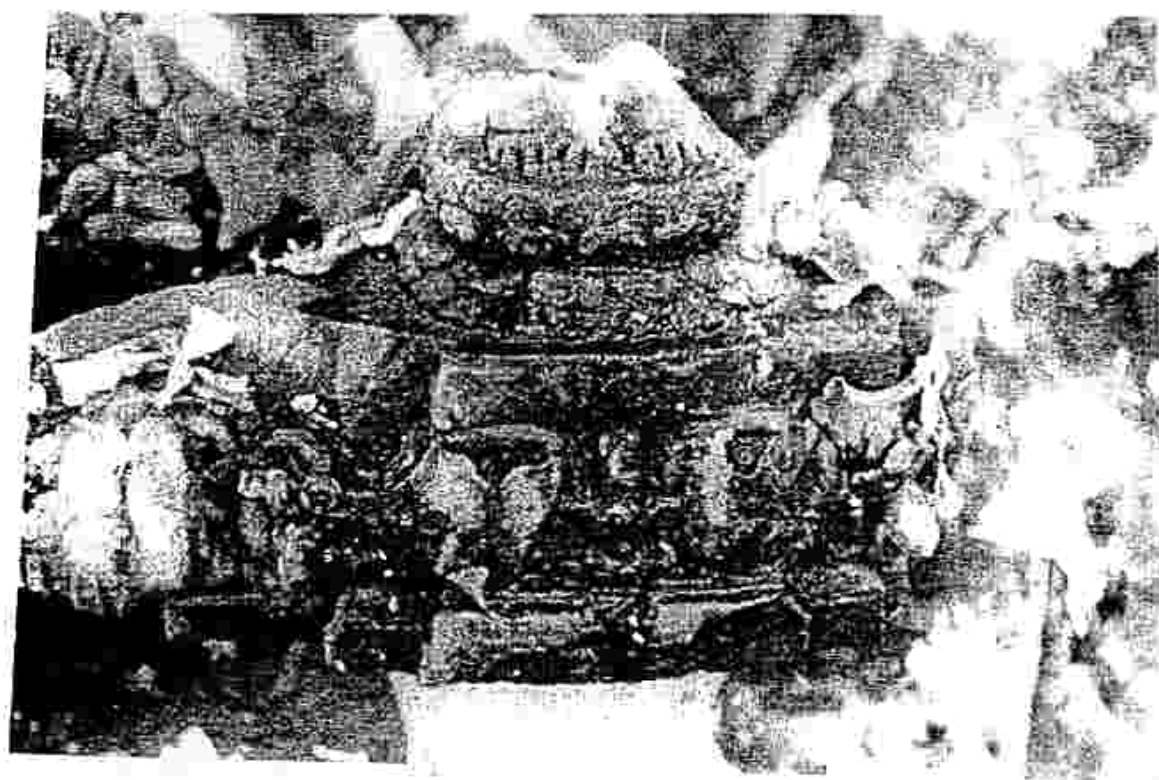
73. विष्णुमूर्ति अंश (भंडारिसम)

74. भगवती वाणेश्वरी (भंडारिसम)

आध्यात्मिक
एवं
पुरातात्त्विक

DARSHNIYA MITHILA

दर्शनीय मिथिला

तृतीय पुष्प

लेखक
सत्यनारायण झा 'सत्यार्थी'

नेहरा

दरभंगा जिला मुख्यालय से करीब 30 कि0 मी0 पूर्वोत्तर दिशा में, विस्तृत उत्तम किस्म के आवासीय भूभाग के मध्य बसा धनीमानी और ब्राह्मण बहुल यह गाँव मिथिला के ख्याति प्राप्त गाँवों में से एक है । इस गाँव के निकट पूर्वोत्तर दिशा और दक्षिण–पश्चिम में दो ऐसे प्राचीन खण्डहर हैं जो प्रत्येक राहगीर को अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करने में सक्षम है । इस गाँव का विशाल तालाब, रजोखरि तो कहावत – "पोखरि रजोखरि, और सब पोखरा, राजा शिवसिंह और सब छोकरा ।" के सहारे सम्पूर्ण मिथिला में प्रसिद्ध है । मात्र नेहरा ही नहीं ऐतिहासिक स्थानों में एक स्थान जिसे लखिमा डीह कहा जाता है, इस गाँव के ही निकट उत्तर में है । लखिमा देवी ने जो राजा शिवसिंह की पत्नी थी, कुछ समय तक मिथिला पर राज्य किया था । नेहरा से मात्र दो कि0 मी0 उत्तर और राघोपुर से एक कि0 मी0 पूर्व, प्रसिद्ध घोड़दौड़ तालाब के पश्चिमी भिण्डे पर यह प्रसिद्ध खण्डहर है । घोड़दौड़ तालाब किसी तालाब की अपेक्षा प्राचीन नदी का अवशेष अधिक दिखाई पड़ता है । अब इस खण्डहर पर रजवारा नामक एक गाँव फैलता जा रहा है जो नवीन है । लखिमा रानी डीह पर प्राचीन अवशेष के रूप में दो धरोहरें मुझे दिखाई दी एक गणेश की मूर्त्ति और दूसरा एक खण्डित स्तम्भ जो भूरा पत्थर का और अर्धनिर्मित है । गणेश की मूर्त्ति कसौटी पत्थर की है । यहाँ का खण्डहर मनमुग्ध करने में सक्षम है ।

नेहरा के पूर्वोत्तर दिशा का खण्डहर जिसकी चर्चा मैंने प्रारम्भ में की है, लखिमा रानी–डीह का ही सिलसिला है जो नेहरा तक फैला हुआ है । नेहरा का वह खण्डहर जो गाँव के पश्चिम और रजोखरि तालाब के दक्षिण–पश्चिम कोने पर दूर तक फैला हुआ है, मुड़िया के नाम से प्रसिद्ध और पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण दिखाई पड़ता है । इसी खण्डहर में एक विष्णु–मूर्त्ति 1997 ई0 में मिट्टी खोदने के समय मिली जो सम्प्रति रजोखरि तालाब के पूर्वी भिण्डे पर स्थित शिव–मंदिर के पार्श्व में स्थापित है । मिथिला

में प्राचीन विष्णु–मूर्त्ति मुझे कई मिली है । इस मूर्त्ति की तरह ही अन्य मिली मूर्त्तियाँ भी कसौटी पत्थर की ही है लेकिन शिल्प अन्य मूर्त्तियों की अपेक्षा इसका कुछ भिन्न है । विशेष कर विष्णु–मूर्त्ति के बायीं ओर एक लहराता कदली स्तम्भ और इसके निकट की एक नारी मूर्त्ति जो विवस्त्र है और उसकी जंघा भी ठीक कदली–स्तम्भ जैसा ही दिखाई पड़ती है । साथ ही विद्यापति की यह कविता माधव, कि कहब सुन्दरि रूपे.............. कनक कदलि पर सिंह समारल............ कुछ सोचने के लिये विवश करता है । इस मूर्ति के साथ ही साथ मिट्टी खोदते समय एक विशेष आकृति का दीप भी मिल था जो इसी मूर्त्ति के बगल में प्रदर्शित है ।

जहाँ भगवान विष्णु की मूर्त्ति स्थापित की गई हैं, इसके सामने ही पूरब एक छोटे मंदिर में दो और भी खण्डित मूर्त्तियाँ स्थापित हैं । इनमें से एक मूर्त्ति तो बलुआही कृत्रिम पत्थर की और महिषासुर मर्दिनी की है और दूसरी मूर्त्ति भगवान सूर्य की और कसौटी पत्थर की है । ये मूर्त्तियाँ बहुत दिनों तक यहीं स्थित एक पीपल के पेड़ के नीचे थी जो अब मंदिर बनाकर स्थापित कर दी गई हैं । पेड़ के नीचे इन मूर्त्तियों को किसने और कब लाकर रखा, यह कोई नहीं जानता । मुझे लगता है कि अब ब्राह्मणों में पूजा के प्रति आकर्षण नहीं रह गया है । क्योंकि यह गाँव ब्राह्मण बहुल होते हुए भी इस स्थान का पुजारी एक मल्लाह है । पूजा के प्रति जो आकर्षण यहाँ मैंने पुजारी में देखा उसने मुझे बहुत प्रभावित किया ।
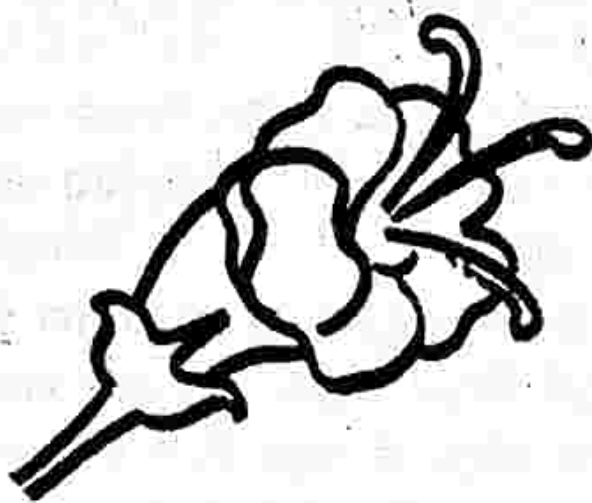
75. विष्णुमूर्त्ति (नेहरा)
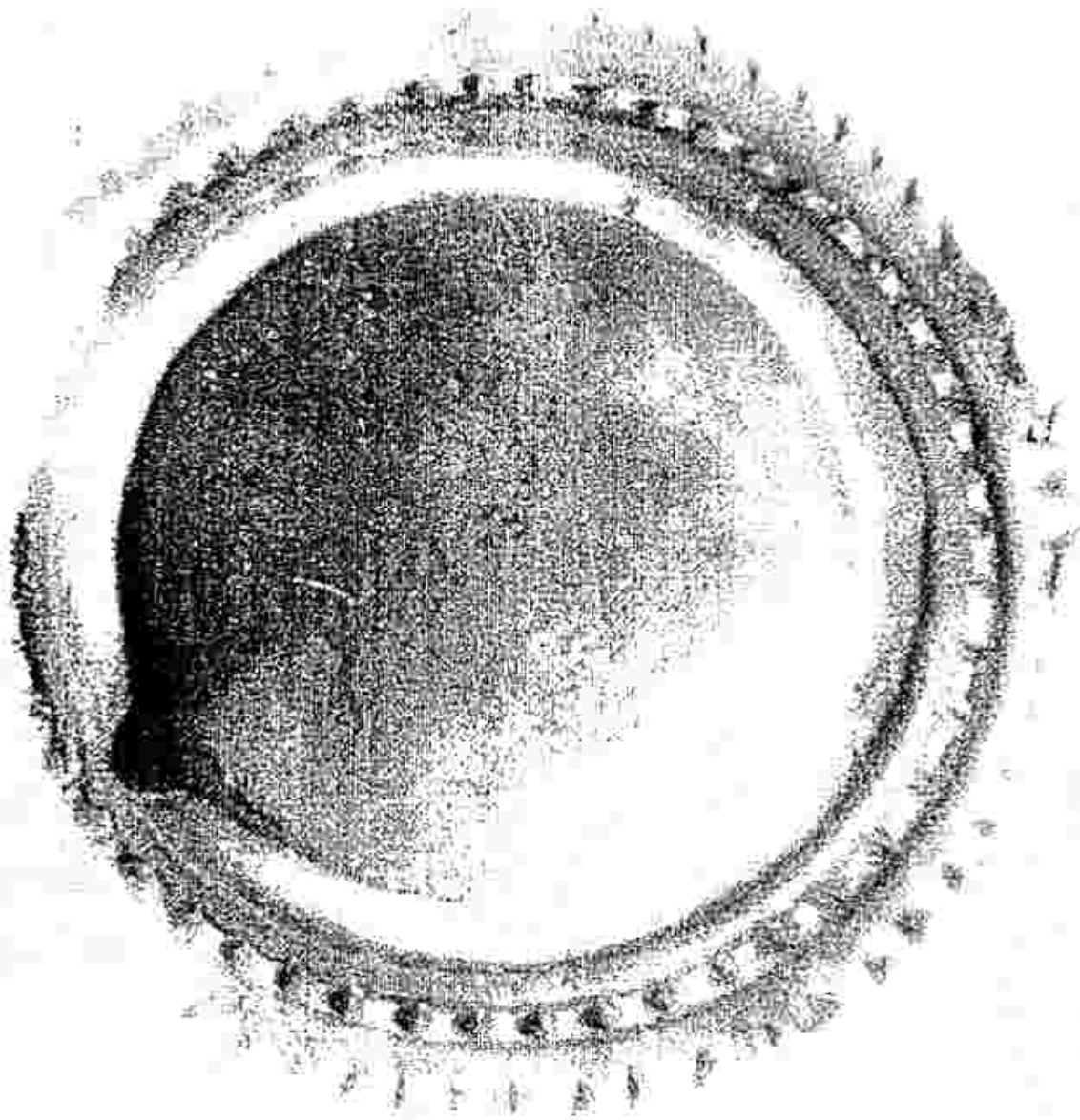
76. दीप (नेहरा)

77. सूर्यमूर्त्ति (नेहरा)
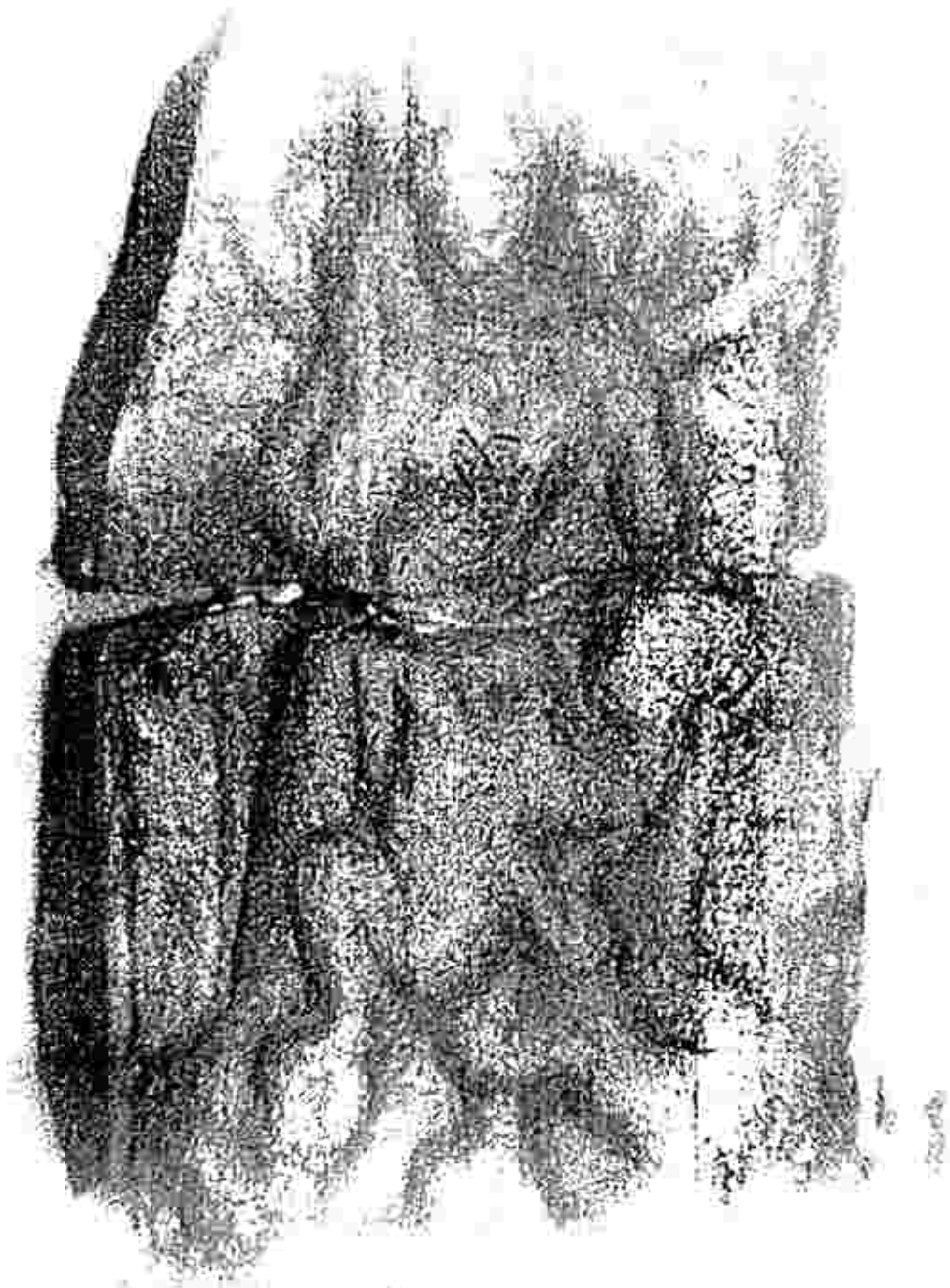
78. महिषासुरमर्दिनी (नेहरा)

हाबीभौआर

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूरब 40 कि0 मी0 दूर धरौरा एक प्रसिद्ध स्थान है । यहाँ से मात्र तीन कि0 मी0 पश्चिमोत्तर दिशा में हाबीभौआर एक ब्राह्मण बहुल गाँव है । इस गाँव का वास स्थान अच्छा होते हुए भी ऐसा नहीं जिसे प्राचीन खण्डहर के रूप में पहचान किया जाय । यहाँ उपलब्ध भगवान विष्णु की मूर्त्ति देखते हुए इस ओर ध्यान आकृष्ट होना स्वाभाविक है । खण्डहर की ओर यदि ध्यान दिया जाये तो इस गाँव से मात्र एक कि0 मी0 दक्षिण स्थित गाँव कंथुडीह कहीं अधिक महत्वपूर्ण दिखाई पड़ता है ।

गाँव हाबीभौआर धरौरा–सकरी मुख्य पथ पर बसा हुआ है । इस सड़क से पश्चिम, मध्य गाँव में है एक विष्णु मंदिर । यह मंदिर नवीन है जिसमें खण्डित भगवान विष्णु की तीन मूर्त्तियाँ है । एक आंशिक और दो मूर्त्ति बिल्कुल ही खण्डित हैं । आंशिक रूप से खण्डित मूर्त्ति की पीठिका और सर क्षतिग्रस्त है । कसौटी पत्थर और मिथिला शैली की यह मूर्त्ति बहुत ही सुन्दर है और शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट भी । भगवान विष्णु की ही एक मूर्त्ति जो साहो के एक तालाब में महाराजाधिराज कामेश्वर सिह के समय प्राप्त की गई थी और सम्प्रति यह हाबीडीह के विष्णु मंदिर में स्थापित है, आकार प्रकार और शिल्प शैली दोनों मूर्त्तियों की इस तरह मिलती है कि एक ही साँचे की ढली हो, यद्यपि ऐसा है नहीं । यह सम्भव ही नहीं है । लेकिन मेरा अनुमान है कि यह दोनों ही मूर्त्तियाँ एक ही मूर्त्तिकार की कृति हे । हाबीडीह के भगवान विष्णु की मूर्त्ति में एक अभिलेख भी है– श्री मद्मदन माधवः ।

यहाँ जो दो और मूर्त्ति–खण्ड हैं, ये दोनों ही विष्णु मूर्त्ति के ही टूटे अंश हैं । इनमें से वह अंश जो मूर्त्ति पीठिका के बायें भाग का अंश है, किसी विशाल मूर्त्ति, जिसका आकार कम से कम 7 फुट रहा होगा, का अंश हे । और वह मूर्त्ति अंश जो किसी विष्णु मूर्त्ति के पेट से नीचे का है, इस मूर्त्ति की ऊँचाई यही रही होगी जो आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त मूर्त्ति की है । यह सभी

मूर्त्तियाँ एक ही काल और शैली की हैं । इन मूर्त्तियों के क्षतिग्रस्त होने के पीछे किसी विशाल भूकम्प का हाथ और मूर्त्ति प्राप्ति के समय की दुर्घटना भी दिखाई पड़ती है ।

हाबीडीह से लेकर कोर्थ तक का भूभाग सम्प्रति कमला की दो धाराओं के मध्य है । यह दोनों ही धाराएँ किसी भूकम्प की ही देन हैं जिसने ठोस मिट्टी को चीर कर अपनी राह बना रखी हैं । इस क्षेत्र होकर अतीत में कोई विशाल नदी बहती थी जिसका अवशेष जलजमाव और चौर के रूप में अभी भी जहाँ–तहाँ उपलब्ध है । यथा, हाबीभौआर के पश्चिम, धरौरा के पश्चिम, पोहदी के पश्चिम, दक्षिण और पूरब, कमलपुर के पूरब और कोर्थ के पश्चिम–दक्षिण । गुजरात का विनाशकारी भूकम्प, जिसने सम्पूर्ण राष्ट्र को हिलाकर रख दिया है, इससे भी तीव्रतर मिथिला का यह भूकम्प रहा होगा । यदि मेरा अनुमान सही है तो आगामी समय के लिये भी यह एक शुभ संकेत दरभंगा और मधुबनी जिला के लिये नहीं है । गत विशाल विनाशकारी भूकम्प के पदचिह्न, मैं नेपाल से गंगा और मुजफ्फरपुर से सहरसा तक यत्र–तत्र देख रहा हूँ, जिसका केन्द्र बिन्दु नेपाल की तराई से लेकर समस्तीपुर जिला के मुख्यालय के मध्य रहा था । आश्चर्य की बात यह है कि इस सम्बन्ध में कहीं कोई उल्लेख नहीं है ।

हाबीभौआर के मंदिर में स्थापित तीनों ही मूर्त्तियाँ एक लम्बे अर्से तक यहीं एक पुराने पीपल की जड़ में रखी थी । कोई नहीं जानता कि किसने और कब, लाकर यहाँ रखा था ? कंथु और हाबीभौआर की सीमा एक है और कंथुडीह पुरातात्त्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण भी । सम्भवतः ये मूर्त्तियाँ वहीं पाई गई हों ।
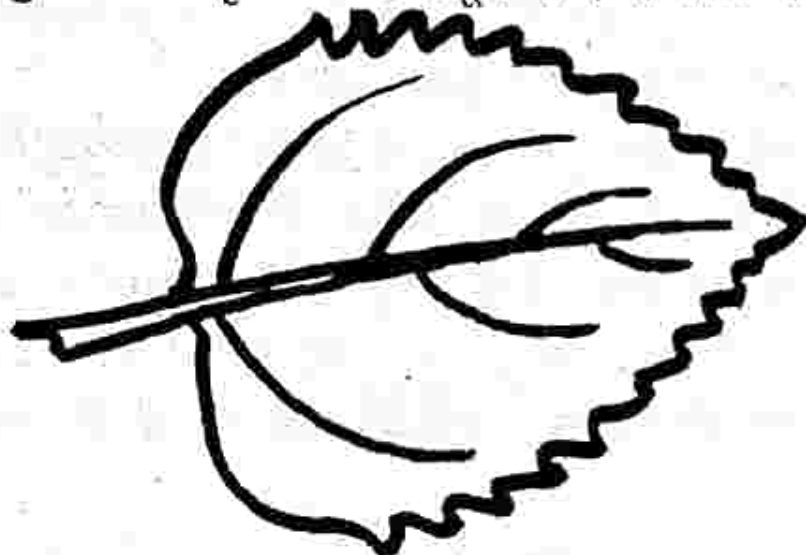
79. विष्णुमूर्त्ति (हाबी भौआर)
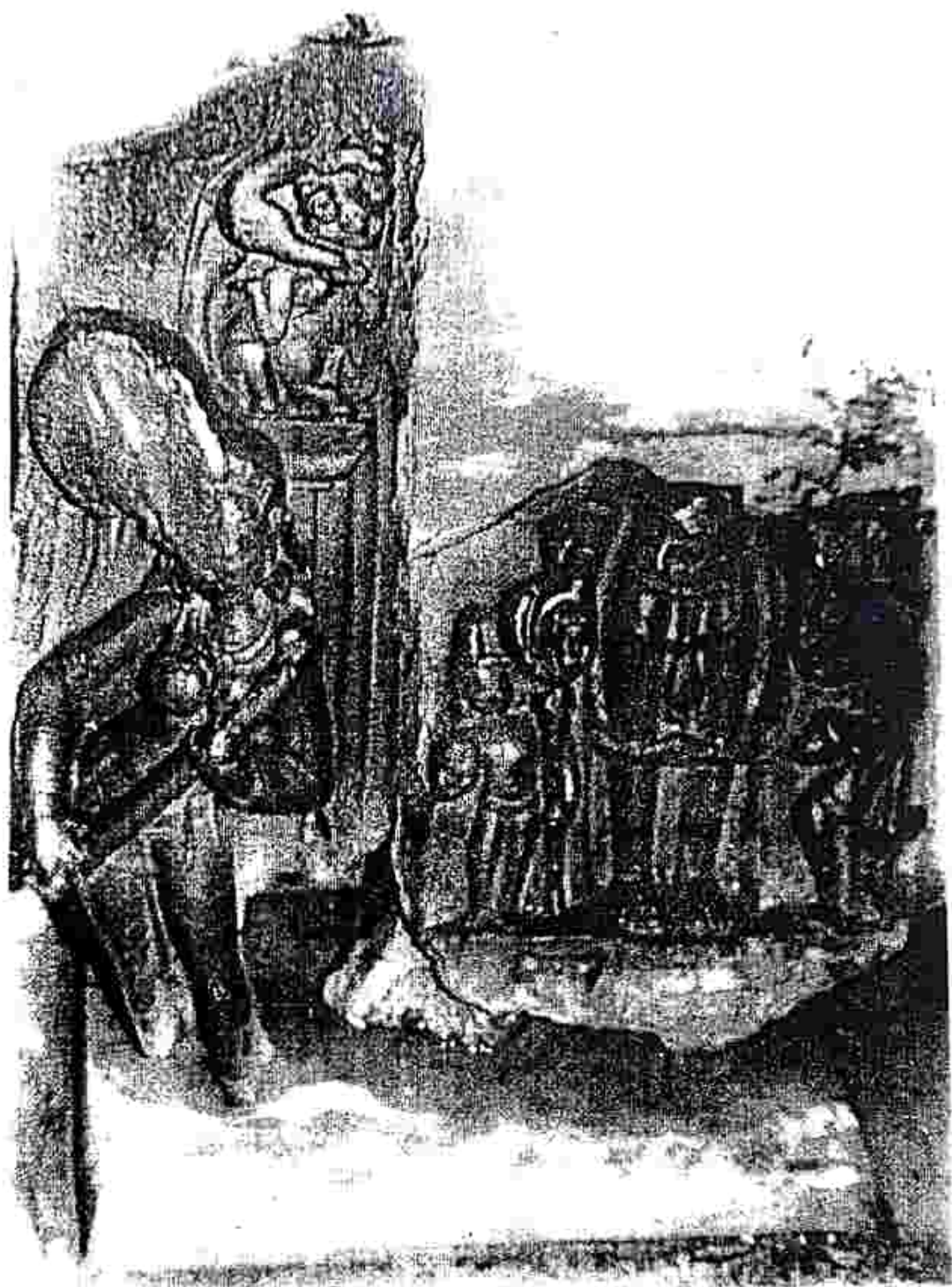
80. विष्णुमूर्त्ति अंश (हाबी भौआर)

धरौरा

धरौरा गाँव के पश्चिम एक पुराने पेड़ की जड़ में, प्राचीन एक मूर्त्ति जो न तो किसी देव या न किसी देवी की है, आकर्षण का केन्द्र है । दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्ब की ओर करीब 40 कि0 मी0 की दूरी पर दरभंगा–बेनीपुर मुख्य पथ पर धरौरा गाँव के उत्तर एक चौक बहुत ही प्रसिद्ध है । इस चौक से कुछ सौ मीटर की दूरी पर ही वह प्राचीन पेड़ है, जिसकी जड़ में पत्थर की एक मूर्त्ति जो भक्त की है अपनी पगड़ी (पाग) के कारण सबों को आकर्षित करती है । यह मूर्त्ति इसके निकट पूरब स्थित एक प्राचीन तालाब में पाई गई थी । इस मूर्त्ति को दो रूपों में देखा जा सकता है, प्रथम तो स्वतन्त्र मूर्त्ति के रूप में और दूसरा किसी विशाल मूर्त्ति के टूटे अंश के रूप में । मुझे तो यह दूसरी सम्भावना ही अधिक उपयुक्त दिखाई पड़ती है । क्योंकि विष्णु–बरूआर की विशाल सूर्यमूर्त्ति में भी एक इसी प्रकार की आकृति भक्त के रूप में उत्कीर्ण है । यह भक्त कोई साधारण भक्त नहीं, बल्कि तत्कालीन शासन का सर्वोच्च शासक है, जिसे हम राजा के नाम से पुकारते हैं । यदि मूर्त्ति किसी मूर्त्ति पीठिका का अंश मात्र है तो उस प्रमुख मूर्त्ति की विशालता की कल्पना ही रोमांचित करने के लिये पर्याप्त है ।

इस भक्त मूर्त्ति के माथे का त्राण जो टोप जैसा दिखाई पड़ता है, वस्तुतः प्राचीन मिथिला का प्रारम्भिक "पाग" है । जब इस टोप को हम पाग के रूप में लेते हैं तो पंडित की यह मूर्त्ति होनी चाहिये, लेकिन ऐसा है नहीं । क्योंकि इसकी मूंछ इसे वीर पुरूष घोषित करता है । यदि एक ही मूर्त्ति में यह दोनों ही देखना हमें पसन्द है तो विद्वान और वीर पुरूष के रूप में यह शासक की मूर्त्ति हो सकती है, जो सम्भवतः कर्णाट–वंश का कोई शासक हो सकता है । क्योंकि मूर्त्तिशैली उसी काल की है ।
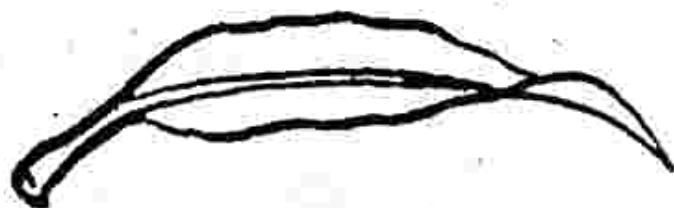
81. पुजारी (धरौरा)

बहेड़ा

धरौरा, जिसकी चर्चा इससे पूर्व की गई है, बहेड़ा इसके निकट दक्षिण ही एक प्रसिद्ध बाजार है । यहाँ स्कूल, कॉलेज, हस्पताल, थाना और रजिस्ट्री कार्यालय भी है । बहेड़ा में कम से कम दो प्राचीन खण्डहर हैं । एक पर तो शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय और दन्त महाविद्यालय चल रहा है तथा दूसरा मुख्य आबादी से पश्चिम, कुछ एकान्त स्थान में है । यह स्थान कुछ दशक पूर्व ही वराह–स्थान के नाम से घोषित हो चुका है जो मुझे उपयुक्त नहीं लगता । एक दिवंगत विद्वान **वर्मा जी (डा0 ब्रजकिशोर वर्मा 'मणिपद्म)** के अथक प्रयास का प्रतिफल है यह स्थान । वर्माजी ने इस स्थान को प्रकाश में लाने के लिये जो कुछ किया था, अकेला व्यक्ति इससे कुछ अधिक कर भी नहीं सकता । लेकिन अभी भी इस स्थान को किसी ऐसे लगनशील व्यक्ति की आवश्यकता है जो यहाँ और अधिक गहराई में पहुँचने का प्रयास करे ।

वर्माजी के सहयोग से खुदाई में यहाँ तीन प्राचीन पाषाण अवशेष मिले थे, एक शिवलिंग, गणेश की एक विशाल क्षतिग्रस्त मूर्त्ति और शिवलिंग की वह मूर्त्तित जल–निकास–नली जो मगरमछ के रूप में शिवलिंग के आगे लगाने की परम्परा रही है । इसी निकास–नली के मूर्त्तित अवशेष को वर्मा जी ने वारह–भगवान का नाम दिया था । इस खुदाई के बाद एक अन्य खुदाई में इसी खण्डहर के निकट पश्चिम एक महिषासुर–मर्दिनी की मूर्त्ति भी मिली जो वसुहाम नामक गाँव के एक देवालय में रख दी गई । यह मूर्त्ति यहाँ से कुछ समय पश्चात चोरी चली गई । इस खण्डहर में महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति का मिलना इस बात का संकेत है कि विष्णु, सूर्य और शिव की मूर्त्ति भी इस खण्डहर में कहीं है यदि यह यहाँ से उठा नहीं ली गई हो । यहाँ से यह मूर्त्तियाँ उठा लेने की सम्भावना नगण्य है, लेकिन इस बिन्दु को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता । बहेड़ा के आस पास और भी कई महत्त्वपूर्ण खण्डहरें और आध्यात्मिक स्थान हैं, जो मिथिला की सांस्कृतिक आस्था का प्रतीक है ।

एक खण्डहर तो इस खण्डहर से मात्र कुछ सौ मीटर पश्चिम–दक्षिण की ओर बलनी चौर के पूर्वी–दक्षिणी तट पर अछूता पड़ा है । नवादा का भगवती स्थान भी बहेड़ा से मात्र दो कि० मी० पूर्वोत्तर दिशा में है । यहाँ पिण्ड के रूप में भगवती की अराधना की जाती हैं । त्रिमोहनी जो बहेड़ा से मात्र तीन कि० मी० दक्षिण है, यहाँ वर्ष में दो बार कार्तिक और माघ के पूर्णिमा में कमला स्नान का विशाल मेला लगता है । यह दोनों ही मेला कमला नदी की इसी शाखा के किनारे त्रिमोहानी से मात्र तीन कि० मी० पूरब भूतनाथ–मंदिर महिनाम घाट के पास भी लगता है ।
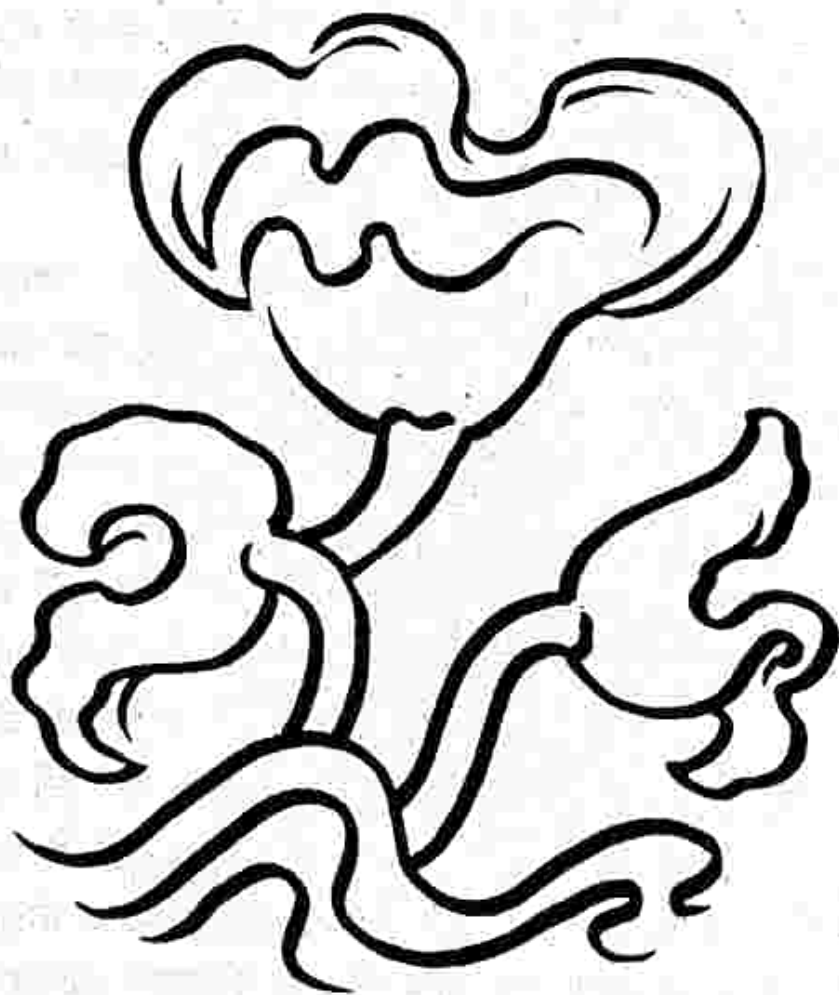
82. वराह मूर्त्ति (बहेड़ा)

83. गणेश मूर्त्ति (बहेड़ा)

84. मेला (तिरमोहानी)

85. मन्दिर (महिनाम घाट)
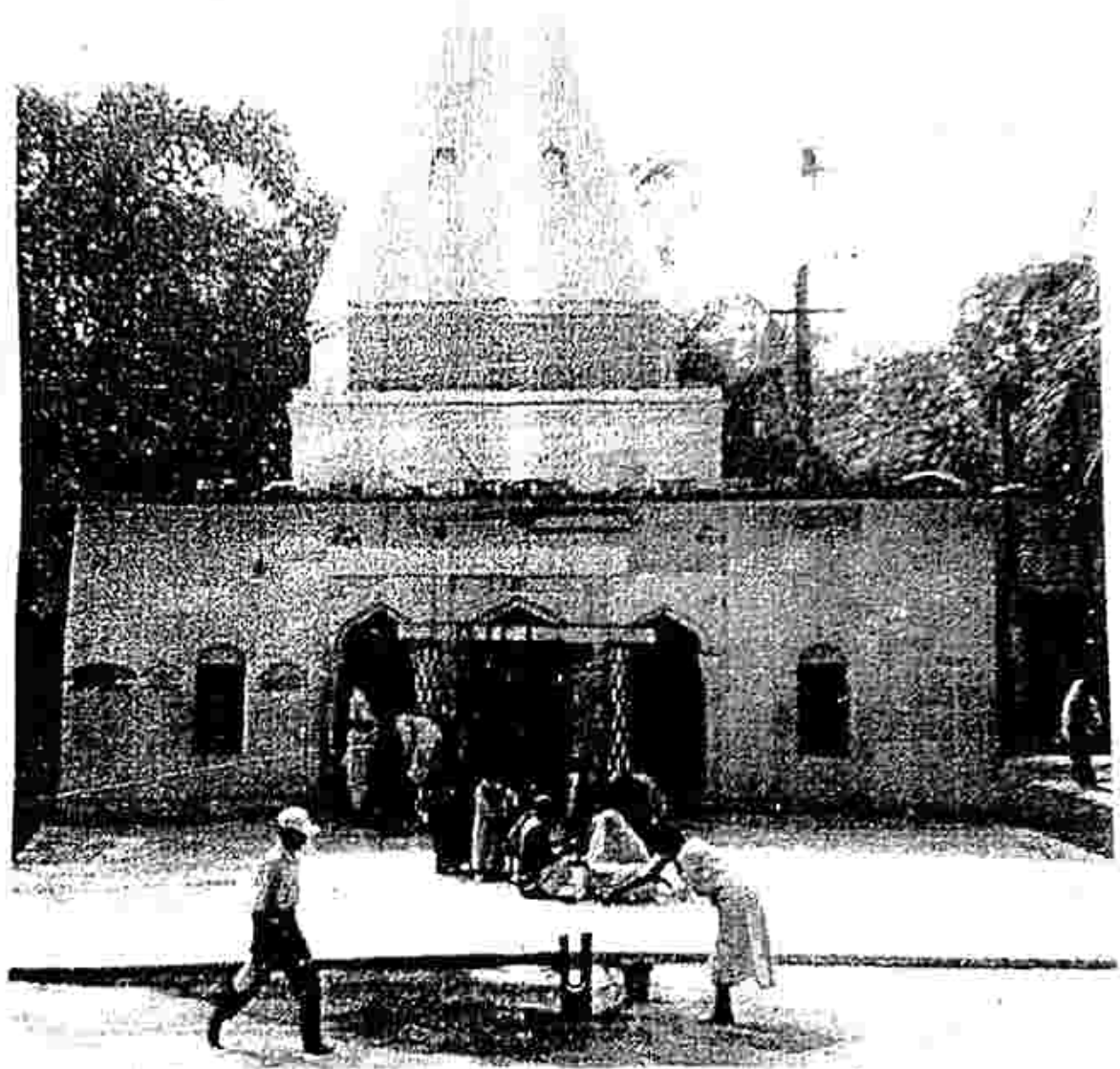
86. मन्दिर (नवादा)

रूपनगर

आज तक मैं सिमरिया गंगा–स्नान एक बार भी नहीं कर पाया हूँ, जब कि मगध की गंगा का मगध–स्नान सैकड़ों बार । जब मैं बहुत छोटा था अपनी दादी के साथ तीर्थाटन मे जाया करता था । ये सब तीर्थ मेरे गाँव के निकट ही था । यथा तिरमोहानी–घाट, महिनाम–घाट और नदई । इससे जब कुछ बड़ा हुआ तो तिलयुगा और कुशेश्वर–स्थान जाने के समय, मेरे मचलने पर दादी मुझे साथ कर लिया करती थी । मेरा गाँव है कोर्थ और महिनाम–घाट या तिरमोहानी कमला–स्नान के लिये जाते समय रूपनगर का खण्डहर रास्ते में पड़ता है । मुझे बचपन से ही प्राचीन मूर्त्तियाँ और खण्डहरें आकर्षित करती रही हैं । पहली बार जब मैं इस खण्डहर के निकट से गुजर रहा था तो देर तक खड़ा होकर इसे अपलक देखता रहा । दादी पीछे लौटकर मुझे बाँह पकड़कर आगे खींचकर ले गई थी, यह बात मैं अभी तक भुला नही पाया हूँ और जब कभी इसके निकट से गुजरता हूँ, वह बीती घटना मुझे याद आ जाती है ।

प्रसिद्ध गाँव कोर्थ से करीब साढ़े तीन कि0 मी0 पश्चिम रूपनगर का यह टीला है । अभी तक इसके साथ छेड़छाड़ नहीं हुई है, अतः यह टीला उपेक्षित है । कई दशक पूर्व, एक वर्षा के बाद इस टीला पर एक जलटोटी (पत्थर का मगरमच्छ) नजर आया था, जिसे यहीं स्थित एक शिवालय के प्रांगण में रख दी गई हैं ।
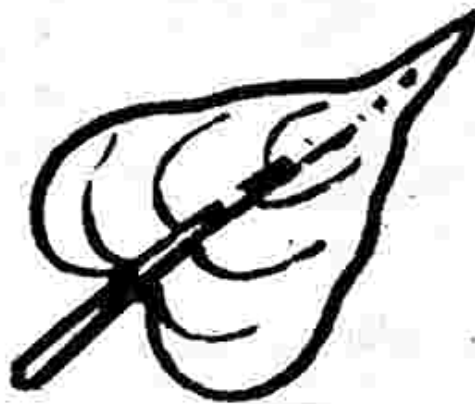
87. जलटोटी (रूपनगर)

सोनहद

सोनहद, कोर्थ पंचायत का एक टोला है । कोर्थ के सम्बन्ध में "दर्शनीय मिथिला" के प्रथम पुष्प में बहुत कुछ लिखा गया है । यह जिला मुख्यालय दरभंगा से दक्षिण–पूर्व की ओर करीब 44 कि0 मी0 की दूरी पर है । विगत साठ के दशक में स्व0 भोला झा को घर बनाने के क्रम में गड्ढा खोदते समय भगवान विष्णु की मूर्त्ति के कुछ टुकड़े मिट्टी के नीचे मिले । उन्होंने इसे एक पीपल की जड़ में रख दिया जो तब से अब तक किसी मंदिर में नहीं पहुँच सकी है । इस समय यह खण्डित मूर्त्ति उसी पेड़ के निकट एक ईंट के घेरे में पूजित है । कसौटी पत्थर की यह मूर्त्ति अत्यन्त प्राचीन है, लेकिन यह इस तरह भग्न है कि ठीक–ठीक समय अंकन एक बहुत ही कठिन काम है । मूर्त्ति देखने से पता चलता है कि इसकी ऊँचाई करीब ढाई फीट रही होगी ।

जहाँ यह मूर्त्ति पाई गई थी, वह एक प्राचीन तालाब का पूर्वी भिण्डा है । इस तालाब के निकट उत्तर एक और तालाब है । सोनहद गाँव का सम्पूर्ण वास–स्थान एक प्राचीन नदी का पश्चिमी भिण्डा है । इस प्राचीन नदी का अवशेष अब "बुद्ध–चौर" के नाम से जाना जाता है । इस गाँव के निकट पूर्वोत्तर दिशा में भी दो प्राचीन तालाब हैं । इनमें से एक तालाब का नाम है, सुरबे । सोनहद गाँव कोर्थ का ही एक अंग रहा है और यहाँ इस मूर्त्ति अवशेष के अतिरिक्त और भी कई पुरातात्विक अवशेष, यहाँ के खण्डहरों में मिलते रहे हैं । एक काली सुराही जिसे यहाँ **'टारा'** कहा जाता है, एक स्थान पर मिली थी । चित्रित यह सुराही आधुनिक मृण्कला को भी चुनौती देने वाली थी जो अज्ञानता वश नष्ट कर दी गई । मात्र यही गाँव नहीं, बल्कि इसके निकट के चारों ओर के अन्य गाँव तथा रिक्त स्थान पुरातात्विक महत्व के हैं । उत्तर में है "कल्याणो" नामक विस्तृत खण्डहर, दक्षिण में तपसी और निसिहारा नामक गाँव, पूर्व में प्राचीन नदी अवशेष बुद्ध–चौर, और पश्चिम में शिवनगर नामक गाँव ।

४४. मूर्त्ति अंश (सोनहद)

89. मूर्त्ति पीठिका अंश (सोनहद)

अहिरैन

अहिरैन पाली से मात्र पाँच सौ मीटर पश्चिमोत्तर दिशा में पाली पंचायत का ही एक गाँव और पाली प्रखण्ड मुख्यालय घनश्यामपुर से मात्र दो कि0 मी0 पश्चिम है । अहिरैन का शिव मंदिर या शिवलिंग अब मिलन–महादेव के नाम से दूर–दूर तक प्रसिद्ध हो चुका है । प्रत्येक रविवार को यहाँ औरतें शिव–पूजा से अधिक अपने सगे–सम्बन्धियों से मिलने आया करती हैं । मिथिला के रीतिरिवाज के अनुसार वह किसी दूसरे के घर में आतिथ्य स्वीकार नहीं कर सकती, वह घर सगे–सम्बन्धी का ही क्यों न हो । इस स्थिति में देवस्थान एक उपयुक्त मिलन स्थान साबित होता है – एक पंथ दो काम । इस क्षेत्र के कुछ गाँव, जिनके नाम प्राचीन हैं और यहाँ पुरातात्विक अवशेष भी उपलब्ध हैं, इन गाँवों के नाम संस्कृत भाषा के अधिक निकट हैं । यथा तुमौल (तमाल), पाली (पालवंश) और अहिरैन इससे भी साबित होता है कि मिथिला के अतीत की गौरब–गरिमा का क्रीड़ा स्थल कभी यह क्षेत्र रहा था । विगत कुछ सौ वर्षों के अन्दर पुरातत्त्व से सम्बन्धित प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ सबसे अधिक जलाशयों में मिली हैं । यह तभी सम्भव हुआ है जब प्राचीन तालाब का जीर्णोद्वार, पानी की आवश्यकता की पूर्त्ति के लिए आवश्यक समझा गया । यह पुनीत कार्य कुछ सुखी–सम्पन्न लोगों की सहायता से होता रहा है । यह परम्परा अब करीब–करीब समाप्त है । अतः वे मूर्त्तियाँ जो अब तक निकाली नहीं जा सकी हैं और सैकड़ो वर्षो से जलशयन में हैं, वे अब कभी नहीं मिलेगी । आबादी वृद्धि के कारण अब इस प्रकार का तालाब पाटकर या तो आवासीय भूमि अथवा कृषि उपयुक्त भूमि में परिवर्त्तित हो रहा है ।

आज से बीस वर्ष पूर्व उपरोक्त परम्परा के अनुरूप ही एक प्राचीन तालाब का जीर्णोद्वार अहिरैन में किया जा रहा था । करीब चार–पाँच फुट मिट्टी ऊपर से निकालने के बाद, इस तालाब की गहराई में एक शिवलिंग, एक गणेश की मूर्त्ति, प्राचीन मंदिर का अर्धनिर्मित पाषाण चौकठ और एक बहुत

बड़ा मानव–मुंड मिला । मानव–मुंड की विशेषता यह थी कि इसकी बाँयी आँख के पास एक तीर चुभा हुआ था । एक मंदिर बनाकर इसी तालाब के उत्तरी भिण्डे पर लिंग और गणेश की मूर्ति की स्थापना कर दी गई । गणेश की यह मूर्त्ति कुछ समय बाद किसी ने चुरा लिया और मंदिर का पाषाण अवशेष अभी भी इसके प्रांगण में देखा जा सकता है । यह स्थान कभी किसी बाहरी आक्रमण का शिकार हुआ था । मात्र यही स्थान नहीं, इस क्षेत्र के आस–पास की वह सभी आबादी जो उस समय रही होगी एक ही समय में दुर्घटना ग्रस्त हुई हैं ।
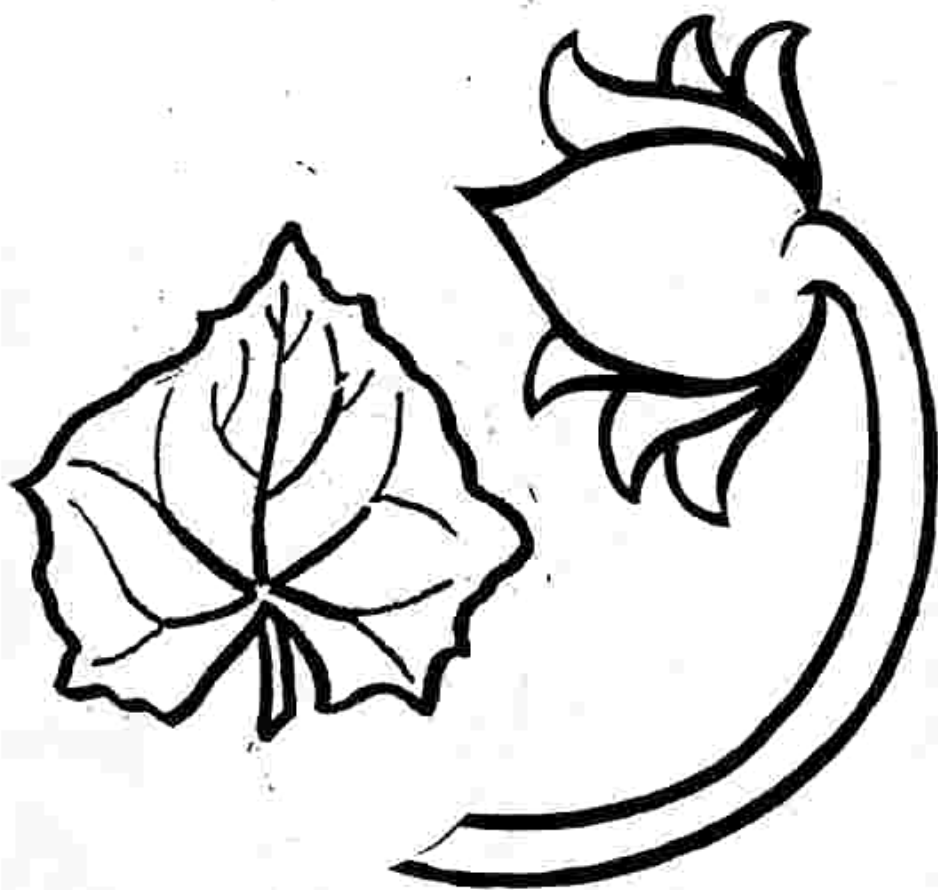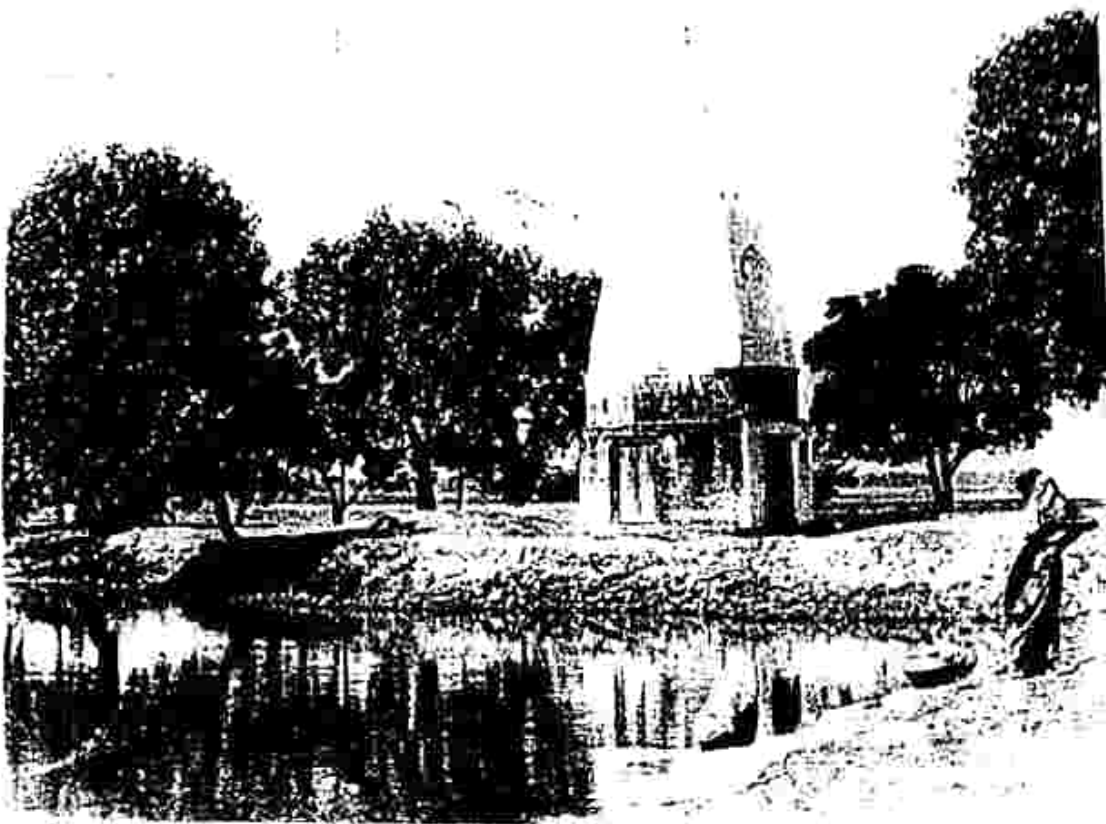
90. नवीन मन्दिर और प्राचीन मन्दिर का अवशेष
(अहिरैन)

पाली

पाली नाम का यह गाँव घनश्यामपुर से मात्र दो कि० मी० पश्चिम मुख्य सड़क पर है । यहाँ का बाजार अब इस इलाके की शान है । यह स्थान भी प्राचीन काल में महत्त्वपूर्ण रहा होगा, जिसके साक्ष्य है, यहाँ के खण्डहर और कई प्राचीन तालाब । कुछ दशक पूर्व गाँव के पूरब एक प्राचीन तालाब के पश्चिमी भिण्डे पर प्राचीन शिवलिंग जो उत्तरी भिण्डे पर था स्थानान्तरण करने तथा मंदिर निर्माण के बाद लिंग स्थापना के समय मंदिर के निकट ही एक पीपल के पेड़ की जड़ में एक मूर्त्ति मिली । इस मूर्त्ति का मिलना भी एक अचम्भा या करिश्मा ही था ।

प्रायः मंदिर के आस–पास ध्वजा गाड़ने की परम्परा रही है । प्राचीन काल में यह ध्वजा पत्थर की और शिल्पित हुआ करती थी जो अब बाँस की हुआ करती है । यही ध्वजा गाड़ने के समय जो मूर्त्ति मिली वह पार्वती की है और पार्वती के गोद में हैं, बाल गणेश । शिल्प से यह मूर्त्ति गुप्तकालीन लगती है । इस गाँव का नाम पाली कैसे पड़ा, यह कोई नहीं जानता । सम्भवतः पाल शासन के समय यह गाँव किसी न किसी रूप में इस शासन के लिये महत्त्वपूर्ण रहा हो । वैसे गाँव के लिये "पाली" (जिससे पाली भाषा बनी है) शब्द भी आया है । इस गाँव में हिन्दू ही नहीं मुसलमानों की भी घनी आबादी है । हिन्दू के अपेक्षा प्रत्येक महत्त्वपूर्ण वास–स्थान मुसलमानों के अधीन ही है ।
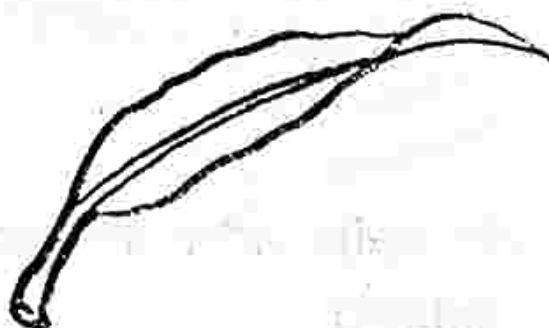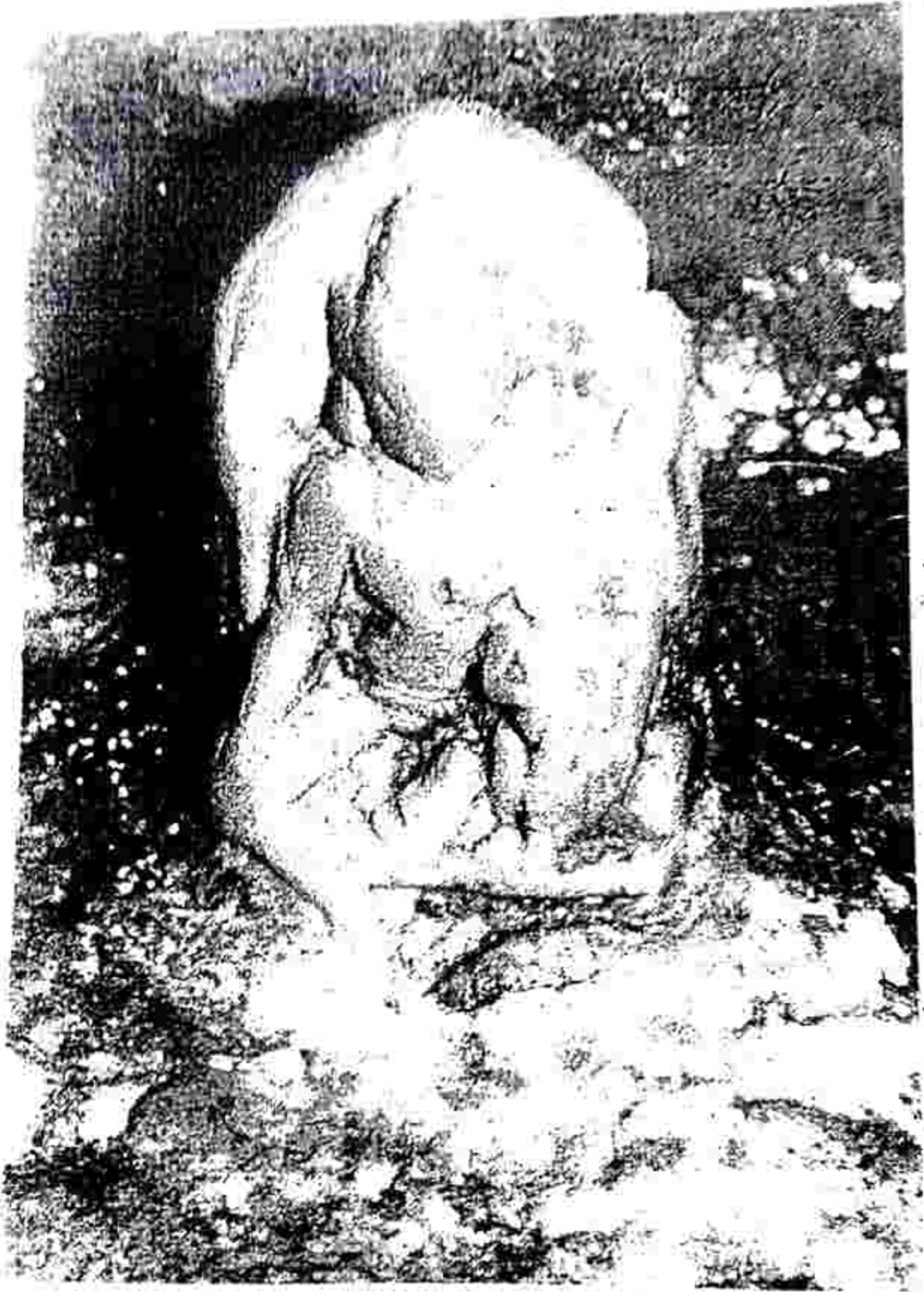
91. पार्वती (पाली)

तुमौल

मैं जिस तुमौल की चर्चा करने जा रहा हूँ, यह घनश्यामपुर और छर्रापट्टी जिस की चर्चा इससे पूर्व की जा चुकी है, के सन्निकट है । कोशी नदी की चपेट में होते हुए भी प्राचीन खण्डहरों और तालाबों का अवशेष अब भी तुमौल में देखा जा सकता है । मिथिला का गाँव अभी भी पुरातात्विक अवशेष की महत्ता से अपरिचित है । यही कारण है कि उपलब्ध होते हुए भी इस प्रकार की वस्तुएँ काल के गाल में चली जाती हैं ।

कई दशक पूर्व इस गाँव में एक प्राचीन मूर्त्ति मिली जिसे एक शिव मंदिर में स्थान मिल तो गया और पूजा भी होने लगी । लेकिन यह मूर्त्ति अभी तक अपरिचित है । आंशिक रूप से खण्डित काली पत्थर की इस मूर्त्ति को एक लम्बे अर्से तक मिट्टी के नीचे रहने और जब यह इससे पूर्व पूजित रही होंगी पानी का प्रहार इतना सहना पड़ा कि इस मूर्त्ति पर उसका पद चिह्न अंकित हो गया है । पिण्डाकृति के रूप में यह मूर्त्ति ऐसे ही नहीं दिखाई पड़ती हैं, सैकडो नही हजारों वर्ष का पानी का आघात पत्थर को भी किस तरह मोम के शक्ल में बदल देता है, यह प्रभाव इस मूर्त्ति पर देखा जा सकता है । मिथिला में अभी तक मुझे जितनी मूर्त्तियाँ मिली हैं, यह मूर्त्ति उन सबों से प्राचीन है । ई० सन प्रारम्भ से भी पूर्व की यह मूर्त्ति किस देव की हैं, दावापूर्वक तो कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन शिर तीन है जो त्रिमूर्त्ति की पहिचान देती है । हो सकता है यह मूर्त्ति भारत की प्राचीनतम मूर्त्तियों में से एक मूर्त्ति हो । तुमौल गाँव के दक्षिण एक विशाल तालाब है । इसी तालाब के उत्तरी भिण्डे पर यह मूर्त्ति मिट्टी के नीचे पाई गई थी । इस तालाब को इस भिण्डा का कुछ अंश अभी भी जंगल के रूप में है । अतः यह निश्चित कर पाना कि तुमौल की खण्डहरें कितनी प्राचीन हैं, इस रूप में सम्भव नहीं । प्राप्त मूर्त्ति का काल तथा शैली को निश्चित करना तो और भी असम्भव है ।
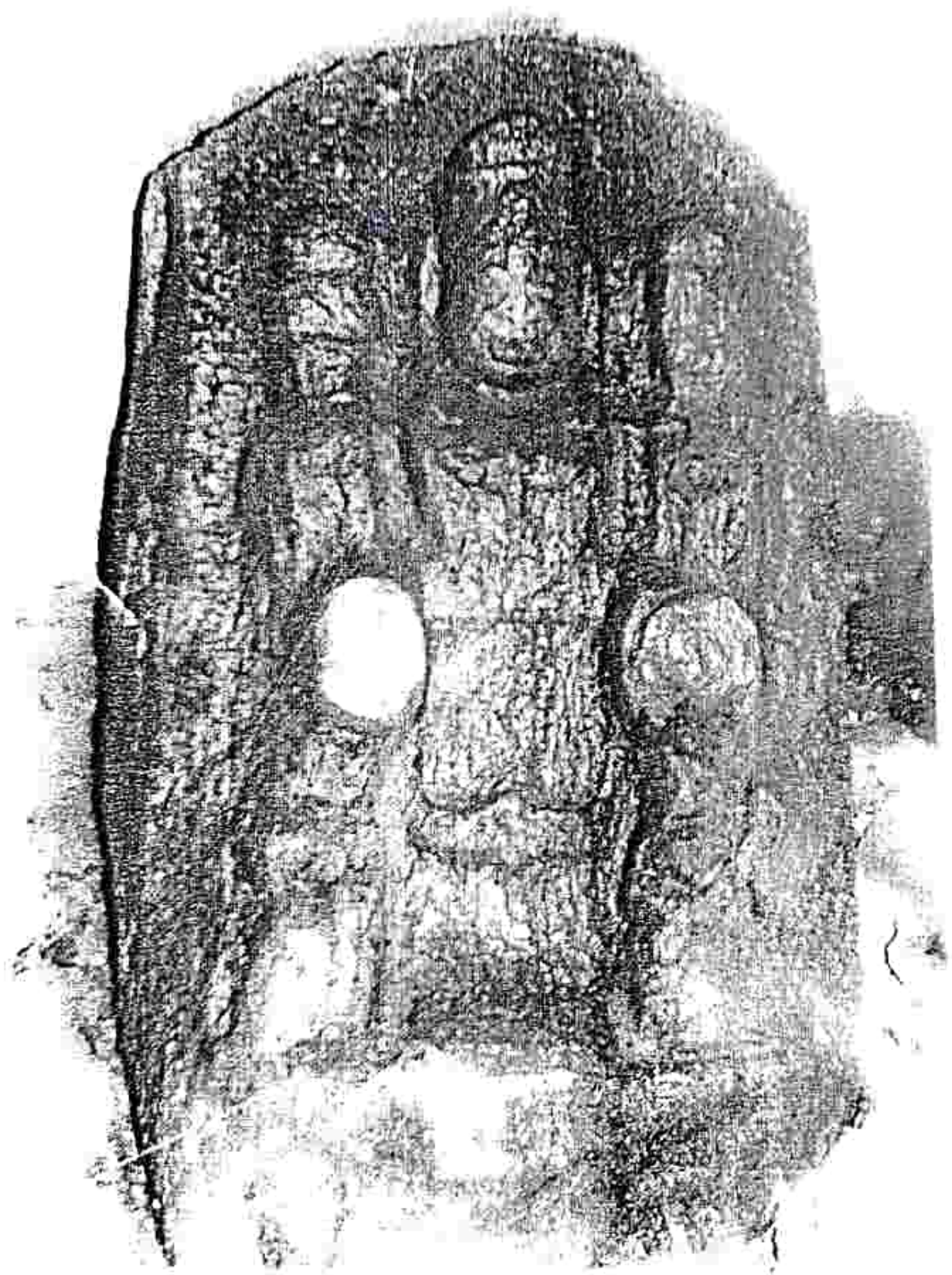
92. त्रिमूर्त्ति (तुमौल)

छर्रापट्टी

घनश्यामपुर प्रखण्ड मुख्यालय से मात्र 4 कि0 मी0 उत्तर बसा यह गाँव कभी बहुत ही महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध गाँवों में से एक रहा होगा । इस गाँव के पूर्व–दक्षिण की ओर एक बहुत ही ऊँचा देवस्थान है, जिसे गणेश स्थान कहा जाता है । इस स्थान में कुछ मूर्त्तियाँ मुझे देखने को मिली हैं जो प्राचीन और नवीन दोनों प्रकार की हैं । लेकिन ये मूर्त्तियाँ इस स्थान की नहीं हैं । यह स्थान खण्डहर के रूप में कुछ समय तक रहने के बाद अब इसका जीर्णोद्वार कर कहीं–कहीं से मूर्त्तियाँ एकत्रित कर स्थापित की गई हैं ।

प्राचीन काल में इस स्थान पर भव्य सूर्य की मूर्त्ति और विशाल मंदिर रहा था जिसका मलबा आज भी यहाँ बिखड़ा पड़ा है । मुसलमानी आक्रमण के समय सूर्य की मूर्त्ति इस स्थान से पश्चिम स्थित एक प्राचीन तालाब में छिपा दी गई । जिसे नई आबादी ने इस तालाब से प्राप्त तो कर ली है, लेकिन इस क्रम में यह श्रेष्ठतम मूर्त्ति कुछ क्षतिग्रस्त हो चुकी है । करीब चार फुट ऊँची और 22 ईंच चौडी यह मूर्त्ति पालिश युक्त कसौटी पत्थर और मिथिला शैली की है जिसका निर्माण बारहवीं या तेरहवीं शताब्दी में हुआ था । इस मूर्त्ति का शिल्प अवर्णनीय है ।

जिस तालाब में यह मूर्त्ति मिली थी, इसके किनारे ही एक शिव मंदिर में यह इस समय पूजित है । यहाँ साप्ताहिक मेला भी मंदिर के आगे लगता है । विगत कुछ दशकों में कोशी नदी की बाढ़ ने कुछ इस तरह इस क्षेत्र को झिकझोरा है कि टीला और खाई की पहिचान अब असम्भव हो गया है । घनश्यामपुर के आस–पास इसके पाँच कि0 मी0 के व्यास में जिस प्रकार का पुरातात्विक अवशेष उपलब्ध है और इस बाढ़ से पूर्व जो रंगत और भौगोलिक बनाबट करीब 50 वर्ष पूर्व मैंने देखा था, वह इस क्षेत्र को प्राचीन काल का श्रेष्ठ वास–स्थान, शस्य–श्यामला उर्बर भूमि और प्रसिद्ध तीर्थ स्थल के रूप में आज भी मेरे समक्ष प्रतिबिम्बित करता है ।
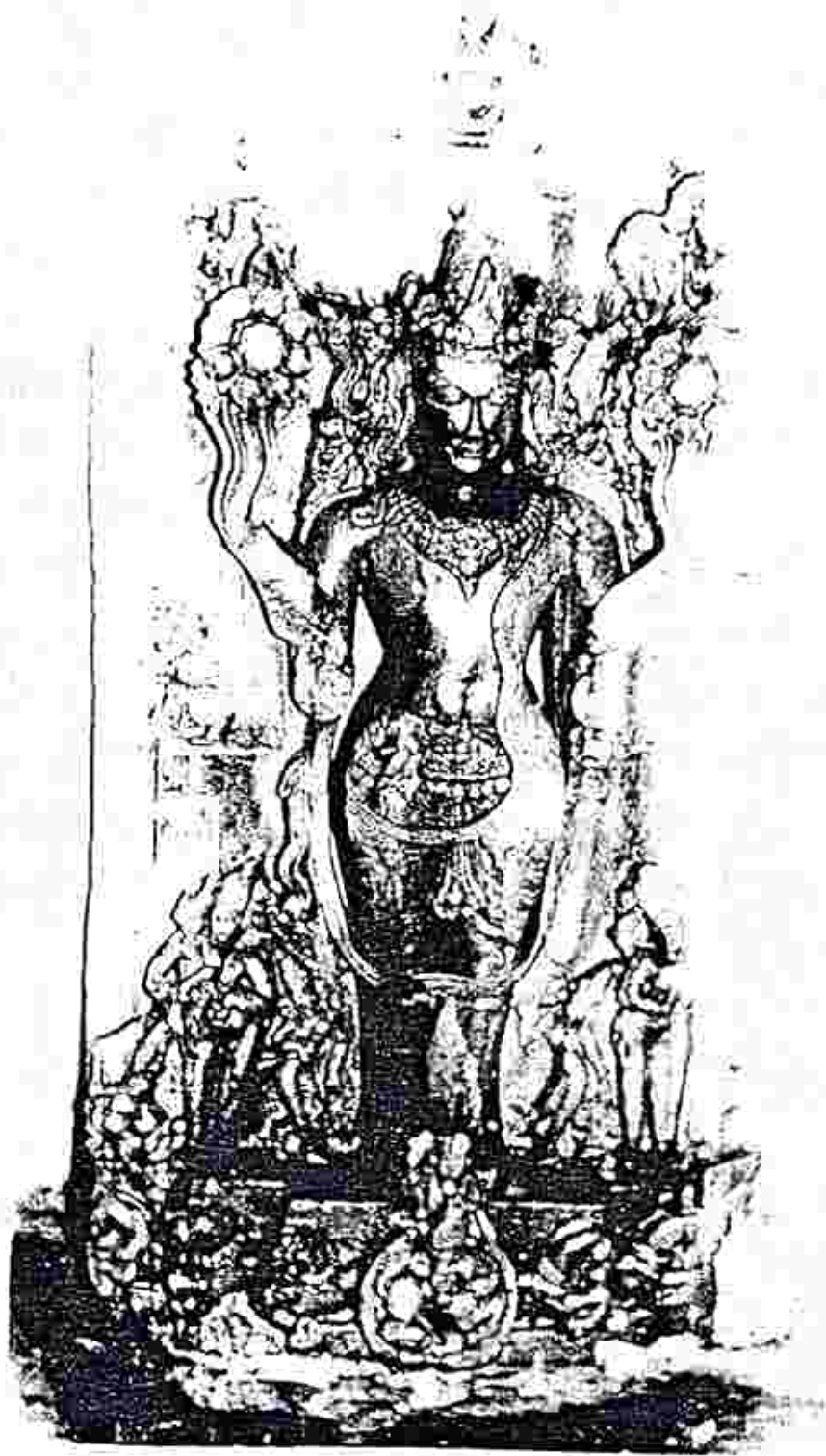
93. सूर्यमूर्त्ति (छर्रापट्टी)

बुढ़ेब

घनश्यामपुर दरभंगा जिला का एक प्रखण्ड मुख्यालय है । जिला मुख्यालय से इसकी दूरी है करीब 55 कि0 मी0 । प्रखण्ड मुख्यालय से करीब दो कि0 मी0 पूरब एक गाँव है बुढ़ेब । यहाँ सर्वाधिक संख्या राजपूत और ग्वालों की है । कुछ घर ब्राह्मणों के भी हैं । इस गाँव की आबादी नई है । आबादी वृद्धि के साथ ही वह स्थान भी जो कभी जंगल या उपेक्षित टीला था, अब बच्चे यहाँ किलकारियाँ मारते हैं । इस गाँव का वास–स्थान एक लम्बे समय तक उजाड़ रहने के कारण यह जंगल के रूप में परिवर्त्तित हो चुका था । आबादी को जल की आवश्यकता तो होती ही है । इसके लिये कुआँ और तालाब खोदने की परम्परा प्राचीन रही थी । अब यह परम्परा मात्र सुनने और देखने के लिये रह गई है । इस परम्परा के अन्तर्गत ही जब एक प्राचीन तालाब का जीर्णोद्धार हो रहा था तो इसके किनारे एक प्राचीन कुआँ और विशाल कसौटी पत्थर की एक मूर्त्ति मिली । जो कुछ तो पहले से ही क्षतिग्रस्त थी और कुछ आघात इसे प्राप्ति के समय लगा । यह मूर्त्ति महिषासुर मर्दिनी की है जिसका आकार है 72 X 30 ईंच ।

जहाँ यह मूर्त्ति मिली थी इसके निकट ही एक ऊँचा खण्डहर भी ईंटों के ढेर के रूप में था । यह खण्डहर था प्राचीन मंदिर का जिस पर अब नया मंदिर बन चुका है और इसी में प्राप्त मूर्त्ति की स्थापना कर दी गई हैं । आश्विन में दुर्गा पूजा के अवसर पर यहाँ विशाल मेला लगता है और बलि–प्रदान की भी परम्परा है ।
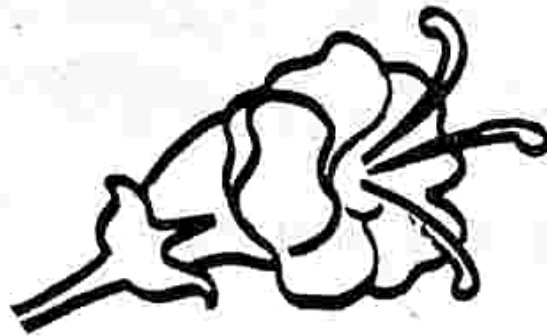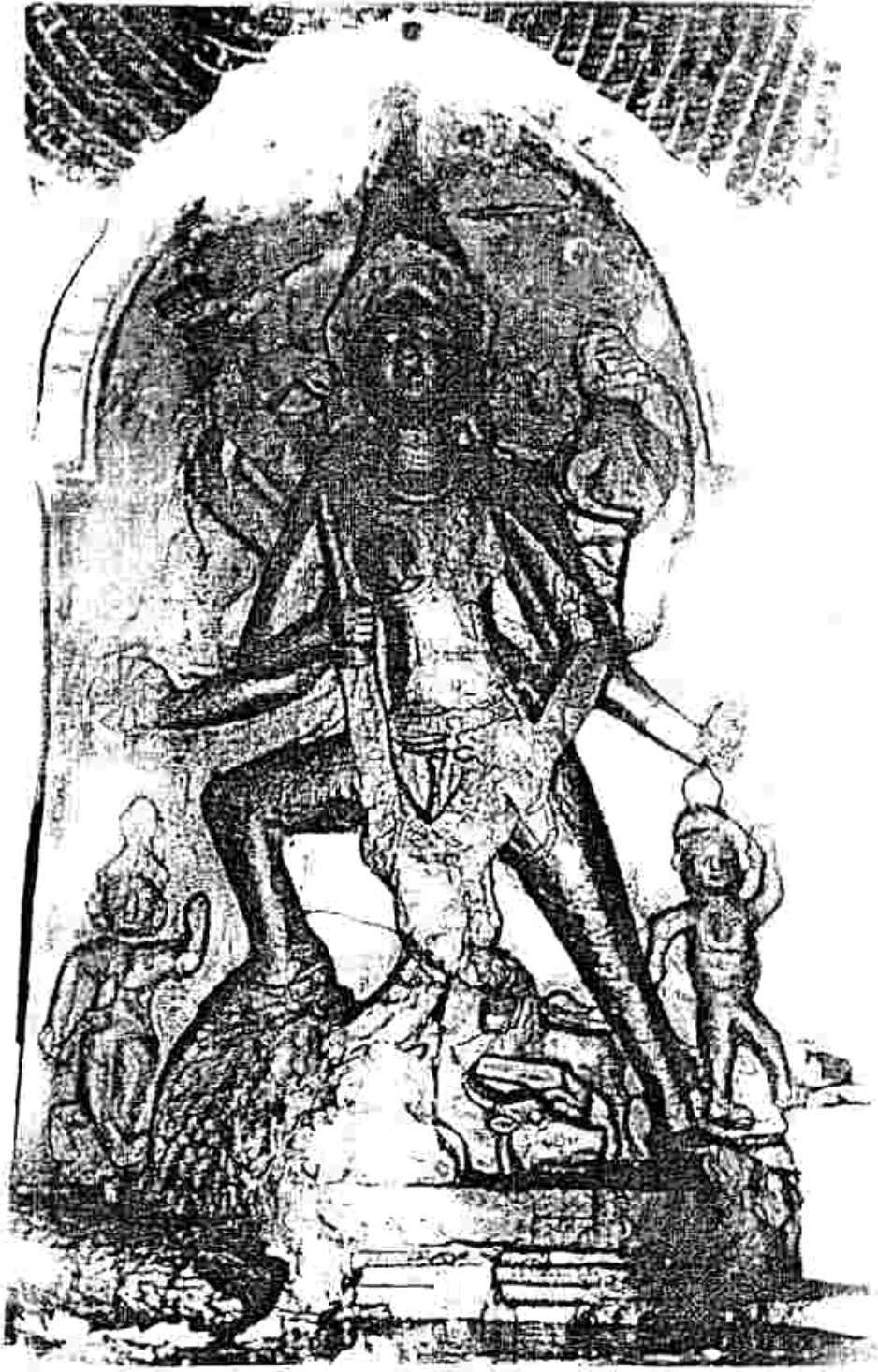
94. महिषासुरमर्दिनी (बुढ़ेब)

बैद्यनाथपुर

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्व–दक्षिण की ओर करीब 60 कि0 मी0 दूर और बिरौल प्रखण्ड मुख्यालय से भी पूर्व–दक्षिण की ओर करीब 10 कि0 मी0 की दूरी पर एक गाँव है बैद्यनाथपुर । इस समय तो यह गाँव बहुत बड़ा नहीं है, लेकिन यहाँ का वास स्थान एक विस्तुत क्षेत्र में फैला हुआ है और दूर से ही ऊँचा उठता हुआ केन्द्र में पहुँच कर सबसे ऊँचा हो गया है । इस गाँव के दक्षिण होकर कभी एक विशाल नदी बहती रही थी, जिसका पदचिह्न अभी भी बाँकी हैं । दरभंगा जिला के एक विस्तृत पूर्वी और दक्षिणी भूभाग को कोशी नदी कुछ दशक पूर्व तक, जब तक कि कोशी का पश्चिमी–तटबन्ध नहीं बन पाया था– मुख्यालय से सम्पर्क बिल्कुल तोड़ दिया था । यह तटबन्ध बन जाने के बाद अब कोशी का स्थान ले लिया है कमला–बलान और अभी भी यह भूभाग वर्ष में छः महीने तक पानी से डूबा रहता है । बैद्यनाथपुर भी इसी तरह के क्षेत्र का एक अंग है, यहाँ तक पहुँचने के लिये बारहों महीने कम से कम चार कि0 मी0 का फासला नाव से तय करना आवश्यक है । और इतनी ही दूरी तय करने के लिये पाँव–पैदल भी चलना आवश्यक है । इस गाँव में एक घर ब्राह्मण के अतिरिक्त बहुसंख्यक राजपूत और मल्लाह हैं । इसके अतिरिक्त माली, बढ़ई और ताँती भी है ।

वर्ष 1968 ई0 का वह महीना था आश्विन और दुर्गा पूजा के प्रारम्भ से कुछ ही रोज पूर्व गाँव के पश्चिम हलवाहा सत्तो माली को एक कसौटी पत्थर की 12 X 7 ईंच की मूर्त्ति, श्री लक्ष्मी नारायण सिंह के खेत में मिली । यहाँ बड़े–बड़े आकार की ईंटें तो पहले भी मिलती रही थी, लेकिन यह पहला अवसर था जब एक मूर्त्ति मिली । यह मूर्त्ति प्राप्ति स्थान से मात्र 100 गज पूरब एक शिव मंदिर के निकट स्वतन्त्र मंदिर बनाकर इसी में स्थापित कर दी गई हैं । यह मूर्त्ति है महिषासुर–मर्दिनी की और गुप्तकाल की लगती हैं । इस मूर्त्ति का शिल्प है पहाड़ी । चतुर्भुज इस मूर्त्ति ने घघरा पहन रखी है । दायें ऊपर के हाथ में है तलवार और बायें ऊपर के हाथ में ढाल । दाहिना

नीचे के हाथ में है त्रिशूल और बायें नीचे का हाथ महिषासुर की पूँछ पकड़ रखी है । आभूषण न्यूनतम और प्राचीन परिपाटी की । यथा, माला और हँसुली हे । मुकुट है पगड़ी जैसा, बिलकुल अनोखा ।

इस मूर्त्ति के निकट दक्षिण है शिवमंदिर जिसमें शिवलिंग और वसहा का पत्थर तथा वसहा का शिल्प भी इसी मूर्त्ति से मिलता–जुलता है । यह शिवलिंग और वसहा भी उसी काल का है, जब की यह मूर्त्ति । यहाँ के आधुनिक निवासी नवीन हैं और यह गाँव एक लम्बे समय तक खण्डहर के रूप में रहा था । इस गाँव को उजाड़ बनाया था किसी भूकम्प ने जिसने नदी को भी मरनासन्न कर दिया होगा । यह सब मिथिला पर मुसलमानी आक्रमण के पूर्व ही हुआ था । यहाँ प्राप्त नदी–अवशेष, कोर्थ, नारी, महुआर, कनहई, नदई आदि गाँव के निकट पाये जाने वाले नदी अवशेष की ही एक श्रृंखला है । यह क्रम लगातार कुशेश्वर–स्थान तक पाया जाता है ।
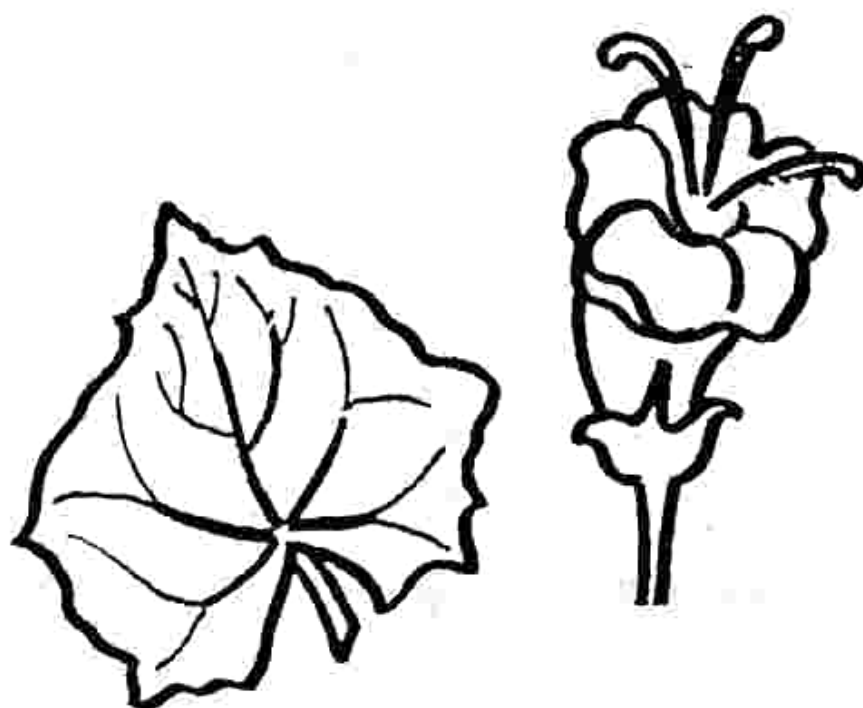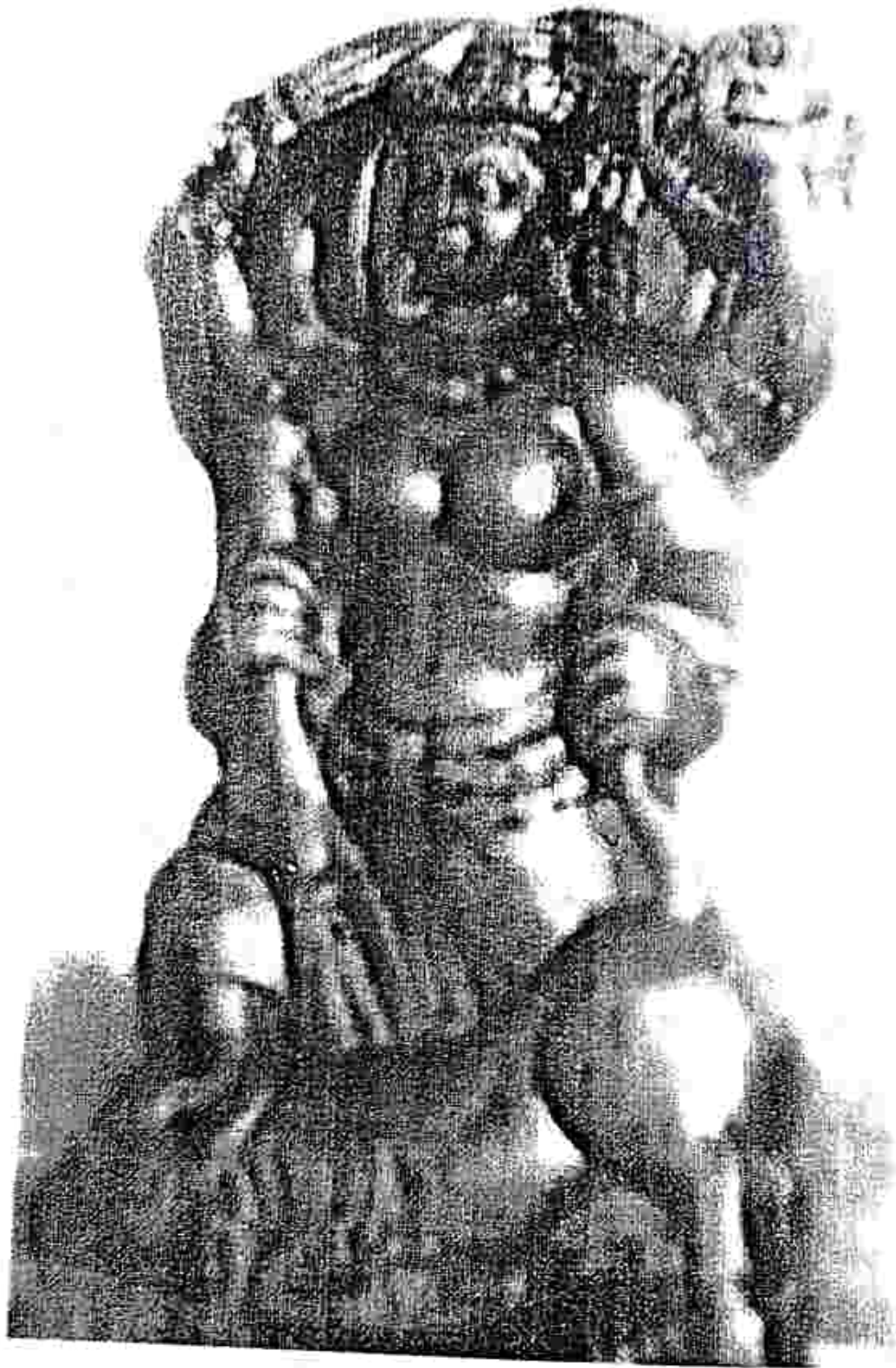
95. महिषासुरमर्दिनी (बैद्यनाथपुर)

तिलकेश्वर–स्थान

प्रसिद्ध तीर्थ स्थल कुशेश्वर स्थान से दक्षिण–पूर्व दिशा में करीब 15 कि0 मी0 दूर है तिलकेश्वर स्थान । यहाँ का शिवलिंग मिथिला के शिवलिंगों में विशालता की दृष्टि से अद्वितीय है और बहुत प्राचीन भी । कुशेश्वर स्थान को मिथिला का द्वितीय बैद्यनाथधाम माना जाता है । एक कालीगाय प्रति दिन यहाँ के लिंग को दूध पिलाया करती थी । यह लिंग घास–आच्छादित जंगल में प्रकाश में आने से पूर्व था । बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में यह लिंग प्रकाश में आया । तब से इस लिंग की महिमा बढ़ती ही चली गई । आज कल तो प्रतिदिन यहाँ दर्शकों की भीड़ रहती ही है और विशेष अवसर की तो बात ही कुछ और है । कुशेश्वर स्थान में तब से जाने लगा था, जब मैं करीब 8 वर्ष का था । उस समय कुशेश्वर स्थान का वह चौर जो इससे पश्चिमोत्तर में है, इसमें धान उपजता था और यह फाल्गुन महीने में सूखा रहता था । हम लोग उसी चौर होकर पाँव–पैदल कुशेश्वर स्थान जाया करते थे । पहली बार जब मैं कुशेश्वर गया था तो एक ताम्बे के पैसे के बदले मुझे यहाँ आठ बड़ी–बड़ी बम्बइया सुपारी मिली थी । उस आकार की सुपारी का कीमत आज दो रूपये प्रति सुपारी है । अर्थात सोलह सौ गुणा अधिक महँगा । मैं महँगाई की तुलना उसी सुपारी के सहारे किया करता हूँ ।

तिलकेश्वर स्थान की यात्रा मैंने 1982 में शिवरात्रि के दो रोज बाद की थी । यहाँ तक मैं अकेले और पथ–प्रदर्शक के अभाव में घंटो तक बालुकाराशि में भटकने के बाद पहुँच पाया था । यहाँ तक पहुँचने का रास्ता बीहर है और मात्र शिवरात्रि के अवसर पर यहाँ मेला लगता है । लेकिन कभी यह स्थान मिथिला के इने–गिने तीर्थस्थलों में एक रहा होगा । कोशी की धारा ने इसे अलग–थलग कर दिया है । यहाँ प्राचीन मंदिर तो नहीं है लेकिन प्राचीन मंदिर का अवशेष अभी भी नवीन मंदिर में चौकठ के रूप में देखा जा सकता है । पाली भाषा में एक अभिलेख भी यहाँ उपलब्ध है जो पत्थर के

चौकठ में उत्कीर्ण है । यहाँ कई प्रकार की प्राचीन मूर्तियाँ भी उपलब्ध थीं, जिसे कोई चन्द्रधारी संग्रहालय के नाम पर मेरे पहुँचने से एक वर्ष पहले उठाकर ले गया । इस सम्बन्ध में वहाँ से लौटने के बाद जब मैंने चन्द्रधारी संग्रहालय में खोज की तो तत्कालीन अध्यक्ष स्व0 कृष्णकान्त मिश्र ने इस बात से इन्कार किया था । लेकिन अब पता चला है कि एक 'जीप' (मोटर चालित वाहन) मूर्त्तियाँ वहाँ से लाई गई थीं । स्व0 कृष्णकान्त बाबू में कुछ गुण तो था लेकिन अपेक्षाकृत दूर दर्शिता का नितान्त अभाव भी । जिसे मैंने कई मौके पर उन्हे परखा था । वे प्रायः लोगों को धोखा में रखने का प्रयास किया करते थे । उनका नशा था एक मात्र अधिकाधिक मूर्त्तियों का संग्रह । मूर्त्ति के महत्त्व से वे बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे । इससे पुरातात्विक महत्व को आघात पहुँचेगा, ऐसा उन्होंने नहीं सोचा । मैं जब तिलकेश्वर पहुँचा था, किसी बड़े किसान की एक कचहरी, एक प्राइमरी स्कूल और कुछ घर मजदूरों का मैंने यहाँ देखा था । दो मंदिर थे, एक छोटा और एक बड़ा । बड़े मंदिर में शिवलिंग और इससे पूर्व–दक्षिण स्थित छोटे मंदिर में देवी तारा की खण्डित मूर्त्ति पूजित थीं । यह स्थान इतना ऊँचा है कि दो कि0 मी0 दूर से ही मंदिर का स्तूप मुझे दिखाई दिया था, जबकि मंदिर बहुत ऊँचा नहीं है । चन्द्रधारी संग्रहालय में यहाँ से कौन–कौन सी मूर्त्तियाँ लाई गई थीं, इसका विवरण तो मुझे नहीं मिला है, लेकिन एक प्रदर्शित विष्णु–मूर्त्ति तिलकेश्वर स्थान की ही है ।
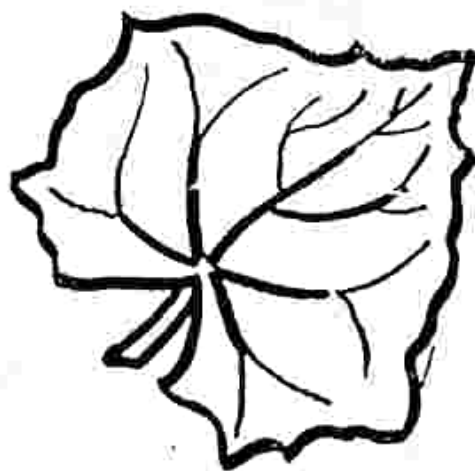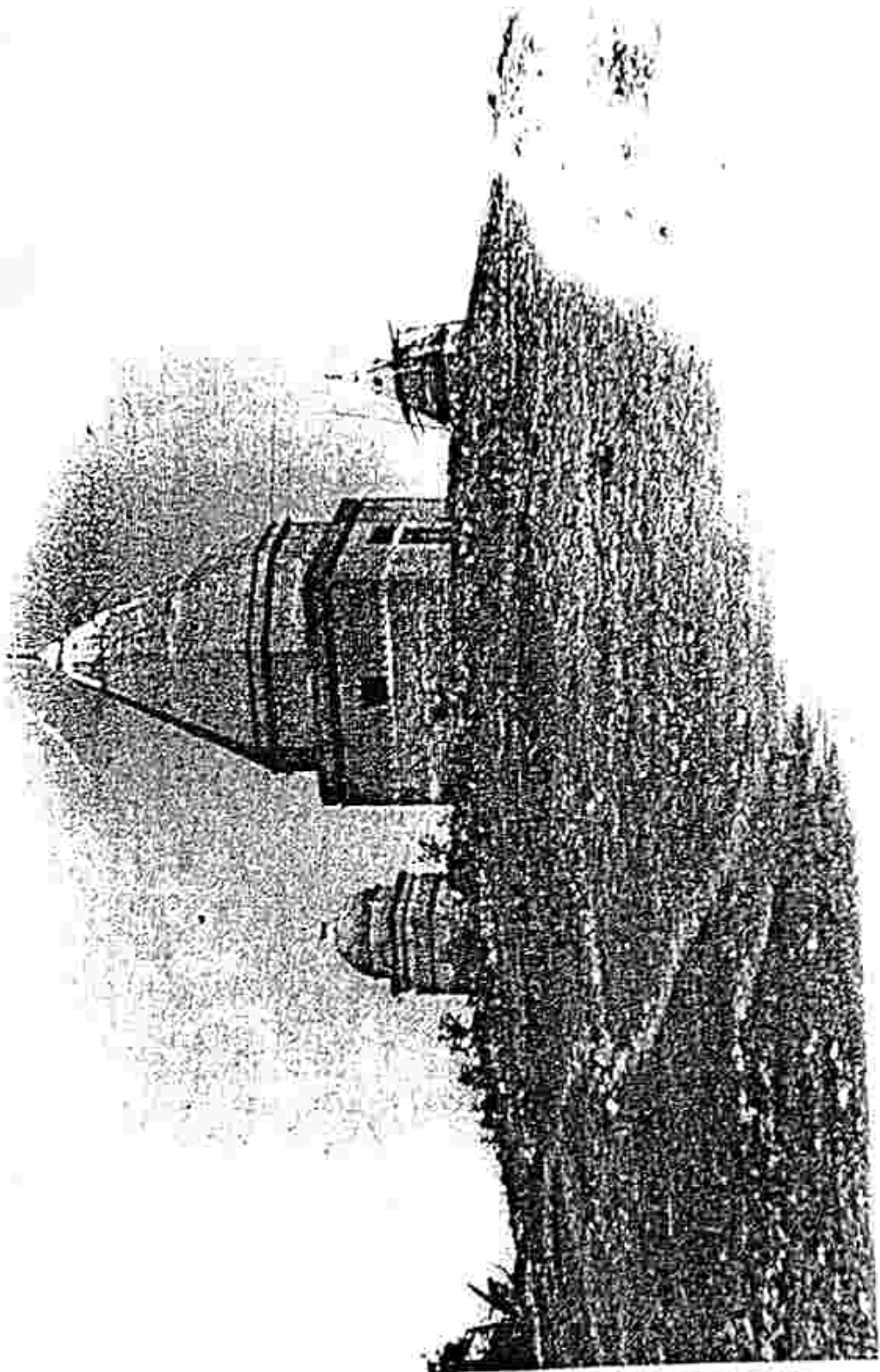
९६. मन्दिर (तिलकेश्वर स्थान)

97. शिवलिंग (तिलकेश्वर स्थान)
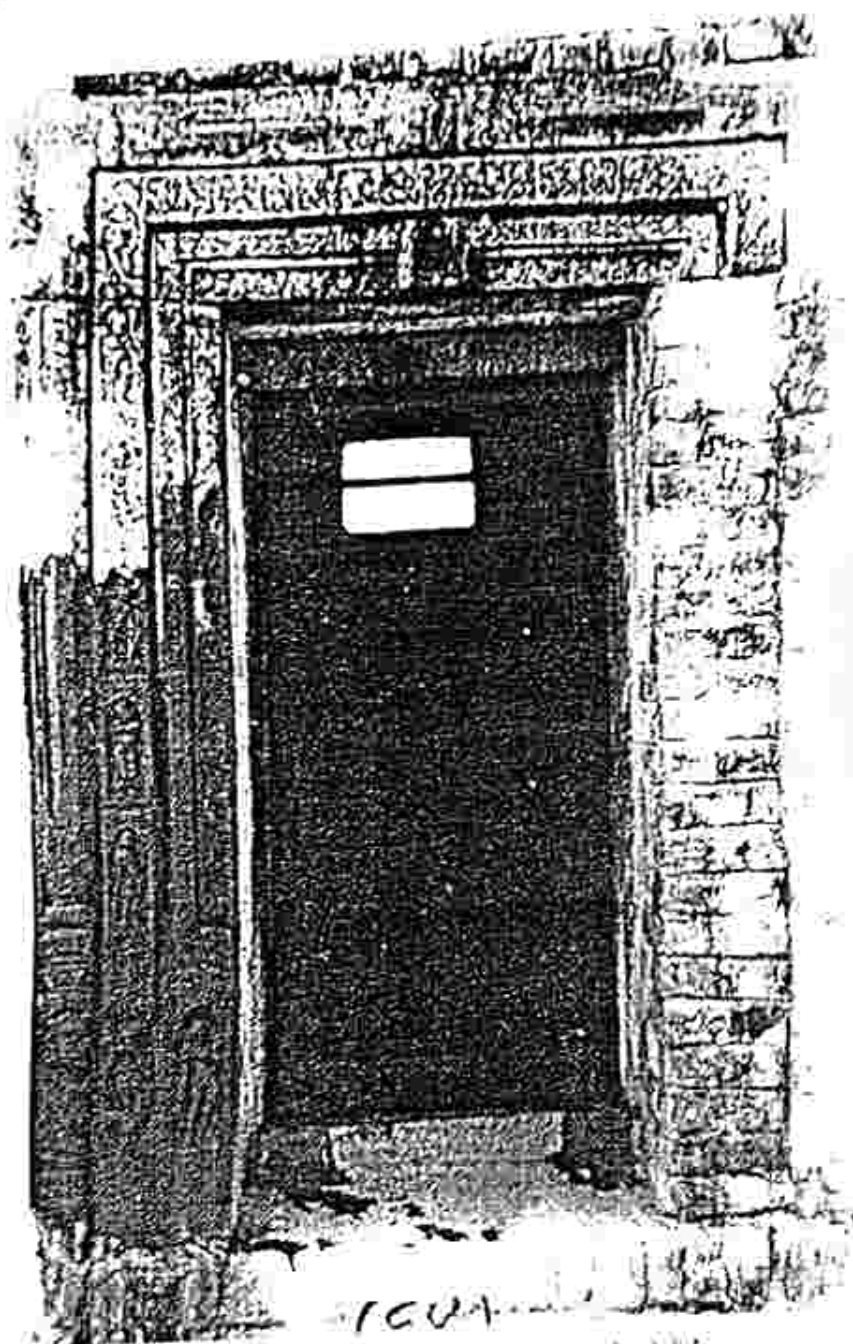
98. शिलालेख (तिलकेश्वर स्थान)
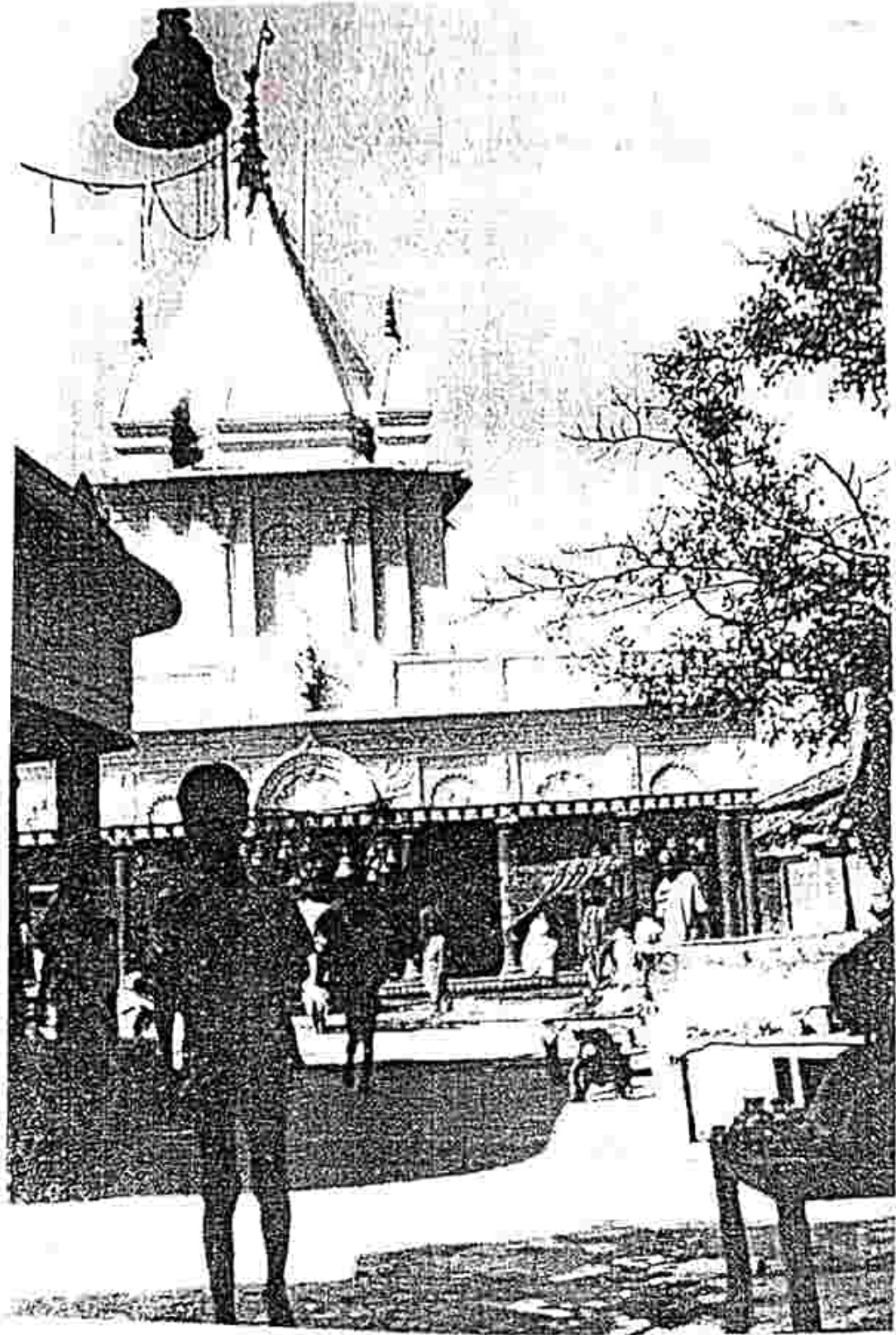
९९. मन्दिर (कुशेश्वर स्थान)

आध्यात्मिक

एवं

पुरातात्त्विक

DARSHNIYA MITHILA

दर्शनीय मिथिला

चर्तुथ पुष्प

लेखक

सत्यनारायण झा 'सत्यार्थी'

मानचित्र

मधुबनी जिला

पुरातात्विक सर्वेक्षित स्थान
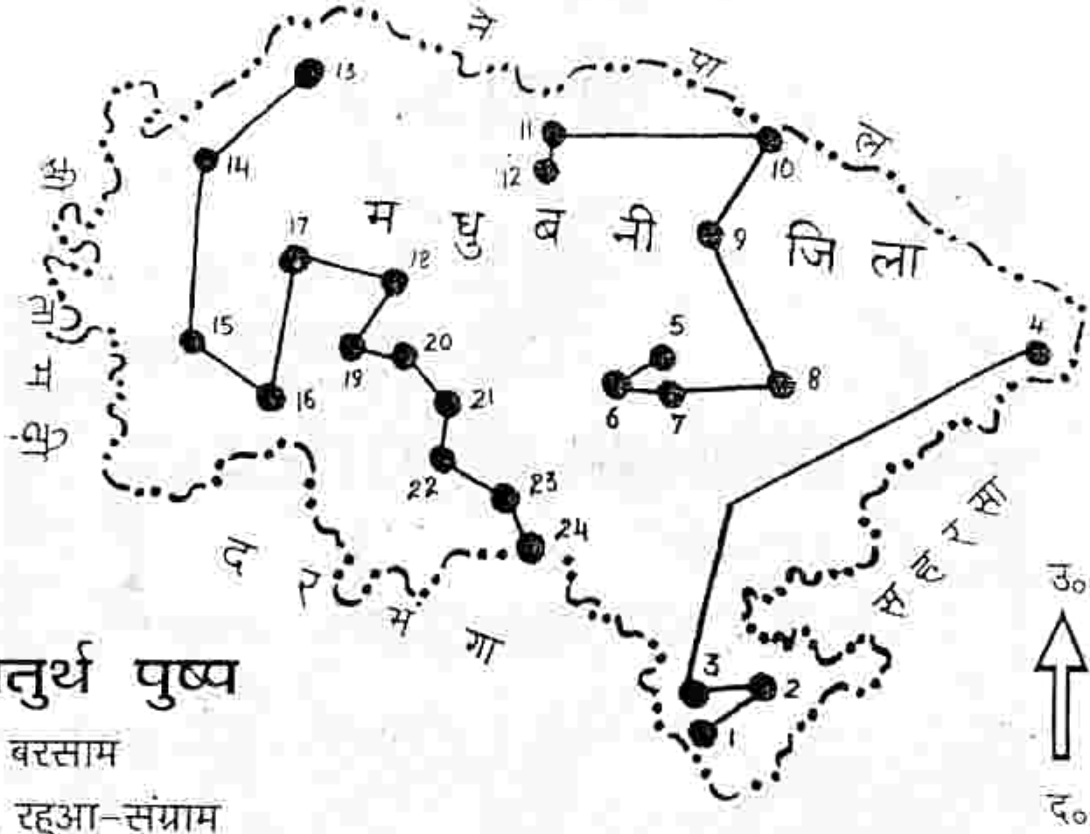
चतुर्थ पुष्प

1. बरसाम
2. रहुआ–संग्राम
3. भीठभगवानपुर
4. महादेवमठ

पंचम पुष्प

5. अन्धराठाढ़ी
6. रखवारी
7. पस्टन
8. परसा
9. बलिराजगढ़
10. भजनाहा
11. विष्णु–बरुआर
12. तिरहुता

षष्टम पुष्प

13. गिरिजा–स्थान
14. उच्चैठ
15. दामोदरपुर
16. भोजपरौल
17. अकौर
18. डोकहर
19. सौराठ
20. मंगरौनी
21. कोईलख
22. नाहर
23. जमथरि
24. विदेश्वर–स्थान
25. लोहना
26. उजान

बरसाम

मधुबनी जिला में बरसाम दो हैं, एक झंझारपुर अनुमंडल से उत्तर की ओर अन्धराठाढ़ी प्रखण्ड में और दूसरा झंझारपुर से पूर्व दक्षिण की ओर करीब 35 कि0 मी0 दूर भरिया नामक बाजार से पश्चिम । मैं इस दूसरे बरसाम की ही चर्चा करने जा रहा हूँ । यह एक मध्यम आकार का गाँव है । जिसमें कई जातियों के लोग हैं । मध्य गाँव के पूर्वी किनारे एक तालाब के निकट नवीन मंदिर में तीन कसौटी पत्थर की खण्डित प्रतिमाएँ सथापित हैं । ये तीन प्रतिमाएँ हैं, महिषासुर मर्दिनी, गणेश और गंगा की । जहाँ गणेश और महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमा का शिरोभाग बुरी तरह क्षतिग्रस्त है, वहीं गंगा की मूर्त्ति कमर से नीचे बची हुई है । यह मूर्त्ति मकर पर सवार है जिससे गंगा की पहचान होती है ।

यहाँ की मूर्त्तियाँ करीब 150 वर्ष पूर्व तब मिली जब मंदिर से पूर्व स्थित तालाब का पूर्वी भिण्डा एक कृषि–कर्म के अन्तर्गत खोदा जा रहा था । खण्डित होते हुए भी यहाँ की भगवती की मूर्त्ति का जो आध्यात्मिक महत्त्व सुनने को मिला, वह बहुत बढ़चढ़ कर है । यहाँ की तीनों ही मूर्त्तियाँ आठवीं शताब्दी से पूर्व की लगती हैं ।

यह क्षेत्र वर्षों तक कोशी नदी से त्रस्त रहा है। अब यह गाँव कोशी नदी के पश्चिमी तटबन्ध से बाहर होते हुए भी कमला नदी के बरसाती प्रवाह से आक्रान्त है । यह सब होते हुए भी यह गाँव अपनी पहचान अभी भी मिथिला के प्राचीन खण्डहर की बनाये हुए है । वर्षों तक यहाँ की मिट्टी पहले कोशी की धारा में बहती रही और अब बचा अंश कमला–बलान की भेंट चढ़ रही है । फिर भी वास स्थान और आस पास का क्षेत्र ठोस दिखाई पड़ता है ।
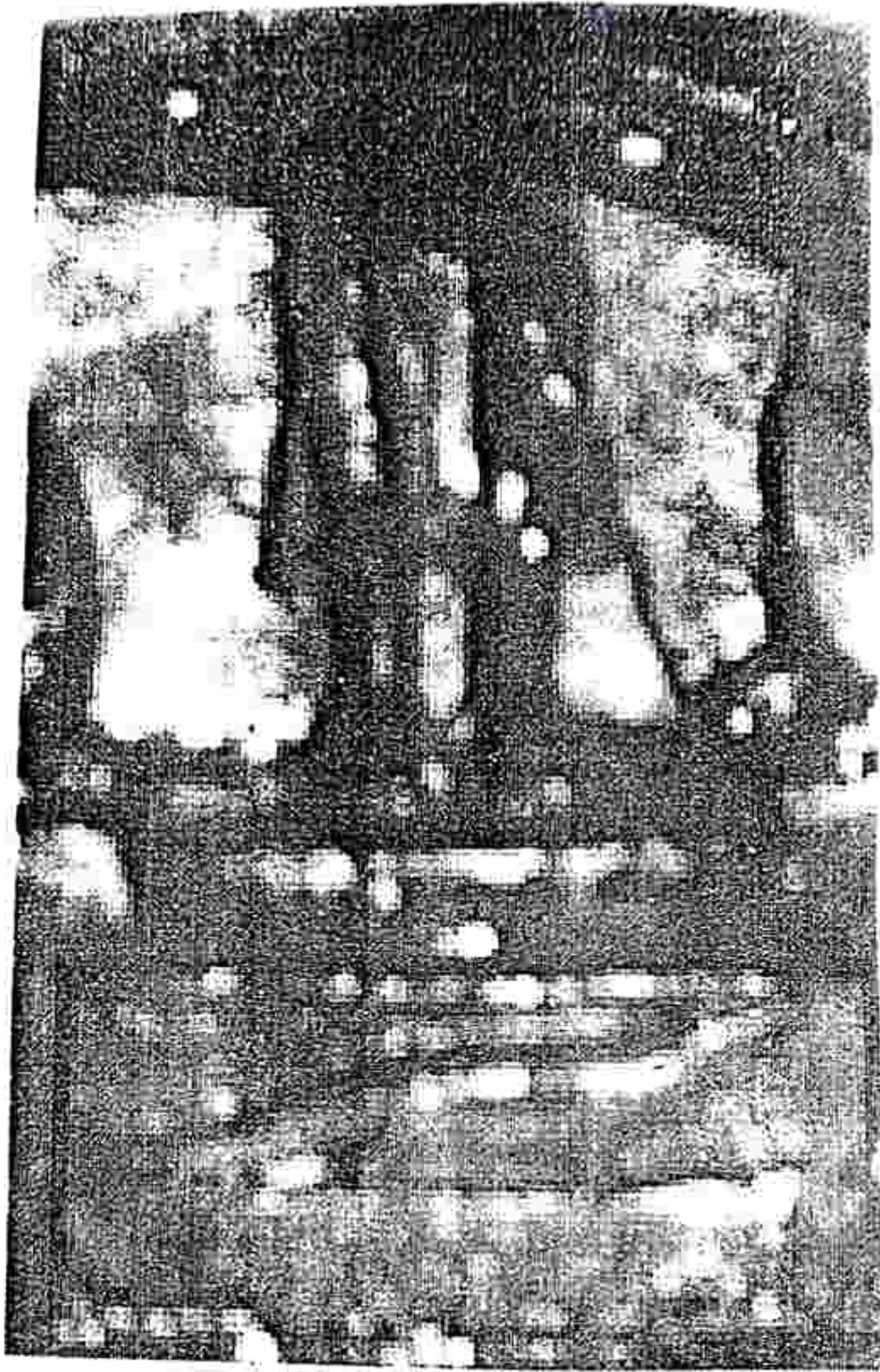
100. गंगा मूर्त्ति अंश (बरसाम)

101. महिषासुरमर्दिनी (बरसाम)

रहुआ–संग्राम

मधेपुर मधुबनी जिला के झंझारपुर अनुमंडल से करीब 20 कि० मी० पूर्व–दक्षिण की ओर एक अच्छा खासा बाजार है । रहुआ–संग्राम की दूरी मधेपुर से करीब 8 कि० मी० दक्षिण पूर्व की ओर है । यह एक बहुत बड़ा और प्रसिद्ध गाँव है । यहाँ कई जातियों के लोग निवास करते हैं । इस गाँव में उत्तर–पूर्व की ओर एक तालाब के पश्चिमी भिण्डे पर एक छोटा मंदिर है । इस मंदिर में कसौटी पत्थर की एक मूर्त्ति मुझे देखने को मिली जो बारहवीं शताब्दी के आस–पास की अपने शिल्प के आधार पर लगती हैं । इस मूर्त्ति के एक हाथ में है पाश और दूसरे में पुष्प । एक पाँव भूमि स्पर्श की मुद्रा में है । उत्कृष्ट शिल्प की धनी यह मूर्त्ति इन्द्र की है । क्योंकि इसके पादपीठ पर दो गज का प्रतीक चिह्न अंकित है । आभामंडल के अतिरिक्त वह सब कुछ इस मूर्त्ति की पीठिका में अंकित हैं जो देव मूर्त्ति के लिये आवश्यक माना जाता है ।

रहुआ–संग्राम के दक्षिण–पश्चिम की ओर, कुछ दूर पर कमला–बलान नदी बहती है । कई दशक पूर्व इसी नदी के किनारे बालुका–राशि में एक बरसात के बाद इसी गाँव के एक व्यक्ति को यह मूर्त्ति मिली थी । तब से यह मूर्त्ति इसी मंदिर में पूजित है ।

102. अपरिचित मूर्त्ति (रहुआ–संग्राम)

भीठभगवानपुर

भीठभगवानपुर मधुबनी जिला का एक विशाल जनपद है । यह झंझारपुर अनुमंडल के अन्तर्गत, इसके मुख्यालय से करीब 28 कि० मी० पूर्व की ओर प्रसिद्ध बाजार मधेपुर से 8 कि० मी० दक्षिण है । मधेपुर से यहाँ तक का रास्ता कुछ बीहड़ है जिससे यह जनपद अलग–थलग पड़ जाता है । मधुबनी जिला में बलिराजगढ़ कुछ दशक से अपने पुरातात्त्विक अवशेष के कारण चर्चित रहा है और पुरातात्त्विक पृष्ठभूमि में इसे मिथिला का ताज कहा जाता है । लेकिन मेरा मानना है कि इस पृष्ठभूमि में यदि बलिराजगढ़ ताज है तो भीठभगवानपुर हीरा । भारतीय पुरातत्त्व विभाग विगत कुछ दशकों में बिहार के कुछ स्थानों को स्पर्श कर जहाँ इसे सुर्खी में ला दिया है, वहीं मिथिला में यह विभाग बलिराजगढ़ को स्पर्श कर इसे कोयला या सचमुच का खण्डहर बनाकर रख छोड़ा है । यह मिथिला का सौभाग्य ही है कि अभी तक इस विभाग की नजर भीठभगवानपुर की ओर नहीं गई है और यह स्थान अपने अतीत को अपनी गोद में संजोये हुए है ।

भीठभगवानपुर का पुरातात्त्विक अवशेष मिथिला में अद्वितीय है । यहाँ उपलब्ध पुरातात्त्विक अवशेष की जानकारी प्राप्त करने से पूर्व इस स्थान की भौगोलिक स्थिति देख लेने से अवशेष को अच्छी तरह समझा जा सकता है ।

मिथिला में भीठ ऐसे स्थान को कहा जाता है जो कृषि योग्य भूमि में अपेक्षाकृत ऊँची हो । भीठ और भगवानपुर दोनों दो कस्बा है जो अब मिलकर एकाकार हो चुका है । पहले आबादी भगवानपुर में फैली हुई थी और भीठ नवीन रूप से आबाद हुआ है । पुरातात्त्विक अवशेष भीठ में एक तालाब से प्राप्त हुआ है । यह तालाब प्रदर्शित अवशेष के निकट पूरब में अब मरणासन्न है । जहाँ अवशेष इस समय प्रदर्शित और पूजित हैं, यह स्थान एक शिवालय है जो भीठभगवानपुर का सबसे ऊँचा स्थान कहा जा सकता है । इस शिवालय के प्रांगण में खड़ा होकर यदि चारों ओर नजर दौड़ायी जाय तो

आसानी से अनुमान किया जा सकता है कि अतीत में यहाँ का देवालय करीब दो सौ एकड़ के भूभाग में अपना पाँव फैला रखा होगा, जिसमें पाँच तालाब, देव–स्थान और फुलवाड़ी फैली हुई थी । इस समय इन पाँच तालाबों की स्थिति यह है कि जगह–जगह मात्र कुछ ऊँचा स्थान नजर आता है जो इन तालाबों का भिण्ड है । इस समय तालाबों में अरहर और मकई की खेती होती है । यह सब कृपा कोशी और कमला नदी की है ।

शिवालय के पूरब के तालाब में पुरातात्त्विक अवशेष का पाया जाना भी एक संयोग ही कहा जा सकता है । इस तालाब के नवीकरण के समय ये पुरातात्त्विक अवशेष मिले थे । तालाब से प्राप्त अवशेषों में दो विष्णु, एक सूर्य, एक गणेश, उमा–महेश्वर की एक, एक देवी की मूर्त्ति और चार विशाल चौकोर मूर्त्तित शिला-स्तम्भ हैं । इसमें से एक विष्णु और एक देवी मूर्त्ति बुरी तरह क्षतिग्रस्त है । गणेश का पादपीठ नहीं है और प्रत्येक स्तम्भ भी आंशिक रूप से झड़ा हुआ या खण्डित है । एक विष्णु–मूर्त्ति जिसमें अभिलेख भी है और उमामहेश्वर की मूर्त्ति अखण्ड है । दो स्तम्भों की लम्बाई हैं करीब 10 फीट और चौड़ाई तथा मोटाई क्रमशः 12 X 10 ईंच । दो स्तम्भों की चौड़ाई तो 15 ईंच है लेकिन लम्बाई और मोटाई पहले दो स्तम्भों की तरह ही ।

ये स्तम्भ अतीत में किस तरह प्रदर्शित रहे होंगे, इस पर विचार करने से पता चलता है कि तीन स्तम्भ तो मुख्य द्वार के हैं जिनमें कई प्रकार की देवी-देवताओं की मूर्त्ति के अतिरिक्त अलंकरण और मानव जीवन की तीन अवस्था, बाल, युवा और वृद्धावस्था के क्रिया–कलाप उत्कीर्ण है । एक चौथा स्तम्भ जिसमें दो ओर चौड़ाई और मोटाई में भी मूर्त्तियाँ उत्कीर्ण हैं, यह किस तरह प्रदर्शित रही होंगी, यह प्रश्न मैं सुलझा नहीं पाया हूँ । एक स्तम्भ में प्रमुख नौ देवियाँ उत्कीर्ण हैं और एक स्तम्भ में अन्य मूर्त्तियों एवं अलंकरणों के अतिरिक्त गज–लक्ष्मी आकर्षण का केन्द्र है ।

ये मूर्त्तियाँ और स्तम्भ तालाब तक कैसे पहुँचे और क्षतिग्रस्त कैसे हुए, इसकी स्थिति देखते हुए दो प्रकार की धारणायें बनती हैं । प्रथम तो यह कि एकाएक कोई आक्रमण हुआ था जिसमें मूर्त्ति की तोड़फोड़ हुई और मंदिर गिरा दिये गये । क्योंकि वे मूर्त्तियाँ जो अपेक्षाकृत छोटी हैं यथा विष्णु और

उमामहेश्वर की मूर्त्ति, हटा देने के कारण ही अखण्ड बच गई हैं । यह भी हो सकता है कि तोड़फोड़ भी हुई और बाद में आये भूकम्प से मंदिर तालाब में धाराशायी हो गया ।

यहाँ उपलब्ध प्रत्येक पुरातात्त्विक अवशेष कसौटी पत्थर के और तीन काल के हैं– गुप्तकाल, पालकाल और कर्णाट काल । भगवान विष्णु की एक मूर्त्ति जिसमें अभिलेख भी है, मिथिला शैली की यह मूर्त्ति और सूर्य तथा उमामहेश्वरकी मूर्त्ति निर्विवाद रूप से कर्णाट काल की हैं । विष्णुमूर्त्ति अभिलेख है– **ओं बल्ली मल्लदेव स्वामी दानमस्य** । तिरहुता लिपि में अंकित यह लेख कई ऐतिहासिक अटकल-वाजी के मंच से पर्दा उठाने में सक्षम है । इस लेख में दो नाम हैं बल्ली और मल्लदेव । इनमें से एक शब्द **बल्ली** स्थान के लिये और **मल्लदेव** व्यक्ति के लिये प्रयुक्त हुआ है । सम्भवतः बलिराजगढ़ का पूर्व नाम बल्लीगढ़ था जिसे अब बलिराजगढ़ कहा जाता है और मल्लदेव कर्णाट शासन के संस्थापक नान्यदेव के पुत्र का नाम था । मैथिली में बल्ली शब्द का अर्थ, बलवान भी होता है । मल्लदेव बलवान तो थे ही जैसा कि विद्यापति ने अपने पुरूषपरीक्षा नामक ग्रन्थ के युद्धवीर कथा में कहा है । हो सकता है बलिराजगढ़ का पूर्व नाम कुछ और हो और मल्लदेव के शासन सम्हालने के बाद इसे बल्लीगढ़ कहा जाने लगा हो । जिससे आगे चलकर यह बलिराजगढ़ के नाम से प्रसिद्ध हुआ । मल्लदेव किस प्रकार के वीरपुरूष थे इसका अंकन विद्यपति ने इसी कथा में इस तरह किया है– एक बार मल्लदेव ने कहा था– **''यह मेरे पुरूषार्थ के अनुकूल नहीं कि पिता–अर्जित–राज्य का सुखभोग करूँ ।''** इस तरह कर्णाट शासन काल की राजधानी का पता चलता है ।

मूर्त्तियाँ मात्र मूर्त्ति ही नहीं हुआ करती हैं । यह संस्मरण और सौंदर्य दर्शन के अतिरिक्त विविध विषय यथा– धर्म, कला, संस्कृति, साहित्य, ज्ञान–विज्ञान, लोकाचार आदि–आदि का अपने काल के लिये प्रतिनिधित्व भी करती हैं । इस आधार पर भीठभगवानपुर का उपलब्ध पुरावशेष ऐसे तीन काल का प्रतिनिधित्व करता है जो मिथिला का स्वर्णिम युग कहा जा सकता है ।

प्राचीन काल में नदी ही किसी सभ्यता के विकास की धमनी हुआ करती थी । इसी नदी ने यहाँ भी विकास के फूल खिलाए होंगे । लेकिन इसी नदी के कारण भीठभगवानपुर का अस्तित्व मिटने के कगार पर है और यह विकास की दुनिया से अलग–थलग पड़ गया है । पहले तो कोशी नदी और अब कमला–बलान इसकी खाइयों और टीलों की विषमता को पाटती रही है । यहाँ की उपलब्धि अनायास है, किसी योजना का फल नहीं । अनायास उपलब्ध अवशेष यदि तीन काल के हैं तो इसके नीचे गहराई में और कालों के भी अवशेष हो सकते हैं । यदि ऐसा नहीं हो तब भी यहाँ की पुरातात्त्विक खुदाई से इसी तीन काल की कई गुत्थियाँ सुलझाई जा सकती हैं ।

भीठभगवानपुर से दक्षिण करीब 20 कि0 मी0 दूर कोर्थ नामक जनपद में मुझे जो पुरातात्त्विक अवशेष मिलें हैं, वे आश्चर्य जनक ढंग से मिलते जुलते हैं । जिस तरह भीठभगवानपुर के शिला–स्तम्भ में गजलक्ष्मी उत्कीर्ण है, उसी तरह यहाँ भी चौकोर स्तम्भ पर ही गजलक्ष्मी एक ही काल के शिल्प में उत्कीर्ण है । इन दोनों स्थानों के मध्य भी पुरातात्त्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान अहिरैन, पाली, तुमौल, छर्रापट्टी और बुढ़ेब हैं जहाँ की उपलब्धि की चर्चा दर्शनीय मिथिला के तृतीय पुष्प में की गई हैं ।

103. विष्णुमूर्त्ति (भीठभगवानपुर)

104. विष्णुमूर्ति अभिलेख (भीठभगवानपुर)

105. गणेश (भीठभगवानपुर)

106. उमामहेश्वर (भीठभगवानपुर)

107. सूर्यमूर्त्ति (भीठभगवानपुर)

108. विष्णुमूर्त्ति अंश (भीठभगवानपुर)

109. देवीमूर्त्ति अंश (भीठभगवानपुर)
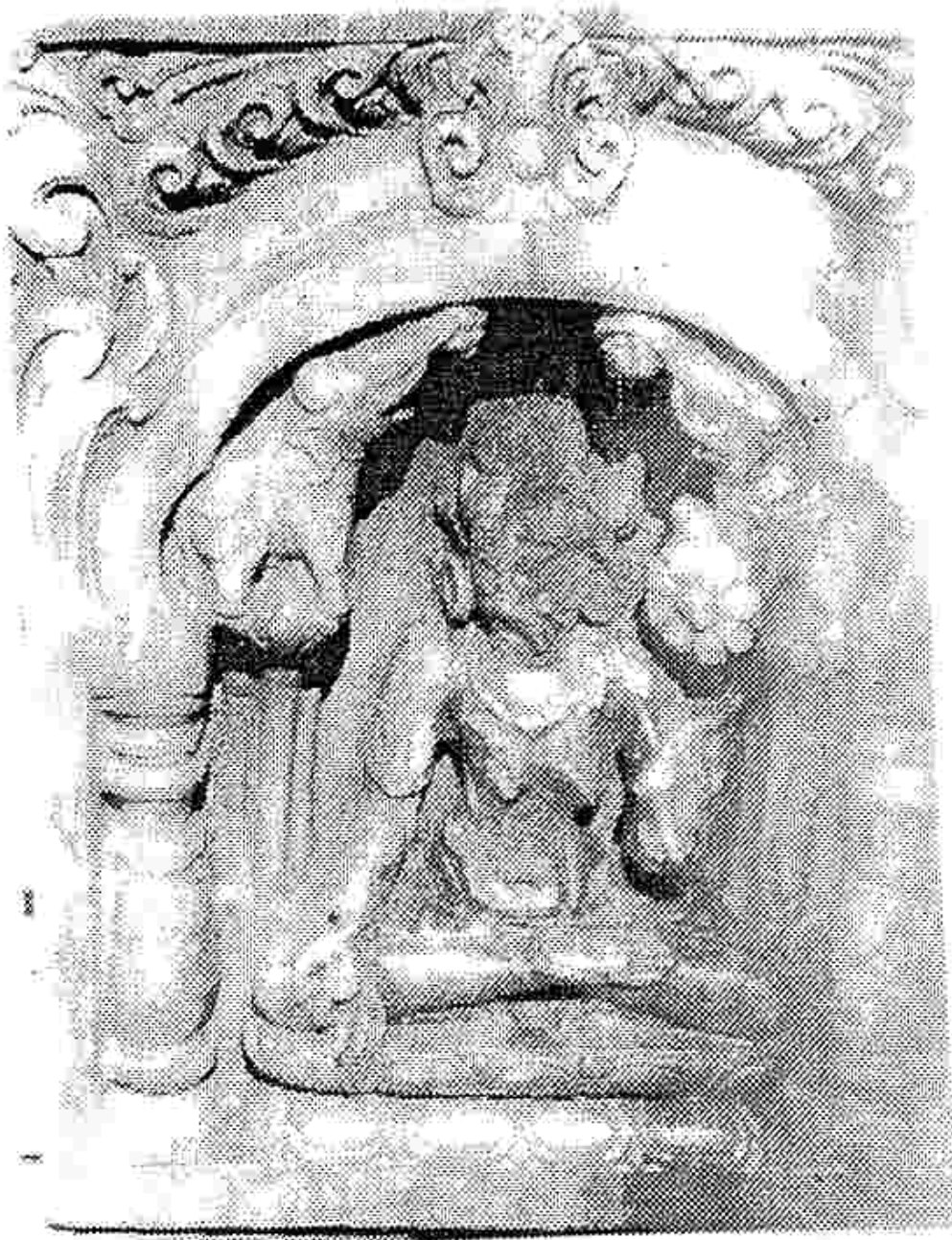
110. गजलक्ष्मी (भीठभगवानपुर)
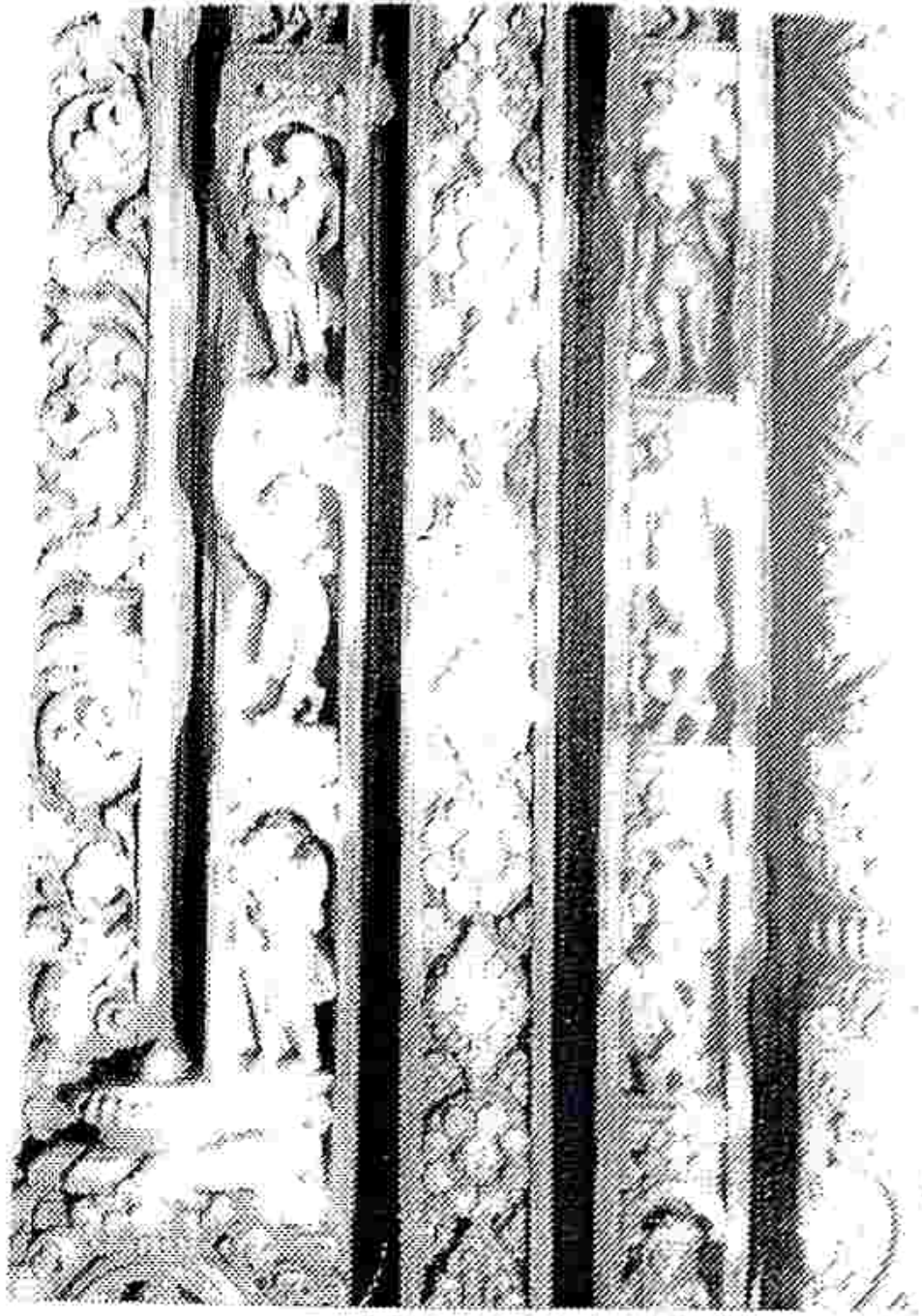
111. मूर्त्तित शिला (भीठभगवानपुर)

112. पुजारी (भीठभगवानपुर)
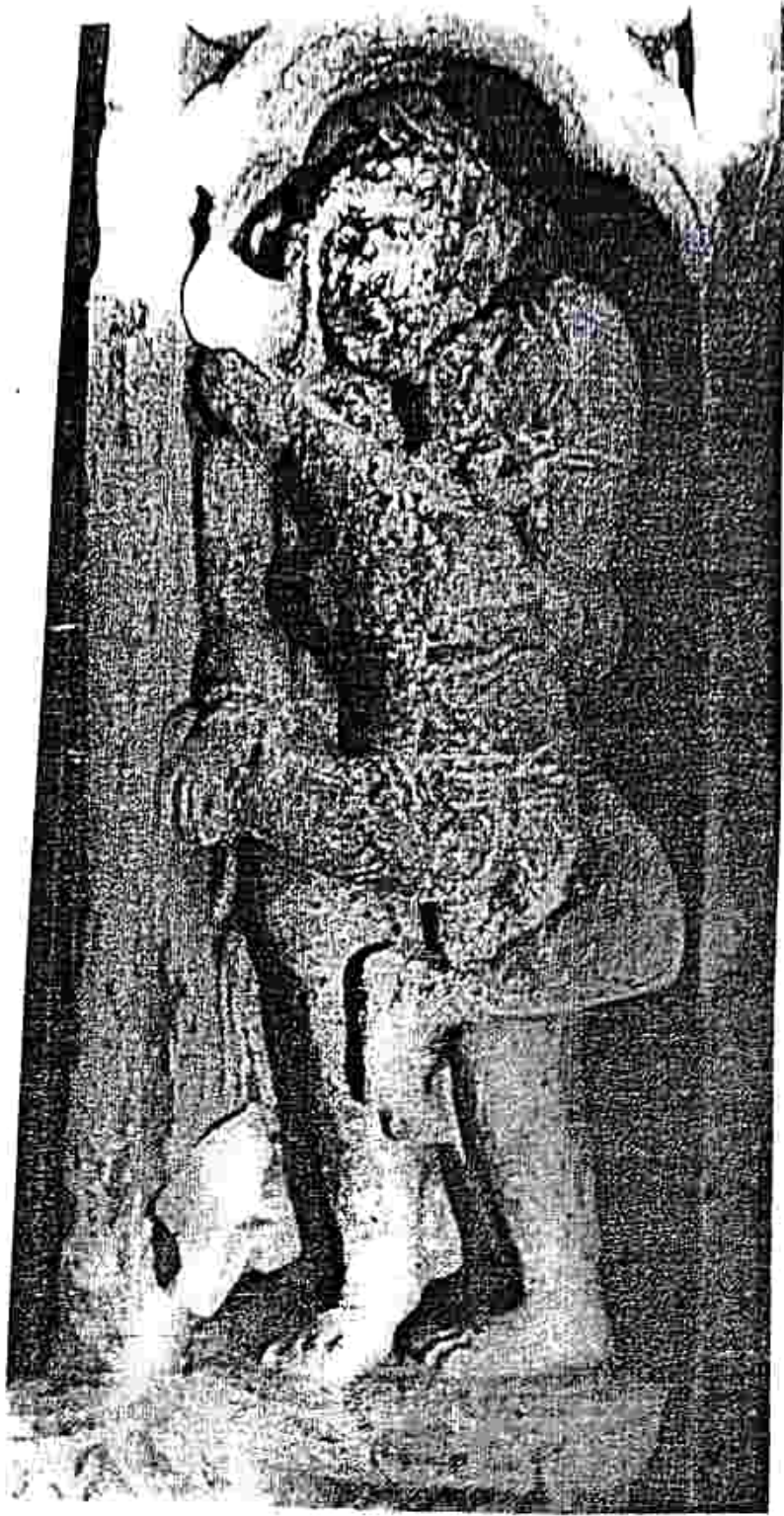
113. सहवास (भीठभगवानपुर)

114. माँ (भीठभगवांनपुर)
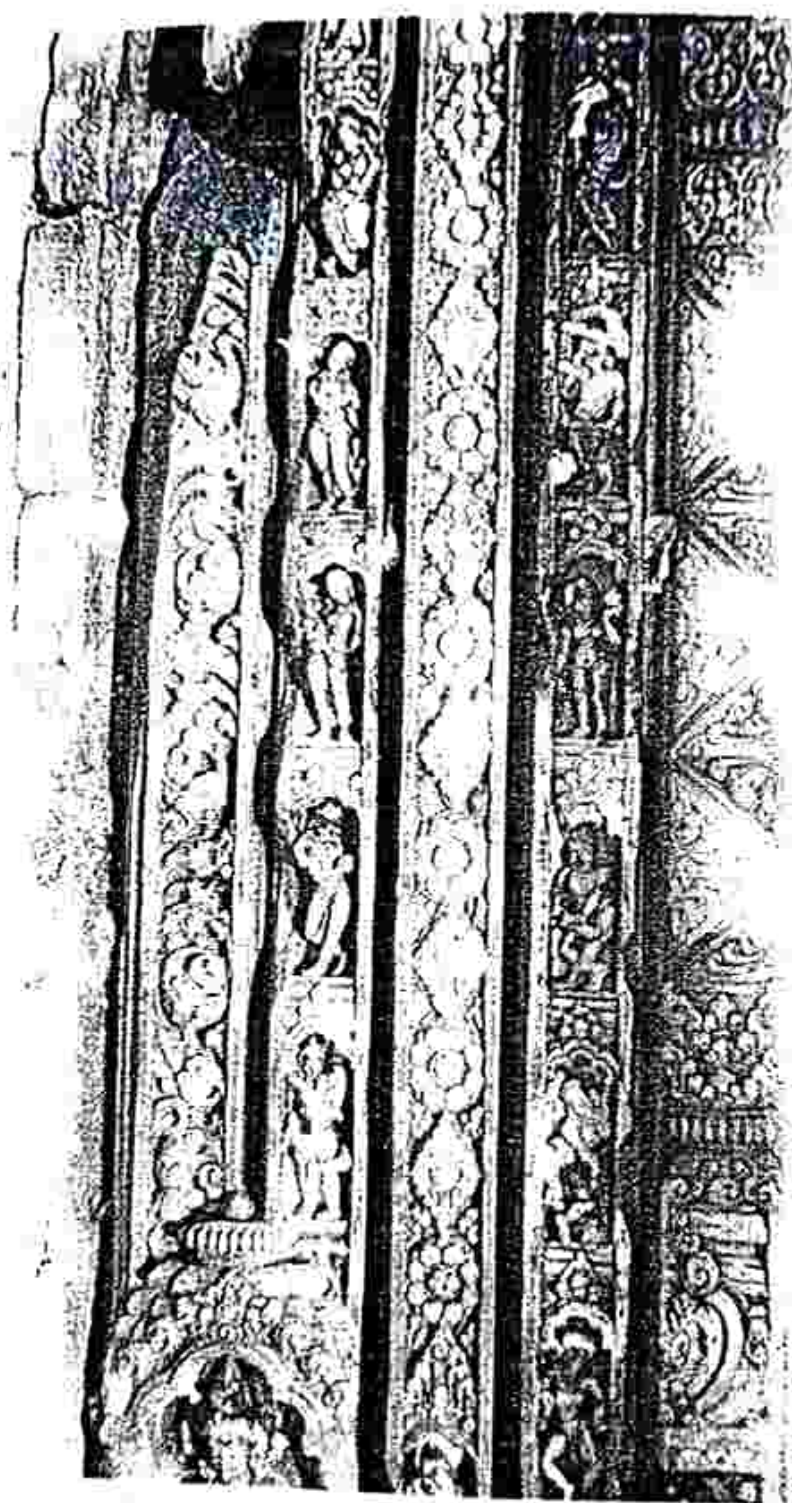
115. स्तम्भ–शिल्प (भीठभगवानपुर)
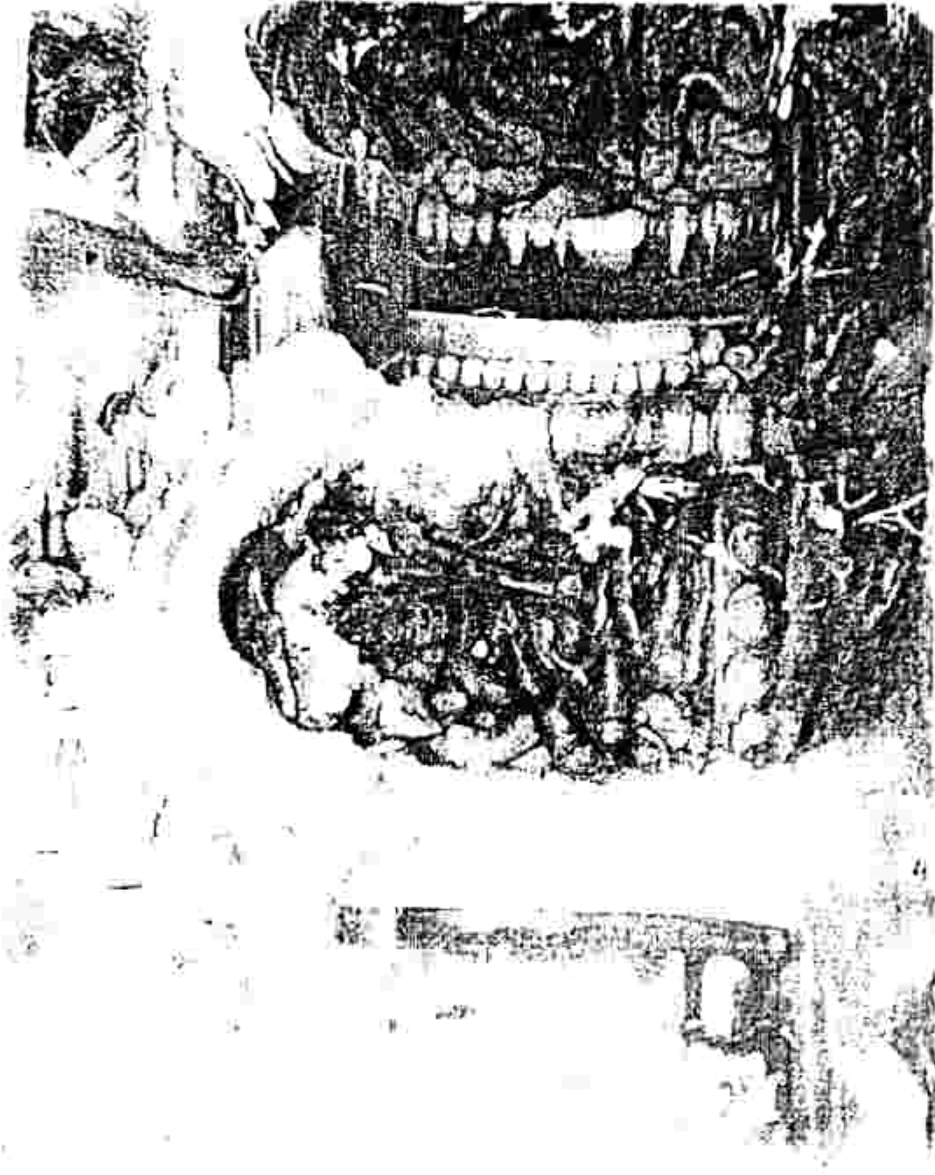
116. स्तम्भ-शिल्प योजना (भीठभगवानपुर)

117 ब्राह्मी (भीठभगवानपुर)

118 माहेश्वरी (भीठभगवानपुर)

119 कौमारी (भीठभगवानपुर)

120 वैष्णवी (भीठभगवानपुर)

121 वाराही (भीठभगवानपुर)

122 नारसिंही (भीठभगवानपुर)

123 ऐन्द्री (भीठभगवानपुर)

124 शिवदूती (भीठभगवानपुर)

125 चामुण्डा (भीठभगवानपुर)

महादेवमठ

जिला मधुबनी और अनुमंडल फुलपरास में यहाँ से करीब 30 कि0 मी0 दूर (निर्मली होते हुए) पूर्व दिशा में महादेवमठ एक छोटा बाजार है । कोशी नदी के पश्चिमी तटबन्ध पर बसा यह बाजार सहरसा की सीमान्त रेखा तथा नेपाल के सन्निकट पड़ता है । यहाँ एक पुलिश स्टेशन भी अन्धरामठ के नाम से पंजीबद्ध और कार्यरत है । इस थाना परिसर में ही कसौटी पत्थर की एक मूर्त्ति एक मंदिर में स्थापित है । उमामहेश्वर की यह मूर्त्ति वर्ष 1987 ई0 में धनछीहा नामक गाँव में मुन्नी सदा तालाब में पाई गई थी । मूर्त्ति प्राप्ति के बाद इसे राजकुमार सदा की बैठक में रख दी गई जहाँ से यह मूर्त्ति चोरी हो गई । अन्धरामठ थाना की तत्परता के कारण यह पुनः नेपाल में एक तस्कर गिरोह से प्राप्त कर ली गई । इसके बाद इसे थाना परिसर में ही स्थान मिल गया ।

उमामहेश्वर की कई मूर्त्तियाँ मुझें मिथिला में मिली हैं । वैशाली जिला के महनार के निकट एक गाँव में, समस्तीपुर जिला के सिमरिया-भिण्डी, दरभंगा जिला के वनवारी गाँव और मधुबनी जिला के भोजपरौल, सौराठ, डोकहर, मंगरौनी, तिरहुता और भीठभगवानपुर में उमामहेश्वर की मूर्त्ति उपलब्ध हैं । उपर्युक्त सभी मूर्त्तियाँ कसौटी पत्थर की और एक ही प्रकार के संयोजन के अन्तर्गत उत्कीर्ण हैं । विषय और संयोजन की दृष्टि से एक होते हुए भी कोई दो मूर्त्तियाँ आकार प्रकार और काल की दृष्टि से एक जैसी नही हैं । डोकहर और सिमरिया-भिण्डी की मूर्त्तियाँ अति प्राचीन हैं । अन्य मूर्त्तियाँ इसके बाद की हैं । शैली की दृष्टि से भी इनमें भिन्नता है । मिथिला शैली की वे मूर्त्तियाँ जो बारहवीं शदाब्दी से चौदहवीं शताब्दी के मध्य उत्कीर्ण हुई थीं, सर्वाधिक हैं । भीठभगवानपुर, सौराठ, मंगरौनी, तिरहुता और महादेवमठ की मूर्त्तियाँ इसी काल की हैं । एक काल और शैली की होते हुए भी महादेवमठ की उमामहेश्वर मूर्त्ति सर्वोत्त्कृष्ट है ।

मैं आभारी हूँ यहाँ के थानेदार श्री बी0 पी0 यादव के प्रति जिन्होने मुझे इसके अध्ययन में हर प्रकार का सहयोग दिया ।
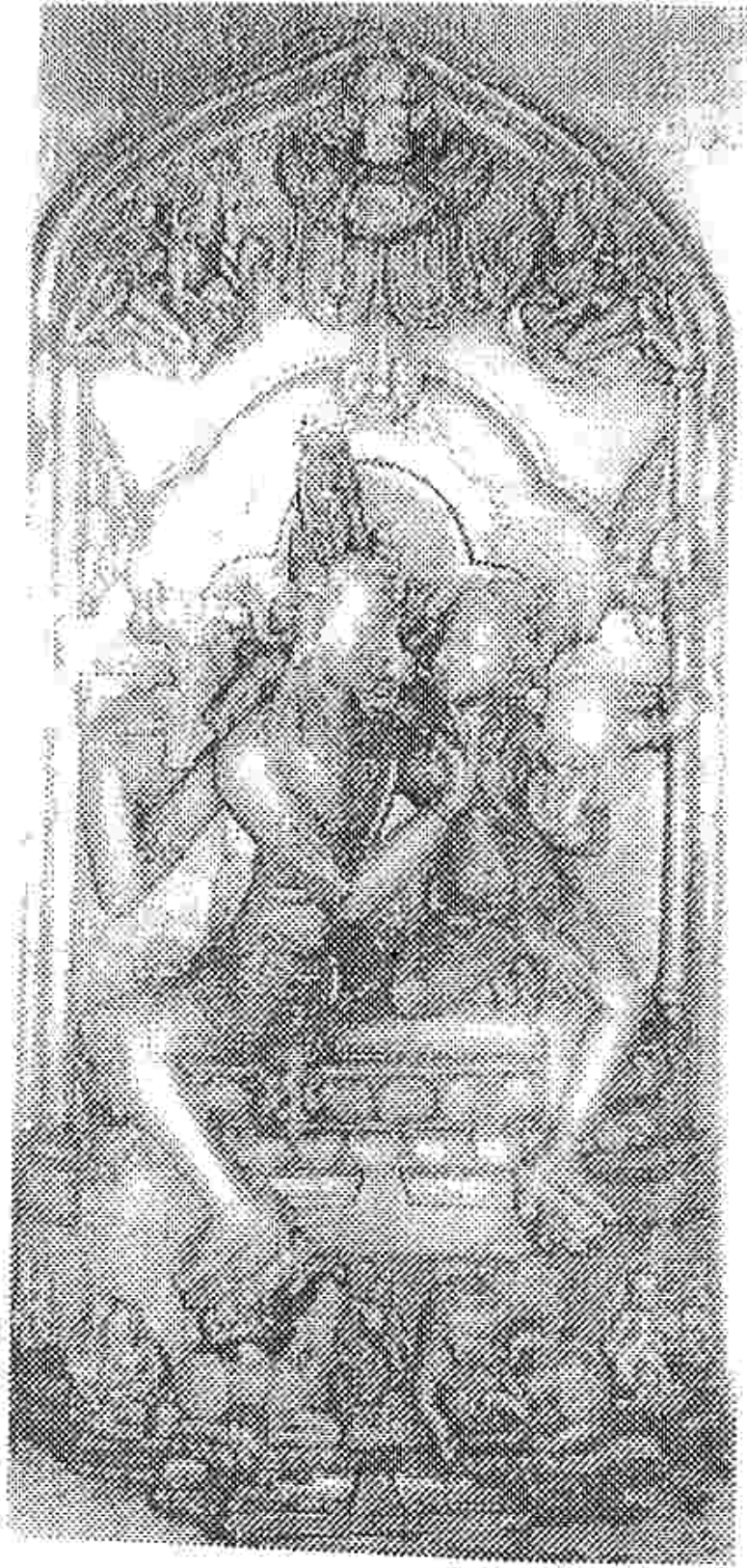
126. उमामहेश्वर (महादेवमठ)

भजनाहा (पथराही)

जब मुझे कहीं से सूचना मिलती है कि अमुक जगह पानी या मिट्टी में प्राचीन मूर्त्ति मिली है, वह स्थान निकट हो या दूर, मूर्त्ति छोटी हो या बड़ी विषय–वस्तु कुछ भी क्यों न हो, मैं वहाँ तक पहुँचने का लोभ संवरण नहीं कर पाता हूँ । ऐसा क्यों, इससे मुझे लाभ क्या है ? क्योंकि ऐसा करने में मुझे श्रम, शक्ति और व्यय बहुत लगता है । मुझे इस प्रश्न का उत्तर अभी तक इसके सिवा कि आत्म–तुष्टि होती है, और कुछ भी नहीं मिला है ।

भजनाहा (पथराही) मधुबनी जिला के खुटौना बाजार से पूर्व उत्तर की ओर करीब 25 कि0 मी0 दूर नेपाल की सीमा पर ही अवस्थित है । यहाँ तक पहुँचने का रास्ता भी अत्यन्त बीहड़ है । मुझे पता था कि मूर्त्ति पथराही में मिली है जो भजनाहा में देखने को मिली । लाल पत्थर की इस मूर्त्ति का आकार है 10.5 X 25 से0 मी0 और यह देवी की पहाड़ी शैली की मूर्त्ति है । मूर्त्ति खड़ी है, कद नाटा, चार हाथा जिनमें खड्ग, त्रिशूल, कमण्डल तीन हाथों में है और चौथा हाथ वरद–मुद्रा में है । यह मूर्त्ति साड़ी में और पहाड़ी लोकशैली की है ।

भजनाहा में एक घर है रंजीत मंडल का । इनकी पत्नी इस मूर्त्ति की पूजा करती मिली । मुझे पता था कि मूर्त्ति किसी खेत में मिली है । लेकिन उस महिला का कहना था कि मूर्त्ति उसके घर में ही एकाएक प्रकट हुई । मुझे लगता है कि यह मूर्त्ति नेपाल से चोरी–छिपे लाकर किसी योजना के अन्तर्गत आध्यात्मिक महत्त्व बढ़ाने के लिये वह महिला मुझसे असलियत छिपा रही है और लोगों को भ्रम में रखकर कुछ आर्थिक लाभ प्राप्त करना चाहती है ।

127. देवीमूर्त्ति (भजनाहा)

बलिराजगढ़

एक शताब्दी से भी अधिक समय से चर्चित यह स्थान मधुबनी जिला मुख्यालय से पूर्व की ओर करीब 45 कि0 मी0 दूर है । इसका प्रखण्ड है बाबूबरही और यह पचरुखी पंचायत में पड़ता है । घटना 1885 ई0 की है – उस समय मधुबनी एक सबडिवीजन था दरभंगा जिला का और यहाँ के एस0 डी0 ओ0 थे एक अंग्रे ज ग्रियर्सन (जॉर्ज ग्रियर्सन) । मिथिला की कला–संस्कृति के अनन्य भक्त जॉर्ज ग्रियर्सन आधुनिक जनकपुर को जनक–राजवंश की राजधानी मानने को तैयार नहीं थे । इन्हों ने मिथिला में इसे खोजना प्रारम्भ किया । इसी खोज में उन्होंने बलिराजगढ़ को प्रकाश में लाया ।

अंग्रेजी हुकुमत के समय ही बिहार में नालंदा और गया के साथ ही यह स्थान भी तत्कालीन सरकार ने अधिग्रहण कर लिया । भारतीय पुरातत्त्व विभाग की देख–रेख में दो बार 1962–63 और 1972 से 1976 तक यहाँ खुदाई की गई और जो कुछ मिला उसे जाँच के नाम पर मुख्यालय दिल्ली भेज दिया गया । मिथिला की विरासत के नाम पर अब यहाँ बचा है उल्टा–सीधा पढ़ने के लिये कुछ 'पट' और लुटी–पिटी, उजार खण्डहर जो आस–पास के मवेशियों का चारागाह है । 1960 के दशक में इसकी चाहरदिवारी जगह–जगह 18 फीट ऊँची थी, जिसकी अधिकतम उँचाई अब 5 फीट रह गई ।

बलिराजगढ़ करीब 350 एकड में फैला हुआ है । यह सम्पूर्ण रकबा ऊँची चाहरदिवारी से घिरा था । इस चाहरदिवारी में अभी भी झाँकती तीन आकार–प्रकार की ईंटें हैं । सबसे नीचे की झाँकती ईंटें, गुप्तकाल (चौथी शताब्दी) की लगती हैं । इस गढ़ से एक सुरंग उत्तर–पश्चिम की ओर आगे बढ़ा है । गढ़ के चारों ओर सुरक्षा–कवच के लिये जलाशय रहा होगा

जिसका अवशेष अभी भी स्पष्ट है । पश्चिम रुख के इस गढ़ की लम्बाई पूर्व–पश्चिम की ओर चौड़ाई से करीब ढाई गुणा अधिक है । यदि मौसम साफ हो तो हिमालय पहाड़ की श्रृंखला यहाँ से स्पष्ट देखी जा सकती है । मात्र तीन सौ पच्चास एकड़ का भूभाग ही इस गढ़ का मुख्य अंग नहीं है । इस गढ़ की दक्षिणी सीमा से लगी है अन्धराठाढ़ी पंचायत जहाँ का खण्डहर भी सैकड़ों एकड़ में फैला हुआ है । यहाँ कई प्राचीण अवशेष मिलें हैं और मिल रहे हैं । अन्धराठाढ़ी में मिले अवशेष अनायास उपलब्धि हैं । मैं इसे मिथिला का सौभाग्य ही समझता हूँ कि बलिराजगढ़ के साथ पुरातत्त्व विभाग के हाथों यह स्थान लुटनें से बच गया । अन्धराठाढ़ी की उपलब्धि की तो स्वतन्त्र रूप से आगे चर्चा की गई है, लेकिन बलिराजगढ़ से सम्बन्धित दो ऐसे प्रमाण मुझे अन्यत्र मिले हैं, जिसकी चर्चा आवश्यक है ।

झंझारपुर अनुमंडल में एक जनपद है भीठभगवानपुर । यहाँ कई प्राचीन पाषाण प्रतिमायें एक अनायास की खुदाई में मिली हैं । इन्हीं प्रतिमाओं में मिथिला शैली और कर्णाट काल की एक मूर्त्ति है विष्णु की । तिरहुता लिपि में विष्णु–मूर्त्ति के पादपीठ पर एक लेख है– **'ओंम बल्ली मल्लदेव स्वामी दानमस्य ।'** मैं समझता हूँ इस लेख में **'बल्ली'** शब्द बलिराजगढ़ के लिये और **'मल्लदेव'** शब्द कर्णाटवंश के संस्थापक नान्यदेव के पुत्र के लिये, व्यवहार हुआ है । इस तरह बलिराजगढ़ कर्णाटवंश की भी राजधानी रहा था ।

एक पाषाण मानचित्र भी मुझे ग्राम देकुली, जिला दरभंगा में मिला है जो बलिराजगढ़ से मिलता–जुलता है । इस मानचित्र में राज्यासन के निकट तीन खजाना अंकित है जिसकी रखवाली एक सर्प कर रहा है । इस मानचित्र का शिल्प है कर्णाट–कालीन और गढ़ के अतिरिक्त इसके दृश्य में हिमालय पहाड़ की श्रृंखला ठीक वैसी ही दिखाई पड़ती है जैसी मौसम साफ रहने पर बलिराजगढ़ से ।

128. बलिराजगढ़ एक चारागाह
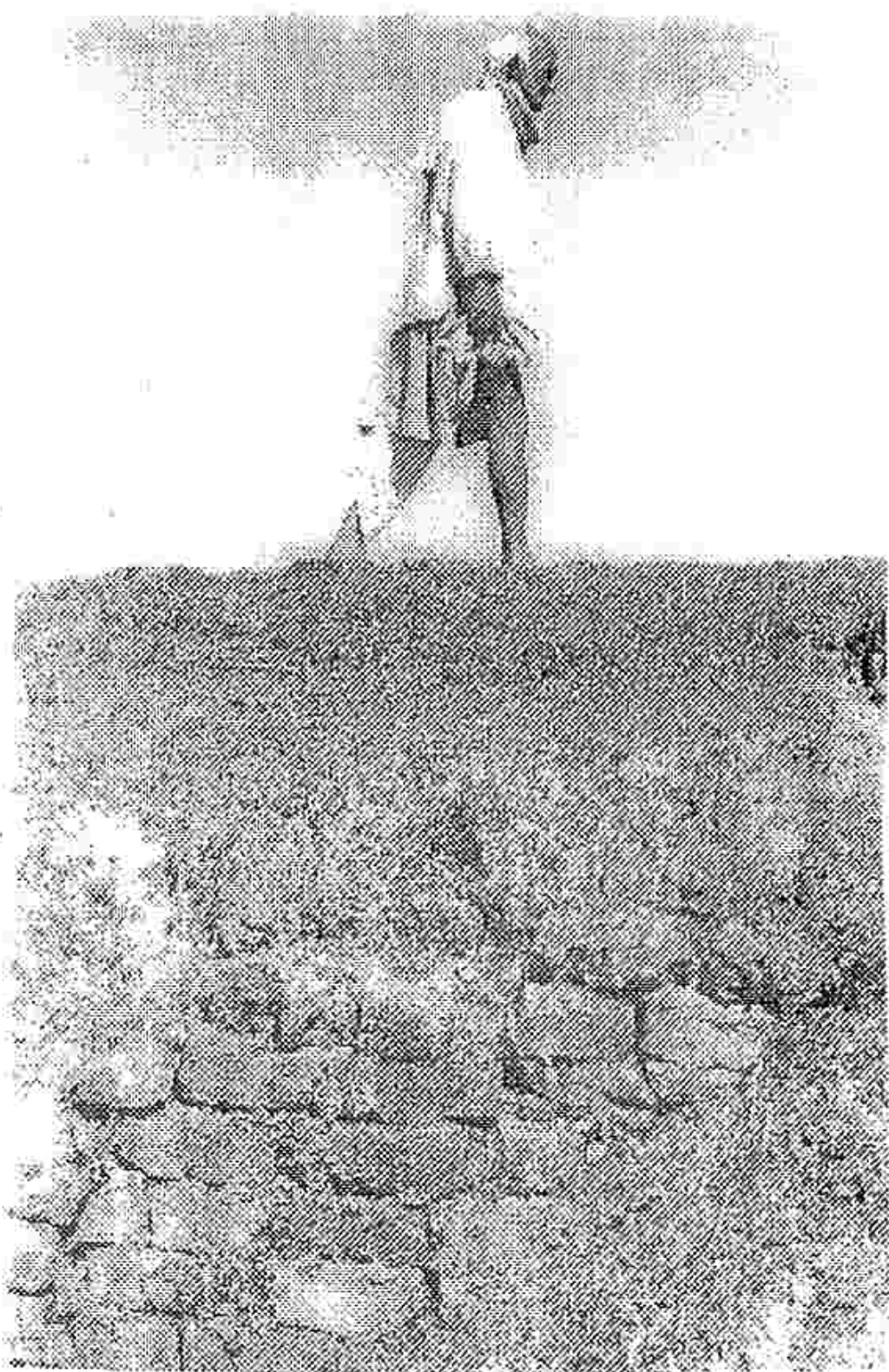
129. बलिराजगढ़, परकोटे की झांकती ईंटें

130. विष्णुमूर्ति अभिलेख (भीठभगवानपुर)

131. शिला मानचित्र (देकुली)

अन्धराठाढ़ी

अन्धराठाढ़ी मधुबनी जिला का एक प्रखण्ड–मुख्यालय है । मधुबनी जिला–मुख्यालय से पूर्व की ओर इसकी दूरी करीब 40 कि0 मी0 है । यहाँ तक पहुँचने के तीन मार्ग हैं– दो सड़क मार्ग और एक रेल मार्ग । रेल मार्ग सकरी रेलवे स्टेशन से लोहना और झंझारपुर होते हुए यहाँ तक पहुँचता है और यहाँ का रेलवे स्टेशन है वाचस्पति नगर । एक सडक मार्ग सकरी से झंझारपुर होते हुए यहाँ तक और दूसरा मधुबनी, राजनगर होते हुए पिपराघाट (कमला–बलान नदी पूल) पार कर बाबूबरही से आगे भूपति चौक से दक्षिण मुड़कर अन्धराठाढ़ी तक । अन्धराठाढ़ी मिथिला का एक प्रसिद्ध स्थान है जिसे अधिकांश लोग जानते हैं ।

अन्धराठाढ़ी के सम्बन्ध में पंडित श्री सहदेव झा की कई कृतियाँ अमर हैं । यहाँ इनके द्वारा स्थापित एक संग्रहालय भी है जो वाचस्पति संग्रहालय के नाम से जाना जाता है । यहाँ के सम्बन्ध में इन्होंने **मिथिला की धरोहर** नामक पुस्तक में बहुत कुछ लिखा भी है । लेकिन मैं उतनी ही चर्चा करूँगा जितनी मैंनें आँखों देखी है और अनुभव किया है ।

अनायास प्राप्त पुरातात्त्विक उपलब्धि की दृष्टि से मात्र अन्धराठाढ़ी पंचायत या प्रखण्ड ही नही बल्कि इससे जुडे अन्य प्रखण्ड यथा बाबूबरही और झंझारपुर भी महत्त्वपूर्ण है । प्रशासनिक दृष्टि से अन्धराठाढ़ी, झंझारपुर या बाबूबरही प्रखण्ड आज अलग–अलग हैं । लेकिन जब हम सैकड़ो वर्ष प्राचीन इस भूखण्ड की परिकल्पना करते हैं तो यह सब मुझे एक ही थाली में परोसी रोटी नजर आता है । विशेषकर उस समय की प्रशासनिक दृष्टि से । कर्णाट राज–वंश का सम्बन्ध कई विद्वानों ने अन्धराठाढ़ी के साथ जोड़ा है, जो निर्मूल नहीं है और प्रत्येक उद्‌गार यहाँ के कमलादित्य–स्थान के एक शिलालेख के साथ जुड़ा हुआ है । कर्णाट–शासन–काल मिथिला का स्वर्ण युग रहा था जिसकी पुष्टि करती है मिथिला के केन्द्र मधूबनी जिला और दरभंगा जिला में प्राप्त कर्णाट–काल की वे सैकड़ों पाषाण प्रतिमायें जो इसी काल की और मिथिला की अमर कृति हैं । बिडम्बना यह है कि ऐसे महान–वंश का

ओर–छोर और राजधानी के सम्बन्ध में अभी तक मतैक्य नहीं हो सका है । इस काल के कई मूर्त्ति–अभिलेख उपलब्ध हैं । मूर्त्ति अलग–अलग होते हुए भी प्रत्येक अभिलेख का सम्बन्ध एक–दूसरे से जुड़ा है । इसकी समीक्षा इस वंश की कई गुत्थियाँ सुलझाने में सक्षम होते हुए भी इस ओर अभी तक किसी का ध्यान नहीं गया है । मात्र स्थान विशेष के मूर्त्ति–अभिलेख से खण्डित सूचना मिलती हैं, जिससे निष्कर्ष निकालना आसान नहीं होता । कर्णाट–राजवंश के सम्बन्ध में इतिहासकारों के मध्य जिस बिन्दु पर मतैक्य है, उसके सम्बन्ध में यदि थोड़ी जानकारी प्राप्त कर ली जाय तो अन्धराठाढ़ी की उपलब्धि समझने में आसानी होगी ।

सातवीं शदी के पूर्वाद्ध तक मिथिला हर्षवर्द्धन के साम्राज्य के अधीन रही थी । 642 ई0 में हर्ष की मृत्यु हुई । हर्ष–सम्राज्य के अन्तर्गत मिथिला का स्थानीय शासन अर्जुन (अरुणाश्व) के अधीन था जो एक ब्राह्मणधर्म–पोषक शासक था । हर्ष की मृत्यु के बाद एक धामिर्क विवाद के कारण, जिसका सूत्रपात हर्ष के समय ही हो चुका था; नेपाल, चीन, तिब्बत, और असम ने मिलकर एकाएक मिथिला पर चढ़ाई कर दी और यहाँ के नगरों का विध्वंस कर अरुणाश्व को सपरिवार पकड़ चीन ले गया । पालवंश के आगमन के पूर्व तक मिथिला पर परोक्षरूप से आक्रमणकारी हावी रहा था और इसे उसने भरपूर निचोड़ा । इस आक्रमण में साढ़े पाँच सौ से अधिक नगर खण्डहर बने और साढ़े बारह हजार विद्वान ब्राह्मण मारे गये थे । मिथिला में पालशासन की उम्र तो कर्णाट–शासन से कम नहीं रही, लेकिन यह बरसाती बादल था जिसका कहीं ओर–छोर नहीं । मिथिला में कहीं इसकी राजधानी नहीं थी । बाद में पाल के हाथों से मिथिला का राज्य सेन–वंश ने लिया जिसका विस्तृत विवरण **मिथिला तत्त्वविमर्श** में उपलब्ध है ।

सेनवंश में प्रमुख तीन शासक हुए– विजयसेन, बल्लालसेन और लक्ष्मण सेन । लक्ष्मणाब्द का प्रारम्भ इसी लक्ष्मणसेन के जन्मदिवस से हुआ है । मिथिला पर सेनवंश का शासन करीब 150 वर्षों तक रहा और कर्णाट–वंश के संस्थापक नान्यदेव ने इसी लक्ष्मणसेन को खदेड़कर मिथिला का राज्य प्राप्त किया था । अन्धराठाढ़ी के प्रसिद्ध विद्वान वाचस्पति मिश्र सेनशासन के

प्रारम्भ के प्रत्यक्षदर्शी थे जिसकी चर्चा उन्होंनें **न्यायकणिका** नामक टीका में की है–

'निज भुज वीर्यामास्थाय शूरान आदिशूरौ जयति ।'

मिथिला तत्त्वविमर्श का कहना है कि नान्यदेव पम्मार क्षत्रिय थे और इन्होंने 14000 पैदल तथा घुड़सवार सेना के सहयोग से मिथिला–विजय की थी । इनकी प्रथम राजधानी नानपुर (सीतामढ़ी जिला) में थी, बाद में इन्होंने सिमरौन (शाल्मलिवन, पूर्वी चम्पारण) में एक किला की वास्तुशिला शुभमुहूर्त्त में रखी । सिमरौन गढ़ का किला भग्नावशेष–रूप में आज भी है और इस बात का ठोस प्रमाण है वह शिला–लेख जो इस प्रकार है–

''नन्देन्दु बिन्दु विधुसम्मित शाकवर्षे
सच्छ्रावणे सितदले मुनिसिद्धितिथ्याम् ।
स्वा (तो) तौ शनैश्चर दिने करिवैरिलग्ने
श्रीं नान्यदेवनृपतिर्व्यदधीत वास्तुम् ।।''

नान्यदेव 1097 ई0 में मिथिला की गद्दी पर बैठे थे । इस समय तक मुसलमानों का अधिकार मिथिला पर नहीं हुआ था लेकिन छिटपुट आक्रमण मगध की ओर से प्रारम्भ हो चुका था। कर्णाट वंश का शासन मिथिला पर 1324 या 26 ई0 तक रहा, जब तक कि एकाएक आक्रमण कर मुसलमानों ने इसे हथिया नहीं लिया । इससे पूर्व ही अवध, मगध और बंगाल पर मुसलमानों का आधिपत्य हो चुका था । अन्तिम आक्रमण से पूर्व कितनी बार और कब–कब उसने मिथिला पर आक्रमण किया इसका कोई लेखा–जोखा मुसलिम इतिहास में नहीं है । इससे पूर्व उसने मिथिला पर आक्रमण नहीं किया, यह भी सम्भव नहीं है । क्योंकि यहाँ जिस तरह प्राचीन मूर्त्तियाँ बर्बरता के साथ तोड़ी–फोड़ी गई हैं, वह इससे पूर्व हुए उसके हमले और असफलता के प्रमाण हैं । अन्तिम हमला से पूर्व भी बारबार मिथिला पर मुसलमानों द्वारा हमला हुआ था लेकिन अपनी असफलता की गाथा कौन मूर्ख लिखने बैठा है और उस समय का इतिहासकार भी मुसलमान ही था, वह क्यों इसे लिखने लगा । हर काल में जयचन्द होता आया है । इसी तरह का कुछ जयचन्द हिन्दु भी

मुसलमानों के साथ था जिसके कारण हरसिंह देव को मिथिला छोड़, नेपाल में शरण लेन को वाध्य होना पड़ा । कर्णाटवंश की राजधानी अन्धराठाढ़ी रही थी, कुछ विद्वानों का मत है । नानपुर या सिमरौनगढ़ इस वंश का प्रारम्भिक शासन केन्द्र रहा हो यह तो सम्भव है, लेकिन करीब ढाई सौ वर्षो तक यहीं से मिथिला पर शासन हुआ, कर्णाटकाल की किवदन्तियाँ, पुरातात्त्विक अवशेष परिपाटी और प्रचलन इसके विपरीत साक्ष्य उपस्थित करते हैं । इस आधार पर यह केन्द्र अन्धराठाढ़ी के पास पहुँचकर ठहर जाता है । इस लेख से पूर्व ही बलिराजगढ़ की चर्चा की जा चुकी है जो इस (पंचायत) से सटे उत्तर पड़ता है । बलिराजगढ़ लुट चुका है लेकिन अन्धराठाढ़ी की प्राचीन धरोहर अभी भी बिखरी पड़ी है । इस धरोहर के सहारे जो भूल बलिराजगढ़ में की गई है उसका सुधार अन्धराठाढ़ी में सम्भव है ।

बलिराजगढ़ और अन्धराठाढ़ी एक ही प्रकार के भूभाग का दो खण्ड है । बलिराजगढ़ एक चाहरदिवारी में कैद है लेकिन अन्धराठाढ़ी एक विशाल भूभाग में फैला हुआ । यहाँ अनेकों प्राचीन डीहें, तालाबों की एक श्रृंखला के मध्य घिरी है । यह तालाबी श्रृंखला कभी या तो नदी थी या किसी किला का जलाशय के रूप में सुरक्षा कवच । यदि रकबा ही लिया जाय तो करीब तीन सौ एकड़ में फैला हुआ यहाँ एक प्राचीन खण्डहर है जहाँ आज भी आप नजर दौड़ायँगे तो पुरातात्त्विक–अवशेष कुछ न कुछ बिना प्रयास, आपके हाथों लग सकता है । इसी खण्डहर के एक ओर (पश्चिम) है चर्चित प्राचीन विद्वान **वाचस्पति मिश्र** की डीह । इस खण्डहर की पूर्व दिशा में एक किनारे प्रसिद्ध कमलादित्य स्थान में कई प्राचीन मूर्त्तियों के साथ वह अवशेष भी रखा है जो विष्णु–मूर्त्ति का पादपीठ है और इस पर मिथिलाक्षर में उत्कीर्ण है–

''ओं श्रीमन्नान्यपतिर्जेता गुणरत्न महार्णवः
यत्कीर्ति जनितो विश्वे द्वितीयः क्षीरसागरः ।
मन्त्रिणातस्य नान्यस्य क्षत्रवंशाब्जभानुना
देवोऽयं कारितः श्रीमान् श्रीधरः श्रीधरेण च ।।''

यह श्रीधर का लेख है जिसमें नान्यदेव के गुणों का गान हैं ।

श्रीधर पहले सेनवंश के मन्त्री थे । मतान्तर के कारण इन्हें सेन वंश छोड़ना पड़ा और नान्यदेव के मन्त्रिपरिषद में मन्त्रित्व इन्हें मिला । कमलादित्य स्थान में कई खण्डित मूर्त्तियाँ हैं जो इस स्थान के आस–पास ही कभी बिखरी पड़ी थी । अब ये एकत्रकर एक ऊँचे, सुरक्षित स्थान में स्थापित कर दिये गये हैं । यहाँ उपर्युक्त अभिलेख– युक्त विष्णु मूर्त्ति अंश के अतिरिक्त एक और विष्णु–मूर्त्ति, एक सूर्य–मूर्त्ति, गंगा–यमुना की दो अलग–अलग मूर्त्तियाँ, एक शिला पर **मगनधज जोगी 700** उत्कीर्ण देखी जा सकती हैं । कसौटी पत्थर और मिथिला शैली की ये सभी मूर्त्तियाँ कर्णाटकाल की हैं । इनके अतिरिक्त यहाँ एक अष्टदल कमल भी पत्थर पर उत्कीर्ण है जो कभी इस देव स्थान के मुख्य द्वार पर लगा रहा होगा । जहाँ यह सब मूर्त्तियाँ हैं, इस स्थान के आगे एक प्राचीन तालाब भी है, जहाँ तक कभी पक्की सीढ़ी थी । अब इस सीढ़ी का मात्र कुछ अवशेष बचा है ।

अन्धराठाढ़ी कर्णाट काल ही नहीं इससे पूर्व भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान था । इसका साक्ष्य हैं यहाँ का दुर्गा स्थान जहाँ उपलब्ध कई कसौटी पत्थर की प्राचीन (गुप्तकाल) मूर्त्तियाँ हैं । दो खण्डित और एक अखण्ड मूर्त्ति के शिल्प के आधार पर ये मूर्त्तियाँ गुप्तकाल की लगती हैं । इस स्थान के आगे (पूरब) भी एक प्राचीन तालाब है । कभी इसी तालाब में इसके नवीकरण के समय ये मूर्त्तियाँ मिली थीं । अन्धराठाढ़ी और इसके आस–पास मिलने वाले पुरातात्त्विक अवशेष का एक विशाल संग्रहालय यहाँ वाचस्पति संग्रहालय के नाम से स्थापित है । यहाँ मिट्टी, के वर्त्तन, पत्थर की प्रतिमाएँ, कई प्रकार के सिक्के और अन्य घरेलू सामान जैसा प्राचीन अवशेष संग्रहीत हैं । प्रसिद्ध विद्वान **कवीश्वर चन्दा झा** का आश्रय स्थल यही है, जबकि उनका जन्म स्थान था पिण्डारूच । कवीश्वर चन्दा झा जितने ही बड़े कवि थे उससे भी बढ़कर इतिहासकार थे । जिनका कई ऐतिहासिक विवरण साक्ष्य के लिये मिथिला के इतिहास में मील का पत्थर है ।

बलिराजगढ़ और अन्धराठाढ़ी को केन्द्र माना जाय तो इसके आस–पास ही मुझे कर्णाटकालीन पाषाण प्रतिमायें सबसे अधिक मिले हैं । लेकिन कुछ मूर्त्तियों को छोड़, अधिकांश बुरी तरह क्षतिग्रस्त हैं । यह स्पष्ट है कि ऐसा क्यों

और किसने किया । यदि यह क्षेत्र कर्णाट शासन का केन्द्र बिन्दु नहीं था तो यहाँ की मूर्तियों पर यह प्रभाव क्यों ?

अन्धराठाढ़ी कर्णाट–वंश की राजधानी नहीं थी, इसे मैं नहीं मानता । लेकिन राजधानी यदि मात्र उस स्थान को कहा जाय जहाँ राजा–रानी रहते हों तो इस तरह की राजधानी भी मैं अन्धराठाढ़ी को नहीं मानता । इस प्रकार की राजधानी मात्र बलिराजगढ़ ही हो सकता है । मुझे लगता है कि बलिराजगढ़ के खण्डहर को बल्लालसेन ने पुनः मिथिला की राजधानी के रूप में विकसित किया था और बल्लालगढ़ के नाम से यह प्रसिद्ध हुआ । यह राजधानी मल्लदेव ने लक्ष्मणसेन से हथिया तो लिया लेकिन नाम में किंचित परिवर्त्तन हुआ, बल्लीगढ़ । मल्लदेव की राजधानी बलिराजगढ़ में थी, इसका ठोस प्रमाण है एक मूर्त्ति अभिलेख । भीठभगवानपुर का यह अभिलेख है—

"ओं बल्ली मल्लदेव स्वामी दानमस्य"

इस अभिलेख की छायाप्रति दर्शनीय मिथिला के चतुर्थ पुष्प में देखी जा सकती है । यहाँ बल्ली शब्द स्पष्टतः बलिराजगढ़ के लिये व्यवहार हुआ है । बलिराजगढ़ का वह सारा साक्ष्य मुसलमानों ने पहले ही आक्रमण के समय नष्ट कर दिया था । इसके बाद भी यदि कुछ बचा होगा तो वह संरक्षण के अभाव में लुटता रहा और तब भी यदि (यदि ?) कुछ बचा हो तो इसका साक्ष्य है मात्र पुरातत्त्व विभाग जो प्रथम स्तर को अब किसी भी तरह पुरातात्त्विक स्तर नहीं रहने दिया है । यही कारण है कि कर्णाट–वंश की राजधानी अब प्रश्नचिह्न बनकर रह गई है ।

कर्णाट शासन के प्रारम्भ में तीन प्रमुख नाम आते हैं– नान्यदेव, मल्लदेव और गंगदेव । इस शासन का श्रीगणेश हुआ है नान्यदेव से, लेकिन एक ऐसा प्रमाण जिसे मात्र साहित्य का ही रूप नहीं दिया जा सकता और विशेषकर जब यह प्रमाण एक ऐसे विद्वान का उद्‌गार हो जो चौदहवीं शताब्दी की राजनीति का सक्रिय नायक रहे हों, तो इससे बढ़कर और बड़ा दस्तावेज हो ही क्या सकता है । यह नायक हैं महाकवि विद्यापति । उन्होंने ऐतिहासिक–ग्रन्थ **पुरूषपरीक्षा** के युद्धवीर कथा में लिखा है—

"आसीन्मिथिलायां कर्णाटकुल संभस्य नान्यदेवनाम्नों राज्ञः पुत्रो

मल्लदेवनामधेयः कुमारः । सच सिंह इव स्वभावात्पराक्रम रसिकश्चिन्तयामास–यदहं युवराजोऽपि पितुरूपार्जिते राज्ये सुखमनुभवामीति न मम पौरूषम् ।।''

यह उक्ति और प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेष दोनों के मन्थन से इस राजवंश की राजधानी यहाँ जो स्थापित होती है, वह मिथिला को दो हिस्सों में बाँटती है– पूर्वी और पश्चिमी । पूर्वी हिस्सा मल्लदेव ने सेन शासन से छीन कर अपना राज्य स्थापित किया था । नान्यदेव के बाद कर्णाट–वंश की तीन राजधानियाँ मिथिला में थीं – सिमरौनगढ़, बलिराजगढ़ और कोर्थ । इनमें से बलिराजगढ़ मल्लदेव के अधीन और सिमरौन तथा कोर्थ गंगदेव के अधीन था । सिमरौन से गंगदेव नेपाल तथा पश्चिमी मिथिला तथा कोर्थ से मध्य मिथिला का शासनतन्त्र सम्हालते होंगे । कोर्थ कर्णाटकाल का धार्मिक और ऐतिहासिक दोनों ही स्थान है, जिसकी चर्चा दर्शनीय मिथिला के प्रथम पुष्प में हुई है ।

कोर्थ की तुलना जब मैं मिथिला के प्राचीन पुरातात्त्विक स्थलों, विशेषकर सम्भावित कर्णाट–कालीन राजधानी की दृष्टि से करता हूँ तो यह भौगोलिक और राजनीतिक दोनों ही तुला पर आदर्श और महत्त्वपूर्ण स्थल साबित होता है । यहाँ का रकबा तो 87 हजार बीघा है, पर वह आवासीय स्थल जहाँ लोग अभी बसे हुए हैं और इसे **'गोठ'** कहा जाता है, इसकी रकबा करीब एक हजार एकड़ है । यह सम्पूर्ण एक हजार एकड़ का भूभाग कछुआ की पीठ की तरह ऊँचा और चारों ओर से प्राचीन जलाशय से घिरा हुआ है । इसके अतिरिक्त सैकड़ों तालाब हैं । कोर्थ के चारों ओर और भी कई ऐसे गाँव हैं जहाँ कोर्थ के समकक्ष ही प्राचीन आवासीय स्थान हैं और यह गोठ से बाहर है । महत्त्वपूर्ण होते हुए भी कोर्थ अभी तक पूर्णतः उपेक्षित रहा है । इस समय इसके दो ओर, पूर्व और पश्चिम में कमला नदी की दो साखायें बहती हैं । लेकिन इसे मैं प्राचीन नदी नहीं मानता । प्राचीन नदी भी यहाँ से होकर बहने वाली एक से अधिक थी जो यहाँ संगम करती थी और जिसका पद्चिह्न अभी भी है । ब्राह्मण बहुल इस गाँव में अभी 75 मूल के ब्राह्मण है । इस गाँव की आबादी करीब 20 हजार है । यहाँ दो पंचायते हैं ।

132. विष्णुमूर्त्ति (अंधराठाढ़ी)

133. गंगा (अंधराठाढ़ी)
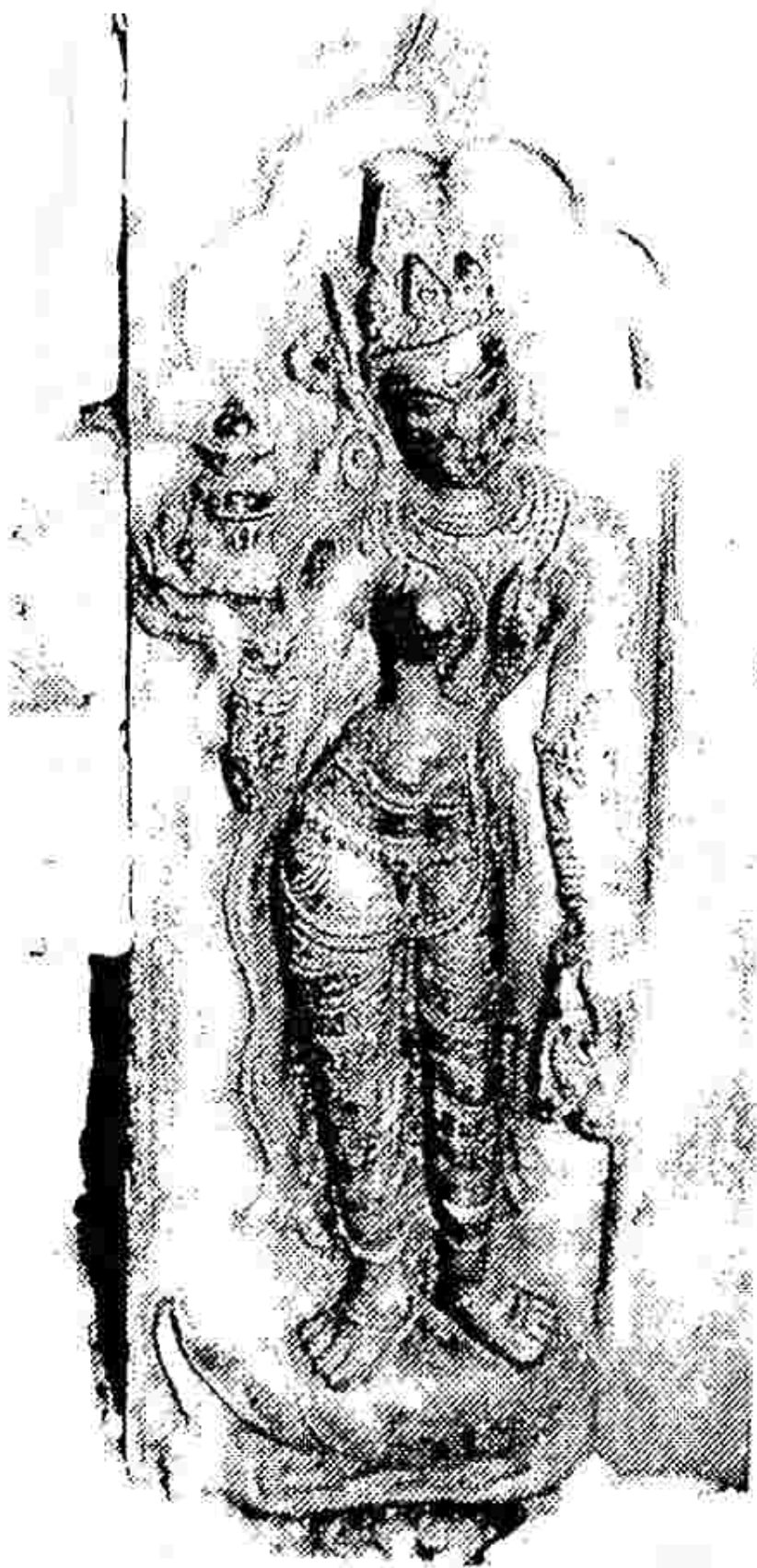
134. यमुना (अन्धराठाढ़ी)

135. चमरधारिणी(भीठभगवानपुर)

136. कुबेर (अन्धराठाढ़ी)

137. विष्णुमूर्त्ति अभिलेख (कमलादित्यस्थान)
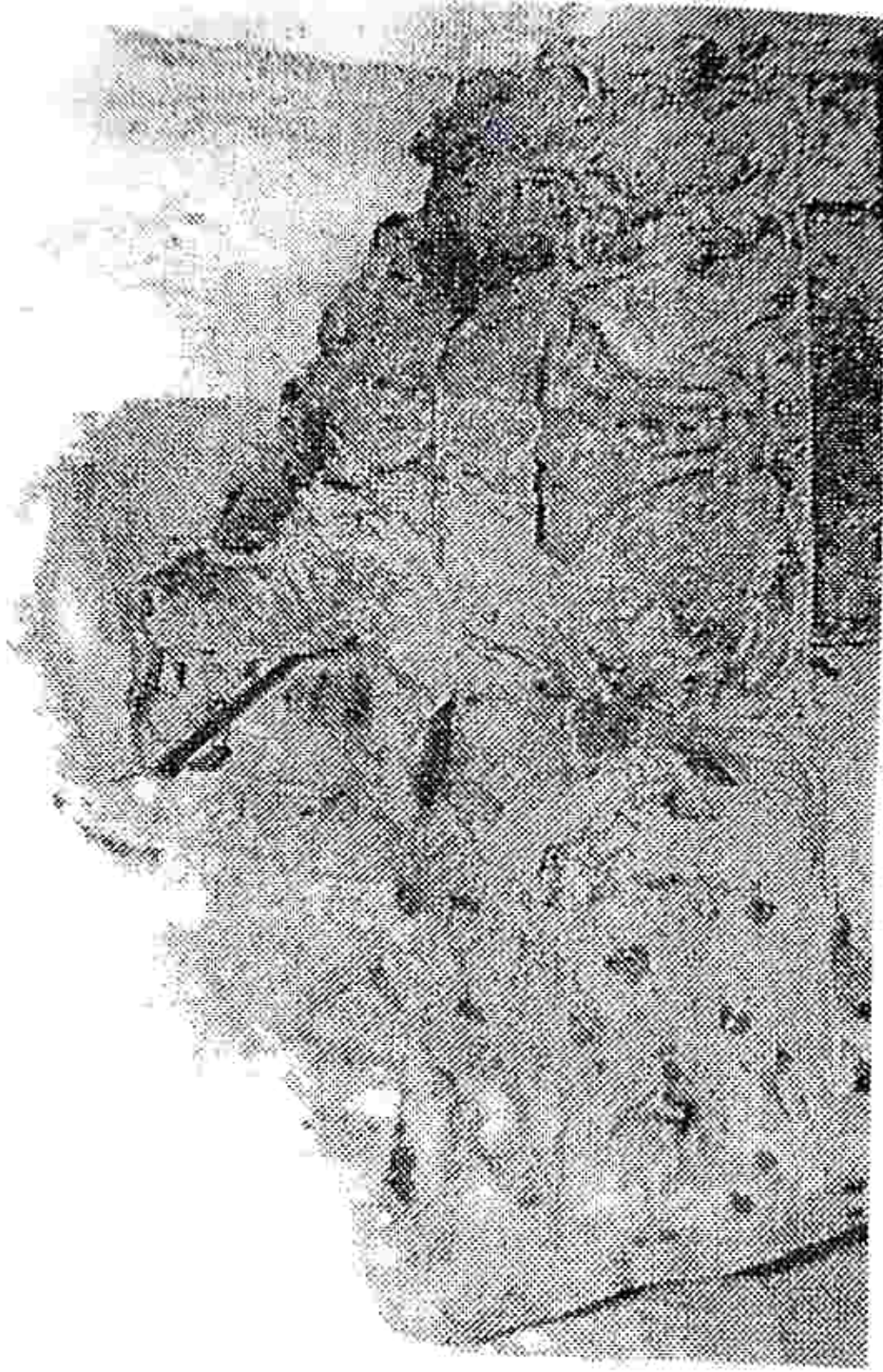
138. सूर्यमूर्ति अंश (कमलादित्यस्थान)

139. शिलालेख (कमलादित्यस्थान)

140. लक्ष्मी (दुर्गास्थान - अंधराठाढ़ी)
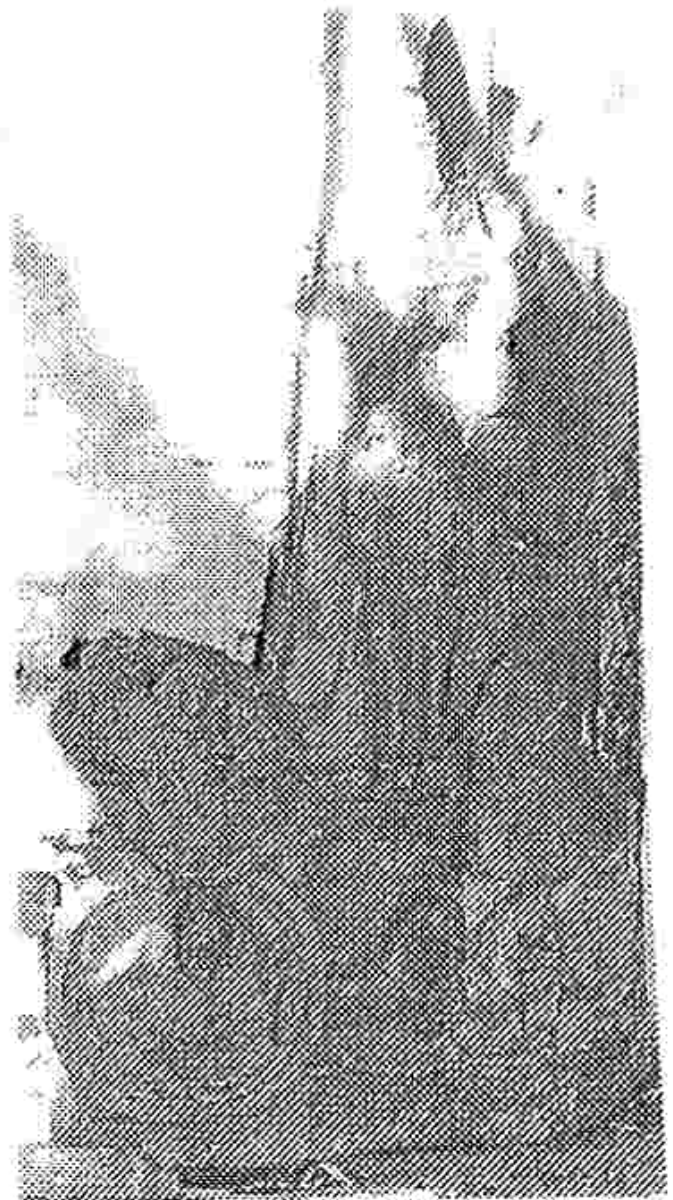
141. खंडित मूर्त्ति अंश (दुर्गास्थान - अंधराठाढ़ी)

रखवारी

मधुबनी जिला का एक गाँव रखवारी, जो झंझारपुर से उत्तर, करीब 12 कि0 मी0 दूर और अन्धराठाढ़ी से पश्चिम–दक्षिण, करीब 10 कि0 मी0 पर प्रसिद्ध गाँव बरसाम के पश्चिम है । एक सर्वेक्षण से पता चलता है कि यह गाँव अत्यन्त प्राचीन है । अतीत में मिथिला के अनेकों विद्वान, कवि और दार्शनिक हरिअमय मूल के हो चुके हैं । इस मूल का एक शाखा है, **हरिअमय रखवारी** । यह इस गाँव के प्राचीनता का प्रमाण–पत्र है । यहाँ 1940 ई0 में एक तालाब, **चतरी** में कुछ पाषाण प्रतिमायें खण्डित अवस्था में मिलीं, जिसे इसी गाँव के मध्य एक पीपल के पेड़ के नीचे अनिच्छा से स्थान मिल गया । आज भी कसौटी पत्थर की ये मूर्त्तियाँ उसी सुविधा के साथ इसी पेड़ के नीचे अडिग खड़ी हैं । गाँव सुखी–सम्पन्न है लेकिन आध्यात्मिक स्पन्दन के अर्थ में यह गाँव बिल्कुल ही कंगाल है । यदि ऐसा नहीं होता तो ये मूर्त्तियाँ इस अवस्था में नहीं होतीं । इसे मिले कम से कम 60 वर्ष हो चुके हैं । उस समय जिस व्यक्ति ने इस गाँव में जन्म लिया था, वह अब बूढ़ा हो चुका है, लेकिन आज तक इन मूर्त्तियों को एक छत नसीब नहीं हुई ।

यहाँ प्रमुख मूर्त्ति सूर्य की है जो आठवीं–नवीं शताब्दी की लगती है । इसका आकार है 164 X 164 से0 मी0 । इस मूर्त्ति की बगल में भगवान विष्णु की भी एक मूर्त्ति 28 X 48 से मी0 की हैं और विष्णु–मूर्त्ति के समीप ही सरस्वती उत्कीर्ण किसी अन्य मूर्त्ति का एक अंश हैं । ये सभी मूर्त्तियाँ समकालीन हैं । यहाँ की आज की आबादी आध्यात्मिक–संवेदना–शून्य इसलिये है कि यह आबादी वह नहीं, जब की ये मूर्त्तियाँ हैं । कभी यह गाँव मिथिला के प्रसिद्ध आध्यात्मिक केन्द्रों में से एक रहा होगा । यह प्रमाण आज भी इन मूर्त्तियों और यहाँ की उच्चस्तरीय आवासीय भूमि से टपकती है । प्राचीन मिथिला के सैकड़ों अन्य आध्यात्मिक केन्द्रों की तरह ही यह गाँव भी कभी धर्मविरोधी तत्त्व या प्राकृतिक प्रकोप का शिकार हुआ था । मूर्त्ति अंशों में सरस्वती और चामरधारणी का मूर्त्ति अंश किसी अन्य बड़ी विष्णु मूर्त्ति की पीठिका के अंश हैं । वह मूर्त्ति भी इसी तालाब में या तालाब के आसपास ही किसी खण्डहर में होना चाहिये ।

142. सूर्यमूर्त्ति (रखवारी)

143. विष्णुमूर्त्ति (रखवारी)
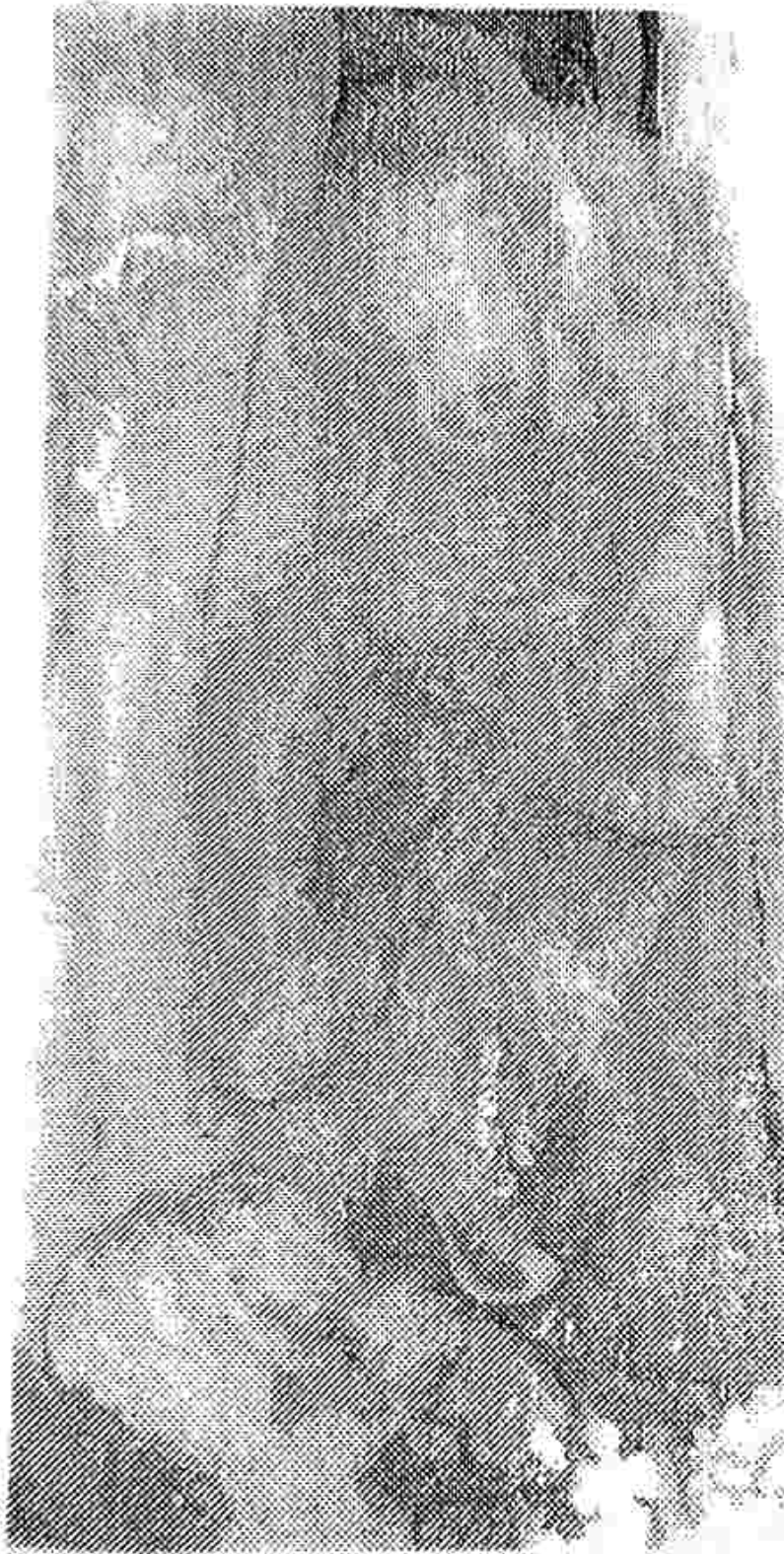
144. सरस्वती (रखवारी)
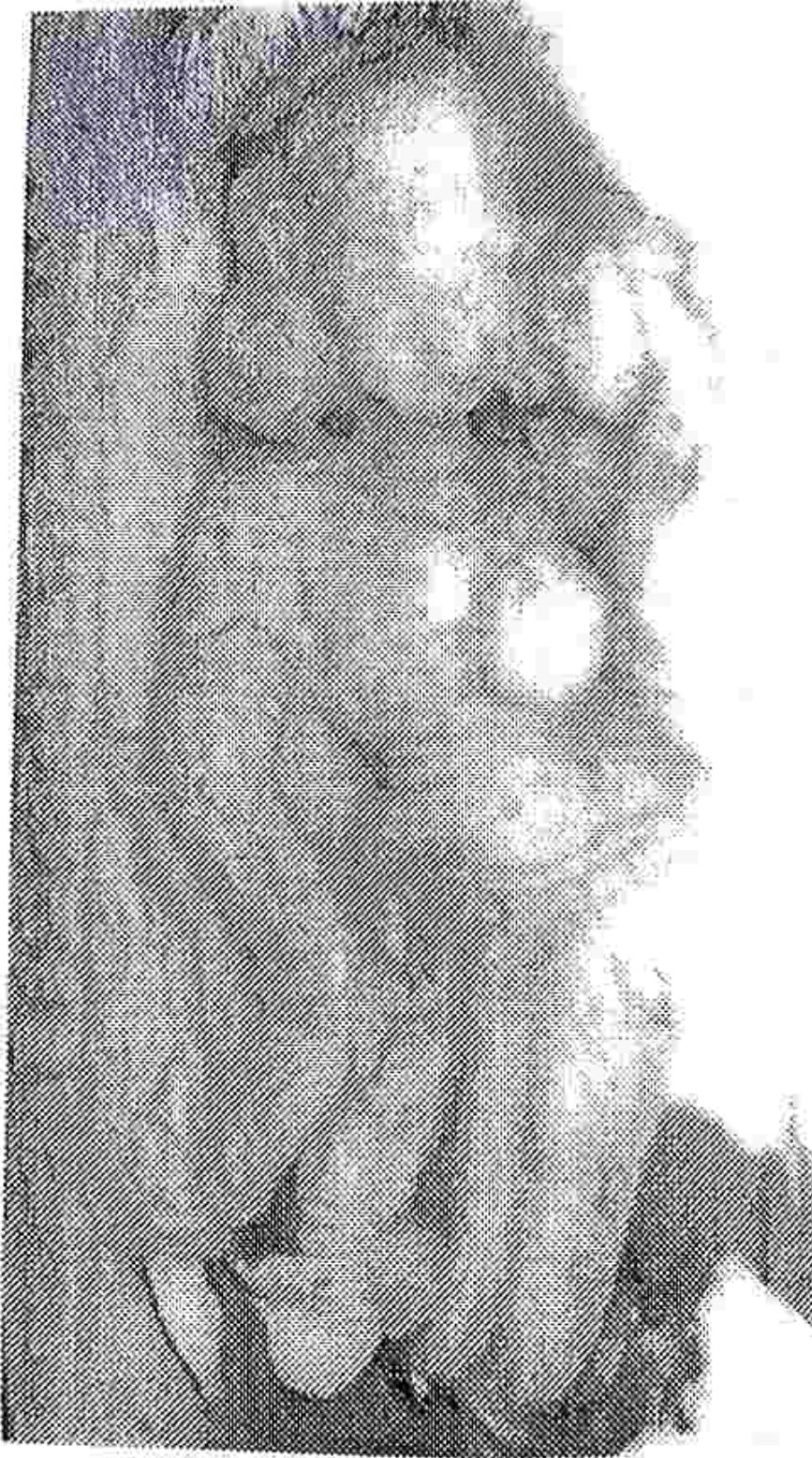
145. चमरधारिणी (रखवारी)

परस्टन

मधुबनी जिला के अन्धराठाढ़ी मुख्यालय से 3 कि0 मी0 दक्षिण–पश्चिम स्थित एक आबादी नवटोल या नयाटोला में एक महाविद्यालय है, **जगन्नाथ मिश्र महाविद्यालय** । इसके परिसर में ही पश्चिम की ओर एक और दूसरा; उत्तर की ओर, दो भींड सतह से करीब 15 फीट ऊँचा और क्रमशः 3 तथा 5 एकड़ भूमि में फैला हुआ है ।

इन भिण्डों में कुछ मूर्त्तियाँ भगवान बुद्ध की पाई गई थीं । जो जिसके हाथ लगी उसीने उसे हथिया लिया । यहाँ इस भिण्ड के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है । मूर्त्ति पाये जाने के बाद इसे बौद्धमठ घोषित कर दिया गया । इसे अब पट्टन और परस्टन भी कहा जाता है । हो सकता है यह बौद्धमठ ही हो लेकिन इन खण्डहरों की पुरातात्त्विक खुदाई अभी नहीं हुई हैं ।

मिथिला में कर्णाट–काल और पालकाल की सैकड़ों प्राचीन पाषाण प्रतिमायें भिन्न–भिन्न स्थानों में मिली हैं । ये मूर्त्तियाँ स्थानीय स्तर पर यहीं उत्कीर्ण की जाती थीं जिसके कई ठोस प्रमाण भी मिले हैं । पाषाण–कला के लिये मिथिला, कभी भारत ही नहीं विश्व प्रसिद्ध रही होगी जिसका प्रमाण है उपलब्ध मिथिला की प्राचीन पाषाण प्रतिमायें । इस कला के अन्तर्गत ऐसा भी प्रमाण मिला है जो कृत्रिम पत्थर निमार्ण की ओर संकेत करता है । इस तकनिक के अन्तर्गत एक लम्बी प्रक्रिया अपनाई जाती थी और इसके लिये विशेष प्रकार की अनुसंधानशाला भी हुआ करती थी । मुझे लगता है कि ये दोनों खण्डहर इसी प्रकार की अनुसंधानशालाएँ थीं ।

146. दक्षिणी पत्तन

147. उत्तरी पत्तन

परसा

झंझारपुर मधुबनी जिला का एक अनुमंडल है । इस अनुमंडल के मुख्यालय से पूर्व–उत्तर की ओर करीब 21 कि० मी० की दूरी पर एक गाँव है परसा । कुछ दशक पूर्व तक इस गाँव को मिथिला का अन्य भाग जानता तक नहीं था । लेकिन इस समय यह गाँव एक सूर्य–मूर्त्ति के कारण सम्पूर्ण मिथिला में प्रसिद्ध हो चुका है । अपने–अपने स्तर के अनुरूप अभी तक कई विद्वानों ने इस मूर्त्ति के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है जो कई पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं । आये दिन नवीन मूर्त्तियाँ जो कहीं न कहीं धरती के गर्भ या जलाशयों में मिलती रहती हैं और प्राचीन भी होती हैं; मिलने के बाद कुछ न कुछ सुर्खियाँ लेकर अखबारों में आती हैं । लेकिन परसा की सूर्यमूर्त्ति की ख्याति का कारण कुछ और है ।

यह मूर्त्ति एक अछूत को एक भिंड (प्राचीन खण्डहर) में मिली जहाँ वह अपना घर बना रहा था । डा० जगन्नाथ मिश्र उस समय बिहार के मुख्यमंत्री थे और उन्होंने अपनी अभिरूचि इस मूर्त्ति में दिखाई । किसी शीर्षस्थ नेता की अभिरूचि, प्रचार प्रसार का माध्यम नहीं हो, यह तो अखबारों के लिये शर्म की बात होगी । इसका अर्थ यह नहीं कि इस मूर्त्ति में श्रेष्ठता की कोई कमी है । उत्तम किस्म के कसौटी पत्थर में कर्णाटकालीन मिथिला शैली की यह मूर्त्ति अखण्ड है । सुदर्शन यह मूर्त्ति करीब साढ़े चार फीट ऊँची है । उच्च संरक्षण के कारण अब यहाँ एक भव्य मंदिर भी बन गया है जिसमें भगवान भास्कर स्थापित हैं ।

कर्णाट–काल (बारहवीं और चौदहवीं शताब्दी के मध्य) में एक ही प्रकार के पत्थर से और एक ही आकार में मिथिला–शैली के 12 आदित्य

उत्कीर्ण हुए थे । इन्हे मिथिला के विभिन्न प्रमुख स्थानों में स्थापित किया गया । उन्ही बारह में से एक आदित्य परसा का भी है । इस सम्बन्ध में कहीं कोई उल्लेख तो नही, लेकिन सूर्य की कला और सर्वेक्षण से प्राप्त मूर्तियों के अध्ययन के बाद यह मेरी धारणा है । बारहों आदित्य तो नहीं पर छह से अधिक इस काल के आदित्य अभी तक धरती के गर्भ से अखण्ड या खण्डित बाहर आ चुके हैं । अन्धराठाढ़ी, भीठभगवानपुर, छर्रापट्टी, हावीडीह, भैरव–बलिया, भगवतीपुर, डिलाही आदि स्थानों की सूर्य–मूर्त्ति इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं । सूर्य की बारह कलायें हैं, जिनके नाम भी भिन्न–भिन्न हैं और प्रत्येक कला के छह सहयोगी है । प्रायः ये सहयोगी भी मुख्य मूर्त्ति के दायें–बायें एक ही मूर्त्तिपीठिका में उत्कीर्ण होते हैं । सहयोगी ही इन्हें ऋतुपरिवर्त्तन के लिये प्रेरित करतें हैं । इस सम्बन्ध में विस्तार से इसी पुष्प में विष्णु–बरुआर शीर्षक के अन्तर्गत चर्चा की गई हैं । इस काल की सबसे विशाल सूर्यमूर्त्ति भी यहीं उपलब्ध है ।

मिथिला में अभी तक जो प्राचीन सूर्यमूर्त्तियाँ मिली हैं, वे तीनकाल की हैं– गुप्तकाल, पालकाल और कर्णाटकाल । इनकी संख्या पन्द्रह से भी अधिक है । गुप्तकालीन सूर्यमूर्त्ति रत्नुपर, पोखराम, भोजपरौल और पालकालीन मूर्त्ति अरई में उपलब्ध है । विष्णु–बरुआर के बाद कर्णाटकालीन सूर्यमूर्त्ति सबसे बड़ी, अखण्ड और भव्य सवास में उपलब्ध है । कर्णाट काल मिथिला का स्वर्णयुग रहा था । मिथिला प्राचीन काल से ही पंचदेव (विष्णु, सूर्य, गणेश, शिव और शक्ति) उपासक रही है । अतः इस काल के इन पाँच देवताओं की सैकड़ों ही मूर्त्तियाँ यहाँ उपलब्ध हैं । और सबसे बड़ी बात तो यह है कि ये मूर्त्तियाँ मिथिला शैली की हैं जिसके आगे पालशैली भी नतमस्तक होती है । मिथिला शैली होने के अनेकों ठोस प्रमाण उपलब्ध हैं ।
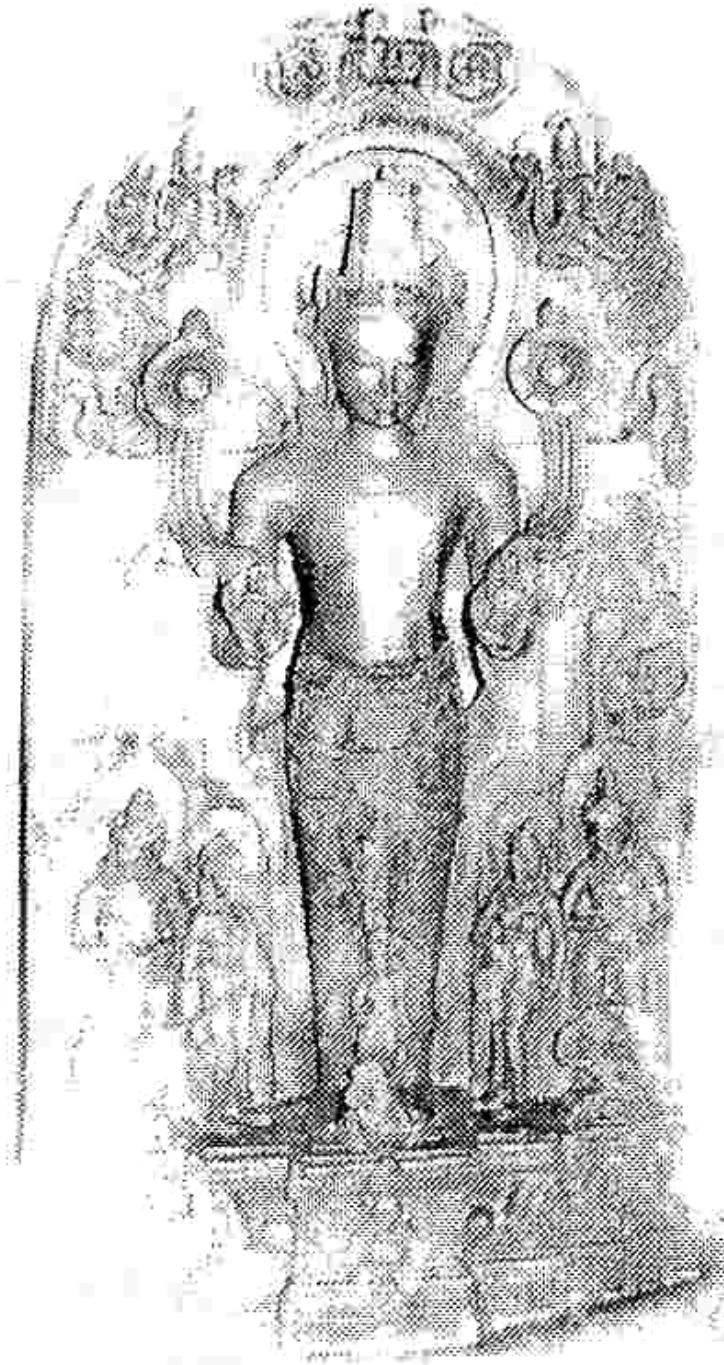
148. सूर्यमूर्त्ति (परसा)

विष्णु–बरुआर

मिथिला में बरुआर और भी हो सकता है, लेकिन विष्णु–बरुआर मात्र एक है । जयनगर, मधुबनी जिला का एक अनुमंडल है । इस अनुमंडल के मुख्यालय से पूर्व–दक्षिण की ओर करीब 16 की0 मी0 दूर जयनगर खुटौना पथ के किनारे यह गाँव है । बरुआर इस समय एक मूर्त्ति के कारण विष्णु–बरुआर के नाम से प्रसिद्ध है । यद्यपि यह मूर्त्ति है सूर्य की लेकिन इसके आसपास के गाँव ही नहीं, इस मूर्त्ति के पुजारी भी इसे विष्णु ही कहते हैं । यदि इसे विष्णु–आदित्य कहा जाता तो यह नाम मूर्त्ति के लिये सार्थक हो सकता था और तब इस गाँव का नाम होता आदित्यपुर या आदित्य–बरूआर ।

मिथिला में प्राप्त सैकड़ो प्राचीन प्रतिमाओं में भैरव–बलिया की भैरव–मूर्त्ति के बाद, और सभी प्राप्त सूर्यमूर्त्तियों में बरुआर की सूर्यमूर्त्ति सबसे विशाल है । इसकी ऊँचाई है करीब 7 फीट (मूर्त्तिपीठिका) । कसौटी पत्थर और मिथिलाशैली की यह मूर्त्ति विशालता ही नहीं कई अन्य दृष्टि से भी अनुपम है । इस मूर्त्ति की पीठिका में ही सूर्य की 12 कलायें मुख्य मूर्त्ति के साथ उत्कीर्ण है । यह कहना मैं आवश्यक नहीं समझता कि ये रथ पर सवार हैं जिसमें सात अश्व जुते हैं । इनके दायें–बायें उषा–प्रत्युषा और दोनो जंघो के बीच पृथ्वी हैं । पाँवों में जूते हैं । विभिन्न आभूषण और मालाओं से इनके विभिन्न अंग शोभित हैं । यह सब तो सूर्यमूर्त्ति की पहचान है जो मात्र सूर्यमूर्त्ति कहने भर से मूर्त्ति का स्वरूप आँखों के आगे तैरने लगता है । इस मूर्त्ति में उल्लेखनीय है एक पुजारी । यह पुजारी मूर्त्ति की दायीं ओर है । यह पुजारी और कोई नहीं बल्कि मूर्त्ति निर्माण–काल का मिथिला का शासक और कोई कर्णाट कुल–भूषण है । जैसा कि कई मूर्त्ति–पीठिका की परम्परा में है ।

भगवान सूर्य की यह मूर्त्ति एक मंदिर में स्थापित है और कोई नहीं जानता कि यह कबसे यहाँ स्थापित है– वर्त्तमान पुजारी भी नहीं । वह स्थान जहाँ इस मूर्त्ति का मंदिर है, एक ऊँचा टीला है । टीला तो प्राचीन है लेकिन

मंदिर नहीं । मूर्त्ति के अध्ययन से पता चलता है कि यह किसी जलाशय से निकालकर यहाँ स्थापित की गई थी । इसके पास ही एक प्राचीन तालाब भी है । मूर्त्ति न तो कहीं दूर से लाई गई थी और न यह सदा से यहाँ स्थापित थी । विगत कुछ सौ वर्षों की बाढ इस भूभाग को किस तरह झकझोर कर रख दिया है, इसका नजारा मुझे इससे दक्षिण–पूर्व, बाबूबरही तक देखने को मिला । इस विनाश के बाद भी इस स्थान का कहना है कि सैकड़ों वर्ष पूर्व कर्णाटकाल में यह स्थान......खण्डहर................ **'इमारत बुलन्द होगी ।'**

विष्णु–बरुआर में मात्र सूर्य की ही मूर्त्ति नहीं है । यहाँ मुझे एक अनुपम गणेश की भी मूर्त्ति देखने को मिली जो इसी मंदिर की दीवाल में जड़ी है । करीब ढाई फीट ऊँची यह मूर्त्ति उसी काल और शैली की है जब की सूर्यमूर्त्ति । इसका भी पत्थर वही है जो सूर्यमूर्त्ति का । गणेश मूर्त्ति की उपस्थिति से अनुमेय है कि यहाँ की भूमि या जलाशय में इसीकाल और इसीशिल्प में उमामहेश्वर, विष्णु और दुर्गा की भी मूर्त्ति होनी चाहिये । यदि ये मूर्त्तियाँ पहले ही यहाँ से उठाकर अन्यत्र कहीं नहीं ले जाई गई हों ।

इस भ्रम को तोड़ने के लिये कि यह मूर्त्ति विष्णु की नहीं है, इसके सम्बन्ध में कुछ शास्त्रीय विधान का उल्लेख करना मैं आवश्यक समझता हूँ । अभी तक मिथिला में मुझे 15 से अधिक सूर्य मूर्त्तियाँ मिली हैं । अन्य मूर्त्तियों में सूर्य की कला उत्कीर्ण नहीं है । यह पहली मूर्त्ति है जिसमें सूर्य की कला भी उत्कीर्ण है । यह कला क्या है ? विष्णु–पुराण का कहना है कि सूर्य की 12 कलायें हैं । प्रत्येक कला एक–एक महीना की अधिष्ठाता होती है और इसका प्रारम्भ है चैत–मास । कला के अनुरूप ही सूर्य के नाम भी बारह हैं और प्रत्येक कला के अन्तर्गत इनके छह सहयोगी अनुचर हुआ करते हैं । चैत से फाल्गुन तक क्रमशः प्रत्येक महीने इनके कला के नाम है– **धाता आदित्य, अर्यमा आदित्य, मित्र–आदित्य, वरुण आदित्य, इन्द्र आदित्य, विवस्वान आदित्य, पूषा आदित्य, विश्वावसु आदित्य, अंश आदित्य, क्रतु ऋषि भग आदित्य, त्वष्टा आदित्य और विष्णु आदित्य** । अब थोड़ा नाम की ओर ध्यान दिया जाय– वरुण, इन्द्र या विष्णु सूर्य नहीं हैं । यह तो एक गुणधर्म है जो नाम के पूर्व विशेषण के रूप में व्यवहार हुआ है । लेकिन जब वरुण आदित्य

या इन्द्र आदित्य कहा जाता है तो इसे सूर्य की एक कला सामने आती है । यहाँ की मूर्त्तिपीठिका की विशेषता यह है कि इसमें कला के माध्यम से ही व्यक्त है कि इन बारह मूर्त्तियों में धाता कौन हैं और विष्णु कौन ? दायीं ओर से क्रम प्रारम्भ हुआ है और मुख्य मूर्त्ति विष्णु–आदित्य मध्य में हैं ।

प्रत्येक आदित्य के साथ भिन्न–भिन्न महीनों में भिन्न–भिन्न ऋषि, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष, सर्प और राक्षसगण इनके सहयोगी हुआ करते हैं । जिन्हे विष्णु से तेज मिलता रहता है और इसी से ऋतुचक्र बनता है । इस मूर्त्ति पीठिका के प्रमुख आदित्य है– विष्णु आदित्य और इनके सहयोगी हैं– अश्वतर सर्प, रम्भा अप्सरा, सूर्यवर्चा गन्धर्व, सत्यजीत् यक्ष, विश्वामित्र ऋषि और यज्ञोपेत राक्षस । इस तरह विष्णु आदित्य मिलकर सप्त तेज को सात घोड़े खींचते हैं । घोड़ा, घोड़ा नहीं बल्कि यह तेज का ही प्रतीक चिह्न है जिसे मूर्त्तियों की पीठिका में सूर्य का तेज, प्रतीक चिह्न के रूप में सात घोड़े में से मध्यवाले घोड़े को एक वृत के मध्य दिखाने की परम्परा रही है । साथ ही मुख्य मूर्त्ति के दायें–बायें तीन–तीन अन्य आकृतियाँ भी होती हैं । परसा, विष्णु–बरुआर, छर्रापट्टी, असगाँव–धर्मपुर, सवास आदि स्थानों की सूर्यमूर्त्ति में यह स्पष्ट देखी जा सकती है । मध्य का अश्व इस स्थिति में मुख्यमूर्त्ति का तेज और दायें–बायें का अन्य अश्व सहयोगी देव, गन्धर्व, अप्सरा, ऋषि आदि का तेज एवं रथ को ऋतु–चक्र समझना चाहिये ।

इस गाँव का नाम विष्णु–बरुआर किसी भी तरह 1887 ई0 से पूर्व का नहीं है । क्योंकि तब के दस्तावेजों में यह गाँव बरुआर के नाम से ही अभिहित है । भगवान सूर्य की मूर्त्ति 1887 ई0 के बाद ही मिली थी और पहचान के अभाव में इसे विष्णु मानकर गाँव के नाम के आगे विष्णु लगाया जाने लगा है क्यों कि बरुआर नाम के कई गाँव मिथिला में विद्यमान हैं ।
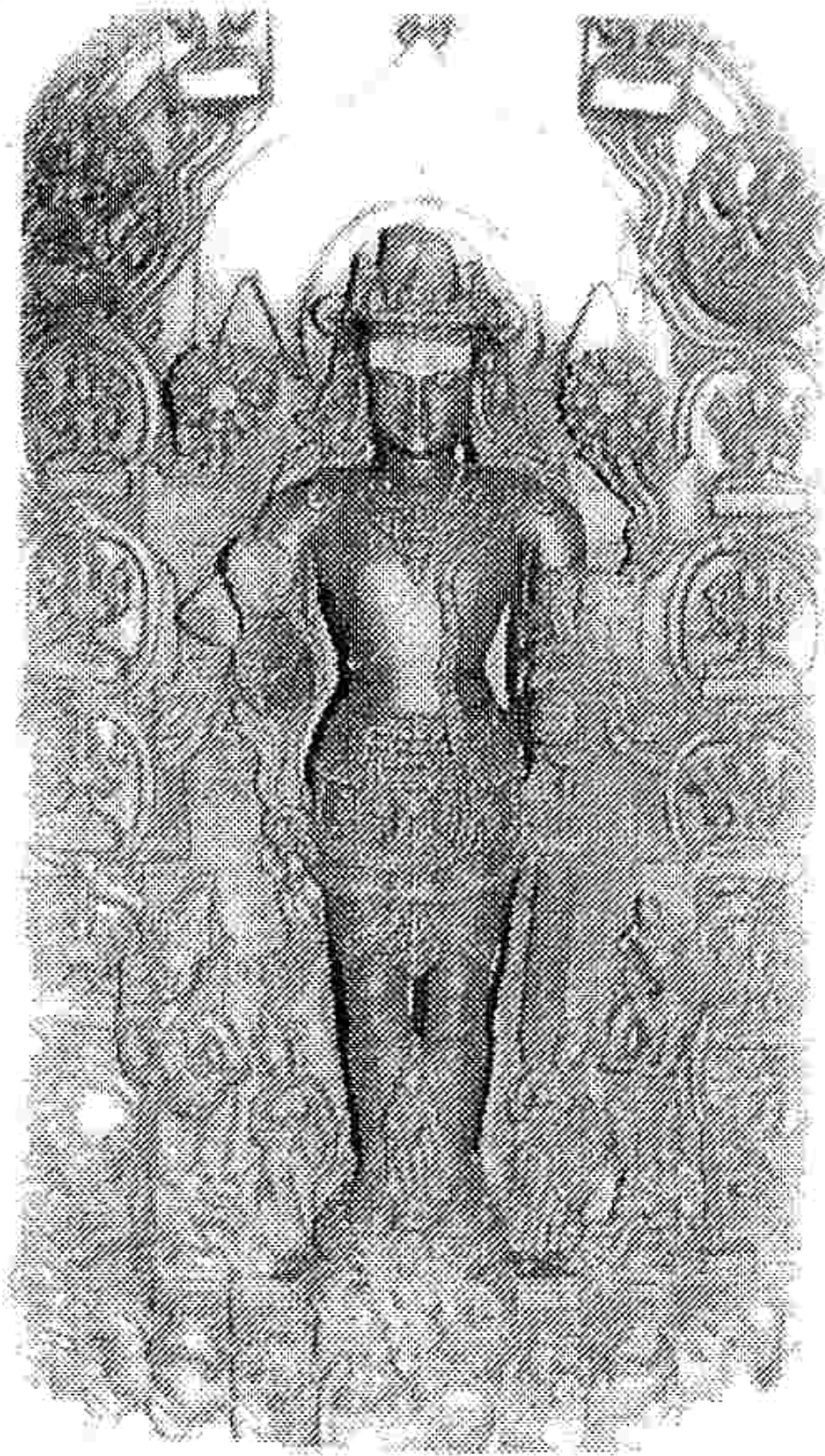
149. सूर्यमूर्त्ति (विष्णु बरूआर)

150. गणेशमूर्त्ति (विष्णुबरूआर)

तिरहुता

बाबूबरही मधुबनी जिला का एक प्रखण्ड मुख्यालय है । यहाँ से ठीक पश्चिम दिशा में करीब 5 कि0 मी0 की दूरी पर एक गाँव है तिरहुता । 1887 ई0 का सर्वेमानचित्र ने इस गाँव को इसी नाम से अभिहित किया है और गाँव वाले भी इसे इसी नाम से जानतें हैं । लेकिन इसके आस–पास के अन्य गाँव इसे तेरहुता कहता है । बबूबरही से यहाँ तक की दूरी 5 कि0 मी0 होते हुए भी रास्ता 13 कि0 मी0 तय करना पड़ता है । क्योंकि इन दो स्थानों के मध्य एक नदी बहती है और इस नदी को पार करने के लिये पीढ़ी नामक गाँव तक जाने के बाद ही यहाँ पहुँचा जा सकता है । तिरहुता के पश्चिम और पूरब दोनों ओर दो नदियाँ बहती है । इस तरह यह गाँव दो नदीयों के पाट में बसा है । इस गाँव के पूरब एक तालाब के दक्षिण–भिण्ड पर एक निर्माणाधीन मंदिर में बहुत ही खूबसूरत, कसौटी पत्थर और 13X26 ईंच की एक उमामहेश्वर की मूर्त्ति स्थापित हैं । यह मूर्त्ति श्री लक्ष्मण राय को **2 अप्रैल, 1997** ई0 को तब मिली जब वे इस स्थान से दूर पूरब एक अन्य **मखनाही** नाम के सूखे तालाब में मिट्टी खोद रहे थे । इस गाँव के दोनों ओर से बहने वाली नदी आगे दक्षिण बढ़कर भातगाँव के निकट संगम कर कमला–बलान के नाम से प्रसिद्ध है । पश्चिम की नदी कमला और पूरब की नदी बलान दोनों मिलकर तिरहुता की जमीन को सैकड़ों वर्षों से निचोड़ती रही है । फलतः इस गाँव की खाई और भिण्ड सब बालुकामय है । इस स्थिति में यह गाँव, गाँव के रूप में पहचाना जाता है, यही कम नहीं । आधुनिक आबादी प्राचीन नहीं है, लेकिन बहुत नयी भी नहीं । यहाँ मात्र एक घर ब्राह्मण का है जो इस मंदिर का पुजारी हैं ।

यहाँ की उमामहेश्वर की मूर्त्ति मिथिलाशैली और कर्णाटकाल की है । शिल्प बहुत ही खूबसूरत है । लगता है यह मूर्त्ति भी उसी मूर्त्तिकार ने उत्कीर्ण की थी, जिसकी कृति विष्णु–बरुआर में सूर्य और गणेश की मूर्त्ति के रूप में है । यदि यह मूर्त्ति तिरहुता की ही है तो मखनाही तालाब के उत्खनन से और भी मूर्त्तियाँ इसी काल की और अन्य देवी–देवताओं की प्राप्त हो सकतीं है । विष्णु–बरुआर यहाँ से 5 कि० मी० उत्तर है । अतः सम्भावना यह भी है कि यह मूर्त्ति विष्णु बरूआर की ही हो और किसी धर्मविरोधी आक्रमण के समय यहाँ लाकर इस तालाब में छिपा दी गई हो । इस स्थिति में भी इस तालाब में और भी मूर्त्तियाँ मिलने की सम्भावना बढ़ जाती हैं ।

151. उमामहेश्वर (तिरहुता)

आध्यात्मिक
एवं
पुरातात्त्विक

DARSHNIYA MITHILA

दर्शनीय मिथिला

षष्ठ पुष्प

लेखक
सत्यनारायण झा 'सत्यार्थी'

गिरिजा–स्थान

आज की तिथि से करीब 500 वर्ष पूर्व तुलसी कृत रामायण में जिस 'मूरति' (खसी माल मूरति मुसुकानी) की चर्चा हुई है, वह मूर्त्ति आज भी वहीं है और इस स्थान को गिरिजा–स्थान के नाम से जाना जाता है । 1887 ई0 के मानचित्र में यह स्थान पुष्पहर (पुसहर) के नाम से अभिहित है । बेनीपट्टी, मधुबनी जिला का एक अनुमंडल है । इस अनुमंडल के मुख्यालय से करीब 26 कि0 मी0 उत्तर यह स्थान है । प्राचीन मंदिर के खण्डहर पर अब एक नये मंदिर का निर्माण हुआ है । यह मंदिर प्राचीन तालाब के पूर्वी भिण्डे पर है । मंदिर से दक्षिण भी एक तालाब है, जिसके नवीकरण के समय इसमें कई प्राचीन अंगभंग मूर्त्तियाँ मिली थीं । ये सभी मूर्त्तियाँ इस समय गिरिजा के साथ ही इसी मंदिर में स्थापित हैं । यहाँ प्रतिदिन मेला जैसी भीड़ पूजारियों की लगी रहती हैं और विवाह–पञ्चमी (अग्रहण) की तो बात ही कुछ और है। ।

गिरिजा मंदिर में गिरिजा के साथ ही सात अन्य मूर्त्तियाँ भी हैं । इनमें जानकी जी की भी मूर्त्ति है जो प्राचीन नहीं । इस मंदिर के प्रांगण में और भी दो छोटे–छोटे मंदिर हैं जिनमें से एक में एक प्राचीन खण्डिल पञ्चमुख शिवलिंग (कथित भैरव–मूर्त्ति) और दूसरे में कई खण्डित मूर्त्तियाँ जो आस–पास से एकत्र की गई हैं, एक शिवलिंग के पास–पास रख दी गई हैं । जानकी जी की मूर्त्ति के अतिरिक्त अन्य सभी मूर्त्तियाँ कसौटी पत्थर की और प्राचीन हैं । गिरिजा की मूर्त्ति गुप्तकाल या इससे पूर्व की और शिल्प की दृष्टि से दर्शनीय है । तुलनात्मक दृष्टि से सबसे अच्छी स्थिति भी गिरिजा–मूर्त्ति की ही है ।

गिरिजा–मंदिर में स्थापित मूर्त्तियों का क्रम बायीं ओर से दायीं ओर इस प्रकार है—

1. एक खण्डित मूर्त्ति, जिसकी पहचान नहीं है 2. जानकी की मूर्त्ति 3. गणेश 4. गिरिजा (गौरी) 5. महिषासुर मर्दिनी की दो मूर्त्तियाँ, 6. चमर–धारिणी और 7. भक्त हनुमान । इनमें से गणेश और गिरिजा की

मूर्त्ति उल्लेखनीय है ।

गणेश–मूर्त्ति

एक ही मूर्त्ति पीठिका में गणेश की तीन अवस्थाएँ उत्कीर्ण है । सबसे ऊपर अष्टभुज गणेश, मध्य में चतुर्भुज गणेश और नीचे का गणेश आंशिक रूप से खण्डित होने के कारण ठीक ठीक समझ पाना कठिन है ।

गिरिजा की मूर्त्ति

गिरिजा की यह मूर्त्ति आंशिक रूप से खण्डित होते हुए भी प्रायः सभी अंग–अभंग हैं जो किसी भी मूर्त्ति के पहचान के लिये आवश्यक है । इसकी चार भुजाएँ हैं । दायें ऊपर के हाथ में चक्र और नीचे का हाथ भूमि–स्पर्श मुद्रा में । बायें ऊपर के हाथ में गदा और नीचे का हाथ वात्सल्य मुद्रा में । साथ ही नीचे के दोनों दायें–बायें हाथों में क्रमशः पुष्प और शंख भी हैं । इसके दाँयी ओर गणेश और बाँयी ओर कार्त्तिकेय हैं । इस मूर्त्ति का आभामंडल अद्वितीय है । काल और शैली की दृष्टि इस मूर्त्ति के समकक्ष गिरिजा की एक और मूर्त्ति नदियामी (कुर्सो–नदियामी, दरभंगा जिला) में उपलब्ध है । एक तीसरी गिरिजा की मूर्त्ति जो बारहवीं शताब्दी के आस–पास और मिथिला शैली की है, मिर्जापुर, दरभंगा (म्लेच्छ मर्दिनी) में उपलब्ध है । कला की दृष्टि से गिरिजा की यह सर्वोत्तम मूर्त्ति है जिसकी चर्चा दर्शनीय मिथिला के द्वितीय पुष्प में हुई है ।
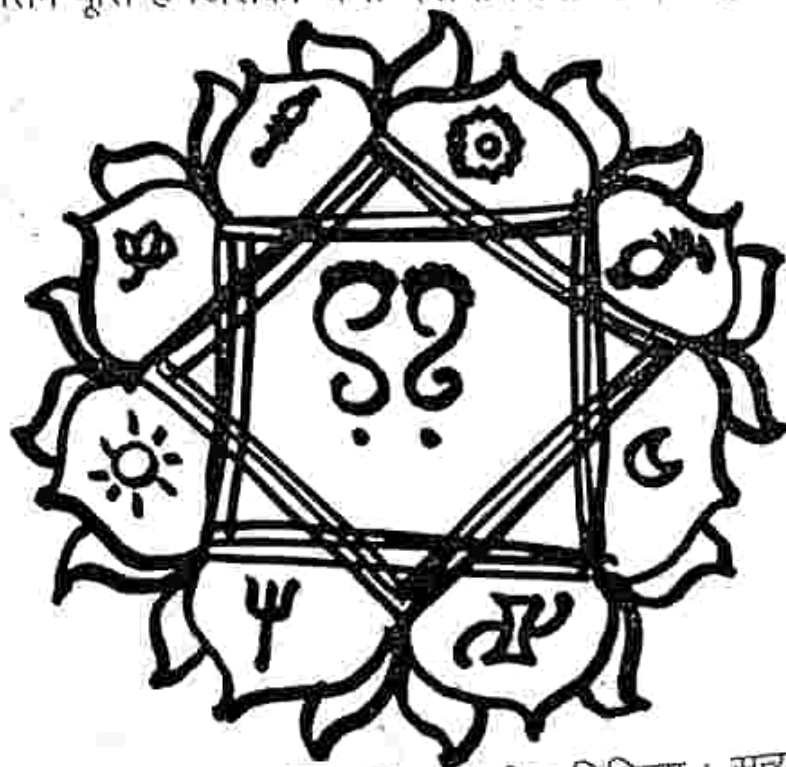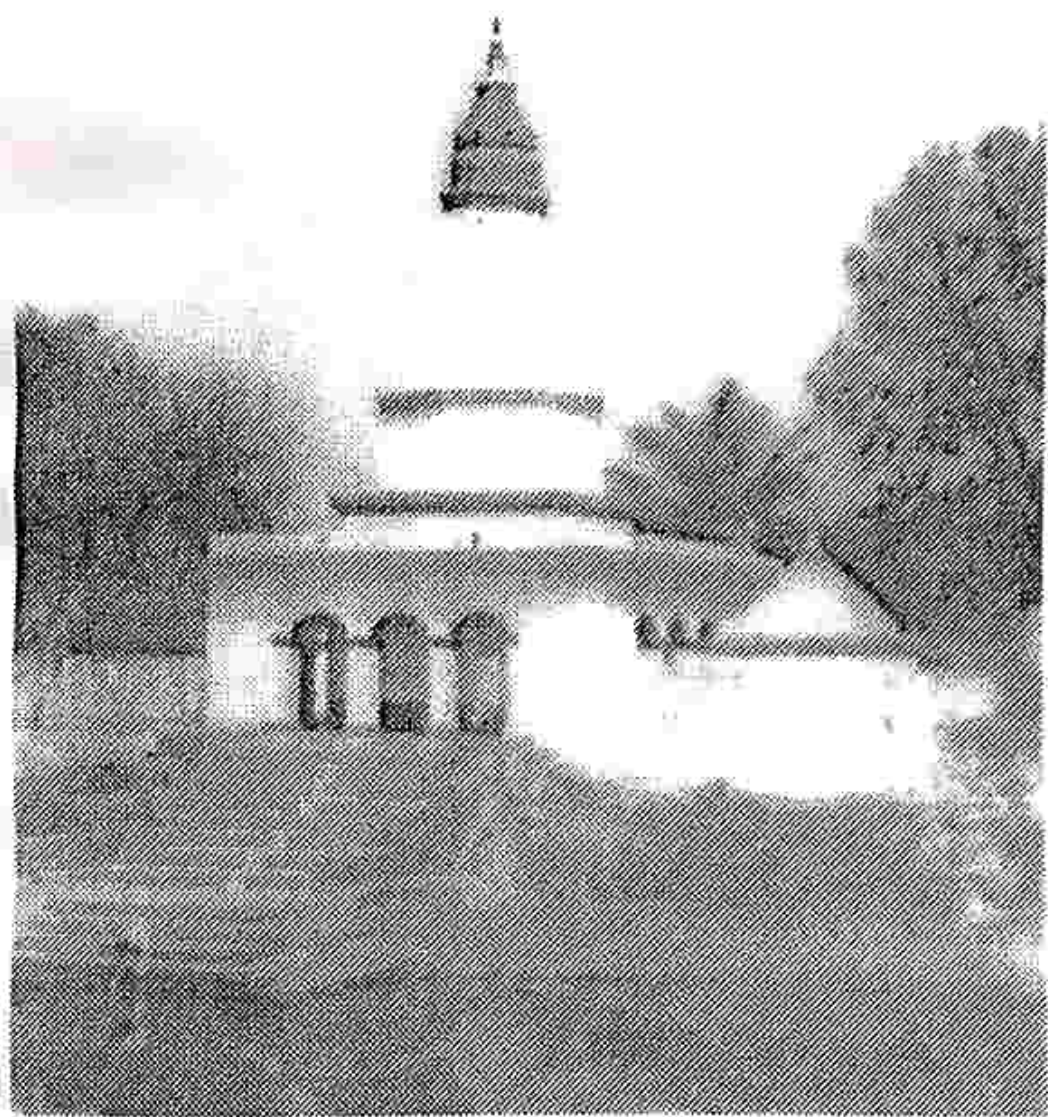
152. गिरिजा मंदिर (गिरिजास्थान)
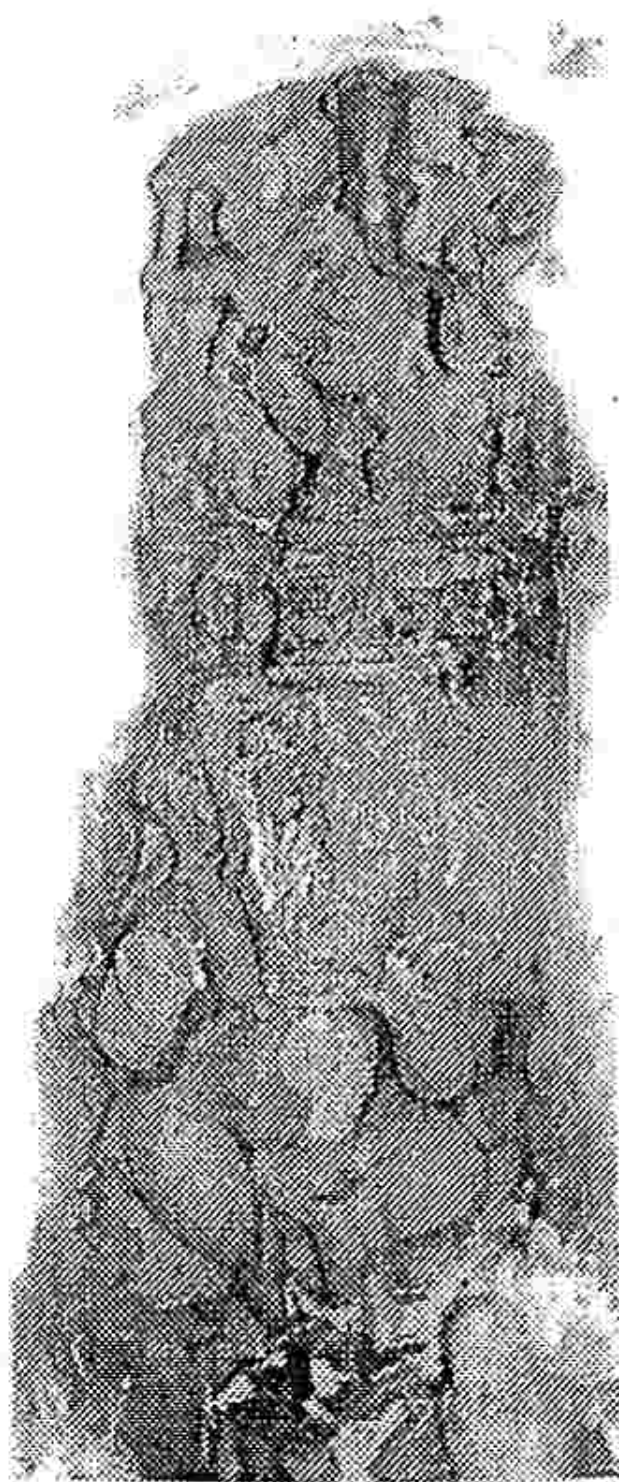
153. गणेश मूर्त्ति (गिरिजास्थान)
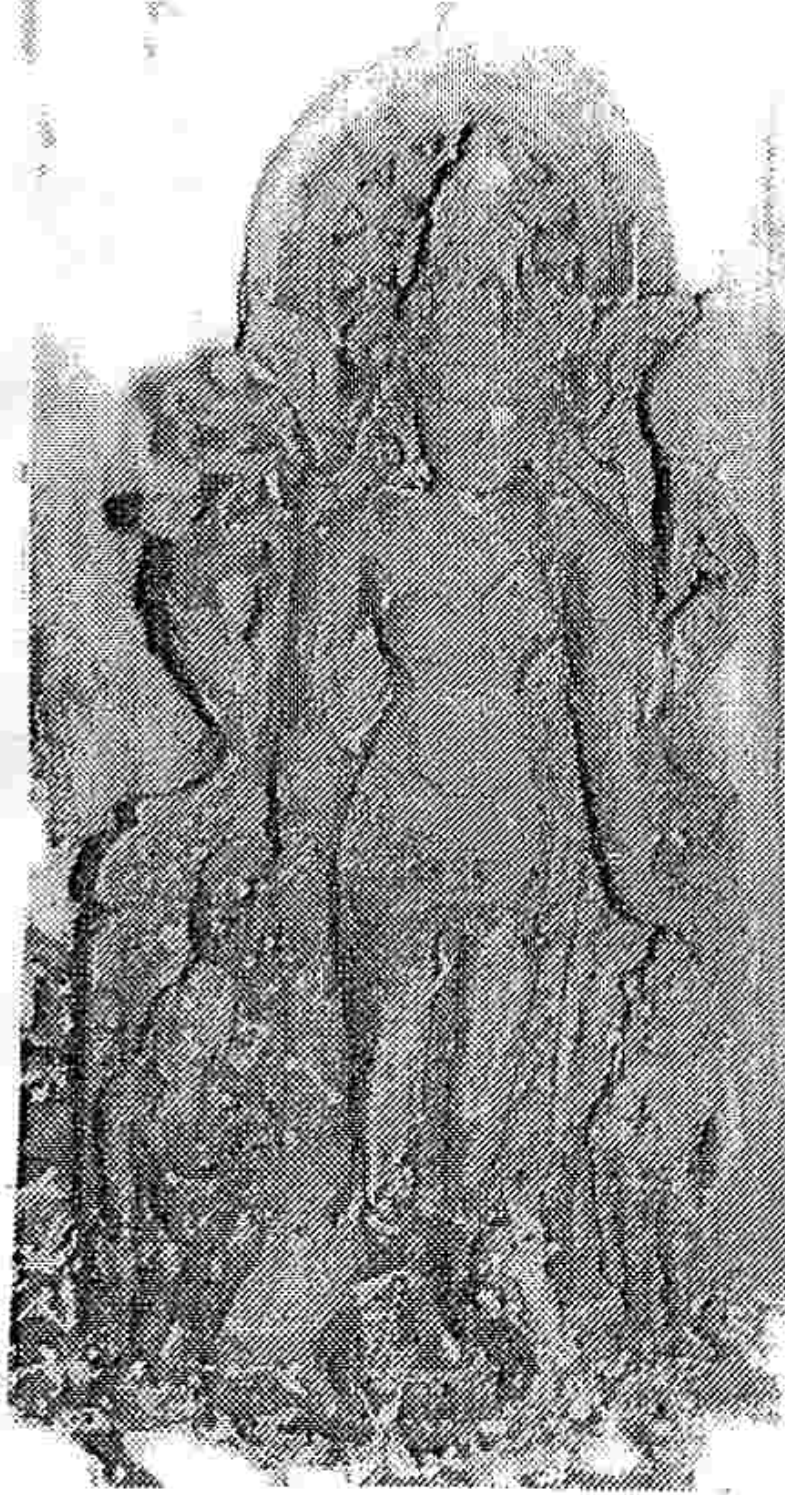
154. देवी गिरिजा (गिरिजास्थान)
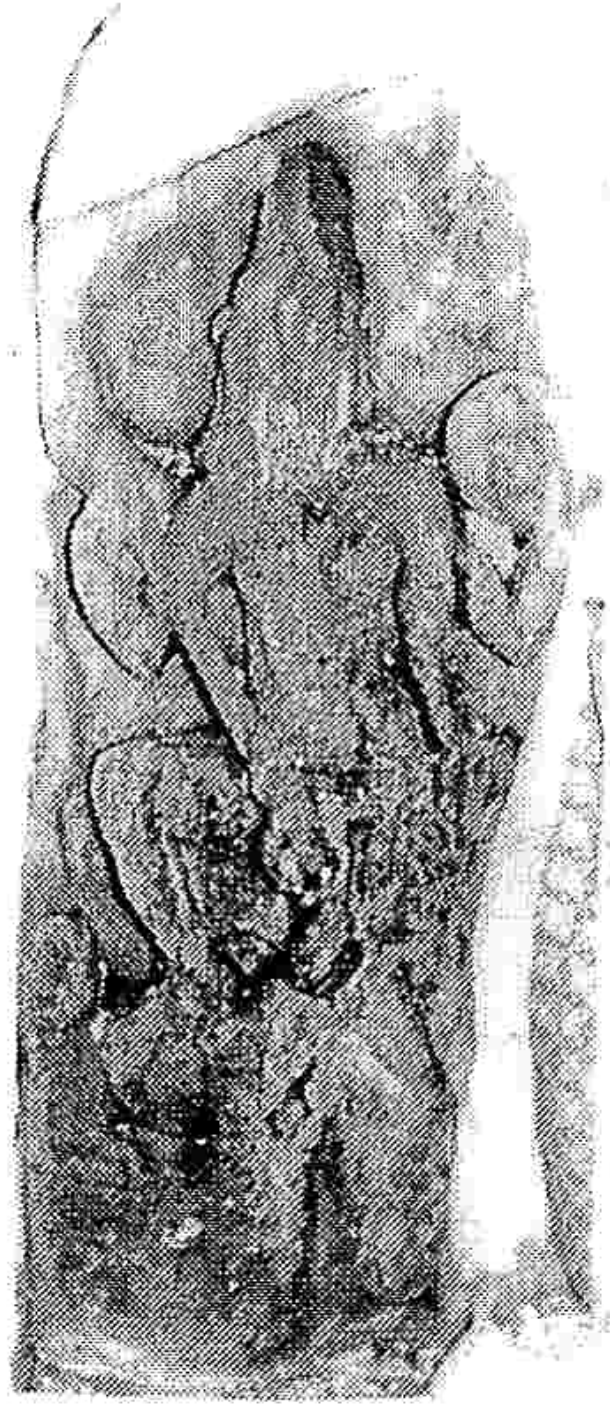
155. महिषासुरमर्दिनी (गिरिजास्थान) . 'क'

156. महिषासुरमर्दिनी (गिरिजास्थान) . 'ख'

157. चमरधारिणी (गिरिजास्थान)

158. भक्त हनुमान (गिरिजास्थान)

उच्चैठ

प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं की उपलब्धि की दृष्टि से मधुबनी जिला का अनुमंडल बेनीपट्टी बहुत ही धनी है । इस अनुमंडल के मुख्यालय से उत्तर–पश्चिम की ओर करीब 4 कि0 मी0 दूर एक प्रसिद्ध स्थान है उच्चैठ । यहाँ की भगवती सम्पूर्ण मिथिला में प्रसिद्ध हैं । इस स्थान की गिनती सिद्धपीठों में की जाती है । कहा तो यह भी जाता है कि प्रसिद्ध संस्कृत–भाषा के कवि कालिदास यहीं की भगवती की कृपा से विद्वता की पराकाष्ठा पर पहुँचे थे । मिथिला के दर्शनीय स्थानों में से यह स्थान एक है ।

बीसवीं शताबदी का सातवाँ दशक मिथिला में प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं की उपलब्धि की दृष्टि से उल्लेखनीय है । इस दशक में मिथिला के कई स्थानों पर साधारण खुदाई में प्राचीन पाषाण प्रतिमायें मिली थीं । उच्चैठ में भी देवी–स्थान के लिये चाहरदिवारी की नींव खोदते समय दो शिवलिंग और कई खण्डित मूर्त्तियों के अंश मिले थे जो यहीं एक दूसरे मंदिर में स्थापित हैं ।

उच्चैठ की भगवती आंशिक रुप से खण्डित हैं । इनका शिरोभाग बायीं ओर से अधिक क्षतिग्रस्त है । या समझा जाय कि शिरोभाग पूर्णतः झड़ा हुआ है । कई लोग इस कारण इन्हे छिन्नमस्ता समझ बैठते हैं । इस दिशा में मूर्त्ति का ढका होना इस भ्रम का एक कारण है । यहाँ की भगवती चतुर्भुज हैं और इनके हाथों में हैं, शंख, चक्र, गदा और पदम । कमलासन पर बैठी भगवती का एक पाँव पादपीठ के नीचे बैठे सिंह पर है । दायाँ पाँव सिंह पर और बाँया पाँव पालथी के रुप में मुड़ा है । मूर्त्ति का शिल्प संतुलित तथा आकर्षक और गुप्तकालीन है । इस मूर्त्ति का शिल्पकाल वही है जो गिरिजा–स्थान की भगवती का । लेकिन वहाँ की गौरी खड़ी हैं और उन्हें सिंह का वाहन नहीं है । इस दृष्टि से भोजपरौल की भगवती की अनुकृति कहा जा सकता है ।

लेकिन उच्चैठ की भगवती जैसा उत्कृष्ट शिल्प भोजपरौल की भगवती का नहीं है । मात्र इस बिन्दु को अनदेखा कर दिया जाय तो आकार–प्रकार, पत्थर, भाव–भंगिमा सब कुछ भोजपरौल की भगवती की भी वही है जो उच्चैठ की भगवती की ।

उच्चैठ भगवती के बायीं ओर कथित काली–मूर्त्ति है । मुझे यह मूर्त्ति किसी भी तरह काली की नहीं लगती हैं । मूर्त्ति तो देवी की हैं, लेकिन कौन सी देवी, यह पहचान करना अत्यन्त कठिन है । इस मूर्त्ति में प्रतीक चिह्न का बिल्कुल ही अभाव है । ऐसा होते हुए भी यह मूर्त्ति–पीठिका उल्लेखनिय है । मूर्त्ति–पीठिका पूजा के लिये नहीं बल्कि प्रारूप (प्रोटोटाइप) के लिये उत्कीर्ण की गई होगी । क्योंकि मूर्त्ति से अधिक इसमें मंदिर उभर कर सामने आता है । इस दृष्टि् से यह मैथिल वास्तु शिल्प का एक अकेला उदाहरण है । सत्तर के दशक में जो दो शिवलिंग मिले थे उनमें से एक में गौरी भी उत्कीर्ण थे । अतः इस लिंग को गौरी–शंकर कहा जाता है ।
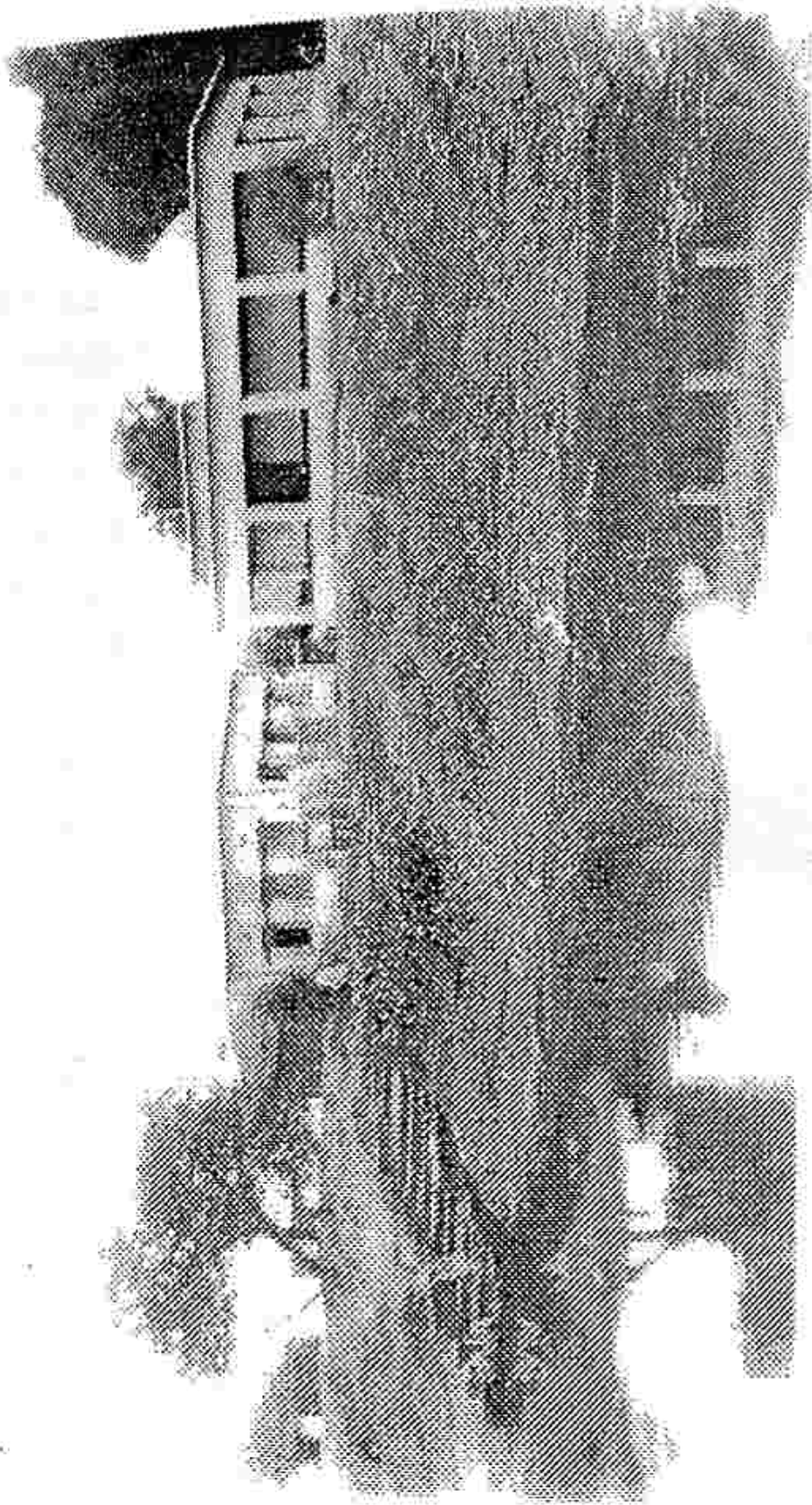
159. भगवतीस्थान (उच्चैठ)

160. भगवती (उच्चैठ)
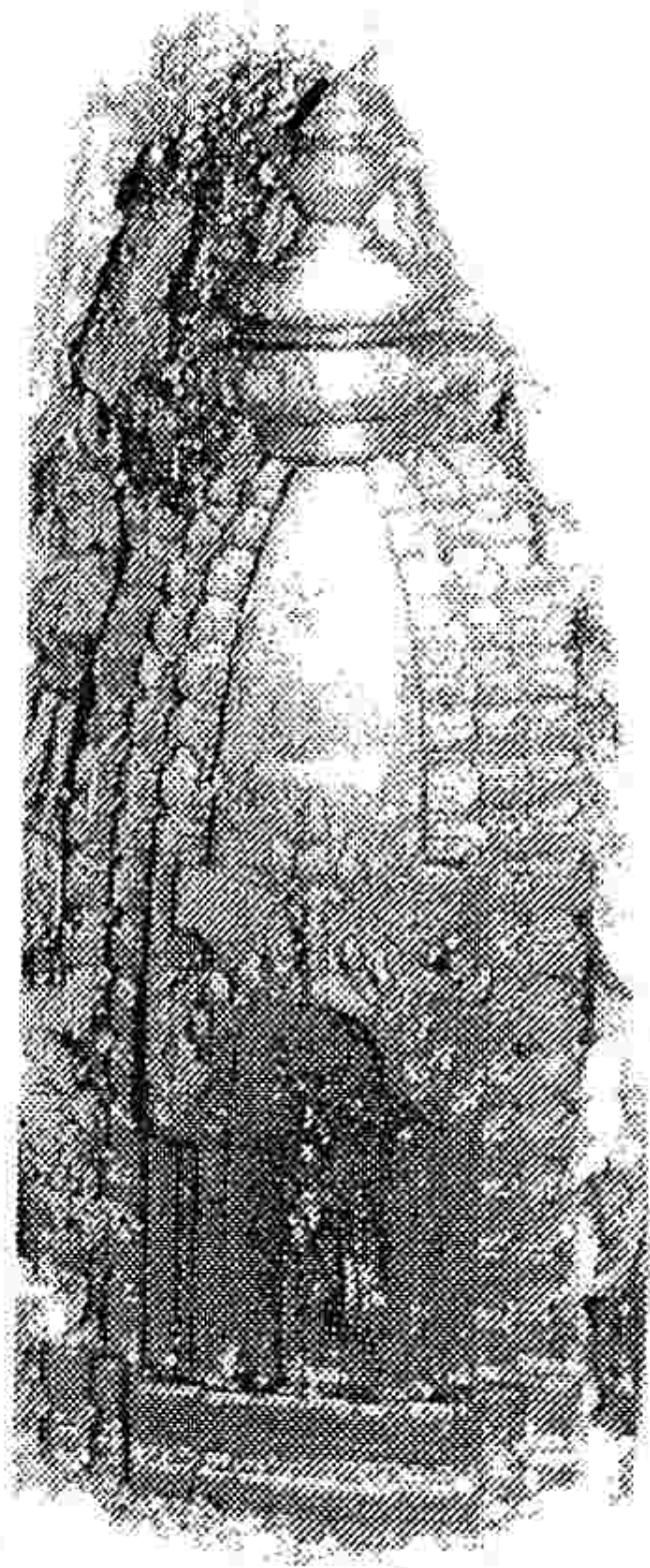
161. कथित काली (उच्चैठ)

162. आवर्धित काली (उच्चैठ)
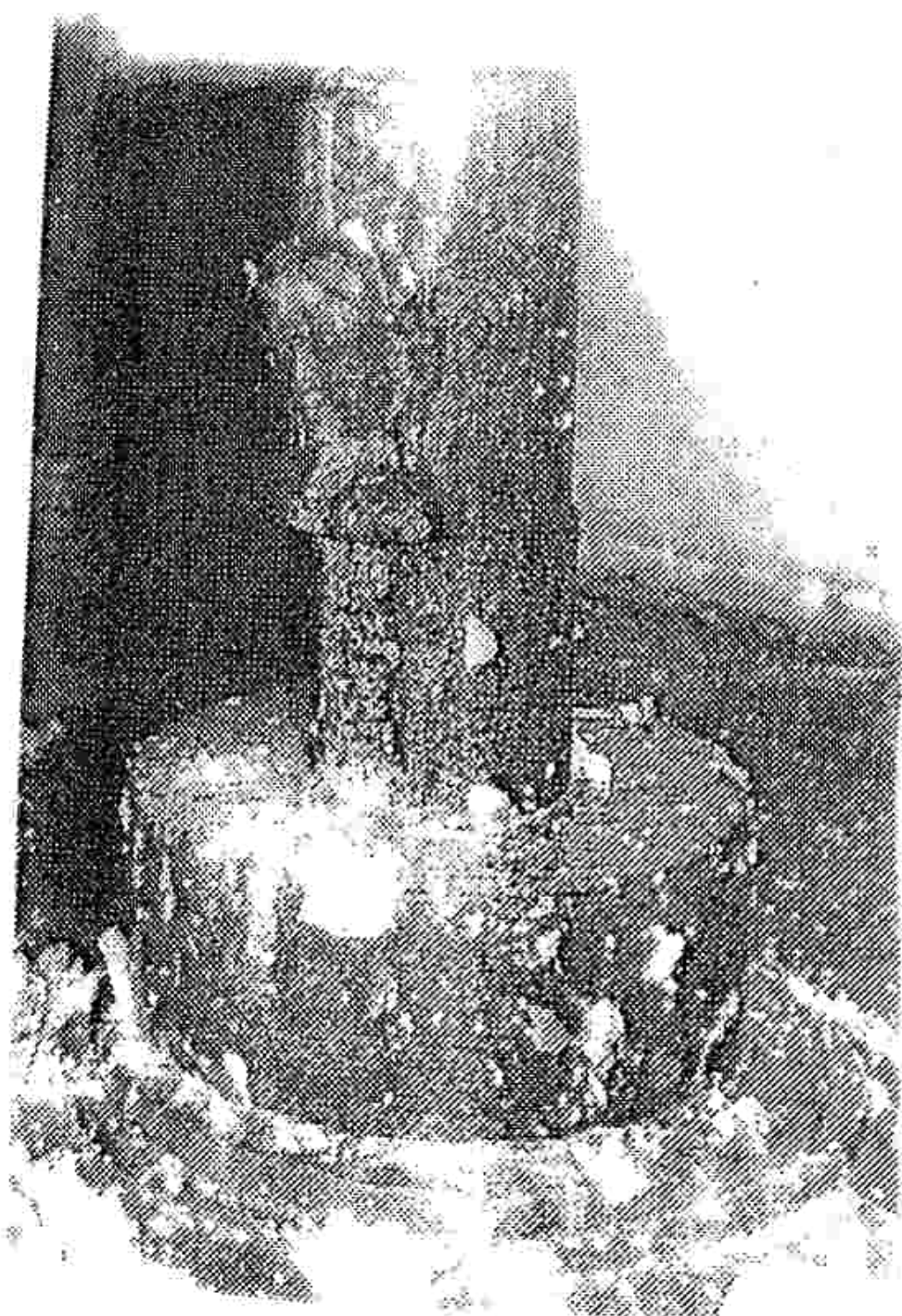
163. गौरी-शंकर (उच्चैठ)

दामोदरपुर

मधुबनी जिला का बेनीपट्टी अनुमंडल पुरातात्त्विक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । इस अनुमंडल के मुख्यालय से दक्षिण करीब तीन कि0 मी0 दूर एक ब्राह्मण बहुल गाँव है, दामोदरपुर । 2 अगस्त, 2000 ई0 को इस गाँव के एक प्राचीन डीह में एक बहुत बड़ा मृद्भाण्ड मिला । यहाँ यदा–कदा इस प्रकार की पुरातात्त्विक वस्तुएँ मिलती ही रहती हैं । लेकिन यह सुरक्षित नहीं रह पाती है । क्योंकि इसके लिये यहाँ कोई उचित व्यवस्था नहीं है । यह स्थान प्राचीन काल में मिथिला का कोई महत्त्वपूर्ण नगर रहा था । आधुनिक आबादी नवीन है, जो प्राचीन खण्डहर पर बसा है ।

प्राचीन काल में यहाँ से एक विशाल नदी बहती थी जिसके अवशेष पर यहाँ कई बड़े–बड़े तालाब बाद में खोदे गये और प्राचीन डीह की अपेक्षा बसने के लिये इन तालाबों के भिण्डे को अधिक महत्व दिया गया । ऐसा क्यों किया गया, यह शोध का विषय है । यहाँ के विशाल तालाबों में महादेई और दुभी–सुभी तालाब का नाम लिया जा सकता है । गाँव के पश्चिम दो तालाब क्रमशः दुभी ओर सुभी उत्तर–दक्षिण अभिन्न है । तालाब, नदी, खाई, चौर आदि जलाशयों के लिये कुछ परिभाषायें हैं । इन परिभाषाओं के अनुरूप दुभी–सुभी को तालाब नहीं माना जा सकता । बल्कि कभी पानी संचित करने के लिये नदी–अवशेष का जीर्णोद्धार हुआ था । प्रत्येक विशाल तालाब को मिथिला में महादेई कहा जाता है । इस तरह के कई तालाब मिथिला में हैं । ये तालाब कर्णाट काल में विशाल नदियों के अवशेष पर जल–संचय की दृष्टि से विकसित हुए थे । यहाँ का प्रत्येक महत्त्वपूर्ण नगर के निवासियों ने मुसलमानी आक्रमण के समय अपना घरवार छोड़ जंगल का शरण लिया था या सम्पूर्ण आबादी आक्रमण कारियों के शिकार हुई । यहाँ जब नवीन आबादी फैली तो विशाल तालाब को महादह या महादेई कहा जाने लगा ।

महादेई और दुभी–सुगी के संयुक्त भिण्डे पर बसा है पुराना दामोदर पुर । अब यह गाँव अन्य भिण्डों पर भी फैल रहा है । दुभी–सुगी के पश्चिमी भिण्डे के किनारे से एक नवीन नदी बहती है, **बछराज** । बछराज के पश्चिमी किनारे एक महत्त्वपूर्ण प्राचीन डीह है । यह डीह करीब दो सौ एकड़ में फैला हुआ है । इसे **डेराडीह** कहा जाता है । कुछ समय पूर्व तक यह डीह वीरान था । अब यहाँ आवास भी बनने लगे हैं और कुछ जगहों पर खेती भी होती है । कहीं–कहीं आम का बागीचा है और कुछ स्थान अभी भी रिक्त हैं । इसी डीह के उत्तरी किनारे एक धान के खेत में कमठौनी के समय यह मृद्भाण्ड मिला जिसकी चर्चा पहले हुई हैं । मिट्टी के नीचे कहीं–कहीं इस डीह से पूर्व की ओर गयी एक पक्की दीवाल पायी जाती है । इस दीवाल की लम्बाई का ओर–छोड़ नहीं है । क्योंकि विधिवत इसे खोजने का प्रयास नहीं हुआ है । मृद्भाण्ड का रंग बाहर से लाल और अन्दर से मटमैला है । यह मिट्टी से भरा था । इसकी अधिकतम गोलाई है 56 ईंच और ऊँचाई 25 ईंच । यहाँ जो ईंटें मिलती हैं उनका माप है– 12X9X2 ईंच । इस डीह की विधिवत खुदाई से कई प्रकार की शंकाएँ दूर की जा सकती हैं । मृद्भाण्ड बारहवीं–तेरहवीं शताब्दी की लगती हैं । क्योंकि इसी तरह के मृद्भाण्डों के टुकड़े मैंनें अन्धराठाढी के एक प्राचीन डीह में यत्र–तत्र विखरे देखे थे ।

164. मृदभांड (दामोदरपुर)
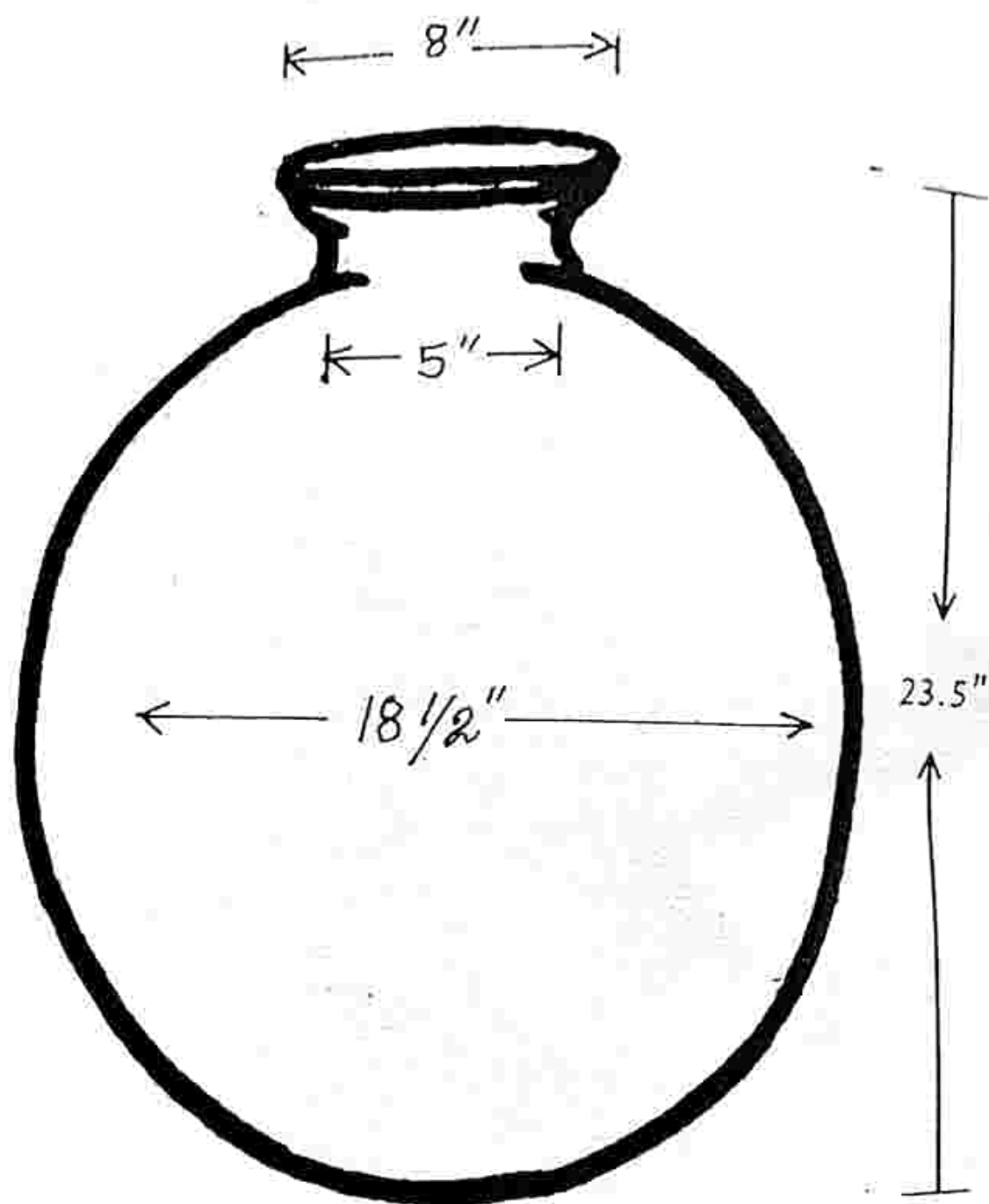
165. मृदभांड रेखाचित्र (दामोदरपुर)

भोजपरौल

आध्यात्मिक दृष्टि से मिथिला का प्रसिद्ध तीर्थ–स्थान कपिलेश्वर, जहाँ कपिल मुनि द्वारा स्थापित शिवलिंग है, वहाँ से दक्षिण–पश्चिम दिशा में मात्र पाँच कि0 मी0 की दूरी पर ब्राह्मण बहुल एक गाँव है, भोजपरौल । इस गाँव की यही दूरी दरभंगा जिला के केवटी प्रखण्ड मुख्यालय से भी पश्चिमोत्तर दिशा में पड़ती है । प्राचीन उपलब्ध अभिलेख में भी इस गाँव का नाम यही है । लेकिन अब यहाँ के वासी इसे भोज–पंडौल कहते हैं और राजा भोज तथा पांडवों से इसका सम्बन्ध जोड़ते हैं । यहाँ की नवीन आबादी पन्द्रहवीं शताब्दी के बाद की है । इससे पूर्व यह स्थान खण्डहर रहा था जिसके अनेकों प्रमाण यहाँ उपलब्ध हैं और जिसकी चर्चा मैं करने जा रहा हूँ, वह तो सबसे बड़ा प्रमाण है ।

यह गाँव उपजाऊ भूमि के विस्तृत खण्ड के मध्य बसा है । जहाँ अभी आबादी बढ़ रही है, वह स्थान सबसे ऊँचा है । यह लम्बे समय तक जंगल के रूप में रहा था, जिसके चिह्न अभी भी देखे जा सकते हैं । कभी एक विशाल नदी इसके निकट से बहती थी, वह भी कुछ अवशेष यहाँ छोड़ गई हैं । यहाँ का देवस्थान सबसे ऊँचे स्थान पर और गाँव के दक्षिण एक प्राचीन तालाब के दक्षिणी–पश्चिमी भिण्डे पर अवस्थित है । यह देवस्थान नया–नया उभरा है । यहाँ भगवान सूर्य, गणेश, उमामहेश्वर और भगवती की प्राचीन मूर्त्ति स्थापित हैं । आबादी के प्रारम्भ से ये मूर्त्तियाँ यहाँ स्थापित नहीं हैं । वर्षा के समय कुछ मिट्टी तो बहती ही है । इसी तरह कुछ मिट्टी के बहने के कारण एक प्राचीन पेड़ की जड़ में भगवान सूर्य का उदय हुआ और जब उदय हुआ तो उजाला फैलता ही गया । इसके बाद इस पेड़ की जड़ से और तीन मूर्त्तियाँ बाहर आईं । ये सभी मूर्त्तियाँ कसौटी पत्थर की और एक ही काल तथा शिल्प की

हैं । ये सभी मूर्त्तियाँ आठवीं–नवी शताब्दी की लगती है । मेरा अनुभव कहता है कि एक और मूर्त्ति यहाँ मिट्टी के नीचे दबी पड़ी है जो विष्णु की हो सकती है ।

इन सभी मूर्त्तियों में सबसे बड़ी मूर्त्ति है भगवान सूर्य की । लेकिन यह आंशिक रुप से क्षतिग्रस्त है । उमामहेश्वर की कई मूर्तियाँ मुझे मिथिला में मिली हैं । इन मूर्त्तियों में अधिक संख्या हैं कर्णाट–काल की । इससे पूर्व की तीन मूर्त्तियाँ अन्यत्र उपलब्ध हैं, जो कालक्रम से इस प्रकार है – सिमरिया भिण्डी, डोकहर और इसके बाद भोजपरौल । सिमरिया–भिण्डी की मूर्त्ति गुप्तकाल से पूर्व की हैं । डोकहर की मूर्त्ति गुप्तकाल की और भोजपरैल की मूर्त्ति पालकालीन लेकिन मिथिला–शैली की । यहाँ की भगवती की मूर्त्ति उच्चैठ और भंडारिसम की मूर्त्ति की अनुकृति है । भंडारिसम की भगवती वाणेश्वरी तो कुछ भिन्न लगती भी हैं, लेकिन उच्चैठ की भगवती की तो यह बिल्कुल ही अनुकृति है । शिल्प की दृष्टि से दोनों ही समतुल्य हैं । चतुर्भुज गणेश की मूर्त्ति भी समकालीन ही और एक ही प्रकार के शिल्प की है ।

166. गणेशमूर्त्ति (भोजपरौल)
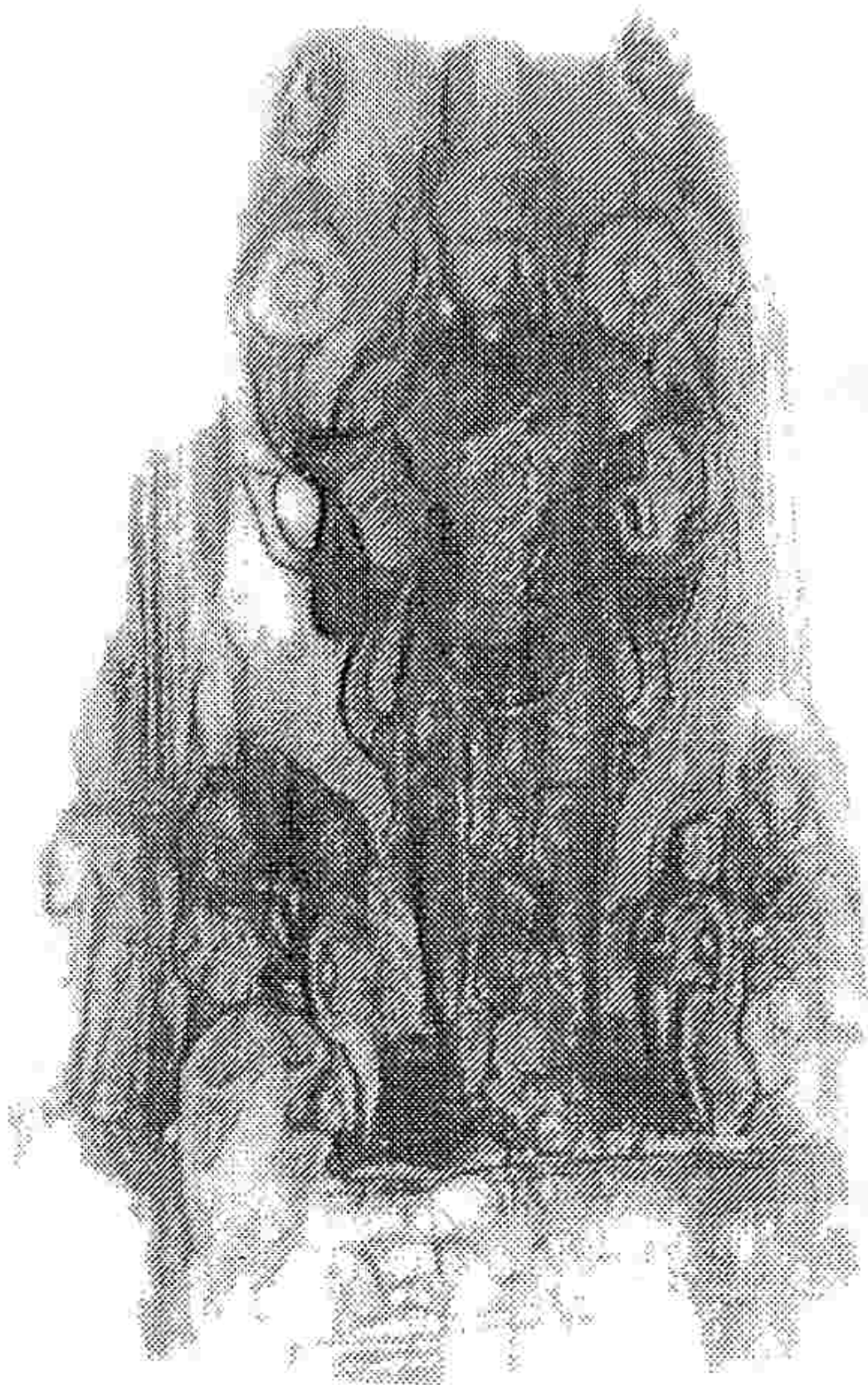
167. सूर्य–मूर्त्ति (भोजपरौल)

168. उमामहेश्वर (भोजपरौल)
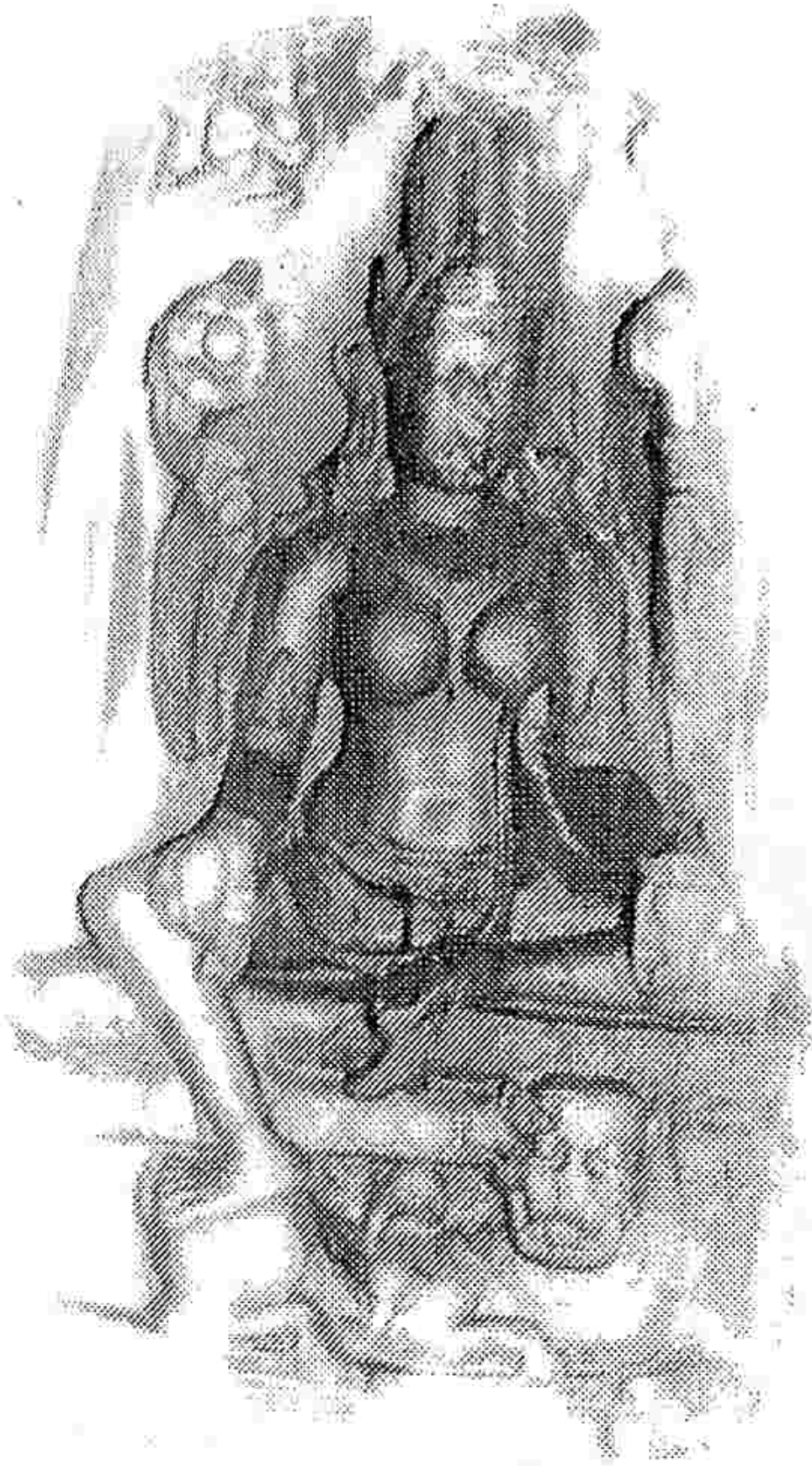
169. भगवती (भोजपरौल)

अकौर

बेनीपट्टी अनुमंडल के कई पुरातात्विक–स्थानों, यथा– गिरिजा–स्थान, उच्चैठ, कपिलेश्वर स्थान, भोजपारौल और दामोदरपुर की चर्चा हुई है । लेकिन इनमें से कहीं भी विष्णु–मूर्ति उपलब्ध नहीं हैं । इन सभी स्थानों की विष्णु–मूर्त्तियाँ कभी अकौर में किसी गुप्त परामर्श के लिये एकत्र हुई थीं और यह स्थान उन सबों को इतना अच्छा लगा कि सबके सब यहीं के होकर रह गये । मधुबनी जिला और बेनीपट्टी अनुमंडल का यह गाँव अनुमंडल–मुख्यालय से पूर्वोत्तर दिशा में करीब 5 कि0 मी0 दूर एक ऊँचे स्थान पर बसा है । यहाँ भगवान विष्णु की पाँच मूर्त्तियाँ विभिन्न काल की, लेकिन सबके सब प्राचीन हैं । गुप्तकाल से लेकर कर्णाट–काल तक की मूर्त्तियाँ यहाँ एक ही स्थान में उपलब्ध है । इन मूर्त्तियों के अतिरिक्त एक अर्धनिर्मित अष्टदल कमल भी है जो किसी कारण से पूरा नहीं किया जा सका ।

यहाँ एक ही जगह गाँव से दक्षिण देवस्थान दो खण्डो में बँटा है जो दायें–बायें क्रमशः दक्षिण और उत्तर है । दक्षिण के खण्ड में एक फूस की छाया में अर्धनिर्मित अष्टदल कमल और गुप्तकालीन भगवान विष्णु की एक खण्डित मूर्त्ति है । यह भाग है भगवती स्थान का । एक पालकालीन विष्णु–मूर्त्ति–पीठिका का बुरी तरह खण्डित अंश, खुले आकाश के नीचे इसके प्रांगण में ओसारे की आड़ लेकर खड़ी है । यह स्थान है भगवती का, जो पिंडरूप में हैं । यहाँ विष्णु की उपस्थिति गौण है और मेरी उपस्थिति में यहाँ बलि प्रदान हुआ था । अर्थात् इस खण्ड में विष्णु मूर्त्तियों का पुरातात्त्विक महत्त्व है, आध्यात्मिक नहीं ।

उत्तर का खण्ड विष्णुलोक है । यहाँ एक कोठा दो खण्डों में विभक्त है । दक्षिण के खण्ड में भगवान विष्णु की दो मूर्त्तियाँ और उत्तर के खण्ड में भगवान विष्णु की एक मूर्त्ति स्थापित है । प्रथम खण्ड की दोनों ही मूर्त्तियाँ आंशिक रूप से खण्डित हैं । एक मूर्त्ति के दोनों हाथें और दूसरी के चारों हाथ खण्डित हैं । ये दोनों मूर्त्तियाँ **बेलदरबा** नामके तालाब के भिण्ड में 1972 ई0

में पाई गई थीं । मुशहरों द्वारा चूहे की खोज में ये मूर्तियाँ मिलीं । इस कोठा के दूसरे खण्ड में भगवान विष्णु की एक अखण्ड मूर्ति, जिसका आकार है, 56"X36" ईंच, स्थापित यह मूर्त्ति, स्थापित स्थान के निकट उत्तर ही तब मिली थीं जब कुछ बच्चे गोली खेल रहे थे और बारबार कई गोलियाँ एक छेद में, पहुँच कर गुम हो जाया करती थी । जब यह छेद खोदा गया तो भगवान विष्णु की यह मूर्त्तियाँ मिली । यहाँ की तीनों ही विष्णु–मूर्त्तियाँ कर्णाटकाल की और मिथिला–शैली की हैं ।

गाँव से दक्षिण सबसे ऊँचा स्थान है यह देवस्थान । यहाँ प्राचीन तालाब भी हैं और स्थान के दक्षिण, निकट ही एक पेड़ के नीचे मैंने कसौटी पत्थर की अनगढ़ एक शिला भी उभरी देखी थी । इस देव–स्थान के निकट दक्षिण पुरातात्त्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण लगने वाले एक विस्तृत आवासीय स्थान में आम का बगीचा दूर तक फैला हुआ है ।

एक ही स्थान में पाँच विष्णु–मूर्त्तियों का पाया जाना कोई साधारण घटना नहीं है । यह विगत समय में घटे कई महत्त्वपूर्ण घटनाओं की ओर संकेत करता है । ये घटनायें प्राकृतिक आपदा के अतिरिक्त राजनीतिक और धार्मिक विद्वेष भी हो सकी हैं । यहाँ के खण्डहरों की खुदाई से यहाँ और भी बहुत कुछ प्राप्त किये जा सकते हैं ।

170. विष्णुमूर्त्ति (अकौर) – 'क'
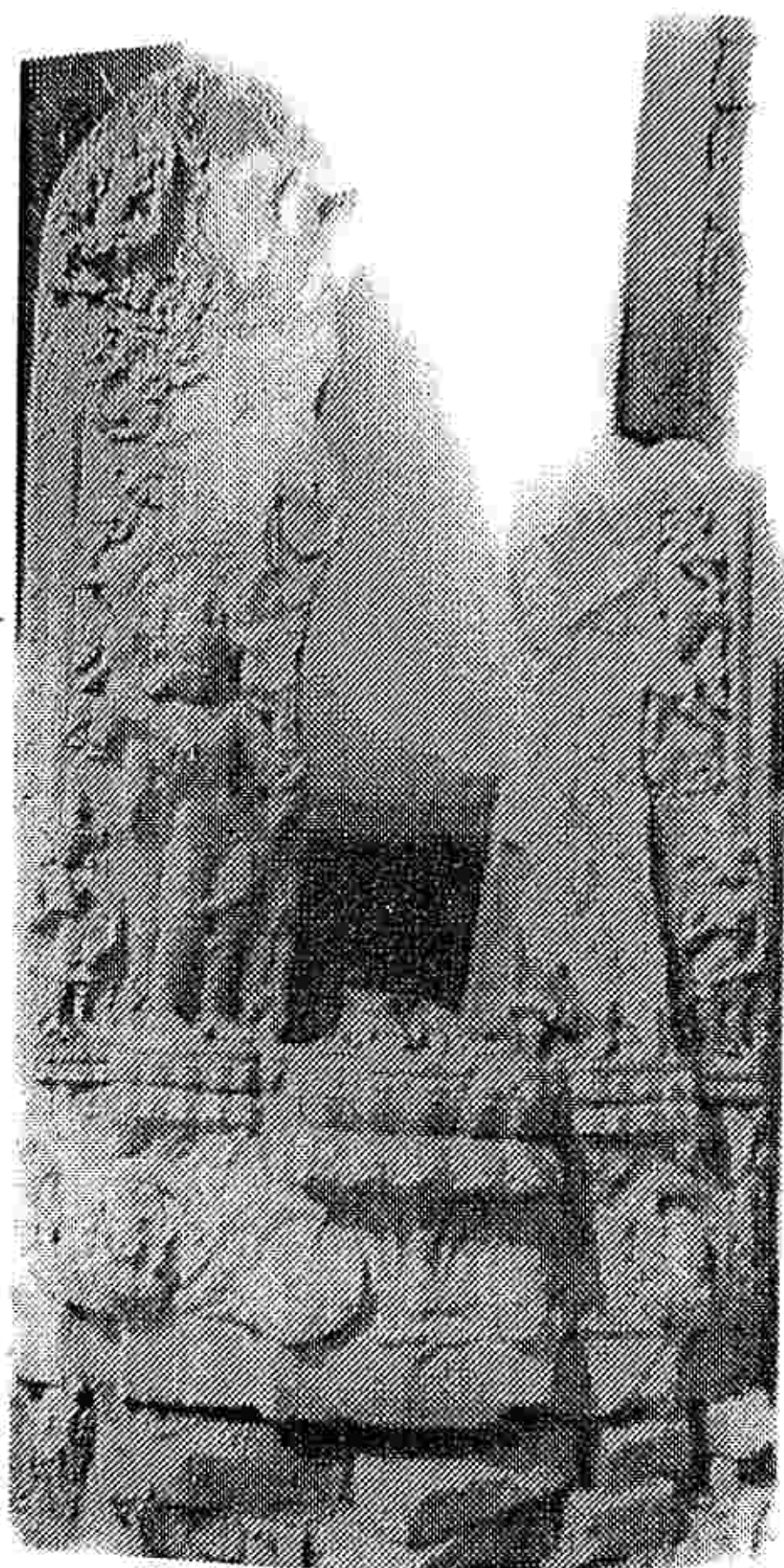
171. विष्णुमूर्त्ति (अकौर) – 'ख'
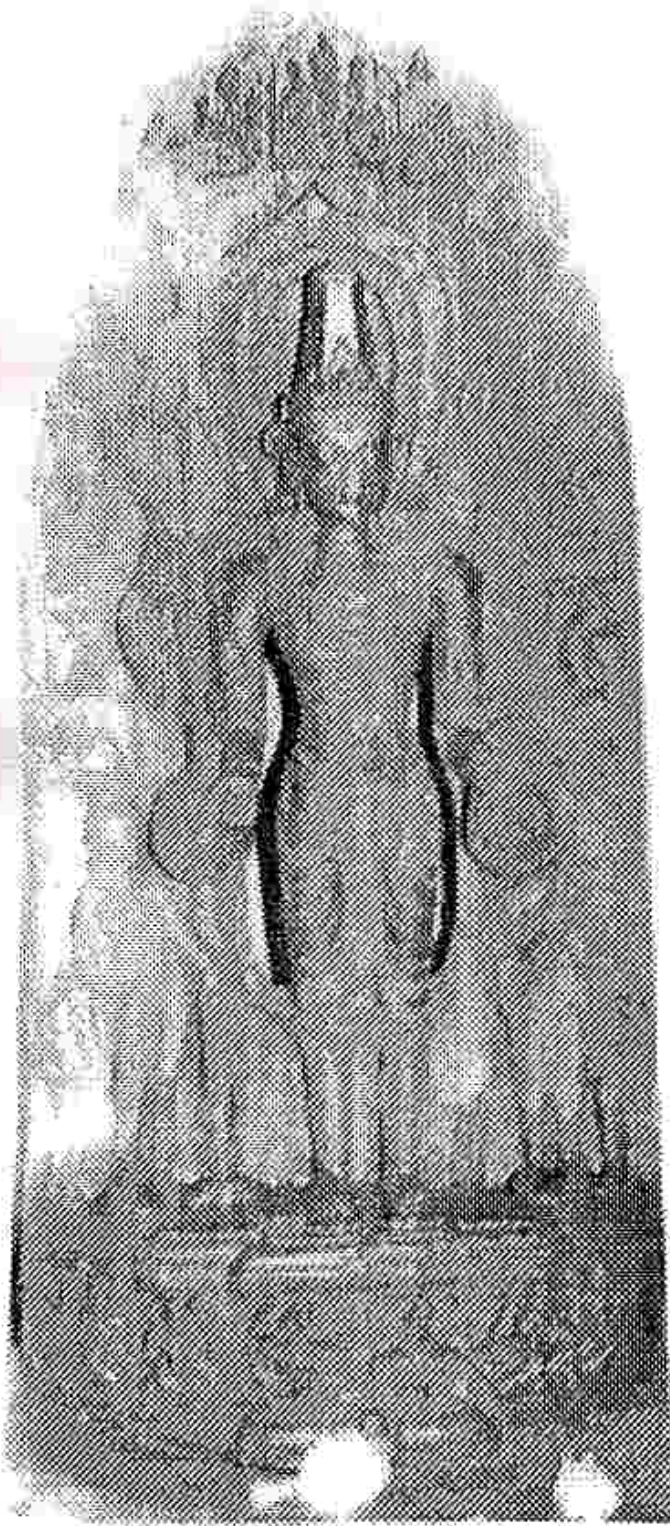
172. विष्णुमूर्त्ति (अकौर) – 'ग'
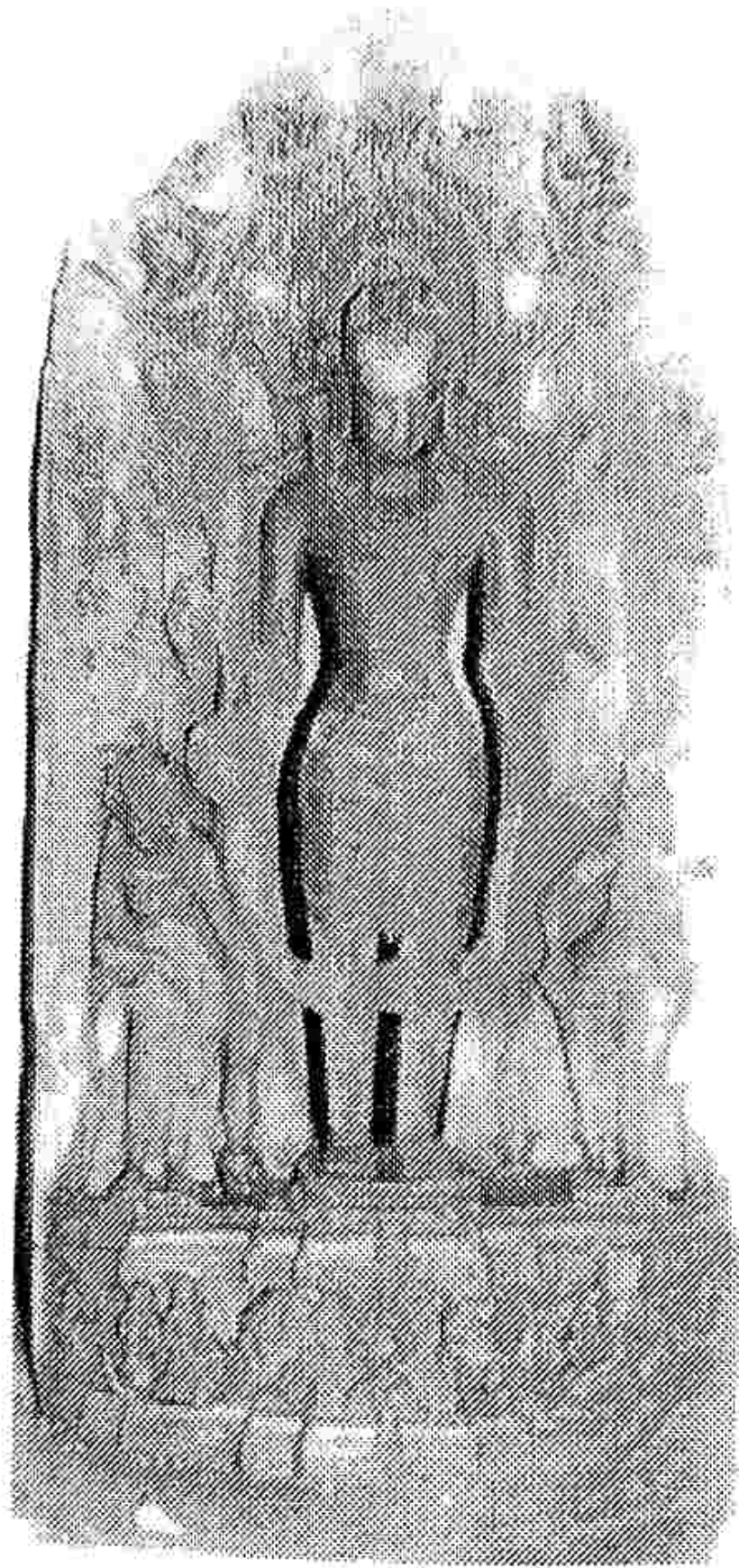
173. विष्णुमूर्त्ति (अकौर) – 'घ'
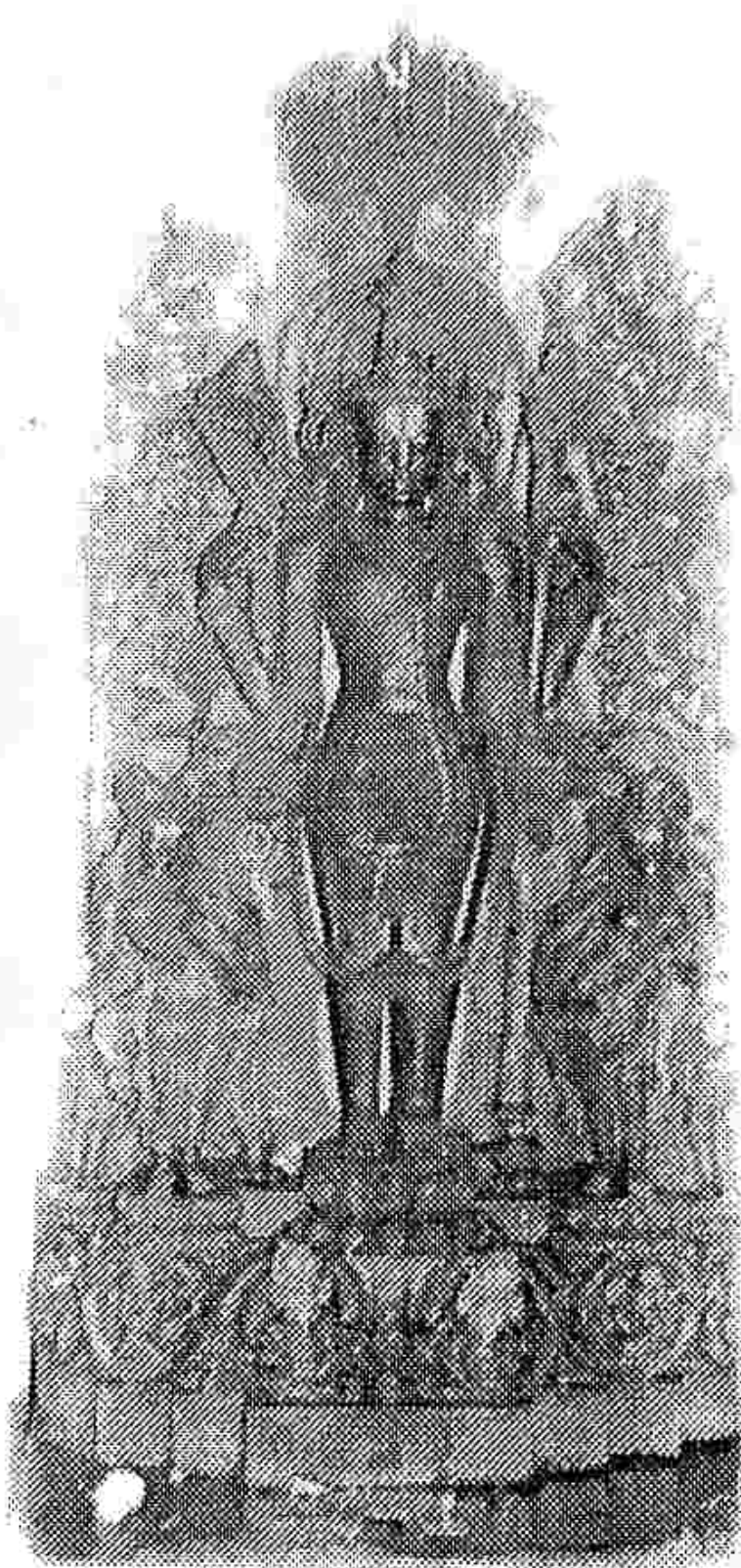
174. विष्णुमूर्त्ति (अकौर) – 'ङ'

175. अष्टदल कमल (अकौर)

डोकहर

मधुबनी जिला मुख्यालय से उत्तर करीब 12 कि0 मी0 दूर, एक विस्तृत निर्जन–स्थान में एक मंदिर, कुछ आवास पुजारियों के और कुछ पूजा के सामानों की दुकाने, यही पहचान है इस स्थान की । डोकहर नामक गाँव यहाँ से कुछ दूर पूर्वोत्तर दिशा में है । यह क्षेत्र इसी गाँव का है, अतः इसे डोकहर कहा जाता है । यहाँ एक 33X15 ईंच की उमामहेश्वर की मूर्त्ति गुप्तशैली की हैं । यह मूर्त्ति और दो शिलालेख अट्ठारहवीं शताब्दी के प्रथम दशक में यहीं स्थित एक बिन्दुसर नामक तालाब में मिले थे । यह तालाब एक प्राचीन–नदी–अवशेष पर खुदा है । मूर्त्ति और शिलालेख मिलने के बाद खण्डवला–वंश के राजा राघव सिंह के चौथे भाई नन्दन सिंह द्वारा एक मंदिर, जिसे राजेश्वरमठ कहा जाता है, बनबा दिया गया जो अभी तक यथावत है । इस मंदिर के मुख्य द्वार पर दीवाल में शिलालेख जड़ दिया गया । यह शिलालेख अभी तक अपाठ्य है । एक शिला तो बिल्कुल ही घिस चुकी है जिसका पठन अब सम्भव नहीं है ।

एक छोटी मूर्त्ति काली की भी यहाँ मंदिर से बाहर देखने को मिली । इस मूर्त्ति की प्राप्ति के सम्बन्ध में जानकारी नहीं मिली । मूर्त्ति पहाड़ी शैली की है । पुरातात्त्विक दृष्टि से उस स्थान का महत्त्व बढ़ जाता है, जहाँ मूर्त्ति मिली है । यदि स्थान निश्चित नहीं हो तो या तो मूर्त्ति महत्त्वहीन हो जाती है या इसका महत्त्व घट जाता है । उमामहेश्वर की अभी तक मुझे चौदह मूर्त्तियाँ मिथिला में मिली हैं । इनमें से सिमरिया भिण्डी की मूर्त्ति इसवी सन् के प्रारम्भ या इससे पूर्व की हैं । इसके बाद डोकहर की मूर्त्ति का ही स्थान है । कला की दृष्टि से यह मूर्त्ति अद्वितीय है । कला के कई मानक हैं, शिल्प, सौदर्य, संतुलन आदि–आदि । शरीरिक सौष्ठव, भाव की पूर्णता न्युनतम अलंकरण की दृष्टि से मैं इसे सर्वश्रेष्ठ मानता हूँ । लेकिन क्या यह मूर्त्ति यहीं मिली थी ? मंडरौनी गाँव जो मधुबनी के निकट ही है और यहाँ भी एक उमामहेश्वर की

मूर्त्ति बारहवीं शताब्दी की है । इनके सम्बन्ध में मुझे यहाँ पता चला कि वस्तुतः डोकहर की मूर्त्ति जो वहाँ मिली थी, मंगरौनी वाली मूर्ति है और डोकहर की मूर्त्ति कही और मिली थी जो मंदिर बनाने के समय व्यक्ति विशेष द्वारा बदल दी गई । लेकिन शिलालेख के साथ यह दन्तकथा मेल नहीं खाती है ।

अभी तक मिथिला भारतीय पुरातत्त्व विभाग द्वारा पूर्णतः उपेक्षित रही है । यहाँ आये दिन प्राचीन मूर्त्तियाँ निकलती ही रहती हैं और इनमें से कुछ अखवारों की सुर्खियों में भी पहुँचती हैं । संवाददाता मूर्त्ति विशेषज्ञ और पुराविद् नहीं होते । इस अवस्था में उसकी प्रत्येक त्रुटि अनदेखी की जा सकती है । लेकिन शीर्षस्थ पुरातात्त्विक अधिकारी से इस प्रकार की उम्मीद नहीं की जा सकती । इस प्रकार के मूर्त्ति–विषयक समाचार के लिये मूर्त्ति का फोटोग्राफ, प्राप्ति स्थान का निश्चित पता, आकार, तिथि और प्राप्ति की परिस्थिति का होना आवश्यक है । तीन जुलाई, 2001 ई0 को एक सामाचार पत्र में इस प्रकार का एक लेख (समाचार) मुद्रित हुआ है । इस लेख में एक तत्कालीन पुरातत्त्व निदेशक, दो भूतपूर्व पुरातत्त्व निदेशक और एक सचिव, बिहार इतिहास परिषद का नाम है । तीन कालम के इस लेख में है– **''बसुदेवा गाँव में उमा महेश्वर की मूर्त्ति काले पत्थर की और पालकालीन पन्द्रहवीं शदाब्दी की मिली । यह स्थान रोसड़ा प्रखण्ड में यहाँ से 17 कि0 मी0 दूर (आकाश, पाताल, उत्तर–दक्षिण आदि–आदि कुछ भी नहीं) है । परोरिया भरिहर में भी विष्णु की मूर्त्ति मिली थीं । पुरातत्त्व की दृष्टि से यह क्षेत्र महत्त्वपूर्ण है । कई मूर्त्तियों में प्राचीन देवनागरी लिपि में अभिलेख भी है ।''** इसकी खूबी यह हैं कि यह सर्वेक्षण–सूचना है । इस स्थिति में मंगरौनी में जो भ्रन्तियाँ उत्पन्न की जा रही हैं, वह उचित नहीं । इससे किसी स्थान विशेष या मिथिला को लाभ नहीं मिलेगा ।

176. उमामहेश्वर (डोकहर)
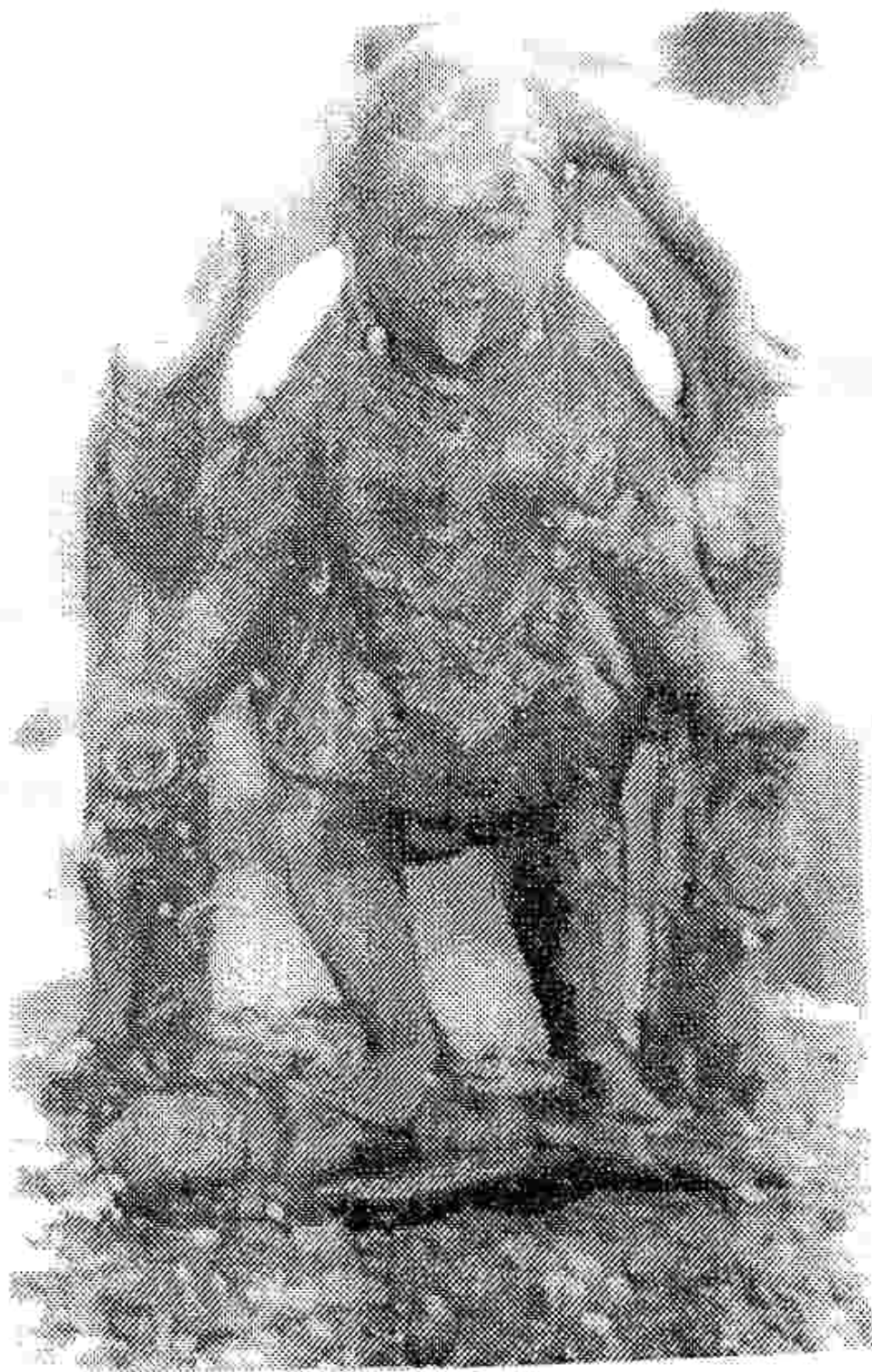
177. काली (डोकहर)

178. शिलालेख (डोकहर)

सौराठ

सौराठ एक ऐसे स्थान का नाम है जिसके साथ मैथिलों का भावनात्मक ही नहीं, सांस्कृतिक सम्बन्ध भी सैकड़ों वर्षों से जुड़ा हुआ है । रहिका मधुबनी जिला का एक प्रखण्ड है । इसके मुख्यालय से मात्र दो कि0 मी0 पूर्वोत्तर दिशा में है सौराठ ग्राम । सौराठ ग्राम से सटे पश्चिम एक विस्तृत भूभाग में एक शिवालय, एक धर्मशाला और शिवालय के निकट ही एक तालाब भी है । इसके अतिरिक्त यहाँ दूर–दूर तक आम का बागीचा फैला हुआ है जिसमें मैथिलों की विशेष सभा लगती हैं ।

शिवालय, धर्मशाला और तालाब के निर्माण का कार्य महाराजा माधेश्वर सिंह (खण्डवला–वंश) के समय में प्रारम्भ हुआ था । लेकिन यह पूर्ण हुआ महाराजा छत्रसिंह के समय में जिसकी विस्तृत चर्चा यहाँ अवस्थित शिवालय–शिलालेख में हैं । इस स्थान को मैथिली में **सभागाछी** भी कहा जाता है । मैथिल ब्राह्मण और कायस्थ में मूल, गोत्र के विचार के बाद ही विवाह–संस्कार सम्पन्न होता है । यह परम्परा कर्णाट काल से ही चली आ रहा है । इसका विधिवत दास्तावेज यहाँ उपलब्ध है, जिसे **पंजी** कहा जाता है । वैवाहिक अवसर पर प्रतिवर्ष यहाँ एक या दो बार सभा लगती है । इस सभा में देश ही नहीं विदेश वासी मैथिल–ब्राह्मण यहाँ आते हैं । महाराजा माधव सिंह के समय यह सभा समौल गाँव के पास लगा करती थी । कुछ व्यवधान के कारण इसे स्थानान्तरित कर सौराठ लाया गया जो तब से निरन्तर चली आ रही है ।

सौराठ ग्राम से उत्तर एक शिवालय है जिसे सोमनाथ कहा जाता है । यह शिवालय एक श्मसान में पहले था जो अब गाँव का ही एक अंग बन चुका है । यहाँ मुझे तीन प्राचीन पाषाण प्रतिमायें देखने को मिली । एक उमा महेश्वर की खण्डित मूर्त्ति, एक गणेश की मूर्त्ति और एक शिरोभाग जो विष्णु

या सूर्य की मूर्ति का अंश है । गणेश की मूर्ति बारहवीं शताब्दी से पूर्व की है लेकिन उमामहेश्वर की मूर्ति और मूर्ति का शिरोभाग मिथिला शैली और बारहवीं शताब्दी के हैं । यहाँ के पुजारी से मुझे पता चला कि इस मंदिर का शिवलिंग ही नहीं प्रत्येक प्राचीन मूर्तियाँ भी कहीं न कहीं बाहर से लाई गई है । यथा– उमामहेश्वर की मूर्त्ति और शिरोभाग मूर्त्ति अंश, **बासोपट्टी के बभनदेई नामक तालाब** में मिले थे ।

179. शिवालय (सौराठ)

180. गणेशमूर्त्ति (सौराठ)
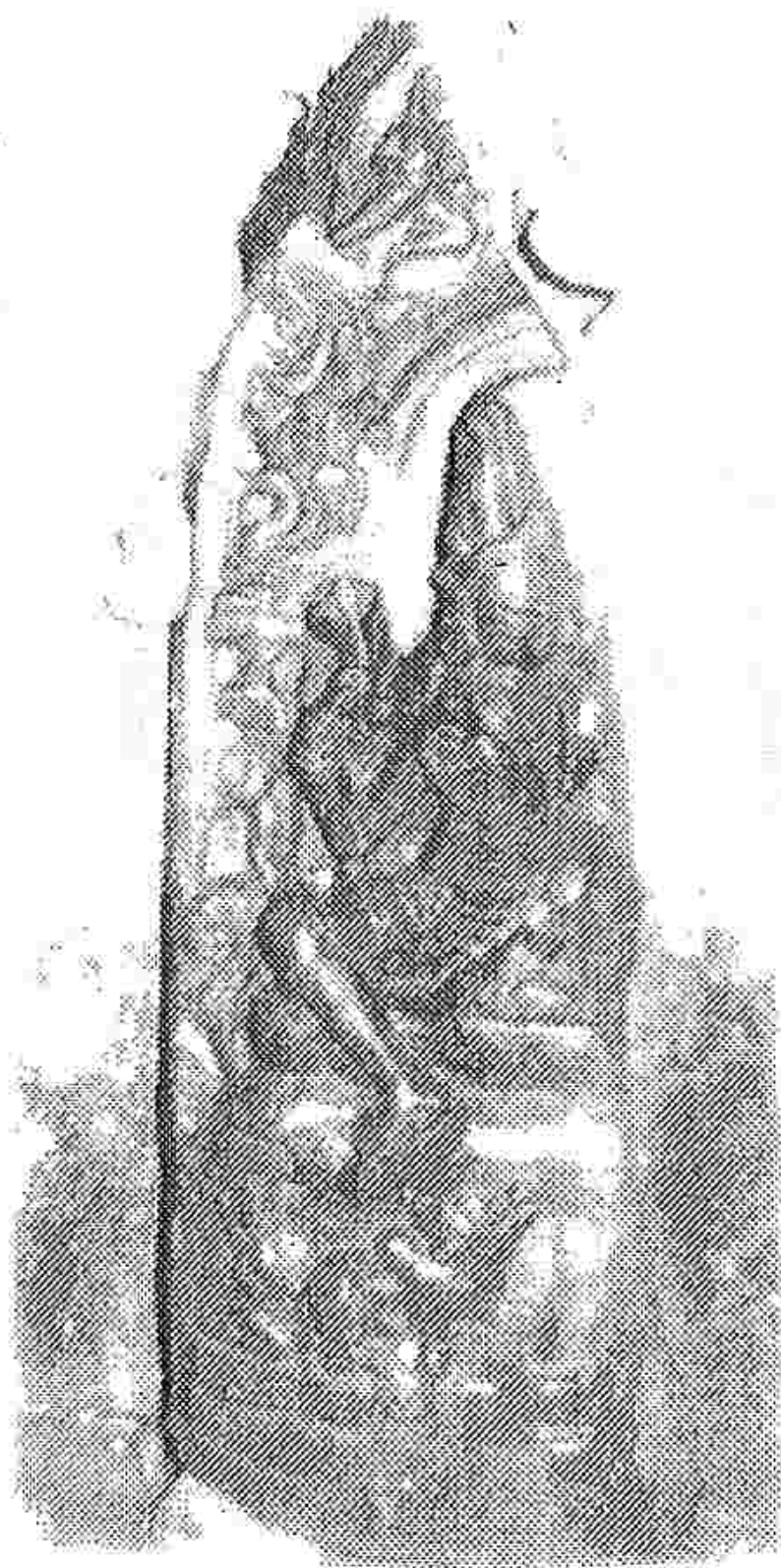
181. उमामहेश्वर (सौराठ)

182. मूर्त्ति शिरोभाग (सौराठ)

मडरौनी

मधुबनी जिला मुख्यालय से मात्र चार कि0 मी0 पूर्वोत्तर दिशा में मिथिला का एक प्रसिद्ध गाँव है मडरौनी । प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं में सबसे अधिक ख्याति यहाँ **बूढ़ी माई** की है जो मुझे पुजारी की अनुपस्थिति के कारण देखने को नहीं मिली । यह स्थान गाँव के मध्य है । गाँव के प्रारम्भ में ही (दक्षिण–दिशा) एक स्थान है **एकादश रुद्र–स्थान** । यहाँ छोटे–बड़े कुल ग्यारह शिवलिंग (**शिव, महादेव (रुद्र), शंकर, नील, लोहित, ईशान, विजय, भीम, देवाधिदेव, भवोदय और कपालि**) एक ही चबूतरे पर सजे हैं । ये शिवलिंग इस स्थान को बाबु जगदीश नन्दन सिंह (मधुबनी डेवढ़ी) के द्वारा दान में मिला था । यहाँ और भी कई छोटे–छोटे, धातु और पत्थर की मूर्त्तियाँ एक प्रकोष्ठ में सजी हैं, ये मूर्त्तियाँ भी मधुबनी डेवढ़ी से ही इस स्थान को मिली थीं ।

मधुबनी डेवढ़ी से मिली उमामहेश्वर की भव्य मूर्त्ति जो बारहवीं शताब्दी और मिथिला शैली की हैं, दर्शनीय है । इस मूर्त्ति की चर्चा **डोकहर** शीर्षक के अन्तर्गत भी हुई है और कहा जाता हे कि यह मूर्त्ति वहीं की है । यहाँ एक गणेश की भी मूर्त्ति थी जो चोरी चली गई और गणेश के स्थान पर चोर ने दो ऐसी शिला रखीं जो प्राचीन हैं और तन्त्र–मन्त्र से सम्बन्धित है।
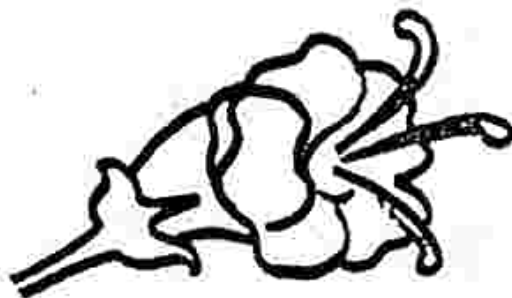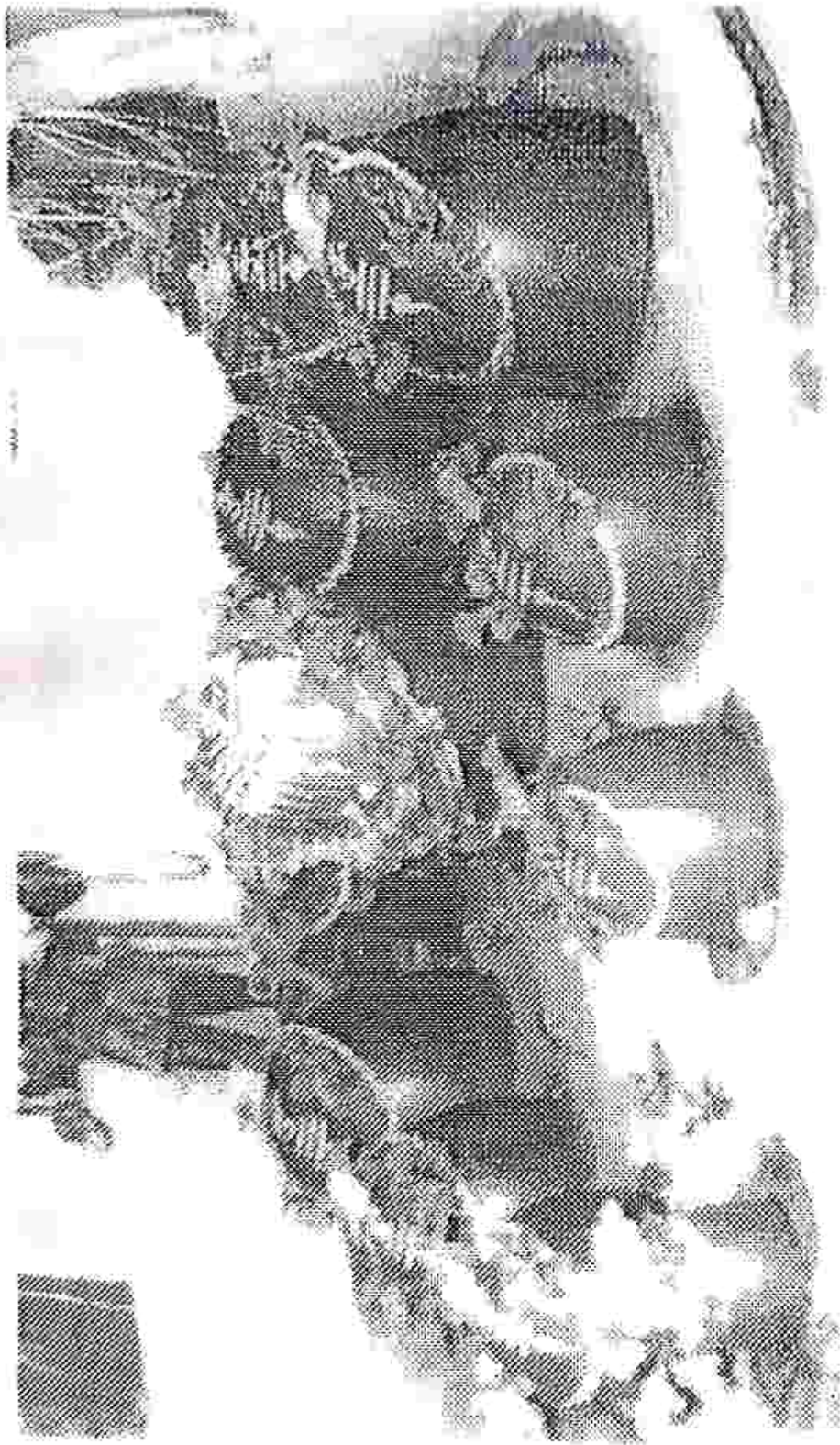
183. एकादश रुद्र (मडरौनी)
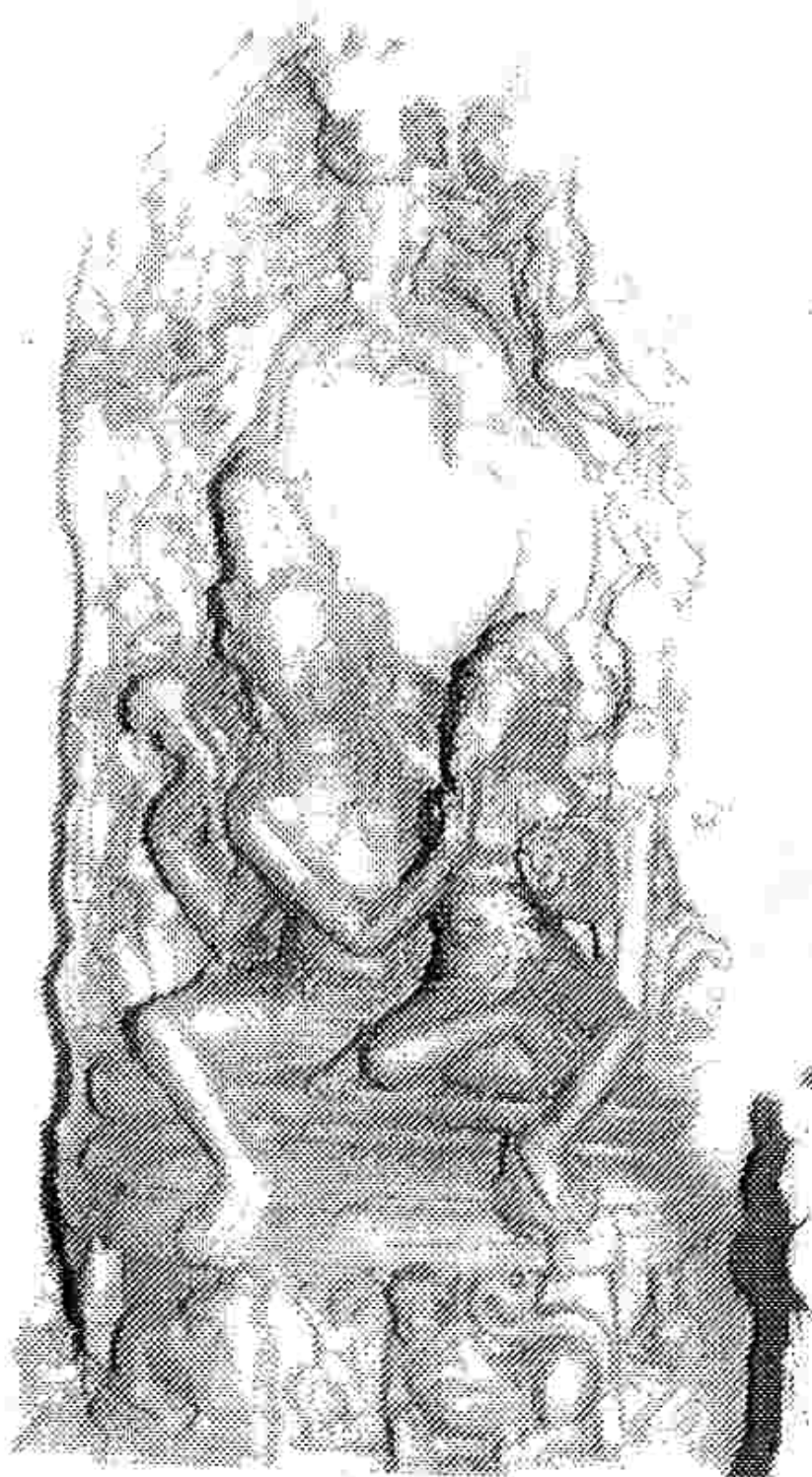
184. उमामहेश्वर (मडरौनी)
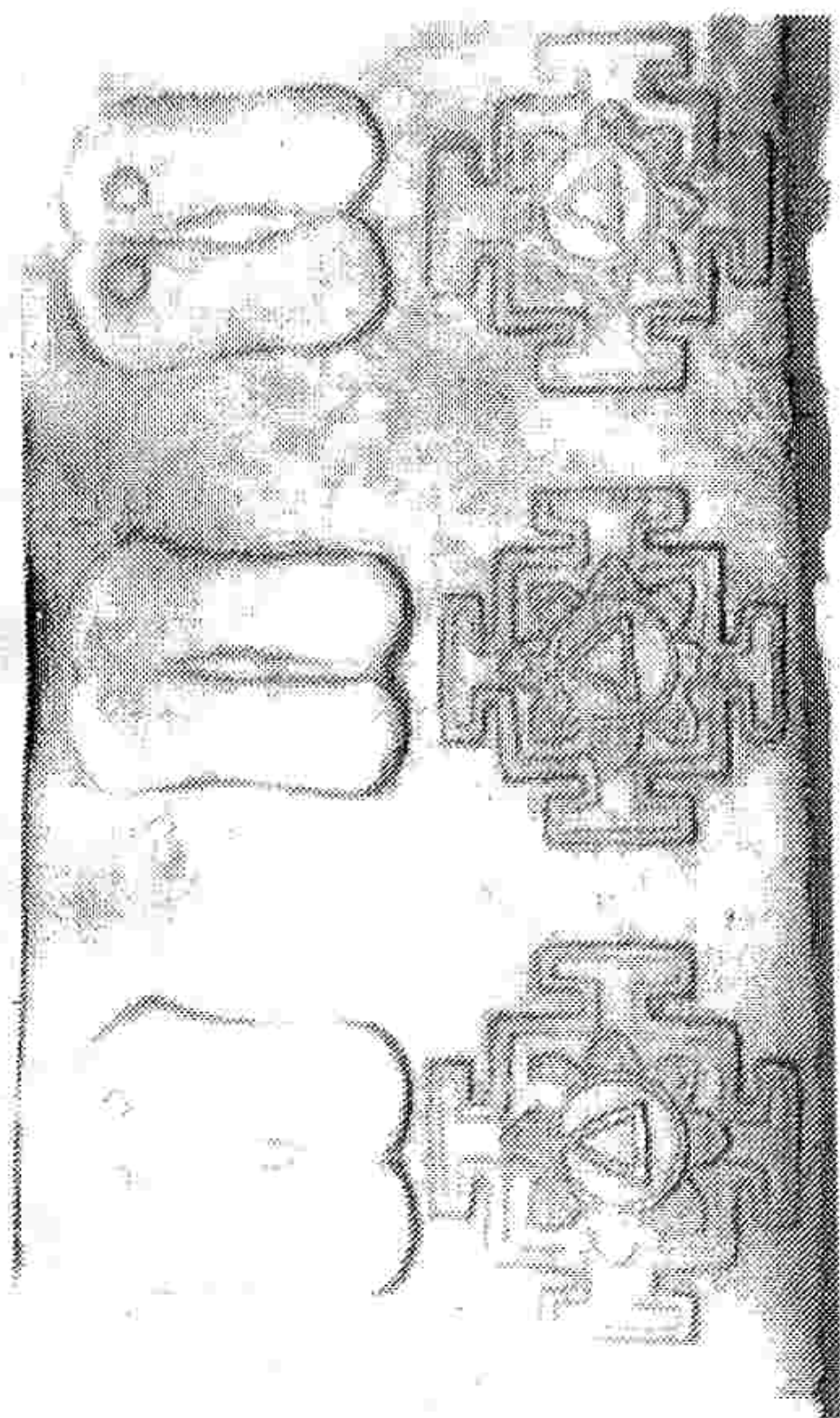
185. अष्टदल यंत्र (मडरौनी)

कोइलख

मधुबनी जिला मुख्यालय से करीब 13 कि0 मी0 दूर पूर्व की ओर एक गाँव है कोइलख । कभी यह गाँव मैथिल संस्कृति की दृष्टि से विख्यात गाँव था । लेकिन पहले जितना ही यह विख्यात था आधुनिक युग के साथ पाँव में पाँव मिलाकर चलने में उतना ही पिछड़ गया है । यहाँ शिक्षित ही नहीं विद्वान की भी कमी नहीं है और वह भी विविध विषयों में । लेकिन धर्म के अर्थ मे सब के सब अन्धे नहीं तो अधिकांश को अन्धा ही कहा जा सकता है । ज्ञान–चक्षु से धर्म को परखने के लिये यहाँ के लोगों को अभी कई पीढ़ियाँ लगेंगी । यहाँ के पुजारी ही नहीं, 1999 ई0 के कथित ग्राम मुखिया भी मूर्त्ति को मूर्त्ति रूप में देखने देने को देवी का अपमान समझता है। इसके लिये यदि उन शब्दों का प्रयोग किया जाय जो मुखियाजी के मुँह से निकला था तो इस गाँव के लिये यह बहुत ही अपमान जनक होगा । अतः वह शब्द अव्यक्त रखना ही उचित है ।

यहाँ एक भव्य भगवती स्थान है । इस स्थान में एक आधुनिक मंदिर में प्राचीन भगवती स्थापित हैं । मूर्त्ति कितनी प्राचीन है, खण्डित है या अखण्ड, प्राचीन मूर्त्ति हैं भी या नहीं, जिस स्थिति में मूर्त्ति प्रदर्शित है, इन बातों के सम्बन्ध में कुछ भी लिख पाना असम्भव है । इस स्थान की आध्यात्मिक ख्याति पहले ही फैली हुई है । मिथिला तत्त्वविमर्श में इस देवी को भद्रकालिका और कोकिलाक्षी कहा गया है । मूर्त्ति चोरों का एक गिरोह मिथिला में पहले से ही सक्रिय है । हो सकता है प्राचीन मूर्त्ति बदल दी गई हो जिसकी जानकारी प्रमुख लोगों को हो और आध्यात्मिक साख बचाने के लिये मूर्त्ति को मूर्त्ति–रूप में अन्य को दिखाने की मनाही का एक सिद्धान्त बना लिया गया हो । पाषण्ड हो या चातुर्य, कहीं न कहीं किसी प्रकार की गड़बड़ी यहाँ है जरुर ।
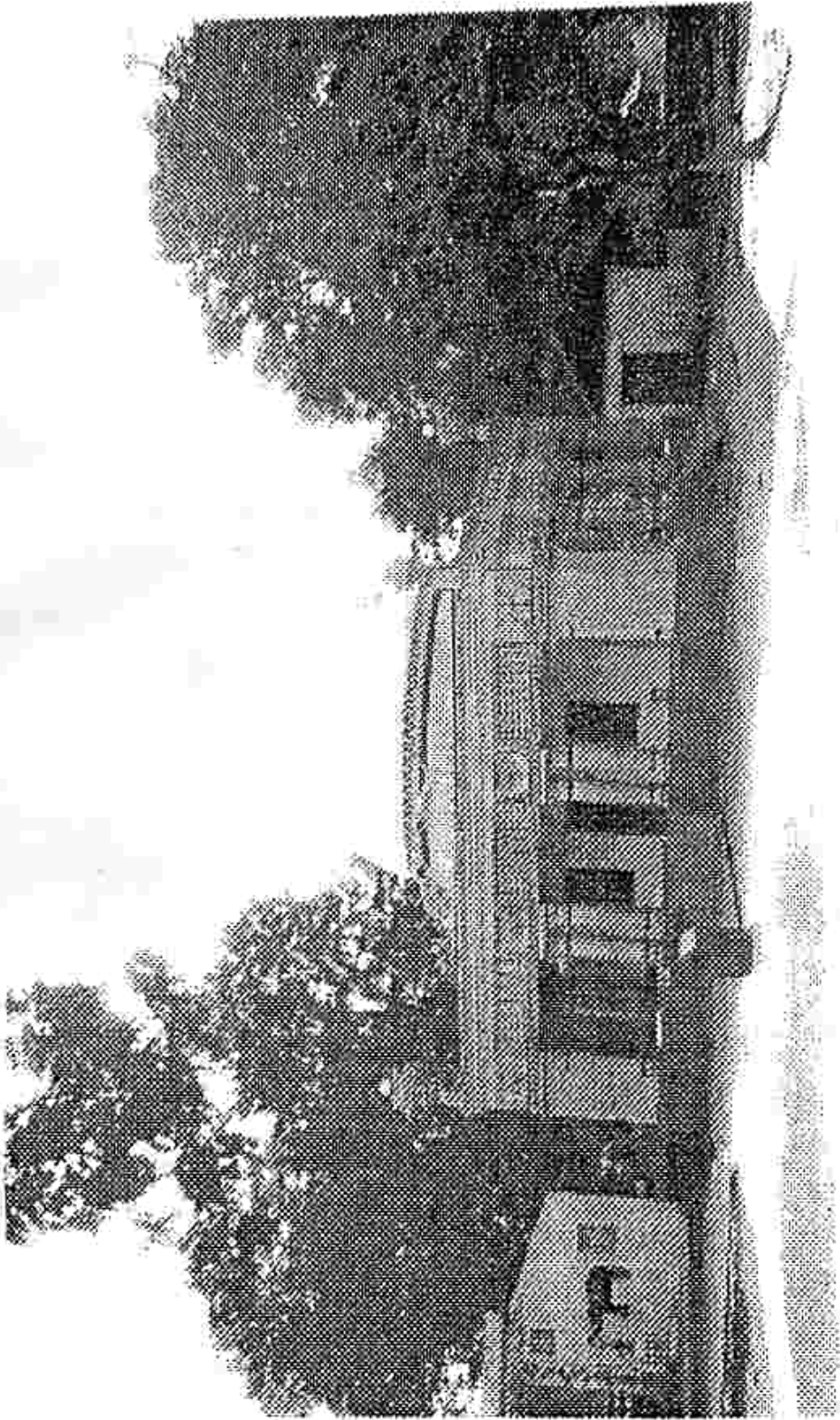
186. भगवती मंदिर (कोईलख)

भगवतीपुर नाहर

मधुबनी जिला मुख्यालय से पूर्व की ओर करीब 12 कि0 मी0 दूर और कोइलख से करीब दो कि0 मी0 दक्षिण एक छोटा बाजार है भगवतीपुर । इस बाजार से सटे दक्षिण (अभिन्न) एक गाँव भी है जिसे नाहर कहा जाता है । भगवतीपुर में यहाँ के तालाबों से जहाँ दो सूर्य मूर्त्ति और विष्णु मूर्त्ति बहुत पहले ही मिली थी, वहीं वर्ष 2001 ई0 में नाहर में एक महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति कुछ ही ईंच मिट्टी के नीचे एक आवसीय स्थान में मिली ।

किसी स्थान में जब प्राचीन पाषाण प्रतिमा स्वतः मिलती हैं तो पुरातात्त्विक दृष्टि से सबसे पहला प्रश्न उठता है कि वह मूर्त्ति वहाँ की है अथवा कहीं और (प्लान्ट किया गया) की । इसके लिये भूमि सर्वेक्षण आवश्यक हो जाता है । भगवतीपुर नाहर प्राचीन आवसीय भूमि है और इसके पश्चिम से एक प्राचीन नदी बहने का अवशेष भी देखा जा सकता है । जब एक ही स्थान पर किसी देवता की दो या इससे अधिक मूर्त्तियाँ मिलती हैं तो यह उस स्थान के विस्तार का संकेत है । भगवतीपुर में दो सूर्य मूर्त्तियाँ मिली हैं, जो प्राचीन काल में जब की ये मूर्त्तियाँ हैं, विस्तृत जनपद की घोषणा करतीं हैं ।

भगवतीपुर

भगवतीपुर एक छोटा बाजार है और यहाँ तक जिला मुख्यालय से पक्की सड़क गई है । इस सड़क से बाजार में प्रवेश करने पर एक भगवती स्थान मिलता है । नाम तो इसका भगवती स्थान है, लेकिन यहाँ राधाकृष्ण और भगवती का मंदिर पास ही है । भगवती मंदिर में तीन कक्ष हैं । मध्य के कक्ष में भगवती और दोनों पार्श्व के कक्ष में दो सूर्य मूर्त्तियाँ । भगवती की मूर्त्ति नवीन हैं या प्राचीन, पुजारी की अनुपस्थिति में मैं यह नहीं जान पाया । बायें पार्श्व में बारहवीं शताबदी से पूर्व की पालकाल और मिथिला शैली की मूर्त्ति हैं । इस मूर्त्ति की आधार–शिला (पीठिका) ऊपर की ओर से कुछ खण्डित हैं । पीठिका सहित कसौटी पत्थर की इस मूर्त्ति की ऊंचाई है 54 ईंच और चौड़ाई 32 ईंच है । दाहिने पार्श्व में कसौटी पत्थर और 64X34 ईंच की भव्य सूर्यमूर्त्ति, कर्णाट काल और मिथिला शैली की हैं । दोनों हाथ केहुनी के पास

से और मुकुट भंग यह सूर्यमूर्त्ति यहीं पारा के एक तालाब में कई दशक पहले मिली थी । इस मंदिर के पीछे है शिवालय और एक प्राचीन अद्‌भुत वृक्ष । इस वृक्ष का निर्माण तीन वृक्षों के संयोग से मंदिर के रूप में हुआ है । यहीं एक दूसरे पेड़ के निकट खण्डित विष्णुमूर्त्ति है जो एक दुसरे तालाब में मिली थीं ।

सूर्य की तीन मूर्त्तियाँ मुझे ऐसी मिली हैं जो मुकुट–भंग है; कम से कम देखने पर तो ऐसा ही लगता हैं । यहाँ की मूर्त्ति के अतिरिक्त विष्णुबरुआर और सबास की मूर्त्ति भी इसी प्राकर की हैं । यह तीनों ही मूर्त्तियाँ विशाल, एक ही प्रकार के पत्थर और एक ही काल की हैं । शिल्प भी तीनों का एक ही है, जैसे एक ही शिल्पी ने उत्कीर्ण किया हो । स्वर्ण–मुकुट पहनाने के लिये यह आकार दिया गया हो, यंह भी सम्भव है ।

नाहर

मैं आभारी हूँ डॉ0 नरेन्द्र नारायण सिंह 'निराला' और डॉ0 वेदनाथ झा का जिनके सहयोग से ही नाहर की मूर्त्ति का मैं सर्वेक्षण कर पाया । यह मूर्त्ति 6 जनवरी, 2001 ई0 को एक आवासीय स्थान पर कुछ ईंच नीचे की गहराई में मिट्टी खोदते समय मिली । मात्र एक सप्ताह बाद मैं इसके निरीक्षण के लिये पहुँचा था । लेकिन मुझे असफल लौटना पड़ा । ठीक कोइलख की परिस्थिति उत्पन्न कर मुझे मूर्त्ति देखने से बंचित रक्खा गया था । अन्तर दोनों स्थानों में यही है कि कोइलख में जहाँ मूढ़ता है, वहीं नाहर में धूर्तता । पाषण्ड को रास्ते पर लाना धूर्तता की अपेक्षा कठिन है ।

नाहर की महिषासुर मर्दिनी कर्णाटकाल और मिथिला शैली की मूर्त्ति हैं । दस भुजाओं वाली कसौटी पत्थर की यह मूर्त्ति अखण्ड है और इसका आकार है, 25X12 ईंच । जहाँ यह मिली थीं, उसी भूखण्ड में दूसरी जगह इस से सटे ही पूर्वोत्तर दिशा में इसे स्थापित किया गया है । जहाँ यह मूर्त्ति मिली थी, इसके नीचे एक और शिला थी जो इस समय इसी मूर्त्ति के निकट, लेकिन ओसारे के बाहर प्रदर्शित एवं पूजित है ।

187. सूर्यमूर्त्ति (भगवतीपुर, नाहर) – 'क'
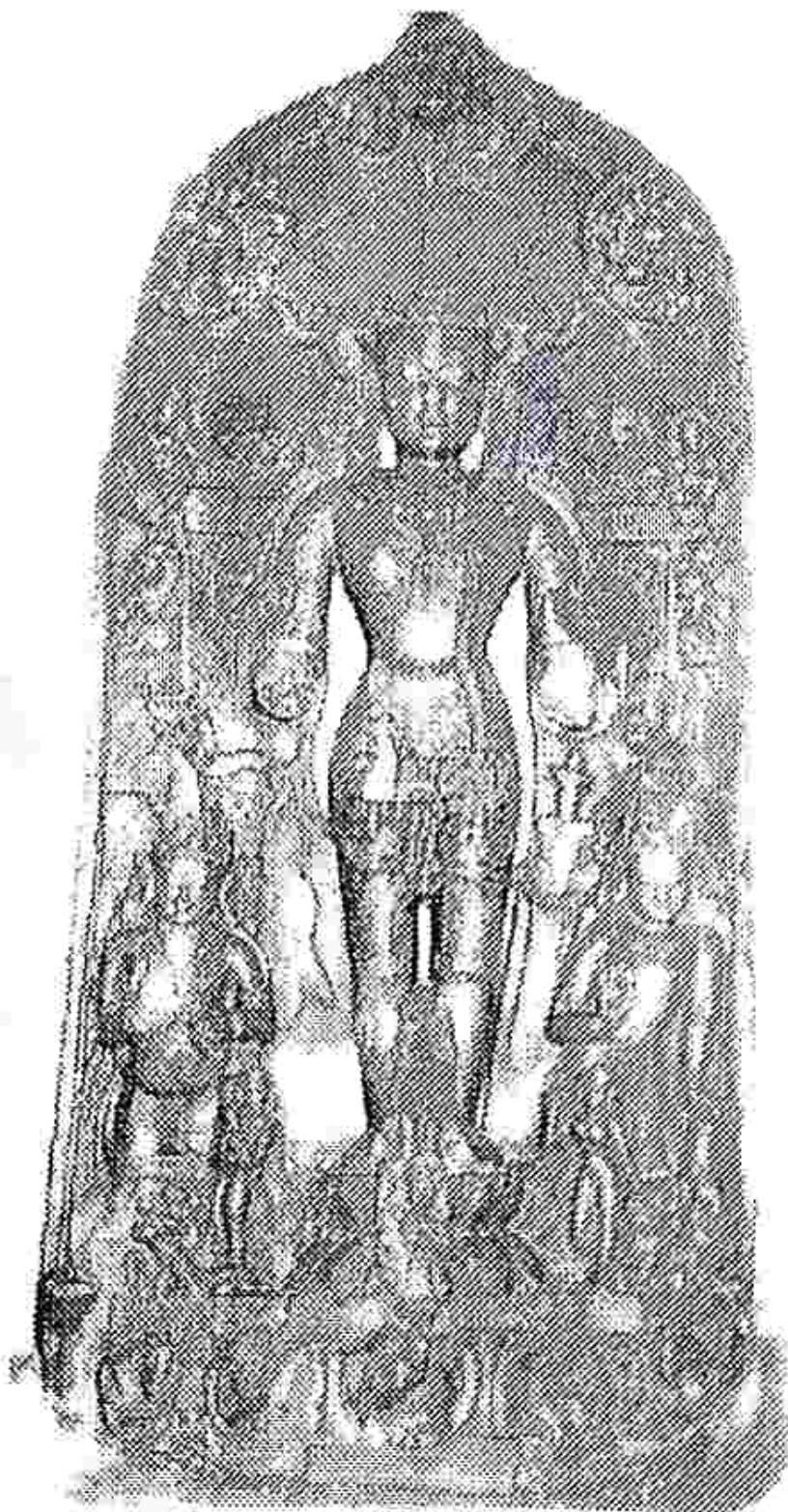
188. सूर्यमूर्त्ति (भगवतीपुर, नाहर) – 'ख'

189. विष्णुमूर्त्ति (भगवतीपुर, नाहर)
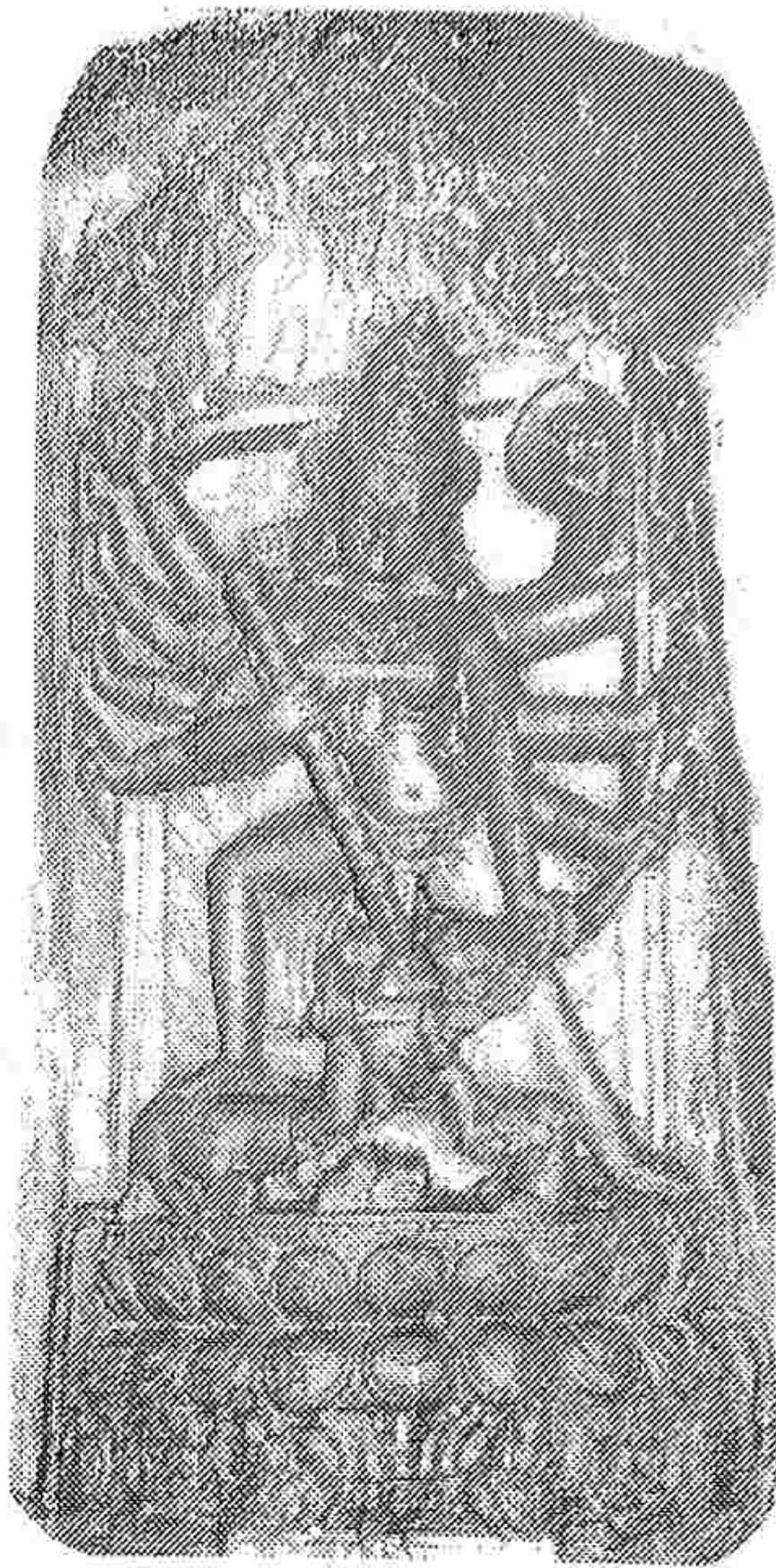
190. महिषासुरमर्दिनी (भगवतीपुर, नाहर)

जमथरि

पुरातात्त्विक दृष्टि से मधुबनी जिला का 75 प्रतिशत गाँव महत्त्वपूर्ण है । यहाँ खोजने पर कुछ न कुछ पुरातन मिल ही जाता है । झंझारपुर इस जिला का एक अनुमंडल है जिसके पश्चिम से कोशी नदी की तरह ही बिगरैल नदी कमला–बलान बहती है । इस नदी पर झंझारपुर के पास से रेलपुल भी है जिसका पश्चिमी रेलवे स्टेशन है **लोहना**। लोहना के आस पास के कई गाँव पुरातात्त्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है । लोहना रेलवे स्टेशन के निकट अवस्थित विदेश्वर स्थान मिथिला का एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है । यहाँ से मात्र पाँच कि0 मी0 पश्चिमोत्तर दिशा में जमथरि नामक गाँव के पास का गौरी–शंकर स्थान 1970 ई0 के बाद शिवलिंग के कारण प्रसिद्ध हो चुका है । मिथिला में एक से बढ़कर एक शिवलिंग हैं और इनकी संख्या हजारों में हैं । लेकिन यहाँ का शिवलिंग अन्य उपलब्ध शिवलिंगों से विशिष्ट है । 1981 ई0 में जब मैं पहली बार यहाँ पहुँचा था तो मेरे पहुँचने से पूर्व मात्र एक शिवलिंग यहाँ एक तालाब के किनारे पितौजिया के पुराने पेड़ के गिरने के कारण उसकी जड़ में पाया गया था । यह शिवलिंग बारहवीं शताब्दी का है और यह अपने आधार पर चारों ओर घूम सकता है ।

करीब 24 ईंच ऊँचा और 18 ईंच परिधि का यह शिवलिंग अपने आधार के निकट पतला है और ज्यों–ज्यों ऊपर उठता गया है, मोटा है । यह कसौटी पत्थर का है जिसके आमने–सामने दो ओर मिथिलाक्षर में गायत्री मंत्र उत्कीर्ण हैं और इस शिवलिंग पर पार्वती की मूर्ति (मात्र शिर) भी उभरी हुई है । शिवलिंग जहाँ से उठना प्रारम्भ हुआ है, जलढ़री का वह अंश श्रीयन्त्र से शोभित है । इसमें स्वस्तिक चिह्न के मध्य अष्टदल कमल है । प्रत्येक दल में मिथिलाक्षर में एक–एक बीज–मंत्र उत्कीण हैं । यह तान्त्रिक शिवलिंग है । इस शिवलिंग को कई लोग पालकालीन मानते हैं जो निराधार है । इसका

अक्षर–शिल्प बारहवीं शताब्दी का है जो काल की दृष्टि से अकाट्य है । यह काल कर्णाट–शासन का था और मिथिला के शिल्प के लिये यह युग मैं स्वर्ण–युग मानता हूँ । उपर्युक्त शिवलिंग के मिलने के बाद अब इसके निकट के तालाब का जीर्णोद्धार किया जा रहा था तो इसमें एक और इसी तरह का छोटा शिवलिंग मिला । यह शिवलिंग भी तान्त्रिक ही है जिसमें मिथिलाक्षर ही नहीं, देवनागरी लिपि में भी बीजमंत्र उत्कीर्ण है और इसमें 52 कमलदल हैं । 50 कमलदल में तो बीजमंत्र है, लेकिन दो कमलदल में देवी की मूर्त्तियाँ अंकित हैं । यह कमलदल तीन शृंखला में शिवलिंग के स्तूपाकार आधार पर सज्जित है । इसकी जलढ़री के दीवाल पर भी बीजमंत्र अंकित है, लेकिन यह इस तरह घिसा हुआ और जगह–जगह से झड़ा हुआ है कि इसे अब पढ़ पाना एक कष्ट साध्य कार्य है ।

इस स्थान में अब एक भव्य मंदिर बनाकर इसमें ही दोनों शिवलिंगों को स्थापित कर दिया गया है । प्रथम प्राप्त शिवलिंग से, बाद में प्राप्त शिवलिंग प्राचीन है । लेकिन प्रथम प्राप्त शिवलिंग दूसरे शिवलिंग की अनुकृति होते हुए भी कला की दृष्टि से अनुपम और मूलाधार से कहीं अधिक परिमार्जित कृति है ।
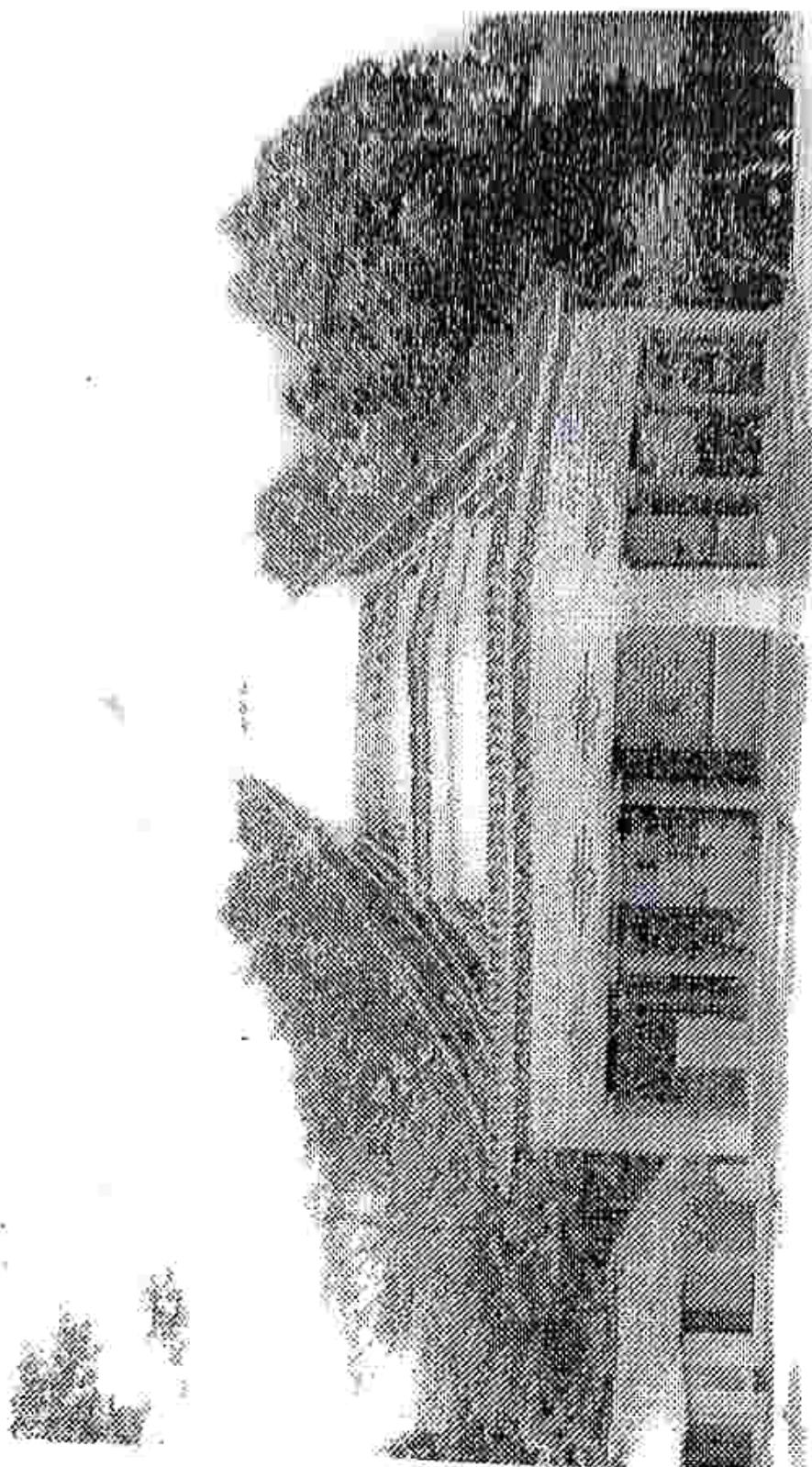
191. गौरीशंकर मंदिर (जमथरि)
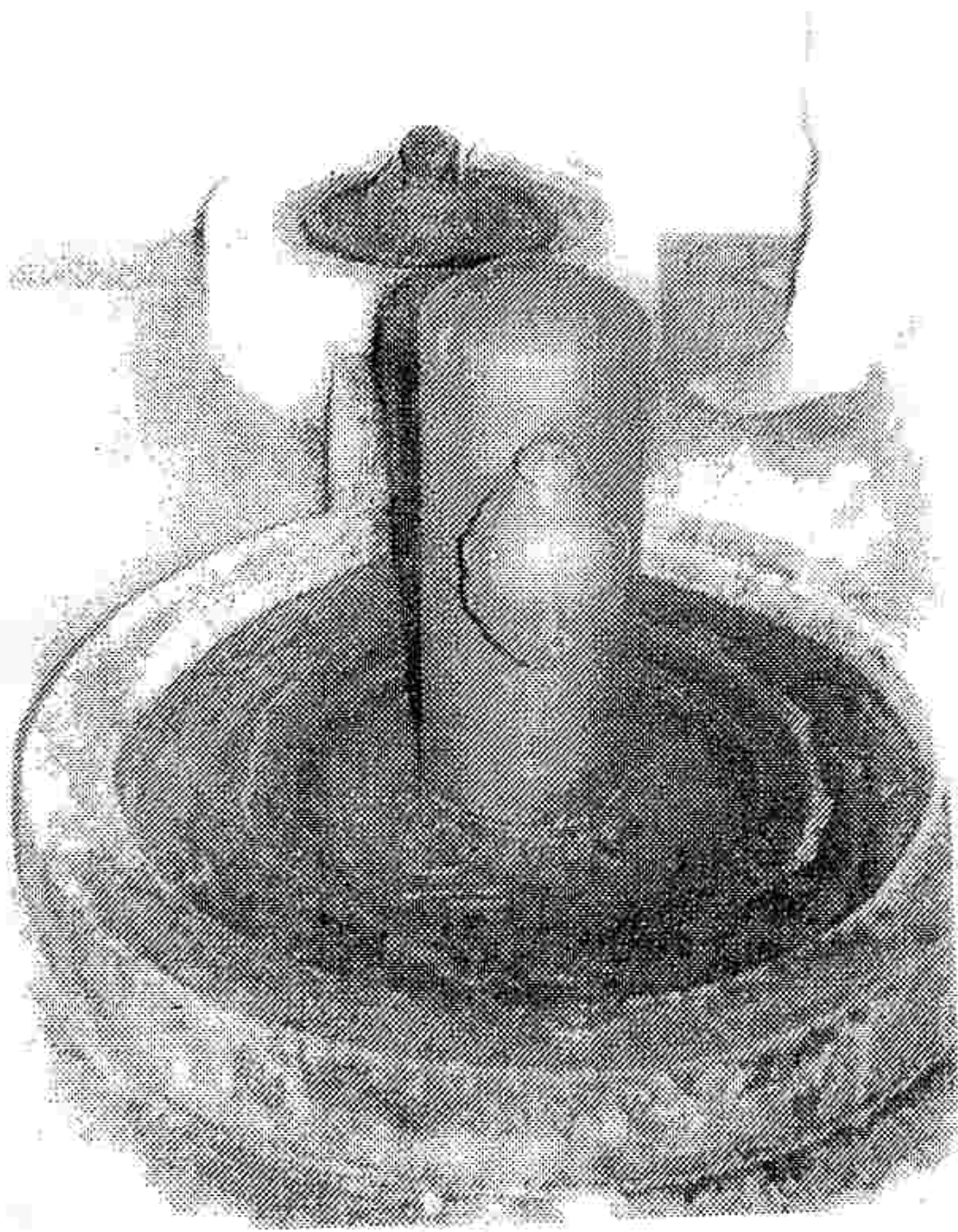
192. शिवलिंग (जमथरि)

लोहना

प्रत्येक कार्य अपने नियत समय पर सम्पन्न हो पाता है । 1987 ई0 में एक प्राचीन मूर्त्ति लोहना ग्राम में मिली थी । मधुबनी जिला का यह ग्राम सरिसब पाही से पूरब और विदेश्वर स्थान से पश्चिम सकरी–झंझारपुर मुख्यमार्ग पर है । मूर्त्ति मिलने के कुछ ही सप्ताह बाद इसके सम्बन्ध में मुझे एक मित्र से पता चला था । 7 मार्च, 2001 ई0 के पूर्व इस मार्ग से मैं कई बार यात्रा की थी, लेकिन चाहते हुए भी इस तिथि से पूर्व मैं मूर्त्ति का दर्शन नहीं कर सका ।

लोहना ग्राम के पुवारीटोला में एक घर है किशोरी कामत का । मूर्त्ति इन्हीं के घर में प्राप्ति की तिथि से अभी तक है । एक मुशहर इनके खेत में जो घर से दक्षिण है, कुछ खुदाई कर रहा था । इस खुदाई में ही मूर्त्ति मिली थी । जहाँ और जिस परिस्थिति में मूर्त्ति मिली थी, उससें पता चलता है कि किसी बाहरी आक्रमण के समय सुरक्षा की दृष्टि से मूर्त्ति, मिट्टी के नीचे दबा दी गई थीं । कसौटी पत्थर और गुप्तशैली की लक्ष्मी की यह मूर्त्ति 25X10 ईंच की है । कमलासन पर बैठी मूर्त्ति का एक पाँव भूमि–स्पर्श की मुद्रा में प्रतीक चिह्न, सिंह के पीठ पर है । इन्हें चार हाथ हैं । इन हाथों में हैं, शंख, चक्र, गदा और पद्म । शंख और पद्म निचले दोनों हाथों में है और ये हाथ योग–मुद्रा में हैं ।

193. भगवती (लोहना)

विदेश्वर स्थान

मधुबनी जिला का विदेश्वर–स्थान सकरी–झंझारपुर मुख्य पथ पर सड़क की बाँयी ओर झंझारपुर से कुछ ही दूर पश्चिम है । यहाँ का शिवलिंग प्राचीन और मिथिला प्रसिद्ध है । प्रायः प्रतिदिन यहाँ मेला जैसी भीड़ श्रद्धालुओं की लगी रहती हैं । यहाँ मंदिर और धर्मशाला एक सम्पर्क सड़क के पश्चिम है और इस देव–स्थान से सम्बन्धित प्राचीन तालाब इस पथ के पूरब । इस तालाब के नवीकरण के समय कई दशक पूर्व इसमें दो प्राचीन पाषाण प्रतिमायें कसौटी पत्थर की मिलीं थीं जो शिवमंदिर के बरामदा में ही स्थापित हैं ।

तालाब में प्राप्त एक मूर्त्ति का आकार है 42X18 ईंच । गुप्तशैली की यह मूर्त्ति भगवान विष्णु की है । इनके चार हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म है । मूर्त्ति खड़ी है । मिथिला में मुझे अभी तक अनेकों विष्णु मूर्त्तियाँ विभिन्न काल और शैलियों की मिली हैं । ये सब के सब मूर्त्तियाँ खड़ी ही हैं । दूसरी मूर्त्ति है अग्नि की जो बैठे हुए हैं । इन्हें यहाँ वशिष्ठ मुनि कहा जाता हे । दाढ़ी, मूछ वाली यह मूर्त्ति कमलासन पर बैठी हैं और उनका एक पाँव भूमि स्पर्श की मुद्रा में है । मूर्त्ति के दो हाथं हैं; एक में माला और दूसरा हाथ योगमुद्रा में हैं । योगमुद्रा वाले हाथ में कुछ है जो अग्नि जैसा लगता है ।

194. भगवान विष्णु (विदेश्वरस्थान)

195. अग्निमूर्त्ति (विदेश्वरस्थान)

उजान

मधुबनी जिला का लोहना रेलवे स्टेशन झंझारपुर से पश्चिम और उजान पंचायत के अन्तर्गत ही पड़ता है । लोहना ग्राम और विदेश्वर स्थान की चर्चा इससे पूर्व की जा चुकी है जो पुरातात्त्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है । ये दोनों स्थान भी उजान के निकट ही हैं । गुप्तशैली और कसौटी पत्थर की एक महिषासुर मर्दिनी की मूर्त्ति जिसका आकार है 40X20 ईंच, इस गाँव के मध्य पूजित हैं । यह मूर्त्ति सर्वसीमा में मिट्टी के नीचे मिली थीं । सर्वसीमा इस गाँव से कुछ ही दूर पूर्वोत्तर दिशा में है । सर्वसीमा से विदेश्वर स्थान और लोहना की दूरी भी करीब–करीब बराबर ही है । सर्वसीमा के पूर्वी किनारे से एक प्राचीन नदी बहने का अवशेष है जिसका पाट विस्तृत है । नदी अवशेष के पश्चिम लोहना ग्राम है तथा पूरब में उजान और विदेश्वर–स्थान । इस तरह विस्तृत भूभाग पुरातात्त्विक दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है । उजान के पूरब एक गाँव है अबाम, यहाँ भी पुरातात्त्विक अवशेषें उपलब्ध हैं और सम्पूर्ण भूभाग आधुनिक सभ्यता से पूर्व, एक लम्बे समय तक मानव शून्य रहा था इसका पर्याप्त प्रमाण यहाँ उपलब्ध है ।

कई लोगों का मानना है कि मिथिला की वह वैभवपूर्ण नगरी **अमरावती** जो अभी तक खोई हुई हैं, इसी भूभाग में थी । पश्चिम में कोर्थ और पूरब में भीठभगवानपुर उत्तर में कोइलख और दक्षिण में तिलकेश्वर स्थान, इस सम्पूर्ण भूभाग के पुरातात्त्विक अवशेष के विश्लेषण से उपर्युक्त मान्यता को बल मिलता है । इसवी पूर्व से लेकर कर्णाट काल तक की सैकड़ों पाषाण प्रतिमाओं का अवशेष इस क्षेत्र में विगत कुछ सौ वर्षों के मध्य स्वतः धरती के गर्भ से बाहर आये हैं और भौगोलिक परिवेश भी संभावना के अनुकुल ही है । पुरातात्त्विक महत्त्व के करीब सौ स्थानों का सर्वेक्षण अभी तक मैं कर चुका हूँ । इनमें से एक चौथाई स्थान इसी भूभाग में है और इन स्थानों में सर्वाधिक संख्या मूर्त्तियों की गुप्तशैली और इससे पूर्व की शैली की हैं । प्राचीन नदी–अवशेष, जिसकी

चर्चा मैंने सर्वसीमा ओर उजान के प्रसंग मे की हैं, यह खण्डित रूप में कोइलख से लेकर तिलकेश्वर स्थान (दरभंगा जिला, कुशेश्वर प्रखण्ड) तक कई जगह देखा जा सकता है ।

अध्यात्म में प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में तो मेरे पास कुछ भी नहीं है । लेकिन परोक्ष रूप से मैंनें इसका दर्शन किया है । यद्यपि प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं के सर्वेक्षण के क्रम में इस प्रकार का अनुभव मैंने कई जगह किया है तथापि उजान की यात्रा एक विशिष्ट महत्त्व रखती है । एक मित्र (श्री हंसराज) से मुझे पता चला कि उजान में महत्त्वपूर्ण पुरावशेष छिन्नमस्ता–स्थान, भगवती–स्थान और अवाम में देखने को मिल सकता है । छिन्नमस्ता देवी के दर्शन की सफलता है इस स्थान के आस–पास जनशून्य में काली कुत्ता का दर्शन । यह स्थान भी गाँव से बाहर जनशून्य स्थान में ही है । उजान में मैं इसी व्यास के अन्तर्गत यदि एक व्यक्ति विशेष से मिलूँ तो यहाँ के सम्बन्ध में मुझे अधिकाधिक जानकारी मिल सकती है ।

आगे की घटना संयोग है या आध्यात्मिक चमत्कार, मैं नहीं जानता । छिन्नमस्ता देवी के स्थान के निकट जाने और लौटने के समय दोनों ही बार मुझे एक काली कुत्ता मिला था जो मुझे विचित्र नजर से घूर रहा था । इस स्थान में मैं दोपहर 1/35 में 7/3/2001 ई0 को पहुँचा था । यहाँ एक युवती (पुजारिन) मुझे मिली जिसने मुझे बिना कहे वह सब सहायता की, जिस इच्छा से मैं यहाँ पहुँचा था । इस पुजारिन के अतिरिक्त स्थान में और कोई नहीं था और यह पुजारिन भी अधिकृत नहीं थी जैसा कि अन्त में उसने मुझे बताया । व्यक्ति विशेष का पता और रास्ता पूछने पर उस पुजारिन ने मुझे जहाँ भेजा वह स्थान था महिषासुर मर्दिनी का, न कि व्यक्ति विशेष का । महिषासुर मर्दिनी स्थान में एक दूसरे व्यक्ति से व्यक्ति–विशेष का पता पूछ कर जब मैं उससे मिलने उस मुहल्ला में पहुँचा तो वह व्यक्ति विशेष मुझे रास्ते पर ही मिल गये । जिस पहले व्यक्ति से मैंने व्यक्ति विशेष का घर दिखाने को कहा वही व्यक्ति विशेष था । अब आप ही निर्णय करें कि यह तीनों ही घटनाएँ मात्र संयोग ही थी या स्वयं भगवती का मार्गदर्शन।

196. महिषासुरमर्दिनी (उजान)

197. भगवती छिन्नमस्ता (उजान)
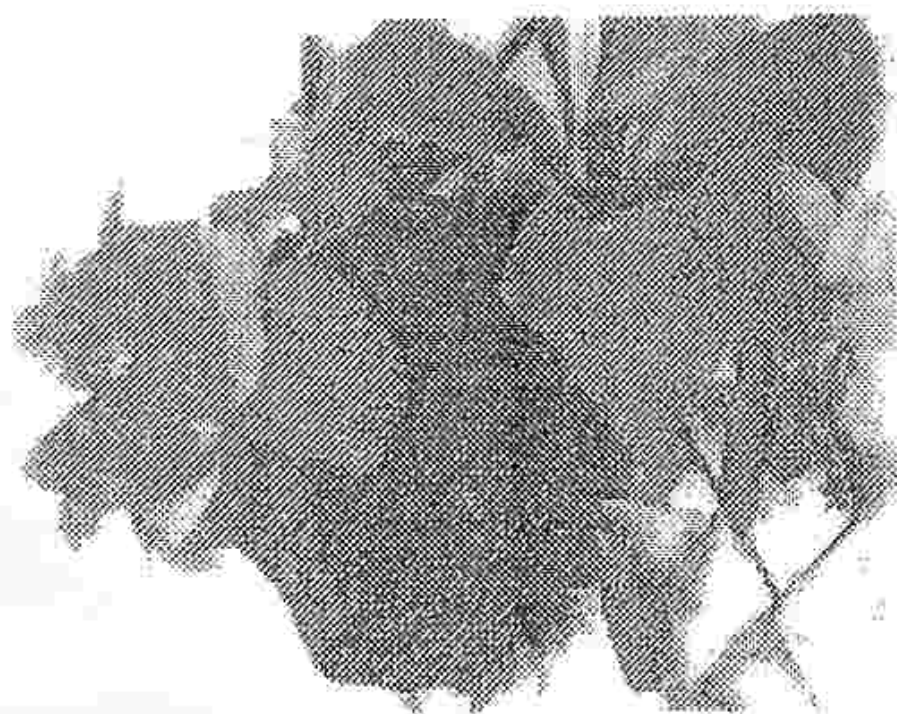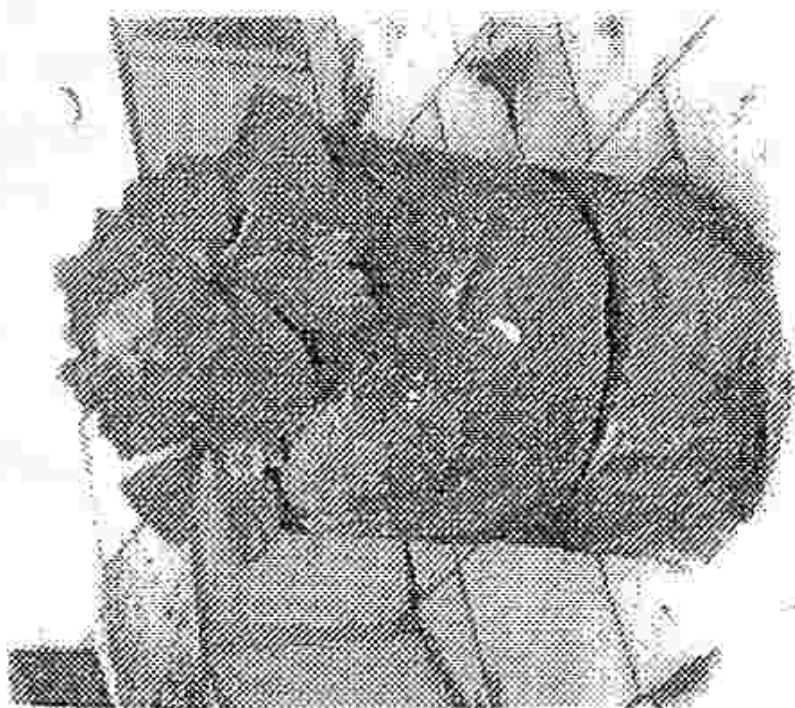
198. शिवलिंग एवं भैरव मूर्त्ति अवशेष (उजान)

नदियामी

अट्ठारहवीं शताब्दी के तीसरे दशक की यह घटना है । ब्राह्मण बहुल गाँव नदियामी का एक तालाब पानी की कमी के कारण **उराहा** (नवीकरण करना) जा रहा था । इस क्रम में तालाब में करीब आठ कसौटी पत्थर की प्राचीन मूर्त्तियाँ मिलीं । बेनीपुर दरभंगा जिला का एक अनुमंडल है । इस अनुमंडल के मुख्यालय से करीब 14 कि0 मी0 पूर्वोत्तर दिशा का यह गाँव केन्द्र हैं एक महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्थल का जिसका व्यास करीब 15 कि0 मी0 है । कुर्सो–नदियामी एक पंचायत भी है, लेकिन वह स्थान जिसकी मैं चर्चा करने जा रहा हूँ, नदियामी में है ।

नदियामी से दक्षिण 15 कि0 मी0 की दूरी पर है कोर्थ, पूर्व में 15 कि0 मी0 की दूरी पर भीठभगवानपुर और उत्तर में 7 कि0 मी0 की दूरी पर है उजान । विदेश्वर स्थान और लोहना, इस व्यास के अन्तर्गत है । उपरोक्त व्यास के अन्तर्गत ही भैरव–बलिया, नेहरा, हाबीभौआर, धरौरा, नेहरा, सोनहद, अहिरैन, पाली, तुमैल, छर्रापट्टी और बुढ़ेब आदि स्थान आता है, जहाँ की पुरातात्त्विक–उपलब्धि की चर्चा इस पुष्प और विगत अन्य पुष्पों में की जा चुकी है । इस गाँव के पश्चिम से कमला नदी की एक प्राचीन शाखा बहती थी जो अब मरणासन्न है । विस्मृत अमरावती नगर की चर्चा उजान शीर्षक के अन्तर्गत की गई हैं, यहाँ की उपलब्धि देखने के बाद इसमें संदेह नहीं रह जाता है कि प्राचीन अमरावती नगर का ही उजड़ा यह भूखण्ड है ।

गुप्तशैली और इसी काल की सभी मूर्त्तियाँ यहाँ पाई गई हैं । एक भी मूर्त्ति अखण्ड नहीं है । 25 प्रतिशत से 75 प्रतिशत तक सभी मूर्त्तियाँ टूटी–फूटी हैं । ये मूर्त्तियाँ किसी आक्रमण का शिकार हुई थीं, इसके प्रत्येक लक्षण मूर्त्ति पर अंकित है ।

उपलब्ध मूर्त्तियाँ यहाँ सुरक्षित और पूजित हैं । जिस तालाब में ये मूर्त्तियाँ पाई गई थीं, उसी तालाब के पश्चिमी भिण्डे पर एक कोठा में ये स्थापित हैं । इस कोठा के गर्भगृह में दक्षिण से उत्तर की ओर ऊँचा चबूतरा बनाकर इसे तीन प्रकोष्ठ में बाँटा गया है । दो प्रकोष्ठ में दो–दो और तीसरे तथा अन्तिम उत्तर की ओर वाले प्रकोष्ठ में चार मूर्त्तियाँ हैं । 12 ईंच से लेकर 44 ईंच तक की ऊँचाई की ये मूर्त्तियाँ हैं ।

प्रथम प्रकोष्ठ में हैं, गौरी या पार्वती तथा महिषासुर मर्दिनी । दूसरे प्रकोष्ठ में भगवान विष्णु और सूर्य तथा तीसरे प्रकोष्ठ में हैं, सामने और बायें से दायी ओर क्रमशः आलोकितेश्वर (सूर्य) शिर–विहीन एक मूर्त्ति (राहु) बायीं दीवाल में जड़ी हुई चमर धारिणी और दायीं दीवाल में दो देव मूर्त्तियाँ जो एक ही मूर्त्ति पीठिका में हैं । चमरधारणी और दो देव–देवी मूर्त्तियाँ सम्भवतः आलोकितेश्वर मूर्त्ति का खण्डित अंश है या किसी अन्य मूर्त्ति–पीठिका की खण्डित मूर्त्तियाँ ।
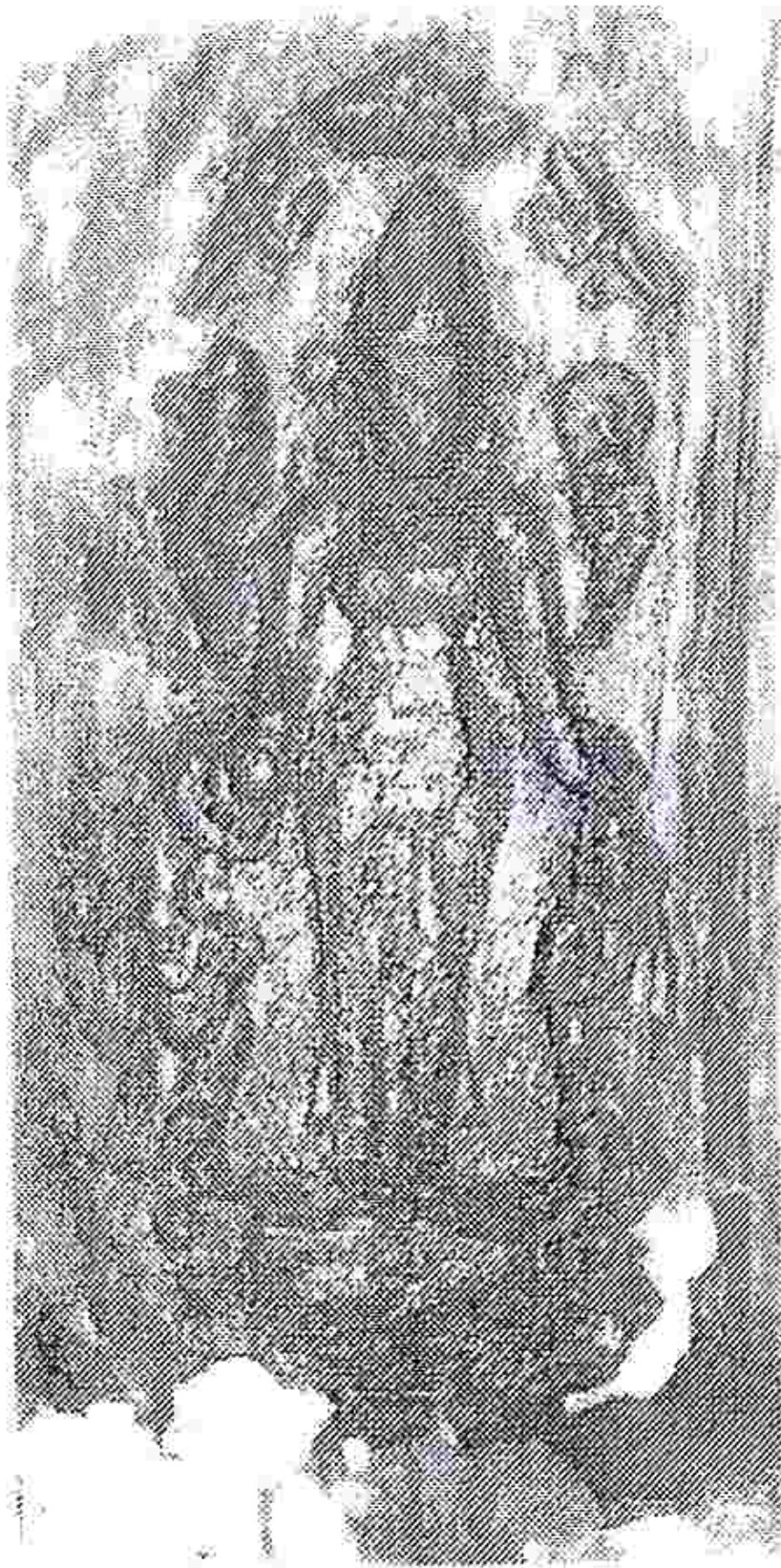
199. गिरिजा मूर्त्ति (कुर्सोनदियामी)

200. महिषासुर मर्दिनी (कुर्सोनदियामी)

201. भगवान विष्णु (कुर्सोनदियामी)
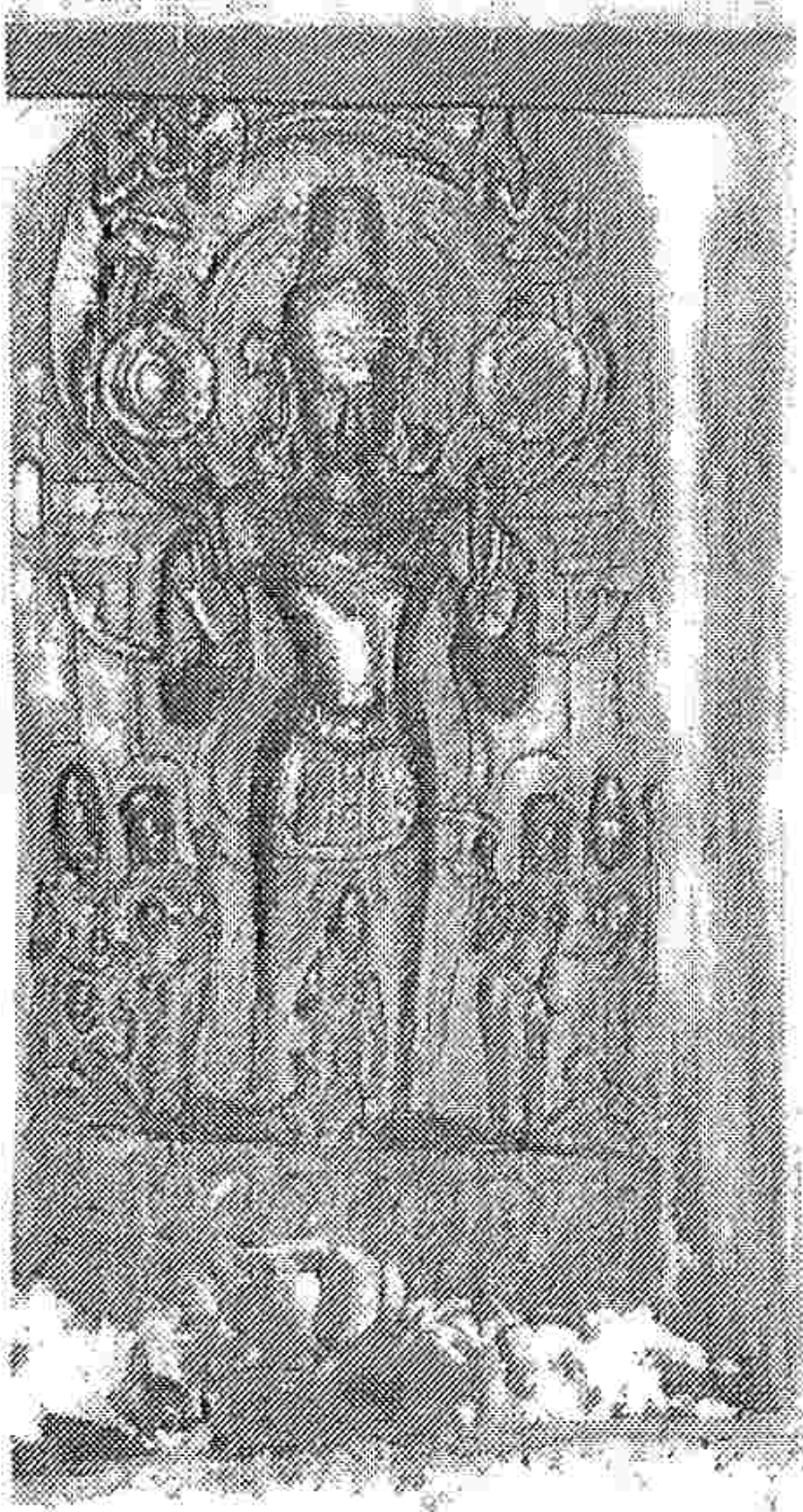
202. भगवान सूर्य (कुर्सोनदियामी)
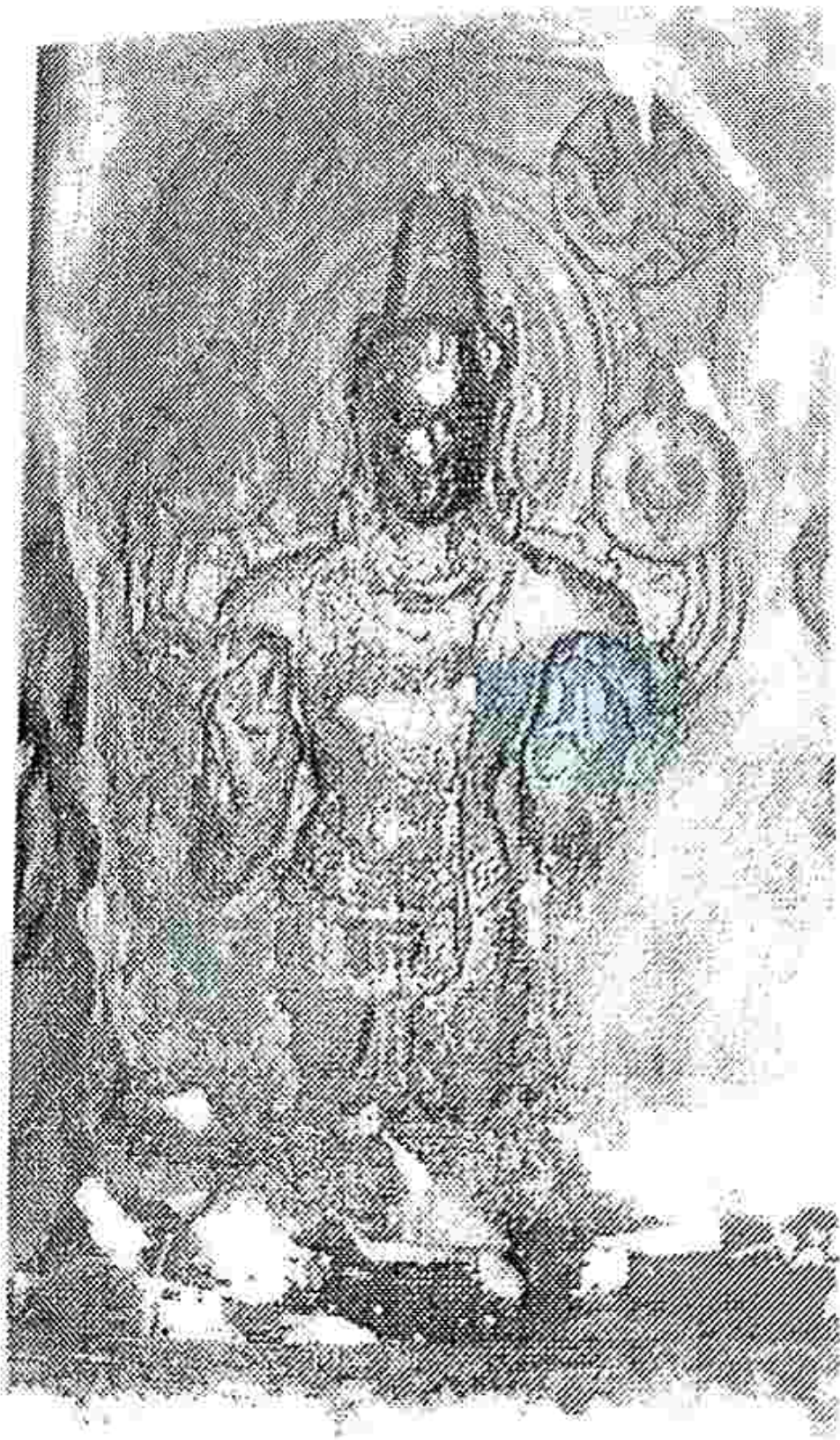
203. आलोकितेश्वर (कुर्सोंनदियामी)

204. राहू (कुर्सोनदियामी)

205. चमरधारिणी एवं देव–देवी (कुर्सोंनदियामी)

आध्यात्मिक
एवं
पुरातात्त्विक

DARSHNIYA MITHILA

दर्शनीय मिथिला

सप्तम पुष्प

लेखक
सत्यनारायण झा 'सत्यार्थी'

दर्शनीय मिथिला – सप्तम् पुष्प
विषय–सूची

दर्शनीय मिथिला के आठ पुष्प
पुष्प और पृष्ठ

लहेरियासराय शिवमन्दिर

दरभंगा जिला मुख्यालय के पश्चिम और जेल से दक्षिण मुख्य पथ के पश्चिम एक शिवालय है । इस शिवालय के निकट का तालाब के. एम. टैंक अर्थात कन्हैया मिश्र-पोखर के नाम से प्रसिद्ध है । यह शिवालय स्व० कन्हैया मिश्र ने ही बनवाया था । इस शिवालय में एक बहुत ही सुन्दर कसौटी पत्थर और पालशैली की भगवान गणेश की मूर्त्ति है । स्व० मिश्र द्वारा प्रदत्त यह मूर्त्ति उन्हें कहाँ मिली, कोई नहीं जानता । चतुर्भुज गणेश की मूर्त्ति करीब 24 ईंच उँची है । भगवान गणेश की कई मूर्त्तियाँ मुझे मिथिला में देखने को मिली हैं । लेकिन यह मूर्त्ति अन्य मूर्त्तियों से बिल्कुल ही भिन्न है। जहाँ अन्य मूर्त्तियाँ माँसल दिखाई पड़ती हैं, यह गठीले बदन की मूर्त्ति है । मूर्त्ति पर ओप किया हुआ है ।

चित्र–206, गणेश मूर्त्ति (लहेरियासराय)

होरलपट्टी

दरभंगा जिला के मुख्यालय से मात्र 5 कि०मी० दक्षिण-पूर्व की ओर लहेरियासराय-बहेड़ी मुख्य पथ पर एक गाँव है होरलपट्टी। यहाँ गाँव से उत्तर एक शिवालय है। यह शिवालय करीब एक सौ वर्ष पुराना है जिसके निकट का तालाब जो मन्दिर से पश्चिम है, इसे गंगा सागर कहा जाता है। इस तालाब के पश्चिमी और दक्षिणी किनारे पर प्राचीन मकान की दिवाल धरती के नीचे है और वहाँ ईंटें यत्र-तत्र बिखरी पड़ी हैं। मकान की ईंटें मिट्टी के सहारे जोड़ी गई थीं। सम्पूर्ण ईंट तो मुझे एक भी नहीं मिली लेकिन यहाँ दो प्रकार की ईंटें उपलब्ध हैं जिनकी मोटाई है 1.75 और 2.85 ईंच ।

इस शिवालय के निकट दक्षिण शिल्पित कसौटी पत्थर के तीन अवशेष, जो किसी प्राचीन मन्दिर के हैं और एक श्वेत संगमरमर पत्थर की मूर्त्ति का अंश एक पंक्ति में यहाँ व्यवस्थित है। लोगों का कहना है कि ये सभी अवशेष कंकाली या कंगालीडीह का है जो यहाँ से मात्र कुछ सौ मीटर की दूरी पर दक्षिण-पश्चिम की ओर एक डीह के ऊपर है। इस डीह के निकट ही प्राचीन नदी अवशेष भी देखा जा सकता है। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि ओइनवार वंशीय राजा शिवसिंह की राजधानी यहीं निकट स्थित गाँव शिवैसिंघपुर रहा था। शिवैसिंघपुर यहाँ से मात्र दो कि०मी० दक्षिण-पश्चिम की ओर है। इस शिवालय से मात्र 1.5 कि०मी उत्तर है वर्द्धमानेश्वर महादेव मन्दिर। इस मन्दिर में भी कई प्राचीन पाषाण प्रतिमाएँ हैं जिनकी चर्चा दर्शनीय मिथिला के द्वितीय पुष्प में की गई है और फोटोग्राफ भी उपलब्ध कराया गया है। कहा जाता है कि वर्द्धमान उपाध्याय राजा शिवसिंह के समकालीन ही नहीं बल्कि धर्माधिकारी भी रहे थे। वर्द्धमानेश्वर महादेव की स्थापना इन्हीं के द्वारा की गई थी ।
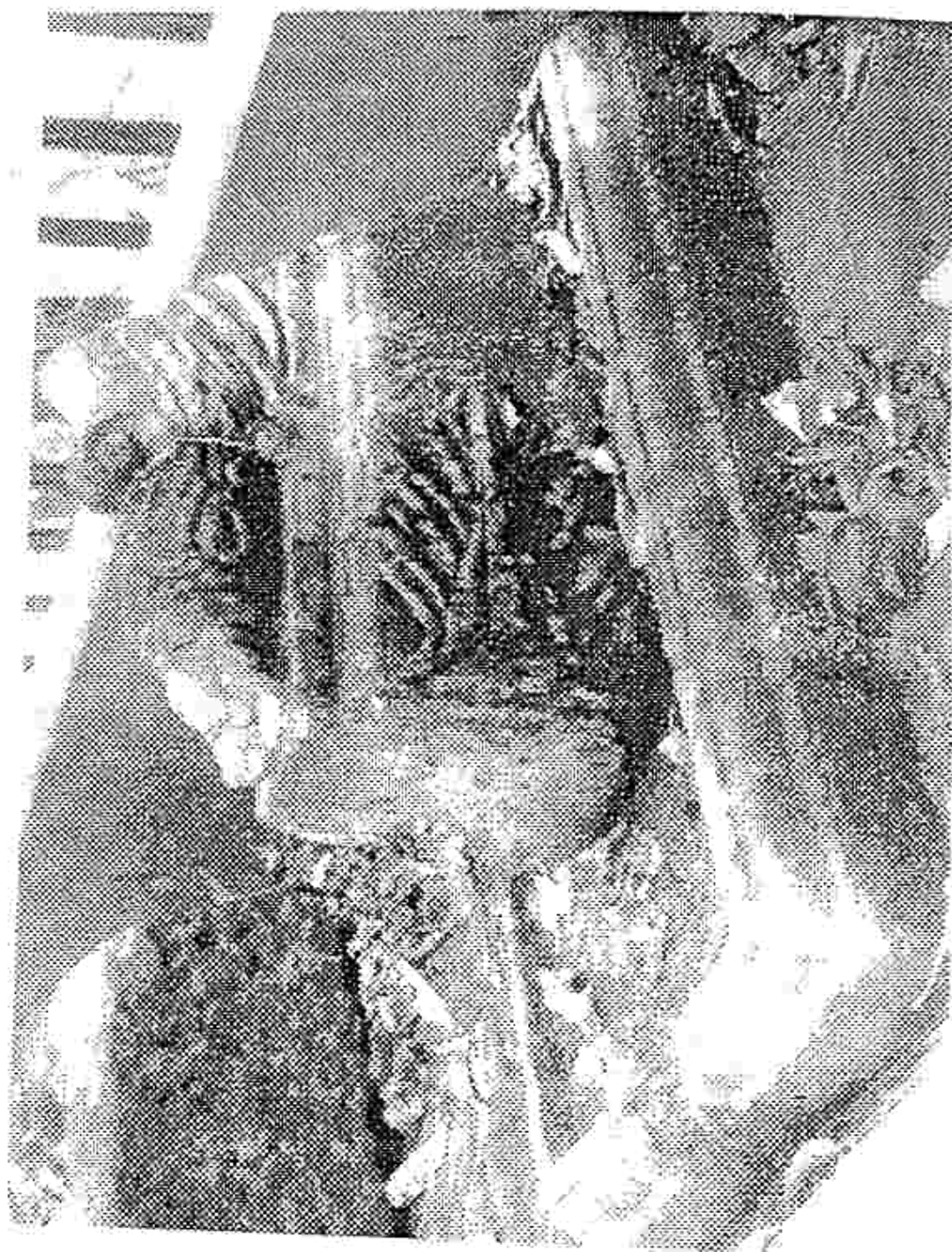
चित्र–207, मूर्ति अवशेष (होरलपट्टी)

चित्र–208. मन्दिर अवशेष (हुलासपट्टी)

बाथो

दरभंगा जिला मुख्यालय से करीब 35 कि०मी० दूर पूर्व-दक्षिण की ओर एक गाँव है बाथो । यह गाँव हाबीभौआर से करीब 3 कि०मी० पश्चिम पड़ता है। बेनीपुर प्रखण्ड का यह गाँव 1886 ई० में गाँव के रूप में नहीं था । क्योंकि प्रथम सर्वे के मानचित्र में इस स्थान पर बाथो नाम का कोई गाँव नहीं था । गाँव बसने से पूर्व यह स्थान जंगल के रूप में था । इस समय इस गाँव के दक्षिण-पश्चिम कोने पर एक विष्णु मन्दिर है । इस मन्दिर के अधिकार में करीब 7 एकड़ जमीन होने के कारण यह गाँव के दया पर निर्भर नहीं है। मन्दिर में कसौटी पत्थर और करीब 30 ईंच ऊँची भगवान विष्णु की एक प्राचीन प्रतिमा स्थापित है। यह प्रतिमा अंग-भंग होने के कारण कपड़ा से ढकी है । हाथ टूटे हुए हैं । कपड़े से ढकी होने के कारण ठीक-ठीक यह अनुमान करना तो सम्भव नहीं कि मूर्त्ति के टूटने का कारण क्या रहा होगा? लेकिन इसी प्रांगण में एक स्थान पर कुछ शिल्पित मूर्त्ति-अंश देख कर मैंने अनुमान किया कि मन्दिर के गिरने या प्राप्ति के समय अनजान होने के कारण भगवान विष्णु की मूर्त्ति क्षतिग्रस्त हुई थी। भगवान विष्णु का एक वह हाथ जिसमें शंख है, इस मलवे में मुझे देखने को मिला है । कई अन्य मूर्त्तियों का भी टूटा-अंश इस मलवे में है। इन अंशों की भी पूजा होती है । भगवान विष्णु की यह मूर्त्ति मिथिला शैली और कर्णाट-कालीन है । इस मूर्त्ति का शिल्प हाबीभौआर की विष्णु-मूर्त्ति की तरह ही अतिसूक्ष्म शिल्पयुक्त है ।

इस समय बाथो में भगवान विष्णु का मन्दिर जहाँ है वहीं दक्षिण-पूर्व की ओर एक लम्बा डबरा (जलाशय) नजर आता है। भगवान विष्णु की यह मूर्त्ति इसी डबरे के किनारे ऊँची भूमि पर मिली थी और प्रत्येक मूर्त्ति-अंश भी यहीं से प्राप्त किया गया था। शास्त्रीय-विधान के अनुसार अंग-भंग मूर्त्ति की पूजा

वर्जित है। इस विधान को ही अनदेखा करने के लिए किसी चतुर पुजारी ने मूर्त्ति को ढककर आम लोगों को आकर्षित किया होगा। यह मूर्त्ति ढकने की प्रथा अब आम हो गई है जो मिथिला के लिए एक अभिशाप है। अब पुजारी ही नहीं आम लोग भी इसके पक्ष में दिखाई पड़ते हैं। मैं इस प्रकार के पुजारियों और समाज के अन्य लोगों की घोर निन्दा करता हूँ जो इस प्रथा के पक्ष में अपना मत प्रकट करते हैं ।

मूर्त्ति ढकने की वस्तु होती ही नहीं । इसे किसी न किसी स्वार्थ के वश या मूर्खता के कारण ढककर रखा जाता है । सबसे अधिक आश्चर्य का विषय यह है कि अभी तक कहीं भी इस प्रथा का विरोध नहीं हुआ है जबकि प्रत्येक विद्वान मेरे मत के पक्ष में हैं । ढक देने का बाद मूर्त्ति और पिण्ड में कोई अन्तर नहीं रहता। अत: मूर्त्ति की आवश्यकता ही क्या, क्यों नहीं पिंड की पूजा की जाय। इस अवस्था में क्या हमारे पूर्वज मूर्ख थे जिन्होंनें अध्यात्म के अन्तर्गत मूर्त्ति की परिकल्पना कर इसके निर्माण में पानी की तरह पैसा बहाया और अपनी सम्पूर्ण शक्ति तथा समय इसमें लगा दिया । प्रत्येक परिपाटी और मान्यता समय पाकर बदलने की आवश्यकता पड़ती है । जो समाज इसे नहीं अपना सकता अंतत: उसी की पराजय होती है । आज के संदर्भ में अंग-भंग प्राचीन मूर्त्ति की पूजा शास्त्र की अवहेलना नहीं बल्कि आध्यात्मिक माँग है । अत: इस आत्म-ग्लानि और मूर्खता से ऊपर उठकर अनावृत्त रूप से प्राचीन मूर्त्तियों की पूजा पाप नहीं बल्कि आज की आवश्यकता है ।

वह मूर्त्ति जो ढकी होती है, कभी उसे स्नान नहीं कराया जाता है जबकि शास्त्रीय विधान है प्रतिदिन स्नान कराना, घी या तेल की मालिश और इसके बाद ही पूजा । पुजारी समाज के अन्य लोगों को अपनी सुविधा के अनुकूल शिक्षा देता रहता है । जबकि वह स्वयं कुछ नहीं जानता । यह सब उसे अपना आर्थिक स्रोत बनाए रखने के लिए आवश्यक है । सोने-चाँदी के लोभ में मन्दिरों में प्राय: चोरियाँ होती रहती हैं । प्राचीन मूर्त्तियों को किसी वस्त्र या आभूषण की ज़रूरत नहीं होती । यह सब मूर्त्ति में उत्कीर्ण रहती है । प्राचीन मूर्त्तियों को सोने-चाँदी का मुकुट और आँख लगाकर विद्रूप बना दिया जाता है। आवृत्त की अवस्था में मात्र मुख बाहर होता है लेकिन इस पर भी चाँदी की आँख लगाकर

मूर्त्ति का विद्रूप बना देना, पुजारी अपनी कला समझता है । कला के प्रति वह कितना संवेदनशील होता है, इसकी साक्षी हैं वे मूर्त्तियाँ जिन्हें इस तरह की आँखें लगी हों । पुजारी का कर्त्तव्य है, समाज को एक सूत्र में बाँध कर रखना जबकि वह इसके प्रति संवेदनशील नहीं होता । यही लोग देखा-देखी में पड़कर इस तरह की कुप्रथा में फंस जाते हैं ।

व्यक्ति मूर्ख हो या विद्वान, आध्यात्मिक भूख सबों में होती हैं । विद्वान इसे ध्यानमंत्र से प्राप्त करता है जबकि अन्य लोगों का ध्यानमंत्र है मूर्त्ति, ध्यानमंत्र का ही दर्शन है मूर्त्ति । मूर्त्ति प्रभाव की अज्ञानता, पेशा का मोह, देखा-देखी की परिपाटी और अंग-भंग मूर्त्तिपूजा का अपराधबोध ही पुजारी को मूर्त्ति ढकने के लिए विवश करता है । वह नहीं जानता कि ऐसा करना समाज और राष्ट्र के प्रति एक अपराध है । मूर्त्ति अपना प्रभाव तभी दे सकती है जबकि वह मूर्त्ति के रूप में प्रदर्शित हो ।

चित्र–209. विष्णु मूर्त्ति अवशेष (बाथो)

चित्र–210, विष्णु मूर्त्ति (बाथो)

चित्र–211, मूर्ति अवशेष (बाथो)

सुपौल–बिरौल

1956 ई० तक यह स्थान कमला नदी की एक शाखा के उत्तर तक ही सिमटा हुआ था जो अब हरदिशा में पर्याप्त फैल चुका है। इका सबसे अधिक फैलाव नदी के दक्षिण हुआ है । पहले प्रत्येक सरकारी और गैरसरकारी प्रतिष्ठान सुपौल में था जो अब धीरे-धीरे नदी के पार बिरौल में स्थानांतरि त हो रहा है । बिरौल दरभंगा जिले का एक अनुमंडल है जिसका सृजन नवीन है। यहाँ का प्रखण्ड कार्यालय भी नवीन ही है । यह पहले घनश्यामपुर प्रखण्ड मुख्यालय में था। बिरौल दरभंगा जिला मुख्यालय से 52 कि०मी० दूर पूर्व-दक्षिण की ओर इस क्षेत्र का एक सबसे बड़ा बाजार भी है जो पहले सुपौल में था । अब सुपौल-बिरौल में अन्तर नहीं, यह दो नाम एक काया है ।

देश स्वतंत्र होने से पूर्व बिरौल और हाटी के मध्य एक अंगरेज नील की खेती की आड़ में अंग्रेजी सरकार के लिए जासूसी करता था और कलाकृतियों की तस्करी उसका मुख्य धंधा था । वह कोर्थ नामक गाँव से जो यहाँ से 8 कि०मी० उत्तर है, एक बैलगाड़ी में भरकर प्राचीन कलाकृतियाँ उठवा लाया था । इस समय का वह ध्वजस्तम्भ जो चन्द्रधारी संग्रहालय, दरभंगा में प्रदर्शित है, इसह के आवास में इसके जाने के बाद पाया गया था जिसकी चर्चा '**दर्शनीय मिथिला**' के प्रथम पुष्प में विस्तारपूर्वक की गयी है । हो सकता है उसी अंगरेज ने यह कलाकृति यहाँ, जिसकी मैं अभी चर्चा करने जा रहा हूँ, कमला नदी में फेका हो जो इसके आवास के निकट ही है ।

बिरौल बाजार के निकट कमला नदी पूर्व से पश्चिम की ओर बहती है जिसपर एक सेतु (पुल) है । इस सेतु से मात्र 250 मीटर पूर्व कमला नदी के किनारे ही एक नवीन मन्दिर है, शीतला माता का । कमला नदी यहाँ से तीखा मोड़ लेकर दक्षिण की ओर बहने लगी है । शीतला माता की मूर्त्ति का आकार है 16 × 20 ईंच और यह भूरे पत्थर की है । प्राचीन होते हुये भी यह किसी शौकिया मूर्त्तिकार द्वारा उत्कीर्ण की गयी थी । इसी मन्दिर परिसर में एक पीपल के पेड़ के नीचे कसौटी पत्थर और 60 ईंच ऊँचा भगवान विष्णु का मूर्त्तिखंड है। इस मूर्त्तिखंड में मिथिलाक्षर में एक लेख है । इस लेख के अंत में 700 का अंक

लिखा है। मूर्तिखंड के निकट ही एक और भी मूर्तिखंड है। यह भी प्राचीन है और कसौटी पत्थर की। ये सभी वस्तुएँ शीतला माता की मूर्त्ति सहित यहीं,नदी में पाई गयी थी। यह स्थान अभी मन्दिरघाट के नाम से प्रसिद्ध है जबकि मन्दिर अभी नवीन है। उपरोक्त कथित अंग्रेज का आवास इसके निकट ही थ और सुपौल बाजार से उसके आवास में जाने का रास्ता यहीं होकर रहा था। अतः विशेष सम्भावना यही है कि उसी अंग्रेज ने इसे अनुपयुक्त समझ नदी में फेंका हो।

चित्र–212, विष्णु मूर्त्ति अभिलेख (बिरौल)

चित्र–213. विष्णु मूर्त्ति अवशेष (बिरौल)

चित्र–214, शीतला माता (बिरौल)

शाहपुर गोनौन

जिला दरभंगा, प्रखण्ड घनश्यामपुर का यह गाँव जिला मुख्यालय से पूरब की ओर करीब 50 कि०मी० दक्षिण होगा । यह क्षेत्र कई दशकों तक कोशी की बाढ़ से आक्रांत रहा था । यहाँ एक प्रसिद्ध धार्मिक स्थान है दुर्गा-स्थान । इस स्थान के प्रति लागों में अगाध आस्था है । यहाँ जो भी मन्नत की जाती है उसकी पूर्त्ति अवश्य होती है । बदले में ब्राह्मण-भोजन या कुँआरी भोजन होता है । मैं जब वहाँ पहुँचा था, दो कुँआरी कन्यायें चूड़ा-दही खा रही थीं। इस स्थान की स्थापना के सम्बन्ध में प्रचलित दन्तकथा इस प्रकार है -

यहाँ मात्र एक परिवार मैथिल कर्ण कायस्थ का है जिसका मूल है **अमहला सँ गोनौन** । इसी परिवार का एक सदस्य आज से पाँच पीढ़ी पूर्व (करीब 250 वर्ष पहले) दक्षिण की ओर एक दूसरे गाँव में प्रति दिन भगवती की पूजा करने जाया करता था । जब वह शरीर से कुछ असमर्थ हुआ तो भगवती से अपने गाँव ही चलने की प्रार्थना की । दूसरे प्रयास में वह भगवती को यहाँ तक लाने में सफल रहा और तब से यहाँ पूजा होती रही है । यहाँ भगवती क्या किसी भी देवता की मूर्त्ति नहीं है । नवीन मंदिर एक पुराने पीपल के पेड़ को घेरकर तैयार किया गया है । सतह से करीब चार फीट उपर इस पेड़ की जड़ में एक प्रस्तरशिला फँसी हुई है । कुछ शिला और छोटे-छोटे पत्थर-खण्ड एक मंच पर है । इसी की यहाँ पूजा होती है । एक भी प्रस्तरशिला ऐसी नहीं जो एक व्यक्ति अकेला उठा कर इसे एक सौ मीटर तक ले जा सके । अर्थात् विज्ञान की कसौटी पर दन्तकथा का मेल नहीं है । लेकिन आस्था के लिये इन बातो की आवश्यकता नहीं होती । गाँव वालों को इस कथा में पूर्ण विश्वास है।

जो कुछ यहाँ उपलब्ध है, वह क्या कहता है ? इस ओर ध्यान देने से साबित होता है, कि गाँव अत्यन्त प्राचीन है। गोनौन मूल के कर्ण कायस्थ महिनाम गाँव (बेनीपुर के निकट) में हैं अर्थात् चौदहवीं शताब्दी में यह गाँव भरा-पूरा और आबाद था । मुसलमानी आक्रमण के समय यह खण्डहर बना । इस समय के यहाँ के निवासी 300 वर्ष से अधिक पुराने नहीं है । यहाँ कई घर

मुस्लिम परिवार के भी हैं जो सबसे ऊँचे निवास स्थान पर हैं। वह पीपल का पेड़ जिस पर शिला है, पाँच सौ वर्ष से अधिक पुराना नहीं है। यह पेड़ प्राचीन मंदिर के अवशेष पर निकल आया है और पेड़ की जड़ में टिकी एक शिला तथा मंच पर रखा एक शिला प्राचीन मंदिर का अवशेष है। प्राचीन मूर्ति का मात्र एक छोटा सा ही अंश यहाँ देखने को मिलता है जो किसी भी देवी या देवता का हो सकता है। यह कहीं दूसरी जगह से भी लाकर यहाँ रखा गया हो, यह भी सम्भव है। यहाँ जमीन खोदने पर जो ईंटें मिलती हैं, इनका आकार है 12.5×9.5×2.5 ईंच जो गुप्त काल की ओर इशारा करता है। अत: गाँव की प्राचीनता का साक्ष्य तो उपलब्ध है लेकिन देवी या किसी अन्य देवता की कोई मूर्त्ति उपलब्ध नहीं है।

चित्र–215, मूर्त्ति अवशेष (गोनौन)
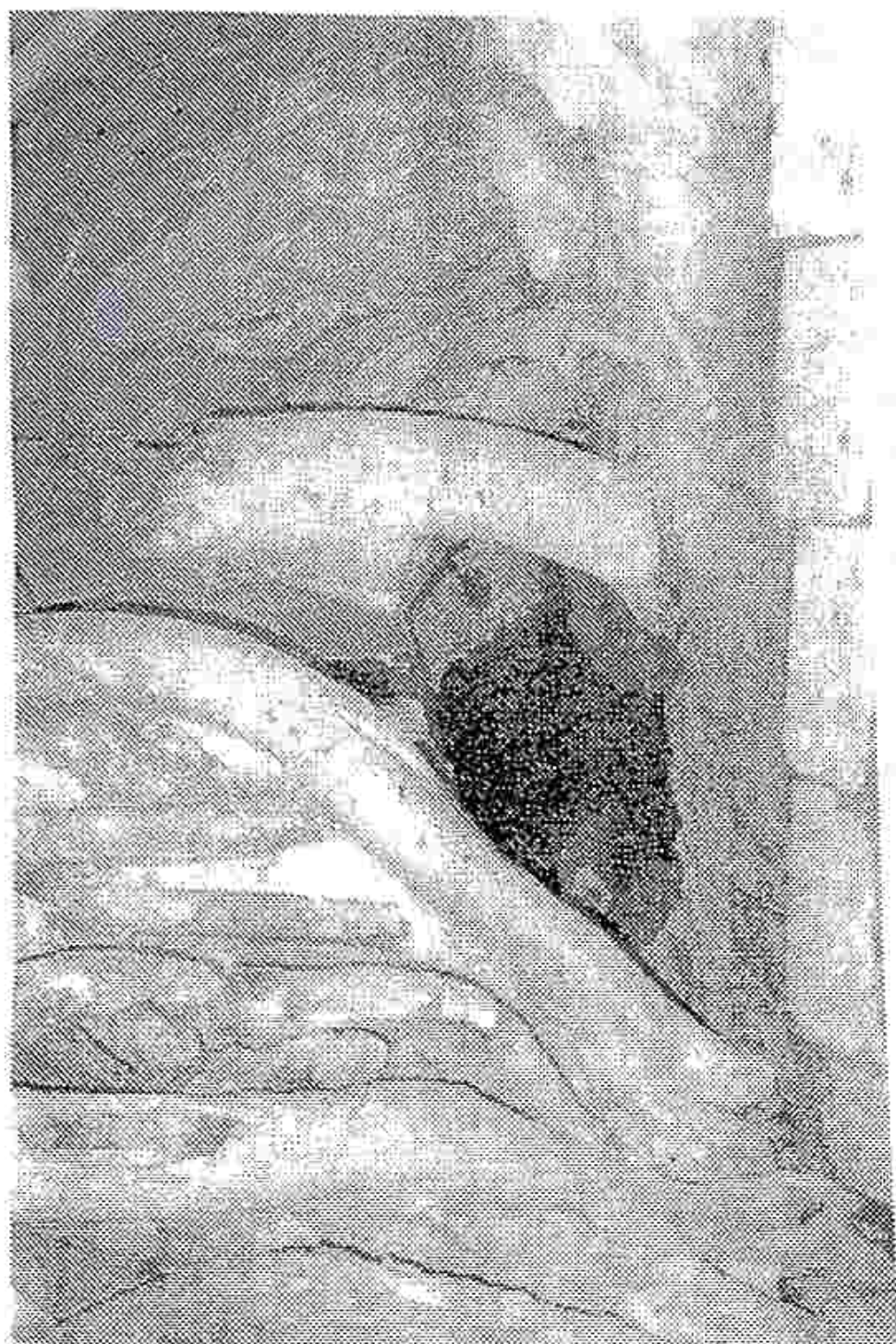
चित्र–216, मन्दिर अवशेष (गोनौन)

मदरिया

जिला दरभंगा और बेनीपुर अनुमंडल का एक प्रसिद्ध गाँव है कुर्सोंनदियामी। यह गाँव तारडीह प्रखण्ड में पड़ता है। कुर्सोंनदियामी की चर्चा दर्शनीय मिथिला के षष्ठ पुष्प में की गई है। यहाँ कई प्राचीन पाषाण प्रतिमायें मिली हैं। मदरिया गाँव कुर्सोंनदियामी से मात्र एक कि०मी० पश्चिम है और इसे वैका-मदरिया पंचायत कहा जाता है। तारडीह जो एक नवसृजित प्रखण्ड है इसी पंचायत में है। दरभंगा जिला मुख्यालय से मदरिया की दूरी करीब 55 कि०मी० है। इस गाँव में एक परिवार श्री श्याम नारायण झा का है जिनके घर में एक विष्णुमूर्त्ति गुप्तकालीन है। इसकी उँचाई है 20 ईंच। दुर्गास्थान कुर्सोंनदियामी की भी एक विष्णुमूर्त्ति इसी शैली और काल की है।

श्री झा के घर में यह मूर्त्ति करीब 150 वर्ष से पूजित है। यह मूर्त्ति व्यक्तिगत संग्रह में है क्योंकि इनके पूर्वज स्व० पं० मुरलीधर झा को कमला नदी की एक मृत शाखा के किनारे 150 वर्ष पूर्व मिली थी। कमला नदी की यह मृत शाखा मदरिया गाँव से पश्चिम है। यह गाँव कुर्सोंनदियामी का ही एक टोला माना जाता है जहाँ अनायास एक प्राचीन तालाब में महिषासुरमर्दिनी, विष्णु, गिरिजा, सूर्य, अर्द्धनारीश्वर तथा अन्य और भी कई शण्डित मूर्त्तियाँ मिली थीं। इससे इस क्षेत्र का पुरातात्विक महत्त्व आँका जा सकता है। कुर्सोंनदियामी करीब 5 कि०मी० के व्यास में फैला हुआ है। यहाँ की वासभूमि अति उत्तम और अति प्राचीन है। यह एक प्राचीन नदी का तटीय भाग है।

चित्र–217, भगवान विष्णु (मदरिया)

महिया

कुर्सोनदियामी से करीब डेढ़ कि०मी० उत्तर गाँव है मछैता और मछैता से डेढ़ कि०मी० उत्तर महिया। महिया राजपूतबहुल गाँव है। यहाँ गाँव के किनारे दक्षिण भाग जो कुछ समय पूर्व तक आबादी रहित रहा होगा लेकिन अब यहाँ लोग बसने लगे हैं – दो तालाब, उत्तर-दक्षिण के पास ही पास हैं। दोनों तालाबों के मध्य का भिण्डा एक है। इस भिण्डे पर एक प्राचीन बड़गद का पेड़ है जो करीब 7–8 सौ वर्ष पुराना है। इस पेड़ के निकट पश्चिम एक नवीन मन्दिर में करीब दो फुट ऊँची शिरविहीन भगवान बुद्ध की मूर्त्ति स्थापित है। इस मूर्त्ति को लोग यहाँ दुर्गा के नाम से पूजते हैं और यह स्थान दुर्गास्थान के नाम से प्रसिद्ध है। इसके निकट ही एक और छोटा मन्दिर है जिसमें एक प्राचीन शिवलिंग है। यह शिवलिंग और भगवान बुद्ध की मूर्त्ति करीब दो-ढाई सौ वर्ष पूर्व दक्षिण के तालाब में मिली थी।

मछैता से एक पथ महिया गाँव तक गया है। गाँव में प्रवेश करने से पूर्व ही एक तिराहा है। इस तिराहे से पश्चिम निकला पथ ही भगवतीस्थान तक पहुँचता है। यह पथ उत्तरी तालाब के उत्तरी भिण्डे से पश्चिम की ओर बढ़ गया है। इस तालाब के पूर्वी भिण्डे से होकर दुर्गास्थान तक जाया जा सकता है। महिया गाँव दरभंगा जिला और तारडीह प्रखण्ड में पड़ता है।

दर्शनीय मिथिला के आठ पुष्प

विषय–सूची

दर्शनीय मिथिला के आठ पुष्प
विषय–सूची

चित्र–218, भगवान बुद्ध (महिया)

खड़ड़्क

यह गाँव मधुबनी जिला के प्रसिद्ध जिला के प्रसिद्ध गाँव सरिसव-पाही से पूरब और लोहना गाँव से पश्चिम पैटघाट के निकट मुख्य पथ के दक्षिण है । इस गाँव के पश्चिम उत्तर जो कभी जंगल था, कुछ मूर्त्तियों के प्राचीन अवशेष एक खण्डहर में प्राप्त किये गये। यहाँ एक तालाब भी है। इसी तालाब के दक्षिणी भिण्डे पर एक नवीन मन्दिर बनाकर इसमें उन्हें स्थापित कर दिया गया है । इसे दुर्गा-मन्दिर कहा जाता है जबकि दुर्गा की मूर्त्ति नहीं बलिक गंगा की एक प्राचीन खण्डित मूर्त्ति यहाँ स्थापित है। बगल में है एक पत्थर का पिंड जिसे दुर्गा कहा जाता है। इसी परिसर में शिव मन्दिर भी है। शिवलिंग और नन्दी प्राचीन हैं।

चित्र–219. गंगा मूर्ति अवशेष (खड़क)

अबाम

मधुबनी जिला का एक प्रसिद्ध गाँव है उजान जो दरभंगा-झंझारपुर मुख्य पथ पर विदेश्वर-स्थान से एक कि०मी० दक्षिण है। और अबाम गाँव उजान से मात्र एक कि०मी पूरब। यहाँ एक प्राचीन तालाब के दक्षिण महाराज रमेश्वर सिंह द्वारा निर्मित शेषशायी भगवान लक्ष्मीनारायण का एक मन्दिर है। इस तालाब में एक विष्णु-मूर्त्ति, एक सूर्यमूर्त्ति का खण्डित अंश, प्राचीन मन्दिर के कुछ पत्थर अवशेष और भगवान लक्ष्मीनारायण की मूर्त्ति महाराज के विवाह से पूर्व मिली थी। महाराज ने अपने कोबर के उपलक्ष्य में यह मन्दिर बनबा दिया था। शेषशायी भगवान लक्ष्मीनारायण की यह मूर्त्ति मिथिला में अद्वितीय है।

चित्र–220, सूर्य मूर्ति अवशेष (अबाम)

चित्र–221. लक्ष्मी नारायण (अबाम)

चित्र–222. विष्णु मूर्त्ति अवशेष (अबाम)

हुलासपट्टी

कसौटी पत्थर 52×27 ईंच आकार, मिथिला शैली, कर्णाट-काल (बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी) और भव्य ओपदार भगवान विष्णु की एक मूर्ति जगेसर महादेव मंदिर हुलासपट्टी में है ।

हुलासपट्टी मधुबनी जिला के फुलपरास अनुमंडल से मात्रा 5 कि०मी० पश्चिम एक गाँव है । दरभंगा-फुलपरास मुख्य पथ पर दरभंगा जिला मुख्यालय से 60 कि०मी० दूर पूर्व की ओर एक गाँव है ब्रह्मपुर । यहाँ से मात्र तीन कि०मी० दक्षिण और गाँव हुलासपुर से मात्र 500 मी० दक्षिण एक विस्तृत उपजाऊ जमीन के मध्य करीब पाँच एकड़ का भूभाग आसपास की जमीन से ऊँची है । इसी ऊँचे भूभाग पर एक सबसे ऊँचा टीला है । एक प्राचीन पेड़ और तिब्बती शैली का नवीन मंदिर यहाँ दूर से दिखाई पड़ता है ।मंदिर से पूरब एक प्राचीन तालाब भी है । यहाँ मात्र शिव मंदिर ही नहीं, कुछ और भी सार्वजनिक पक्का मकान तथा तीन और छोटे-छोटे मंदिर भी हैं । अन्य मंदिरों की मूर्त्तियाँ प्राचीन नहीं हैं । पेड़ के नीचे जड़ में प्राचीन शिवालय का कुछ अंश पत्थर के अवशेष के रूप में यहाँ नजर आता है । ये पत्थर मकरमुख जलटोटी के हैं जो स्थान की प्राचीनता स्पष्ट करने के लिए एक सशक्त प्रमाण है ।

जगेसर स्थान कम से कम दो बार इससे पूर्व खिला और मुरझाया था । प्रथम बार बारहवीं शताब्दी से पूर्व इसे भूकम्प ने झकझोड़ा था और दूसरी बार चौदहवीं शताब्दी या इसके बाद मूर्त्ति-विरोधी ताकत का यह शिकार हुआ । भगवान विष्णु की मूर्त्ति को इन्हीं मूर्त्ति-विरोधी ताकतों ने बड़ी बेरहमी से तोड़ाफोड़ा । मूर्त्ति का मुकुट, नाक, आँख, हाथ और मूर्त्ति पीठिका का कुछ बायाँ अंश तोड़ दिया गया है । प्राकृत आपदा में इस प्रकार से चुन-चुन कर मूर्त्तियों का भग्न होना सम्भव नहीं है । यह मूर्त्ति कई दशक पहले यहीं के तालाब में तब मिली थी जब तालाब का नवीकरण किया जा रहा था ।

इस सम्पूर्ण क्षेत्र में बाबा जगेसर नाथ की बड़ी ख्याति है और प्रत्येक रविवार को यहाँ मेला जैसा दृश्य रहता है । यहाँ का प्रबन्धन भी बहुत अच्छा है । व्यवस्थापक मिलनसार और मृदुभाषी हैं । घोघरडीहा रेलवे स्टेशन पहुँच कर भी भयहाँ तक मजे से पहुँचा जा सकता है ।
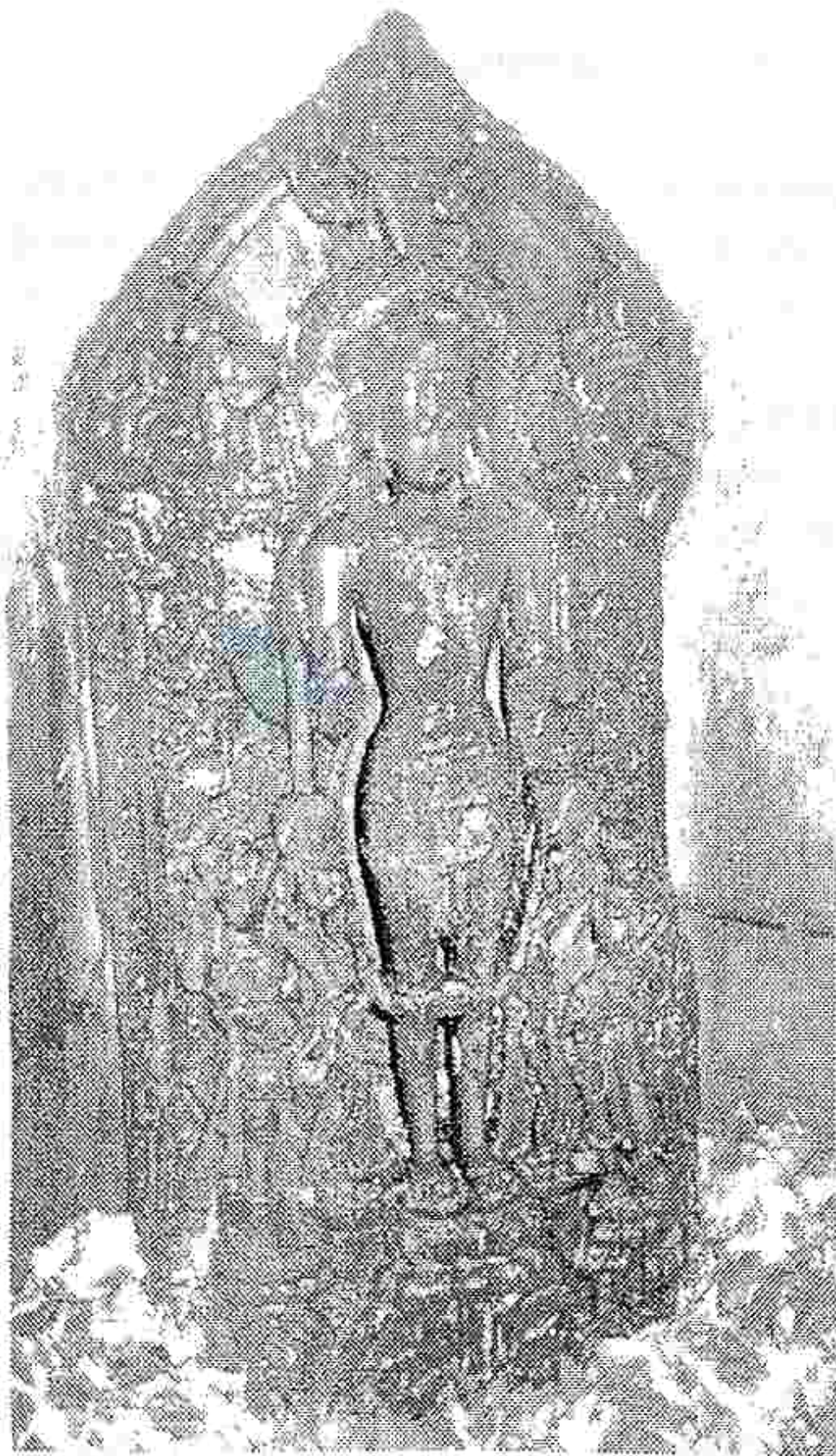
चित्र–223, विष्णु मूर्त्ति (हुलासपट्टी)

इटहरबा

इटहरबा बलान नदी के किनारे बसा एक नवीन गाँव है । यहाँ परबतिया टोल नामक स्थान पर ठीक नदी के किनारे एक उँचे टीले में पाँचवीं शताब्दी से पूर्व का एक शिवलिंग और इसी का मकरमुख यहाँ मिट्टी खोदने के क्रम में मिली हैं ।

मधुबनी जिला का प्रखण्ड मुख्यालय बाबूबरही है और यह एक बाजार भी है । दरभंगा जिला मुख्यालय से यह स्थान उत्तर-पूर्व की ओर करीब 60 कि०मी० दूर है । बाबूबरही बाजार से ठीक उत्तर करीब पाँच कि०मी० दूर यह परबतिया टोल है । 1880 ई० में इटहरबा गाँव का नामोनिशान तक नहीं था । यह गाँव इसके बाद ही बसा है और नया है । लेकिन यहाँ की भूमि वासस्थान की दृष्टि से नई नहीं, जिसका प्रमाण है यहाँ का शिवालय और इस शिवालय के निकट प्राप्त पुरातात्विक अवशेष ।

मिथिला की नदियाँ प्राय: प्रत्येक तीन-चार सौ वर्षों के अन्तराल पर अपना रूप बदल लिया करती हैं। लेकिन बलान नदी के सम्बन्ध में यह धारणा गलत साबित हो रही है । यहाँ बलान नदी पूर्वोत्तर दिशा से आकर एक अर्द्धवृत्त बनाकर पश्चिमोत्तर दिशा का रुख कर लेती है । कुछ ही आगे बढ़ने पर यह दक्षिण पश्चिम की ओर बढ़ने लगी है और पिपराघाट के पूर्व ही कमला नदी से संगम करती है । परबतिया टोल का शिवालय इस नदी का बायाँ तट है । यहाँ जो पुरातात्विक अवशेष मिले हैं, वे भूरे और ठोस पत्थर के हैं । इसका शिल्प बहुत प्राचीन है (पाँचवीं शताब्दी से पूर्व की)। भूकम्प के कारण प्राचीन शिवालय के गिरने पर बारहवीं शताब्दी के आस-पास पुन: यहाँ शिवलिंग की स्थापना हुई थी । पूर्व मंदिर के अवशेष पर ही नया मंदिर भी बना था । यह मंदिर भी किसी कारण से गिर गया और इस समय का मंदिर नया है ।

बारबार एक ही स्थान पर शिवालय के बनाये जाने में नदी की सुविधा ही महत्वपूर्ण रही है । साथ ही यहाँ आबादी बसती और उजरती रही है, इसका भी प्रमाण है, 1886 ई० में प्रारम्भ किये गये सर्वे में इटहरबा गाँव का न होना । इटहरबा नाम सम्भवत: इटगढ़बा का बदला रूप है जो यहाँ भग्नावशेष की उपलब्धि का द्योतक है । मैं दो ऐसे स्थान को जानता हूँ जिसे इटगढ़िया कहा जाता था और यहाँ

खोदने पर प्राचीन शिवालय या धर्मालय निकला । मैथिली में बनाने का पर्यायवाची है गढ़ना और इसी से गढ़ुआ हुआ है । ईंट गढ़ना-इटगढ़िया । इसी तरह ईंट गढ़ुवा – इटगढ़वा (इटहरवा) । सम्पूर्ण इटहरवा गाँव ही प्राचीन गाँव के अवशेष पर बसा एक नया गाँव है ।
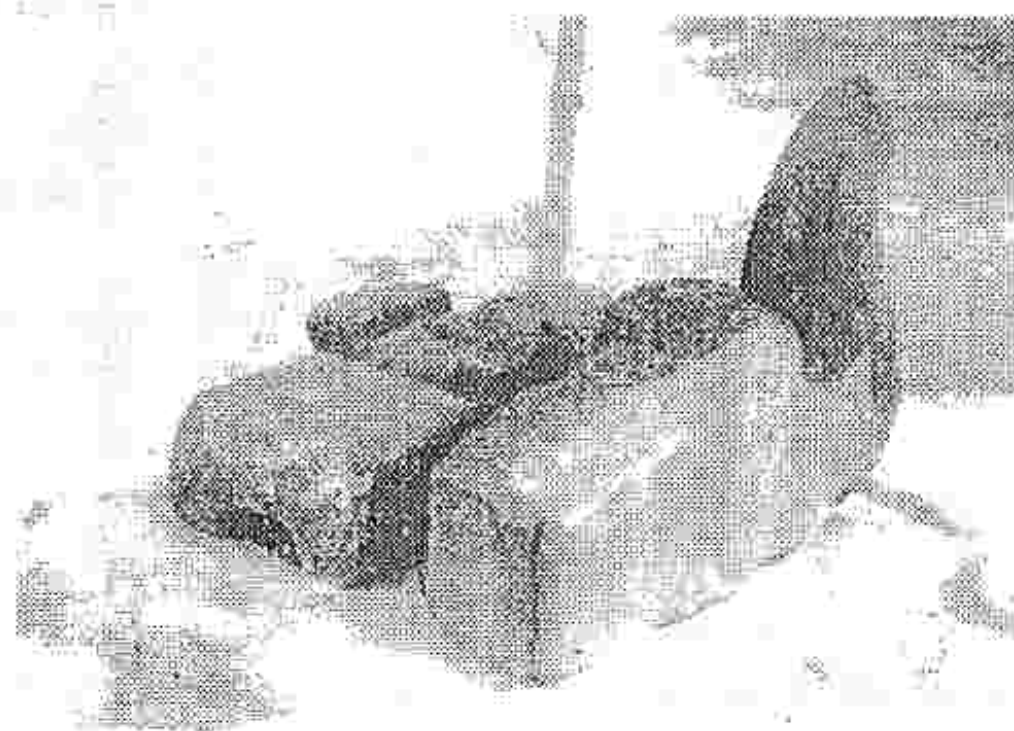
चित्र–224, शिवलिंग अवशेष 'क' (इटहरवा)

चित्र–295. शिवलिंग अवशेष 'ख' (इटहरवा)

भवानीपुर

प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं का धनी जिला मधुबनी में एक प्रखण्ड है, पण्डौल। इस प्रखण्ड मुख्यालय से मात्र दो कि०मी० पूरब भवानीपुर नामक गाँव मिथिला की सांस्कृतिक आस्था से जुड़े गाँवों में से एक है। कवि कोकिल विद्यापति के सम्बन्ध में जिसे थोड़ा भी ज्ञान है, वे उगना के नाम से अवश्य परिचित होंगे। उगना नामधारी यह भृत्य स्वयं भगवान शिव थे जैसा कि यहाँ लोककथा प्रचलित है। इन्होंने उगना नाम से भृत्य के रूप में रहकर विद्यापति की सेवा की थी । पहचान लिये जाने पर इन्होंने विद्यापति का साथ छोड़ दिया। जैसा कि कहा जाता है भवानीपुर का शिवलिंग वही उगना है।

भवानीपुर गाँव में ही गाँव से उत्तर उगना नाम से प्रसिद्ध शिवलिंग एक बहुत ही सुन्दर मन्दिर में स्थापित है। कसौटी पत्थर का यह शिवलिंग एक स्थान पर कुछ गढ़ा लिये हुए है जो आघात झेलने का है। सम्भवत: प्राचीन मन्दिर के गिरने पर यह आघात लगा हो। इसी शिवालय में उत्तर की ओर एक छोटी कोठरी में प्राचीन कसौटी पत्थर की एक बहुत ही सुन्दर और चमकीली (औपदार) मूर्त्ति स्थापित है। यह मूर्त्ति भगवान विष्णु की है जो करीब 40 ईंच ऊँची है। प्रतीक चिन्ह सहित इस मूर्त्ति के दो हाथ कोहुनी के पास से टुटे हुए और मुकुट भी क्षतिग्रस्त है।

भगवान विष्णु का प्रतीक चिह्न है, शंख, चक्र, गदा और पद्म। यह प्रतीक चिन्ह बायीं ओर के नीचे के हाथ से प्रारम्भ होकर दायीं ओर के नीचे के हाथ पर पहुँच कर समाप्त होता है। विष्णु का यह प्रतीक चिन्ह यदि इस क्रम से भिन्न है तो विष्णु-मूर्त्ति होते हुए भी नाम बदल जाता है। यथा नारायण, जनार्दन, अच्युतानन्द आदि-आदि। इस मूर्त्ति का मात्र दो ऊपर का हाथ शेष है। इन हाथों में से बायीं ओर के हाथ में है शंख और दायीं ओर के हाथ में गदा। अत: ब्रायीं ओर के नीचे के हाथ में चक्र और दायीं ओर के नीचे के हाथ में पुष्प रहा होगा। प्रतीक चिह्न का यह क्रम मिथिला में मिलने वाली अन्य मूर्त्तियों का प्रतीक चिह्न है शंख, चक्र, गदा और पद्म उपर्युक्त क्रम से। अत: यह मूर्त्ति जनार्दन अथवा केशव नाम से

सम्बोधित विष्णु की है।

भगवान विष्णु की यह मूर्ति 25 प्रतिशत भग्न है। भग्न का लक्षण मन्दिर के गिरने का है। अतः शिवलिंग और विष्णुमूर्ति यहीं के किसी खण्डहर से निकाल कर कभी स्थापित की गई होगी। लेकिन ऐसा कब हुआ और ये पुरातात्विक वस्तुएँ कहाँ मिली, यह तो कोई नहीं जानता है। अधिक उम्मीद तो यही है कि अभी जहाँ नवीन मन्दिर है, प्राचीन मन्दिर का भी खण्डहर यहीं जमीन के नीचे हो। शिवलिंग अभी यहाँ के सतह से पाँच फीट नीचे है। शिवलिंग का इतना नीचे होना भी इसी बात का प्रमाण है कि प्राचीन खण्डहर भी यहीं है।

चित्र–226. भगवान विष्णु (भवानीपुर)

जितवारपुर (हरिनगर)

मधुबनी जिला मुख्यालय से मात्र तीन किलोमीटर उत्तर एक गाँव है जितवारपुर । मिथिला पेंटिंग में राष्ट्रपति पुरस्कार से पुरस्कृत सीता देवी यहीं की रहने वाली है । यह गाँव गृह-उद्योग के रूप में विकसित मिथिला पेंटिंग के केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध है । इस गाँव के मध्य होकर दक्षिण से उत्तर की ओर मुख्य पथ गया है । प्रारम्भ में सड़क से पूरब का क्षेत्र एक दूसरे गाँव हरिनगर का है जिसमें काली स्थान प्रसिद्ध है । काली स्थान से पूरब का क्षेत्र आम का बगीचा है । इसी बगीचा में है एक भैरव स्थान जो काली स्थान से मात्र 100 फीट पूरब है यहाँ भगवान विष्णु की एक मूर्त्ति 28 × 12 ईंच आकार की, 60 प्रतिशत क्षतिग्रस्त और कसौटी पत्थर की तथा पूजित खुले आकाश के नीचे है ।

यह मूर्त्ति यहीं की है अथवा कहीं से लाकर यहाँ रखी गई, कोई नहीं जानता । पुरातात्विक दृष्टि से महत्त्वहीन होते हुए भी आध्यात्मिक महत्त्व इसे यहाँ प्राप्त है । यद्यपि यहाँ यह लक्ष्मीनारायण की मूर्त्ति नहीं है तथापि यहाँ ये लक्ष्मीनारायण के नाम से ही प्रसिद्ध है ।

चित्र–227, भगवान विष्णु (जितवारपुर)

कालिकापुर

दरभंगा-जयनगर मुख्य पथ पर दरभंगा से उत्तर करीब 38 कि० मी० दूर एक स्थान है कलुआही । कलुआही मधुबनी जिला का एक प्रखण्ड मुख्यालय भी है। यहाँ से करीब 8 कि० मी० मुख्य पथ पर आगे बढ़ने पर एक नहर मिलता है। कालिकापुर यहाँ से पूर्व-दक्षिण दिशा में करीब 3 कि० मी० दूर एक बड़ा गाँव है। गाँव से पश्चिम और गाँव का सर्वमान्य धार्मिक स्थान (कालीस्थान) यही है। इस स्थान में कथित काली की प्राचीन मूर्ति के अतिरिक्त एक पंचमुख शिवलिंग बहुत महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त एक शिवलिंग भी प्राचीन है जो काली के बगल में ही स्थापित है। देवी काली वहीं स्थापित हैं, जहाँ ये पाई गई थीं। कहा जाता है कि इसी देवी के नाम पर इस गाँव का नाम कालिकापुर पड़ा है । शिवलिंग और देवी काली एक ही काल की हैं । दोनों का शिल्प भी एक ही है ।

पुरातत्त्व के अन्तर्गत मात्र एक ही काला और एक ही शिल्प कह देने से काम नहीं चल सकता है । इसकी कुछ व्याख्या आवश्यक हो जाती है । शिल्प से भी अधिक विवादास्पद है शैली । क्योंकि पुरातत्त्व के अन्तर्गत कई विशेषज्ञों ने इसकी मानकता और व्याख्या तैयार है । यह दूसरी बात है कि अन्य इससे सहमत हों या नहीं । अभी तक जो मानक इसका तैयार है, मैं उससे शत प्रतिशत सहमत नहीं हूँ। शैली से काल के अधिकाधिक निकट पहुँचने में सहायता मिलती है । कालिकापुर में मिले पंचमुख शिवलिंग और काली की मूर्त्ति गुप्तकाल से पूर्व की है, लेकिन कितना पूर्व इसका दावा नहीं किया जा सकता है ।

पंचमुख शिवलिग अपने ढंग का अकेला है । यद्यपि यह क्षतिग्रस्त है, पर चारों ओर शिव के चार रूप में अंकित हैं । सम्पूर्ण शिवमूर्त्ति अन्य पंचमुख शिवलिग में अन्यत्र और कहीं उपलब्ध नहीं है । काली की मूर्त्ति मात्र आधा सतह से उपर है । इसका कारण जो मुझे बताया गया धर्मभीरु भक्त या जनता के लिए विवशता कही जा सकती है लेकिन पुरातत्व इसे नहीं मानता । पुरातत्व इसे खण्डित मूर्त्ति के रूप में पहचान करेगा । यहाँ लोगों का कहना है कि सतह से उपर लाने का प्रयास किया गया था लेकिन सर्प की उपस्थिति के कारण मूर्त्ति को वहीं छोड़ दिया गया जितना अंश जमीन से ऊपर था । मूर्त्ति बहुत बड़ी नहीं है ।

यह मूर्त्ति पीठिका सहित करीब सवा दो फीट ऊँची है । जिसमें मात्र करीब 14 ईंच अभी सतह से उपर है जिसका फोटोग्राफ लिया जा सका । मूर्त्ति का जो अंश जमीन के नीचे है या नहीं है, अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि मूर्त्ति कमलासन पर बैठी हैं और इस आसन के पास ही शक्ति का प्रतीक चिह्न सिंह बैठा होना चाहिए । इस मूर्त्ति को भगवती तो कहा जा सकता है, काली कभी नहीं । काली मूर्त्ति के लिए शास्त्रीय विधान निश्चित है जिसके प्रतिकूल मुझे यह मूर्त्ति लगती है ।

इस मूर्त्ति के चार हाथ हैं । एक में खड्ग, दूसरे में ढाल और दो हाथ जप की मुद्रा में, मुद्रा सौम्य । एक इसी प्रकार की मूर्त्ति वारी नामक गाँव(सिंधिया) में पाई गई है जिसका फोटोग्राफ इसी पुस्तक में वारी शीर्षक के अन्तर्गत देखा जा सकता है । यद्यपि इस मूर्त्ति को छह हाथ हैं और मुद्रा भी भिन्न है । वारी की मूर्त्ति गुप्त काल की है जिसमें शास्त्रीय विधान एक होते हुए भी विकसित शिल्प और शैली का व्यवहार हुआ है । लेकिन इसी शैली का अनुकरण हुआ है ।

मैंने माना है कि यह मूर्त्ति गुप्तकाल से पूर्व की है । इस सम्बन्ध में मैं इसका मूर्त्तिकार बनकर इसी युग में प्रवेश कर अपना आस-पास देखना चाहूँगा । शास्त्रीय विधान निश्चित होने पर भी कोई मूर्त्तिकार अपने युग से उपर उठकर मूर्त्ति उत्कीर्ण नहीं करता है । उसका यह युग है वस्त्र, आभूषण, प्रतीक चिह्न में उत्कीर्ण तत्कालीन वस्तु और विकसित शैली । इस मूर्त्ति में न्यूनतम आभूषण है जो अनगढ़ भी । मुकुट की स्थिति भी यही है । वस्त्र है ही नहीं और ढाल तथा तलवार पत्थर को है । ये ही वस्तुएँ वारी की मूर्त्ति में भी देखी जा सकती हैं और युग की पहचान की जा सकता है । अथात् यह मूर्त्ति उस युग की है जब मानव पत्थर और धातु के सन्धि युग पर था । अपने युग की यह सर्वोत्तम कृति है ।

कालिकापुर में इस देवी के सम्बन्ध में कई आध्यात्मिक चमत्कार भी मुझे सुनने को मिला । इस चमत्कार में आस्था ही धर्म का मूल मंत्र है । अतः मुझे खुशी है कि इस गाँव में देवी के प्रति इतनी गाढ़ आस्था है ।

चित्र–228, भगवती (कालिकापुर)
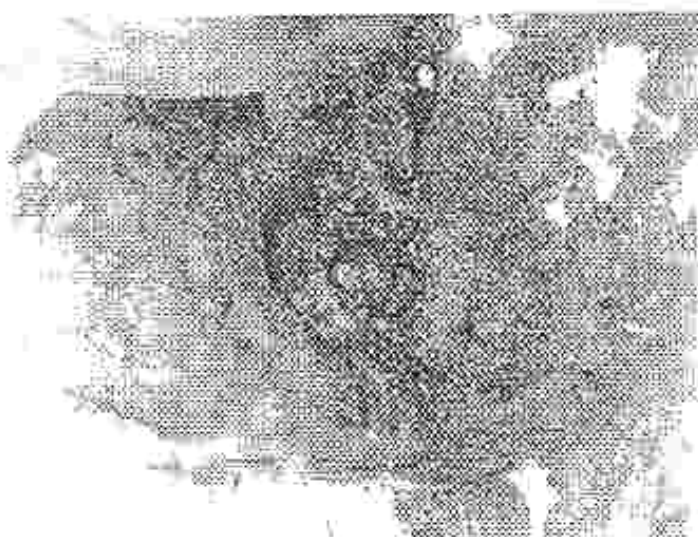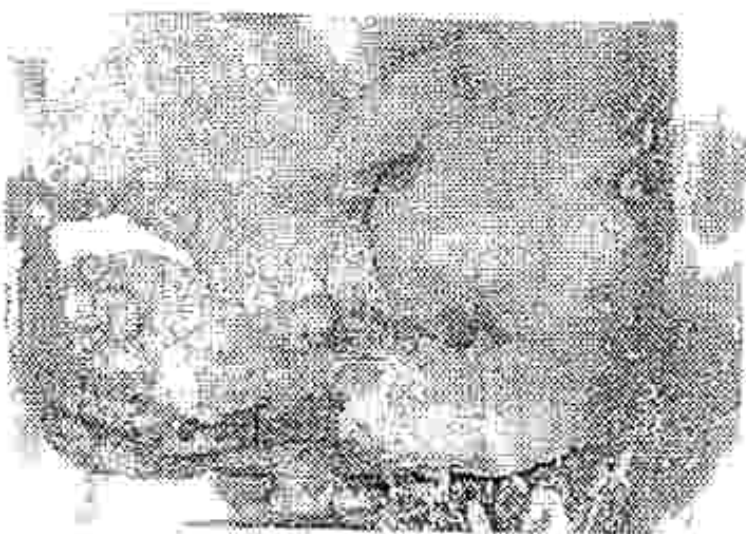
चित्र–229. शिवलिंग अवशेष (कालिकापुर)

नरार

दरभंगा-जयनगर मुख्य पथ पर एक प्रसिद्ध गाँव नरार जयनगर से करीब 10 कि०मी० पहले ही दक्षिण-पश्चिम की ओर है । नरार में कई टोल हैं, लेकिन इसके पछवारि टोला और मुख्य पथ के पूरब पीपल के पेड़ के नीचे एक विशाल विष्णुमूर्त्ति की मात्र आधारशिला ही दिखाई पड़ती है । यह मूर्त्ति पाँव के निकट से टूटी है । नरार का दूरभाष केन्द्र इसके पास ही है ।

खोज करने पर पता चला की यह मूर्त्ति-खण्ड यहाँ से 1 कि०मी० दक्षिण एक डीह में अनायास मिला था । इस मूर्त्तिखण्ड की चौड़ाई करीब 32 ईंच है और यह कसौटी पत्थर मिथिलाशैली की विष्णु मूर्ति का अंश है । चौड़ाई के अनुपात में यह मूर्त्ति करीब 7 फीट ऊँची रही होगी जो एक विशाल मूर्त्ति की ऊँचाई है । जहाँ यह मिली है, इसका टूटा अंश भी यहीं कहीं होना चाहिये । लेकिन इसे खोजे कौन? यह डीह ईंटों भरा है जो मन्दिर का संकेत है और मूर्त्ति अंश का यहाँ होना एक ठोस प्रमाण ।
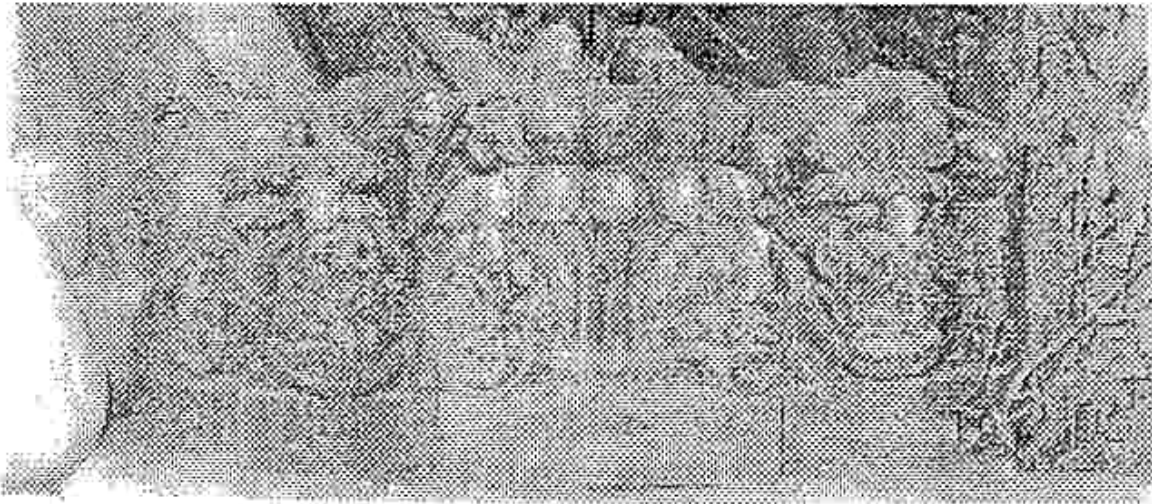
चित्र–230, विष्णुमूर्त्ति अवशेष (नरार)

जयनगर

दरभंगा जिला मुख्यालय से उत्तर की ओर करीब 70 कि० मी० दूर नेपाल की सीमा के निकट मधुबनी जिला का एक अनुमण्डल है जयनगर । यहाँ एक राजपूताना टोल है । इसी राजपूताना टोल में एक व्यक्तिगत विष्णु मंदिर श्री राजकुमार सिंह 'राजू' जी का है। बीसवीं शताब्दी के छठे दशक में राजू जी के पैतृक निवास से कुछ ही दूर पश्चिम जमीन के नीचे करीब 7 फीट, एक विष्णुमूर्ति मिली। यह मूर्ति करीब 34 ईंच लम्बी और 19 ईंच चौड़ी है । ओपदार चमकीले कसौटी पत्थर की यह मूर्ति मिथिला शैली और बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी की हैं।

मूर्त्ति जिस परिस्थिति मे मिली, वह मूर्त्ति भंजक से सुरक्षा के लिए छिपायी लगती है । लेकिन बाद में वह व्यक्ति जीवित नहीं बचा ताकि पुनः मूर्त्ति स्थापित कर सके। चौदहवीं शताब्दी में हुए मुसलमानी आक्रमण की विभीषिका इससे आँकी जा सकती है। छिपाने के समय मूर्त्ति अखंड थी, लेकिन प्राप्तिकाल में अजान होने के कारण इसकी मूर्त्ति पीठिका ऊपर की ओर से कुछ अंश टूट चुकी है। थोड़ा आघात मूर्त्ति के नाक पर भी है। मुझे इस काल और शैली की अनेकों विष्णु-मूर्त्तियाँ देखने को मिली है। लेकिन इस मूर्त्ति का संयोजन बहुत ही सरल और सुन्दर है। इससे मूर्तिकार का लम्बा अनुभव टपकता है।

चित्र–231, भगवान विष्णु (जयनगर)

वसुदेवा

वसुदेवा समस्तीपुर जिला और रोसड़ा अनुमंडल का एक गाँव है जो सिंघिया के निकट करीब 2 कि०मी० पूर्वोत्तर दिशा में कमला नदी की एक शाखा के अवशेष के तट पर बसा है । दरभंगा-कुशेश्वरस्थान भाया बहेड़ी मुख्य मार्ग पर दरभंगा जिला मुख्यालय से करीब 40 कि०मी० दूर, दक्षिण-पूर्व दिशा में सिंघिया एक प्रसिद्ध बाजार है । कमला नदी की वह शाखा जो सिंघिया से पाँच कि०मी० पूर्व से बहती है, कभी सिंघिया के निकट से ही बहकर करेह नदी में गिरती थी, अब यह शाखा मृत है । इसी मृत शाखा के तट पर बसा है गाँव वसुदेवा, जहाँ 1939 ई० और 1967 ई० में कई महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक अवशेष मिले थे ।

1939 ई० में नदी अवशेष के पाट में सिंचाई के लिये कुआँ खोदते समय कई पत्थर की शिलाएँ और दो मूर्त्तियाँ मिली थीं । उस कुँआ के सामने ही तट पर पहले से ही एक मन्दिर अवशेष था । यह मन्दिर अवशेष 12.5"×8.5"×2.25" आकार के ईंटों से भरा पड़ा है। मिलने वाली प्रत्येक वस्तु यहीं जमा की गई जो आज भी ज्यों की त्यों है। यह स्थान वसुदेवा गाँव के पछवारी टोला में पड़ता है । मूर्त्तियाँ और शिलाएँ कसौटी पत्थर की हैं । इनमें से एक मूर्त्ति विष्णु की है जिसकी ऊँचाई है करीब 45 ईंच और यह आंशिक रूप से भग्न है । दूसरी मूर्त्ति की मात्र आधार शिला है जो किसी विशाल मूर्त्ति की है । पीठिका सहित यह मूर्त्ति सात फीट से कम ऊँची नहीं रही होगी, आधारशिला देखकर यह अनुमान करना सहज है । इस आधारशिला पर मिथिलाक्षर में लेख भी है जो क्षतिग्रस्त है । आधारशिला पर जो कुछ भी है उसे देखने से लगता है कि यह विष्णुमूर्त्ति का ही आधारशिला है। अन्य शिलाएँ सादी हैं ।

उपर्युक्त स्थान से मात्र 200 मीटर दक्षिण-पूर्व की ओर इसी गाँव के पुबारीटोला में एक तालाब के किनारे एक छोटा शिव मन्दिर है। इस मन्दिर की दीवाल पर बाहर और आगे की ओर से उमामहेश्वर की एक अनुपम मूर्त्ति दीवाल में जड़ी है। यह मूर्त्ति और मन्दिर का शिवलिंग दोनों ही 1967 ई० में निकट के तालाब में तब मिले थे जब इस तालाब का नवीकरण किया जा रहा था।

उमा-महेश्वर की मूर्त्ति करीब 47 ईंच ऊँची है।

वसुदेवा गाँव में मिली उमा-महेश्वरकी मूर्त्ति शिल्प के आधार पर मिथिला शैली और कर्णाटकाल की है। उमा-महेश्वर की यह मूर्त्ति कसौटी पत्थर की है।

चित्र-232, विष्णु मूर्त्ति अभिलेख (वसुदेवा)
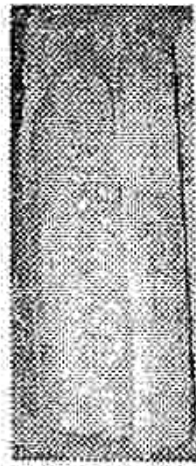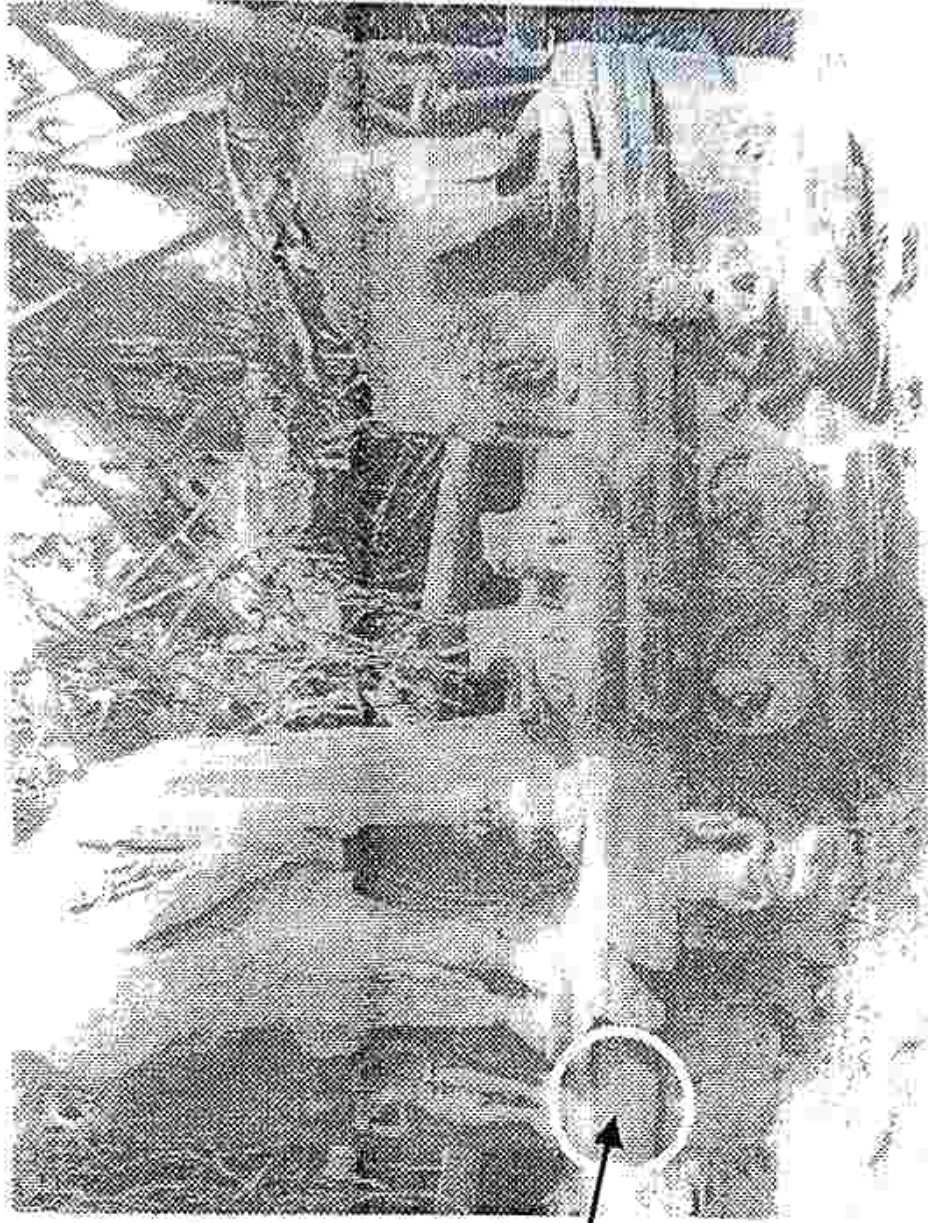
चित्र–233, विष्णु मूर्त्ति अवशेष (वसुदेवा)
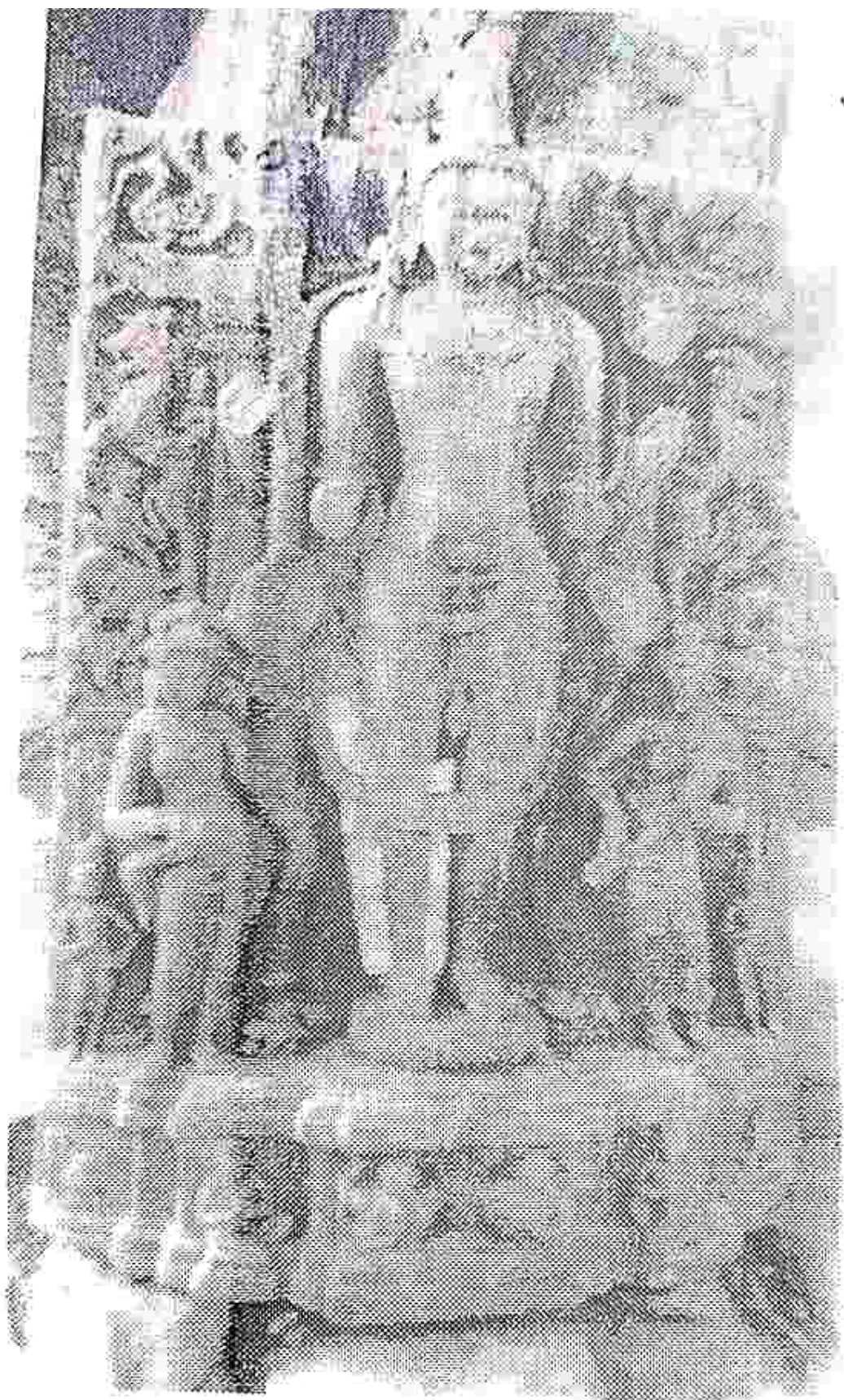
चित्र–234. विष्णु मूर्त्ति (वसुदेवा)

चित्र–235, उमा महेश्वर (वसुदेवा)

बसौली–भरिहर

जिला समस्तीपुर, अनुमंडल रोसड़ा और प्रखंड सिंघिया में एक गाँव है, भरिहर। यह गाँव बसौली के निकट है जो सिंघिया से करीब 5 कि०मी० उत्तर है। बसौली से उत्तर एक डीह है जिसे पांडव डीह कहा जाता है। यह भरिहर गाँव के अधीन है। यह डीह इस क्षेत्र में सबसे ऊँचा है जो कभी करीब पाँच कट्ठा में फैला रहा होगा। लेकिन इस समय यह सिमटकर मात्र दो कट्ठा में रह गया है। मिट्टी खोदने के क्रम में कई विशाल शिलाएँ मिट्टी के नीचे यहाँ मिली जो यत्र-तत्र फैली हुई हैं । ये शिलाएँ किसी प्राचीन मन्दिर के अवशेष हैं।

आबादी वृद्धि के कारण आवश्यकता भी बढ़ी है। इस क्रम में जब मिट्टी खोदी जाती है तो कई पुरातात्विक वस्तुएँ बाहर निकल आती हैं जो भरिहर गाँव के कई घरों में देखी जा सकती हैं। इस प्रकार की बातें करना यहाँ आम है। भरिहर गाँव में एक मन्दिर है जिसमें कुछ मूर्त्ति अवशेष पूजित हैं। ये अवशेष पांडव डीह में ही मिले थे। मन्दिर का पट बन्द रहने के कारण मैंने पुरातात्विक अवशेष देखा तो नहीं लेकिन यह बात यहाँ सुनने को मिली।
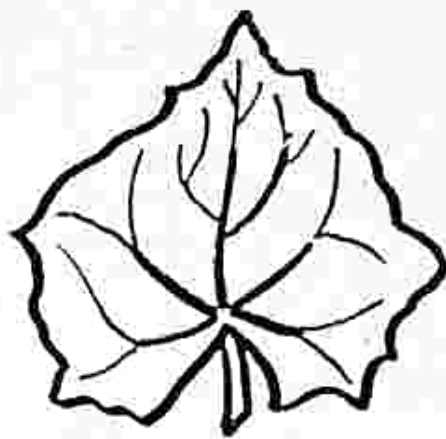
चित्र–236. मन्दिर अवशेष (बसौली–अरिहर)

वारी

मिथिला का प्रत्येक वह आधुनिक गाँव जिसके पास उच्च स्तर का वास-स्थान है, प्राचीन मूर्त्तियों के खण्डहर पर बसा हुआ है। यह अतिशयोक्ति नहीं वास्तविकता है। विगत कुछ सौ वर्षों में इन गाँवों में प्राचीन मूर्त्तियाँ मिली हैं और मिल रही हैं। यह दूसरी बात है कि पूर्व में मिली प्रत्येक मूर्त्तियों के सम्बन्ध में कहीं कोई आँकड़ा नहीं है और इस स्थिति में सैकड़ों गावों की प्राचीन मूर्त्तियाँ अभी तक अनजान है। इसी तरह का एक गाँव है वारी (Wari) जहाँ कई मूर्त्तियाँ, शिवलिंग, मन्दिर-अवशेष और कई काल की ईंटें तो मिली हैं, लेकिन यह सब गाँव तक ही सीमित है।

समस्तीपुर जिला में एक अनुमंडल है रोसड़ा और रोसड़ा का एक प्रखण्ड सिंघिया। सिंघिया एक प्रसिद्ध बाजार भी है जो दरभंगा जिला मुख्यालय से करीब 55 कि०मी० दूर दक्षिण-पूर्व की ओर दरभंगा-कुशेश्वरस्थान (भाया-बहेड़ी) मुख्य पथ पर है। इसी पथ पर सिंघिया प्रखण्ड मुख्यालय से उत्तर करीब 8 कि०मी० की दूरी पर है गाँव 'वारी'। यह ब्राह्मणबहुल गाँव है और यहाँ 14 मूल के ब्राह्मण हैं। इन मूलों में से एक मूल वारी भी है। यहाँ भगवती तारा की अनुपम और दुर्लभ मूर्त्ति वारी मूल के ही एक ब्राह्मण के घर में है।

श्री रमाकान्त चौधरी का परिवार वारी मूल का है और धार्मिक प्रवृति का भी। ये अपने घर में राम-जानकी की मूर्त्ति स्थापित कर पूजते रहे हैं। कुछ व्यावहारिक कठिनाईयों के कारण राम-जानकी का मन्दिर अपने आवासीय भूमि में ही अलग से तैयार करने का विचार उत्पन्न हुआ। इसी उद्देश्य से ईंट की पथाई गाँव से दक्षिण गढ़ी नामक स्थान में प्रारम्भ की गई। इसी क्रम में यहाँ इन्हें भगवती तारा की मूर्त्ति मिली। यह मूर्त्ति 27 × 14 ईंच और कसौटी पत्थर की है। पालशैली और पाल कालीन मूर्त्ति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि मुख्य मूर्त्ति के अतिरिक्त और भी 13 मूर्त्तियाँ इसी पीठिका में विभिन्न मुद्रा में उत्कीर्ण हैं। यह मूर्त्ति तांत्रिक-साधना की है। सनातन धर्म के अन्तर्गत पुराणों में तारास्थान को सिद्धपीठ कहा गया है। भगवान शिव जब सती का मृत शरीर काँधे पर रखकर उद्विग्न घूम रहे थे तब भगवान विष्णु ने इस मृत शरीर को चक्र से कई खण्डों में विभाजित कर दिया था। जहाँ-जहाँ ये खण्ड गिरे, उन्हें

सिद्धपीठ कहा गया है। देवी भागवत में इसी तरह के एक सिद्धपीठ की चर्चा किष्किन्धा नामक पर्वत पर की गई है -

माता सिद्धवने लक्ष्मीरनाङ्ग भरताश्रमे।
जालन्धरे विश्वमुखी तारा किष्किन्धपर्वते ॥५४॥

(देवी भागवत, सिद्धपीठ शक्तियाँ, सम्पादक - पं० श्री राम शर्मा आचार्य)

वारी में प्राप्त देवी तारा की यह मूर्त्ति बुद्धधर्म से सम्बन्धित है। इस धर्म के अन्तर्गत देवी तारा को मातृदेवी का स्थान प्राप्त है।

गढ़ी नामक वह स्थान जहाँ भगवती तारा की मूर्त्ति मिली है, एक प्राचीन देव-स्थान है जिसे ऋषिमुनी-स्थान कहा जाता है, इसके निकट ही है। यह ऋषिमुनी-स्थान बहुत ही ऊँचा है और यहाँ के मन्दिर-अवशेष में चार प्रकार की ईंटें उपलब्ध हैं। सबसे बड़ी ईंट है 12.5 × 8.5 × 2.25 ईंच की जो गुप्तकालीन है। इसी काल की कुछ अन्य ईंटें आवश्यकता के अनुसार कई पहल की भी हैं। यह ऋषिमुनी-स्थान पुरातात्त्विक अवशेषों का खजाना है। यहाँ चार शिवलिंग और इनके चार मकरमुख जलटोटी भी मिली हैं। इनमें से एक शिवलिंग सहस्त्रमुख शिवलिंग है। सम्पूर्ण भारत की जानकारी तो मुझे नहीं है लेकिन मिथिला में यह शिवलिंग अद्वितीय है। यह शिवलिंग यहीं स्थापित है। शिल्पित अनेकों प्रस्तर खण्ड जो प्राचीन मन्दिर के हैं, गाँव के कई स्थानों में बिखरे पड़े हैं । षट्भुज भगवती की प्रतिमा जो गाँव के पश्चिम भगवती-स्थान में स्थापित है, यहीं मिली थी। यह भगवती गुप्तशैली और गुप्तकाल की हैं। कसौटी पत्थर की यह मूर्त्ति 25 × 13 ईंच की है।

वारी गाँव कमला नदी की एक प्राचीन शाखा के तट पर बायीं ओर बसा हुआ है। लेकिन इसी कमला नदी ने इस समय इस गाँव को अपने दाहिने तट पर कर लिया है। शीर्षक परोरिया, भरिहर और वासदेवा में जिस नदी अवशेष की चर्चा की गई है,, वह नदी पहले यहीं दक्षिण-मुख कर आगे बढ़ती थी जो अब अपना रास्ता बदल पूर्व-मुख कर वारी गाँव के उत्तर से आगे बढ़ गई है। दर्शनीय मिथिला के कई पूर्व पुष्पों में मैंनें तीसरी शताब्दी से पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य हुए दो भयंकर भूकम्प की चर्चा की है। वारी गाँव इन दोनों भूकम्प ही नहीं, धर्मविरोधी आक्रमणों का भी शिकार भूतकाल में हुआ था। नदी का रुख-परिवर्त्तन भूकम्प की देन है और तारा की मूर्त्ति जिस परिस्थिति में मिली है वह धार्मिक संघर्ष की ओर इशारा करता है।
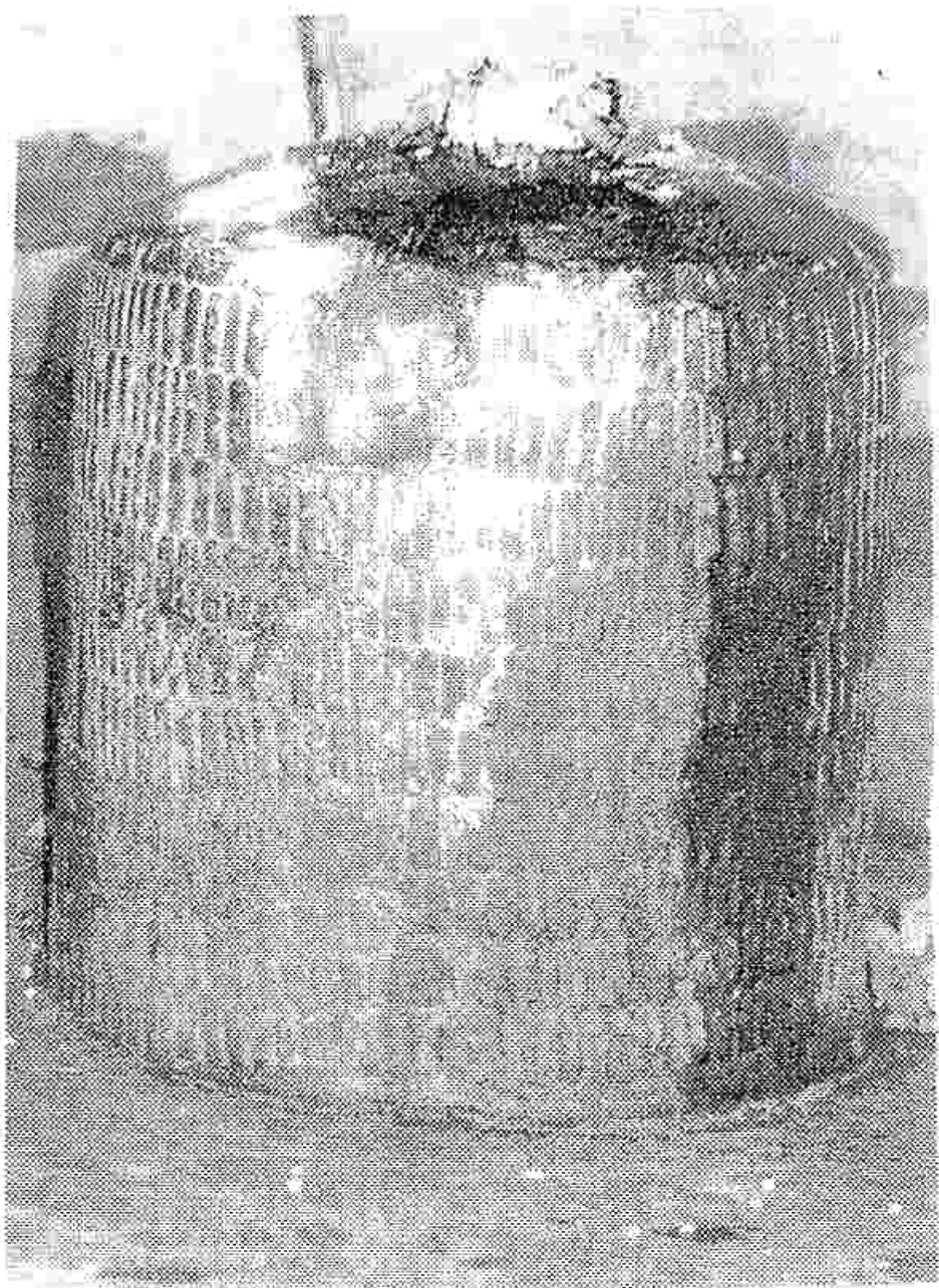
चित्र–237, सहस्त्रमुख शिवलिंग (वारी)
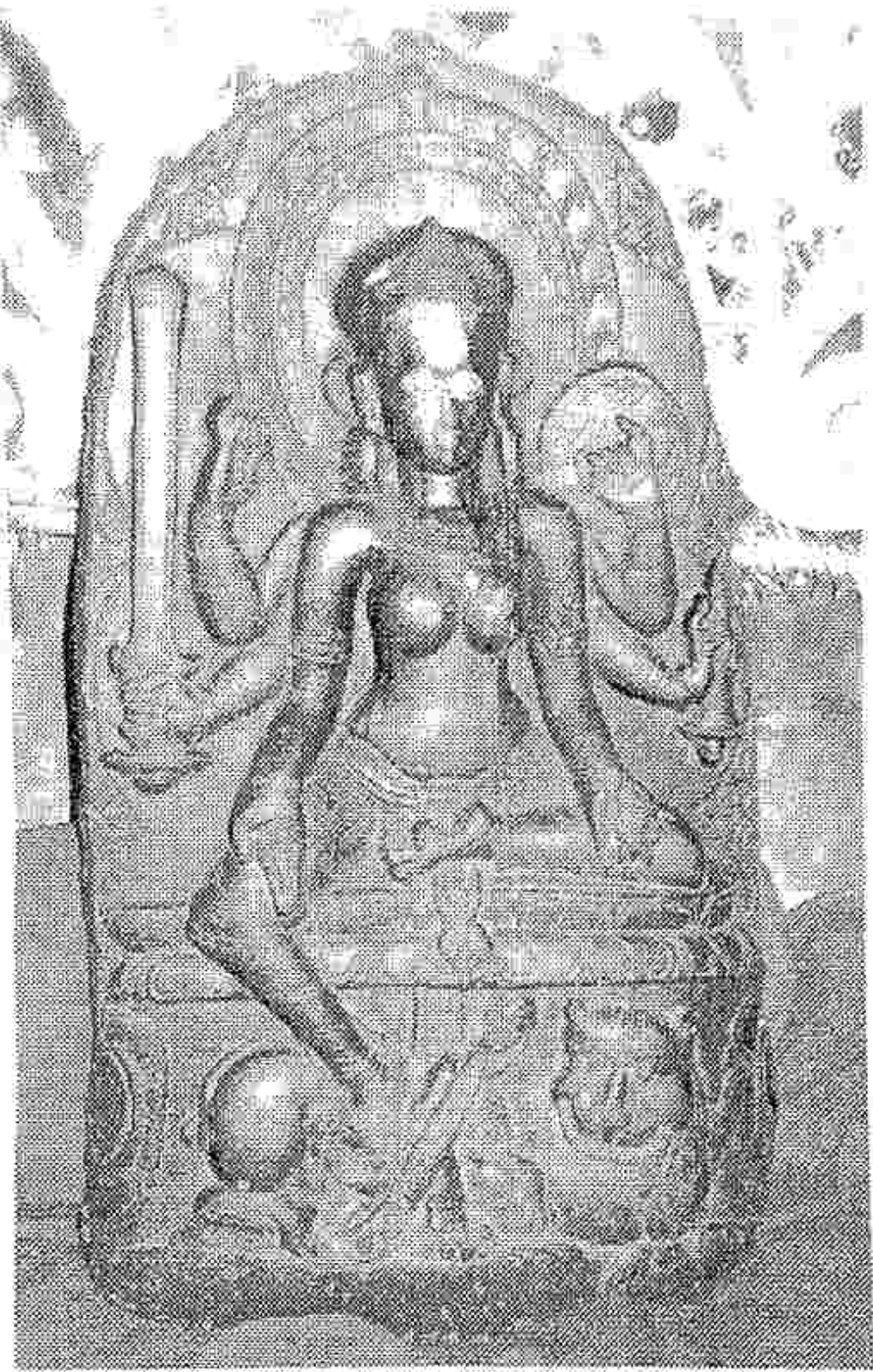
चित्र–238. भगवती (वारी)

चित्र–239, देवी तारा (वारी)
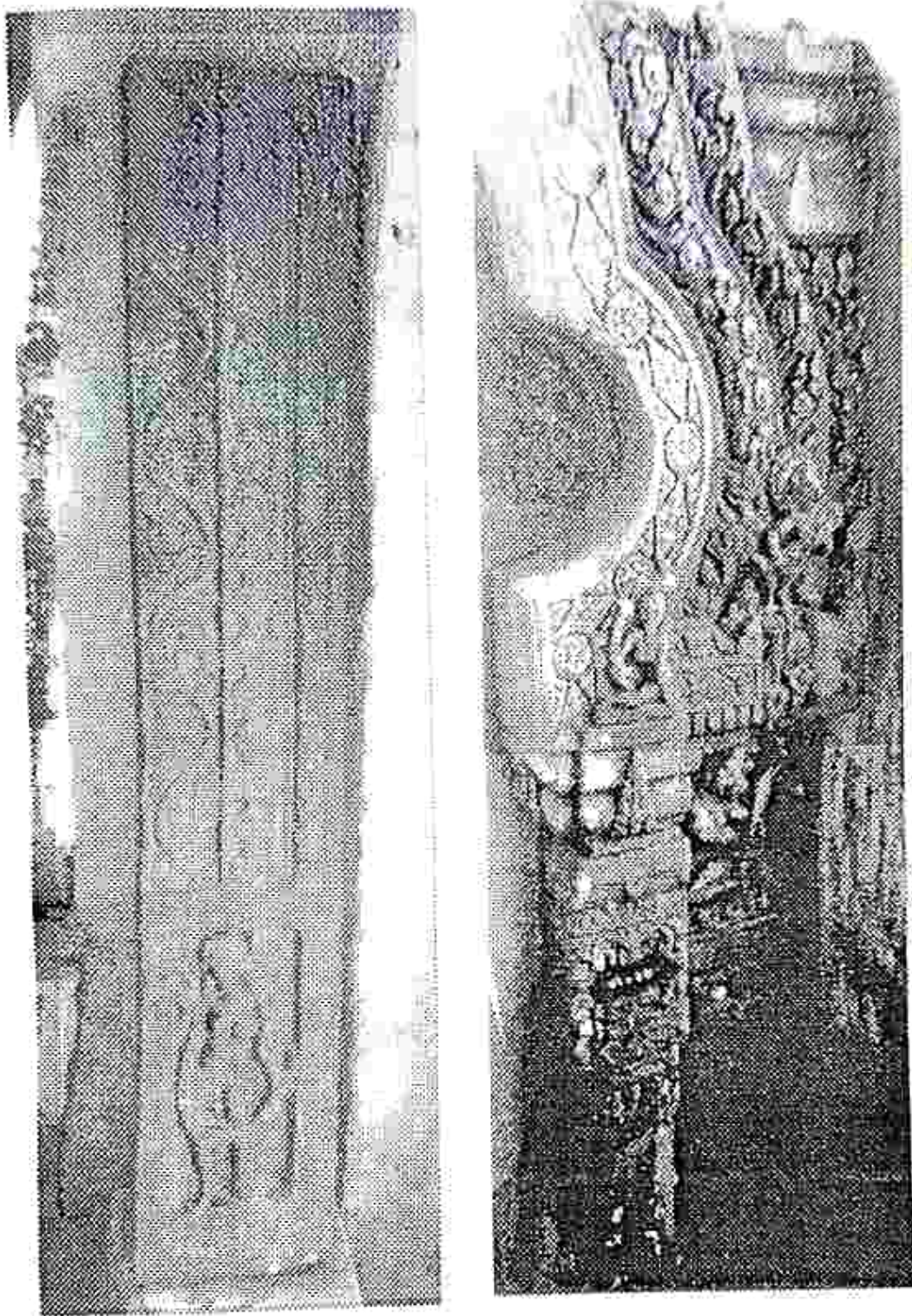
चित्र–240. मन्दिर अवशेष 'क' (वारी)
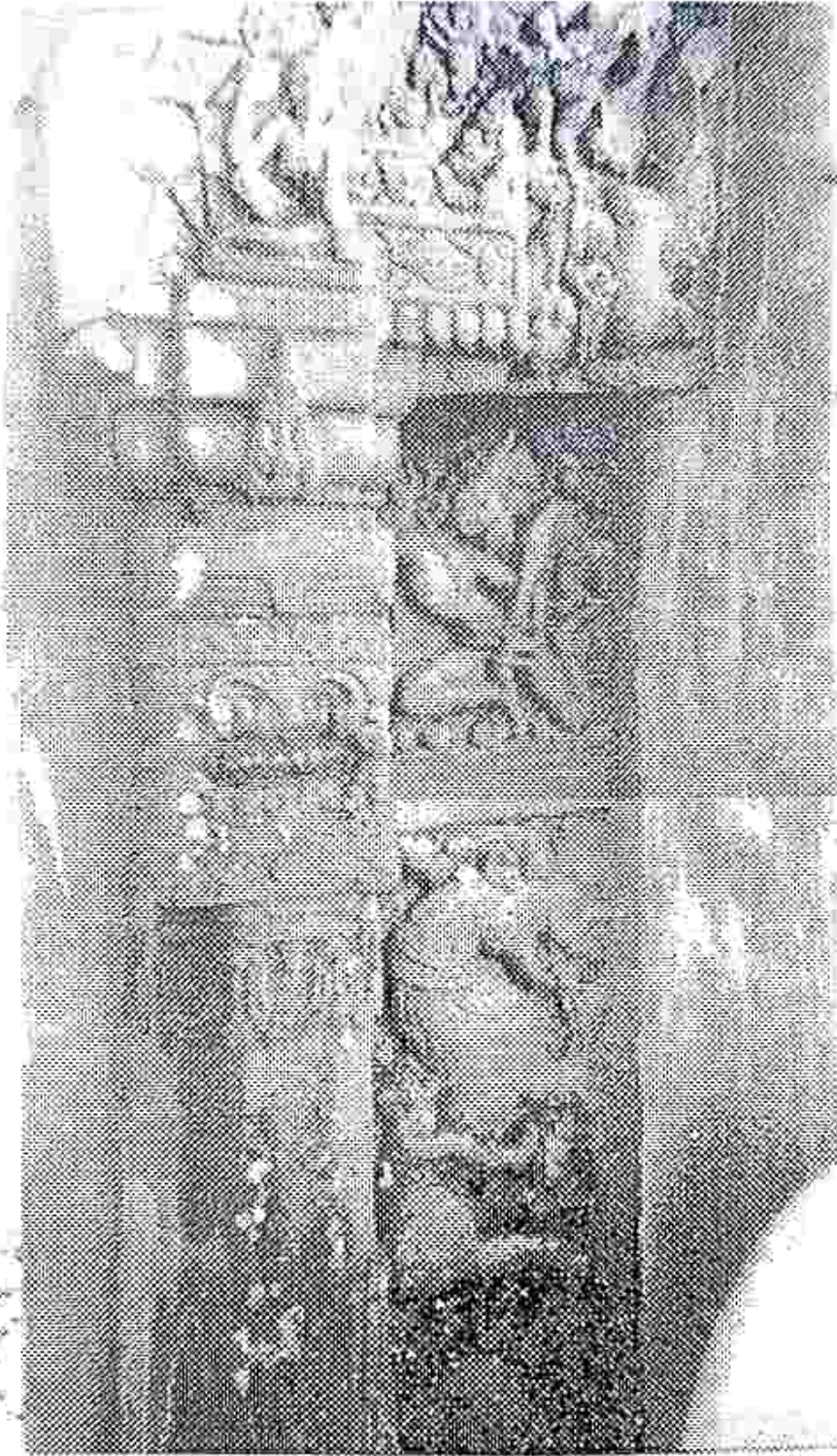
चित्र–241, मन्दिर अवशेष 'ख' (वारी)

सिरुआ मनोरडीह

मनोरडीह है एक खण्डहर और सिरुआ एक ग्राम। यह सिरुआ ग्राम से पूरब स्तूपाकार खण्डहर करीब एक-सवा सौ एकड़ में फैला हुआ है। कभी यह खण्डहर आबाद था, जिसका स्पष्ट चिह्न बर्त्तन के टुकड़े अभी भी इसकी ऊपरी सतह पर फैले हुए हैं। अब यहाँ छिटपुट रूप से खेती होती है। इस डीह के दो अलग-अलग ऊँचाईयों पर आवासीय जमीन को भरने के लिए मिट्टी की खुदाई करने के क्रम में दो बर्त्तन सिक्के, दो जोड़ी जाँता, एक ही स्थान पर फैले हुए मानव और पशु के कंकाल, चीनीमिट्टी के बर्त्तन जैसा बर्त्तन का टुकड़ा और मात्र दो कट्ठा जमीन की सीमा में ही तीन कूप मिले है। मनोरडीह खण्डहर की ऊँचाई आधुनिक आबादी की सतह से करीब 30 फीट अधिक है।

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्व-दक्षिण की ओर करीब 18 कि०मी० दूर दरभंगा-बिरौल मुख्य पथ पर एक गाँव है खैरा। इसी गाँव के मध्य से एक सड़क दक्षिण की ओर अलग हुई है जो सिरुआ तक जाती है। खैरा से सिरुआ की दूरी है एक कि०मी०। कुछ भाग को छोड़कर सम्पूर्ण खैरा गाँव ही एक प्राचीन खण्डहर पर बसा हुआ है। मनोरडीह पर यद्यपि अधिकार है खैरा गाँव का तथापि भौगोलिक दृष्टि से यह डीह खैरा का ही एक अंग है। मात्र यही डीह नहीं, सम्पूर्ण सिरुआ गाँव और इस गाँव के पश्चिम का वह खण्डहर जो किसी भी तरह मनोरडीह से कम महत्वपूर्ण नहीं है और जिसके सबसे ऊँचे स्थान पर एक देवालय का खण्डहर है जिसे घंटार-स्थान कहा जाता है - एक ही स्तर का पुरातात्विक स्थल है। मनोरडीह के भी सबसे ऊचे स्थान पर एक प्राचीन देवालय का खण्डहर है जिसे कालिका-स्थान कहते हैं। उघरा गाँव के उत्तर-पूरब से होते हुए, खैरा-सिरुआ को पश्चिम-दक्षिण से अपने अंक में लपेट कर एक प्राचीन नदी का अवशेष आगे बढ़ गया है। सिरुआ गाँव और घंटार-स्थान नामक खण्डहर के मध्य ये यह नदी-अवशेष आगे बढ़ा है। मनोरडीह के किनारे-किनारे दक्षिण-पूर्व की ओर निकट ही निकट एक कतार में पाँच तालाब हैं - शिवसर, धर्मसर, धोबिसर, हथिसर और घोड़ासर । मेरा अनुमान है कि ये तालाब भी

प्राचीन नदी के अवशेष पर ही खोदे गये हैं।

प्राचीन पाषाण प्रतिमाओं के सर्वेक्षण के क्रम में दरभंगा, मधुबनी और समस्तीपुर जिलों में कुछ ऐसे प्राचीन उथल-पुथल के संकेत मिले हैं जो अतीत में हुए किसी दो प्रलयंकारी भूकम्पों के संकेत हैं। दोनों ही भूकम्प हाल में हुए गुजरात के भूकम्प से भी कहीं अधिक विनाशकारी थें। इसने इन जिलों के उन सभी नदियों का रुख ही पलट दिया जो इससे पूर्व थें। इनमें से एक भूकम्प बारहवीं शताब्दी के पूर्व और दूसरा बारहवीं तथा पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य हुआ था। इन जिलों में सैकड़ों बड़े-बड़े तालाब हैं, जिन्हें महादेई कहा जाता है। ये सभी तालाब और सैकड़ों चौर उन्हीं प्राचीन नदियों के अवशेष पर हैं। मनोरडीह में इन दोनों ही भूकम्पों के पद-चिह्न अंकित हैं।

मनोरडीह में मिली पुरातात्त्विक सामग्री किसी योजनाबद्ध उत्खनन (पुरातात्विक खुदाई) की देन नहीं है। यह अनायास और साधारण खुदाई की देन है, जिसके सहारे कुछ निष्कर्ष निकाल पाना बहुत ही कठिन है। लेकिन कुछ अनुमान तो किया ही जा सकता है। वह दो जगह जहाँ खुदाई हुई है, वह स्थान जो सबसे ऊपर और जनशून्य है तथा आधुनिक आबादी वाले स्थान, इन चारों की सतह में अन्तर है। इन चारों को यदि अपने-अपने स्तर (ऊँचाई) पर रखकर देखा जाय तो परिणाम कुछ चौंकाने वाला मिलता है। जहाँ सिक्के और जाँता मिले हैं, यह स्थान आधुनिक वास-स्थान से करीब 5-7 फीट ऊँचा है। बर्त्तन में होते हुए भी इन सिक्कों को जग ने इस तरह जकड़ लिया था कि ये पिंड बन गए थे। यह प्रभाव लम्बे समय तक पानी के अन्दर रहने का है। आज पानी का स्तर इससे नीचा है। जहाँ बिखरा हुआ लेकिन अधिक तायदाद में मानव और पशु कंकाल मिले हैं, यह स्तर, सिक्का मिलने वाले स्तर से करीब 4-5 फीट ऊपर है। यह लक्षण है किसी ऐसी विपदा का जो अचानक घटी हो। इस स्तर से भी करीब तीन-साढ़े तीन फीट ऊपर काटे गए मिट्टी के दिवाल में चीनी मिट्टी की तरह बर्त्तन का टुकड़ा मुझे दिवाल में मिला है जो किसी दही की छाँछ का टुकड़ा है। अपूर्ण तीन कूप जिनका पानी खाना बनाने या पीने के काम आता, इसके पानी का सतह है - कंकाल मिलने के स्तर से मात्र एक फुट नीचे। यह तीनों ही कूप पास ही पास हैं। यह कूप उस सभ्यता की देन है, जो किसी कारणवश सबसे उपरी आवास छोड़ नीचे मैदान में उतर आया अर्थात् आधुनिक सभ्यता।

यहाँ कम से कम तीन सभ्यताएँ फूली-फली और मुरझाई है। पहली सभ्यता का पद चिन्ह है सिक्का वाला स्थान, दूसरी का कंकाल वाला और चीनी मिट्टी के बर्त्तन वाला तीसरी सभ्यता तथा चौथी वह सभ्यता है जो पानी प्राप्त करने के लिए मैदान में उतर आयी है, यानी आज की सभ्यता। प्रस्तुत रेखा-चित्र (चित्र-1) में यह बात और अधिक अच्छी तरह समझाई गई है।

यहाँ एक किंवदन्ती भी है। करीब साढ़े तीन चार सौ वर्ष पूर्व की ओर यह दन्तकथा ले जाती है। मनोरडीह किसी 'भर' नामक राजा की राजधानी थी जिसका राज्य था चौदह कोस (42 कि०मि०) । प्रचलित दंतकथा के अनुरूप ब्राह्मणों की मन्त्रणा और 'भर' राजपूतों की वीरता ने पूर्व राजा को हराकर उसकी राजधानी और राज्य पर अधिकार कर लिया। सिरुआ के आस-पास के कई गाँव आज भी 'भरसुरिया' राजपूतों का है। यह तथ्य इस दन्तकथा को बल प्रदान करता है। मनोरडीह के सबसे ऊपरी स्तर के निवासियों को जब पानी की किल्लत हुई, कुआँ खोदने पर हड्डी मिली और बढ़ती आबादी ने इस पर दबाव डाला तो वे इसे छोड़ मैदान में उतर आये जो आज की आबादी है। मनोरडीह और वह डीह जिस पर घंटार स्थान है, यह दोनों खण्डहर पुरातात्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। अभी ये दोनों ही डीह जनशून्य है, आसानी से इसे सुरक्षित क्षेत्र घोषित किया जा सकता है। मिथिला की कई सभ्यताएँ यहाँ दफन हैं जिससे मिथिला के इतिहास का निर्माण हो सकता है। मिट्टी काटने के रूप में अब इसमें हाथ लग चुका है। पुरातात्विक अवशेष अब सुरक्षित नही हैं। कुछ वर्षों के बाद ही यह खण्डहर भी मैदान में परिवर्त्तित हो जाएगा। मनोरडीह भरसुरिया राजपूतों का ध्वजस्तम्भ ही नहीं, विगत कई सौ वर्षों का मिथिला का इतिहास भी है। यदि इस डीह का पुरातात्विक उत्खनन होता है तो मिथिला के इतिहास के साथ ही साथ इन राजपूतों का यश भी अमर होगा। अत: इनका दायित्व है कि ये इसके लिए हर संभव प्रयास में लग जाएँ। लेकिन इनसे भी बड़ा दायित्व है मिथिलावासियों का, जिनका हजारों वर्ष का इतिहास यहाँ छिपा हुआ है।

सिक्कों का आकार, वजन और इन पर खुदी आकृतियाँ

कोई दो सिक्का एक आकार का नहीं है, ये छोटे-बड़े और विभिन्न आकृति के हैं। इनकी आकृति के सम्बन्ध में अण्डाकार, गोलाकार, आयताकार, वर्गाकार, त्रिकोण, षट्कोण आदि कोई भी शब्द भी कहना उचित नहीं होगा, अर्थात ये सुगढ़ नहीं हैं। अपने छोटे-बड़े आकृति के अनुरूप ये 0.75 ग्राम से लेकर 1.30 ग्राम तक के हैं। आकार के अनुरूप ही इनकी न्यूनतम लम्बाई 14 मि०मी० और अधिकतम 19 मि०मी० है। चित्र-2 और चित्र-3 में उभारी गई आकृतियाँ इस प्रकार हैं –

1.ख. पुष्प और ४; 2.क. सूर्य, चाँद, पुष्प और हाथी; 3.क. सूर्य, हाथी और किसी पालतू जानवर का सिर; 4.क. हाथी, पुष्प, सूर्य, घोड़ा और ४; 5.क सूर्य, साँढ़, ४४ और हाथी; 5.ख. तारा और रथ चक्र।

प्रत्येक सिक्के के दोनो ओर और भी आकृतियाँ खुदी हुई थीं जो घिसे होने के कारण अब पहचान रहित हैं। सिक्कों के घिसने का कारण दो हो सकता है। प्रथम अधिक प्रचलन या विनिमय के कारण, दूसरा प्राप्ति के बाद अज्ञानता के कारण छेड़-छाड़ (घिस का साफ करना)। तीसरे सतह से दो फीट ऊपर (चित्र-1) मकान का नींव ईंटों का पाया गया है। इस नींव में तीन प्रकार के ईंटों की प्राप्ति हुई है।

उपसंहार

हजारों वर्ष तक प्रत्येक वर्षाऋतु में मिट्टी बहने के बाद भी इस समय यह डीह करीब 30 फीट ऊँचा है। सिरुआ गाँव की वर्त्तमान आबादी से करीब 5-7 फीट ऊपर सिक्के मिले थे। विधिवत् खुदाई से पूर्व यदि इसे प्रथम सभ्यता मानकर चला जाए तब भी मिथिला की सभ्यता और संस्कृति की प्राचीनता का आकलन चौंकाने वाला है। यहाँ कम से कम विभिन्न प्रकार के चाँदी के सिक्के कम से कम पाँच किलो मिले थे। इनमें से प्राप्त जानकारी के अनुसार साढ़े चार किलो सिक्के गलाकर बेच दिए गए। इसके बाद भी कुछ न कुछ सिक्के गाँव में और बिखरे पड़े हैं। मार्च 2001 ई० से मार्च 2002 ई० तक लगातार चक्कर लगाने के बाद श्री चन्द्रवीर सिंह (वकील) जो इस गाँव उके कर्मठ कार्यकर्त्ता और समाजसेवी भी हैं, के पास मुझे पाँच सिक्के देखने को मिला लेकिन ये भी घिसे हुए हैं। घिसा होने के बाद भी इसने अपना महत्त्व खोया नही है।

सिक्का का प्रचलन रामायण काल में हो चुका था । एक यज्ञ में राजा जनक ने याज्ञवल्क्य को एक सौ गायें दान मे दी थीं जिनकी प्रत्येक सिंग में दस-दस पाद बन्धे हुए थे (शतपथ ब्राह्मण 14; बृ० उप० 3.1.1)। उस समय मुद्रा को पाद कहा जाता था। मनोरडीह में प्राप्त सिक्कों में कई प्रकार के प्रतीक चिह्न हैं यथा – सूर्य, चन्द्रमा, पुष्प, हाथी, घोड़ा, रथ-चक्र, पेड़-पौधा पक्षी आदि-आदि। तीन सिक्कों में चार (४) का अंक जैसा है। ब्राह्मी लिपि में इसे (४)'म' पढ़ा गया है। एक सिक्का में तो दो बार प्रयोग हुआ है। हो सकता है अन्य में भी कुछ न कुछ अंक रहा हो जो घिसा है। यह अंक शायद सिक्का का मापदंड है और पहचान के लिए आकार तथा विभिन्न वस्तुओं की आकृति का सहारा लिया गया है। प्रत्येक आकृति के अंकन के लिए गढा और उभार का प्रयोग हुआ है। आकृति-अंकन के क्रम में जिस शिल्प का व्यवहार हुआ है वह बहुत विकसित नहीं है। मूर्त्तिकला की शैली और शिल्प के आधार पर प्रत्येक स्थिति में यह मौर्यकाल से बहुत पहले का या प्रारम्भिक शिल्प है क्योंकि इन सिक्कों पर चित्रलिपि का प्रयोग हुआ है और यदि एसा ही है तो इसकी प्राचीनता कई हजार वर्ष पीछे आँकी जा सकती है। खैरा, सिरुआ गाँव को शीघ्र सुरक्षित क्षेत्र घोषित कर यहाँ अबिलम्ब उत्खनन आवश्यक है ।
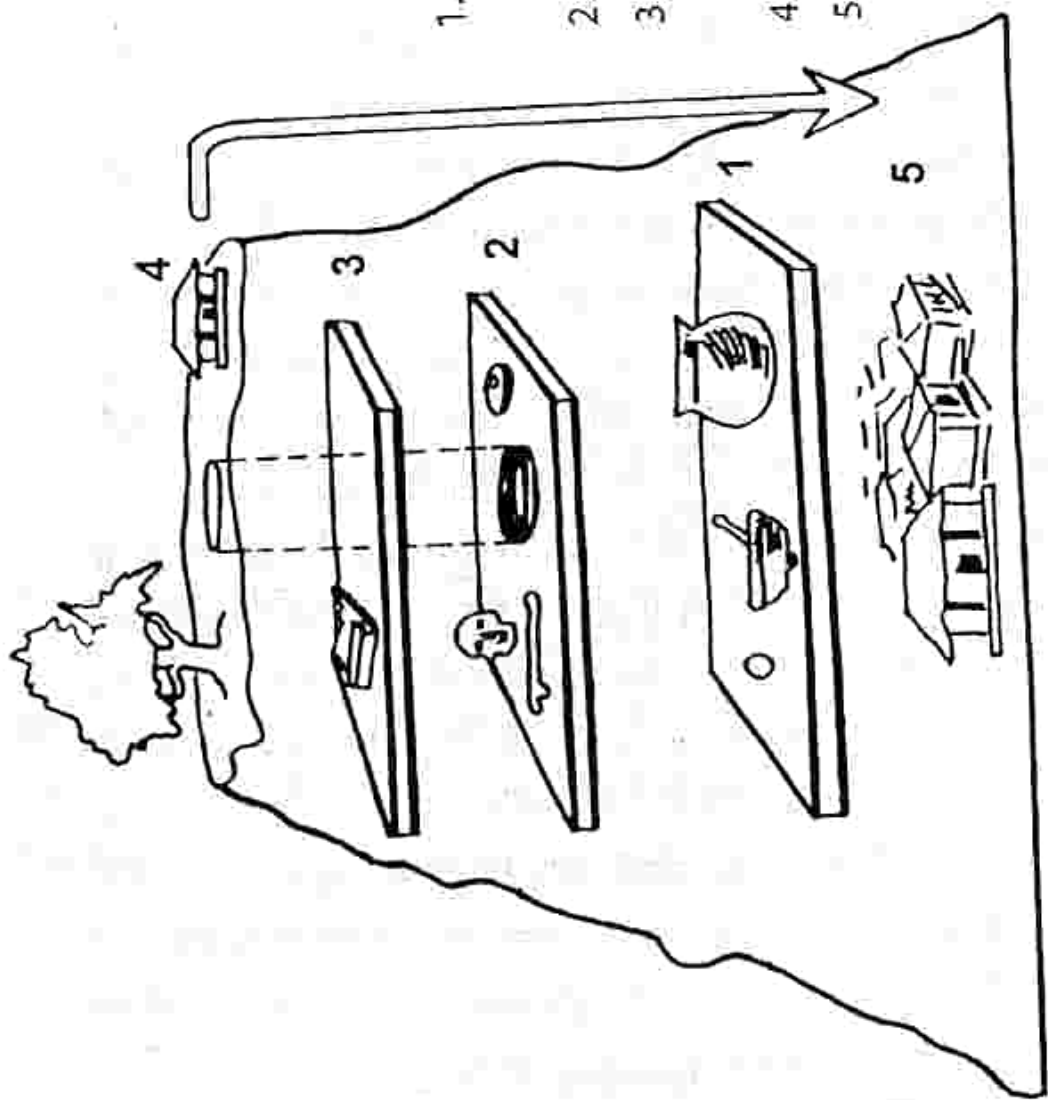
संकेत :

1. सिक्का, जाँता एवं पकी मिट्टी की गोली की प्राप्ति-सतह
2. हड्डियाँ, अस्थिपंजर एवं कुओं की प्राप्ति-सतह
3. चीनीमिट्टी की तरह बर्त्तन के टुकड़ों की प्राप्ति-सतह
4. ऊपरी सतह
5. सतह 4 से नीचे उतर आई आधुनिक आबादी

चित्र–242 : मानचित्र, मनोरडीह सिरुआ
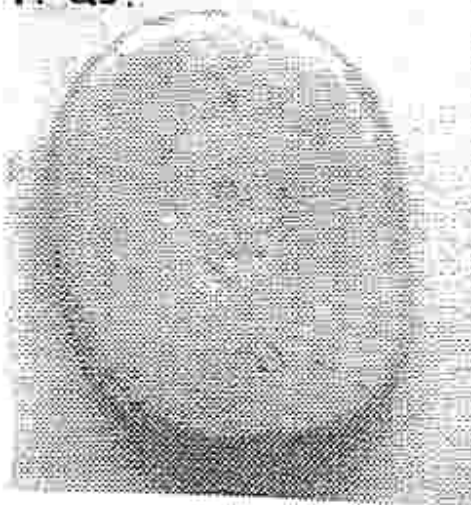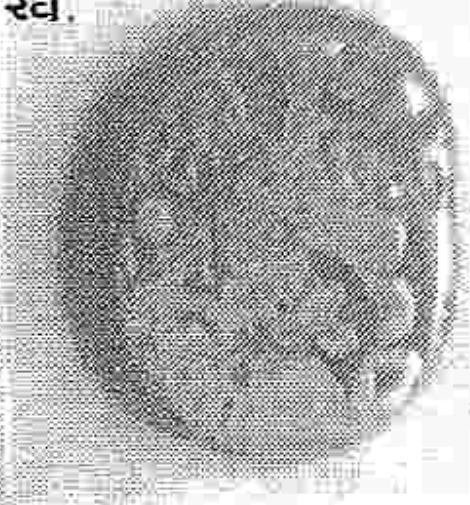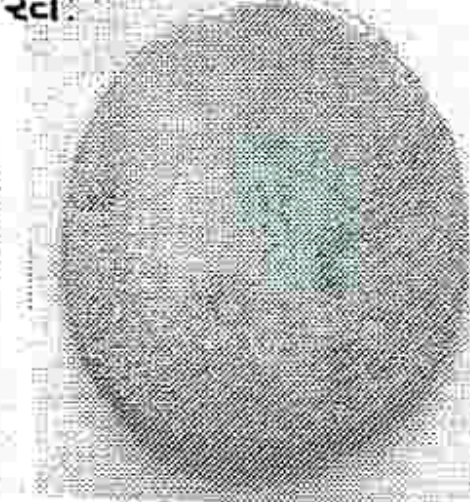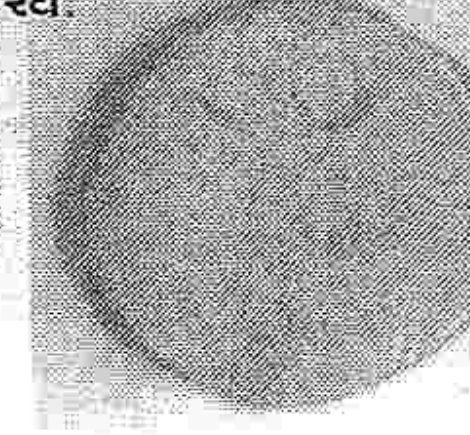
चित्र–243 : तीन तरह के चाँदी के सिक्के
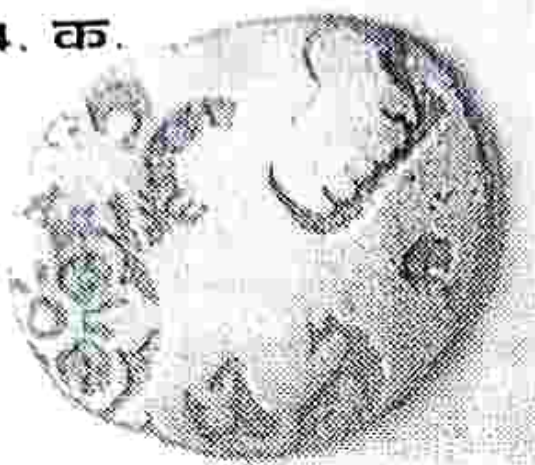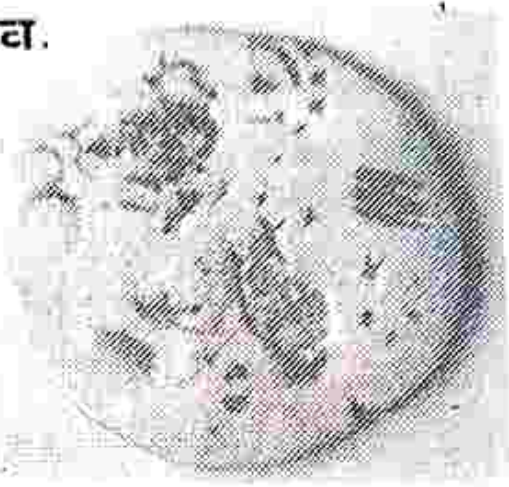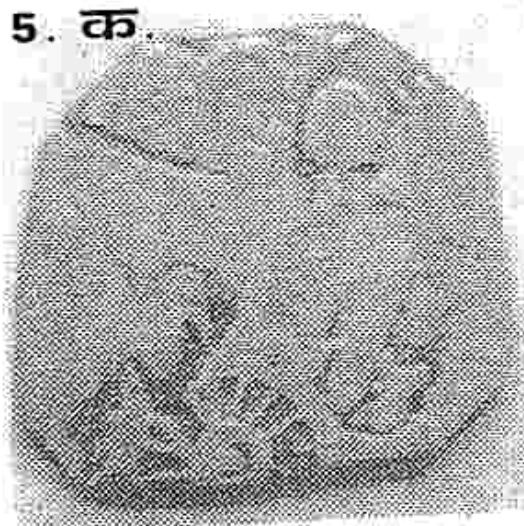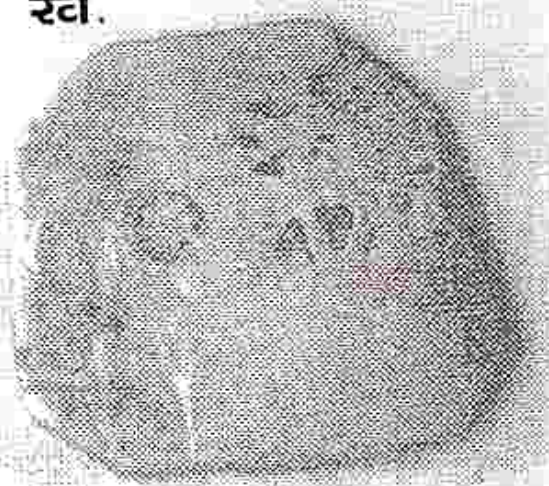
चित्र–244 : दो अन्य तरह के चाँदी के सिक्के
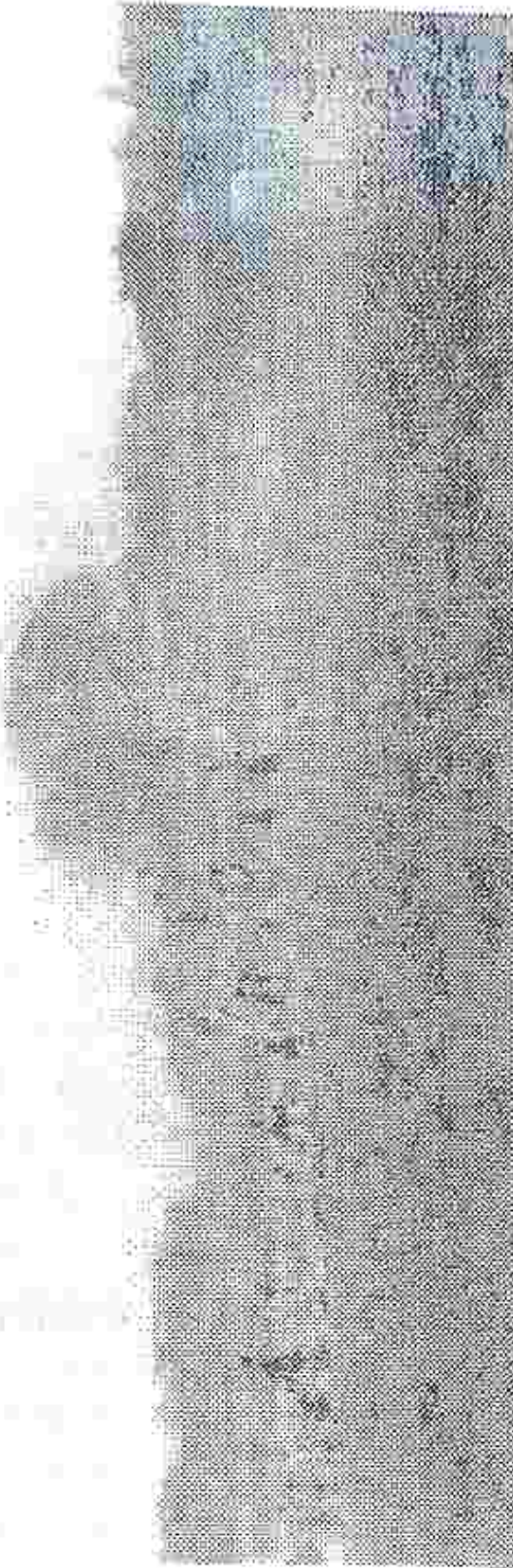
चित्र—245 : मनोरडीह सिरुआ
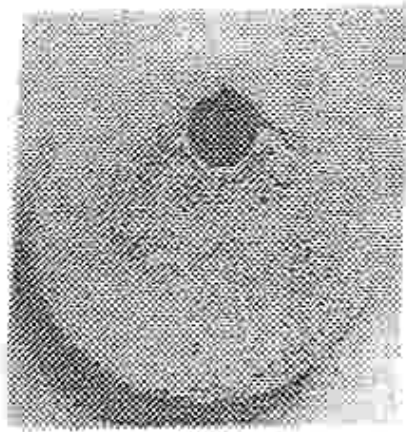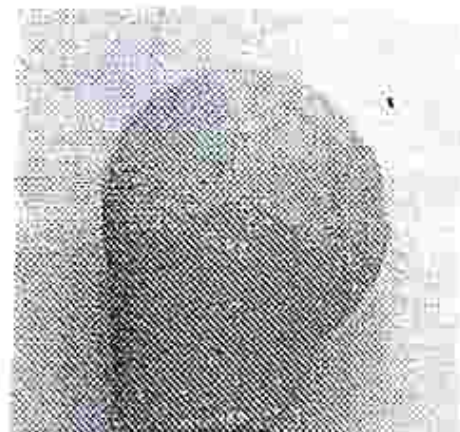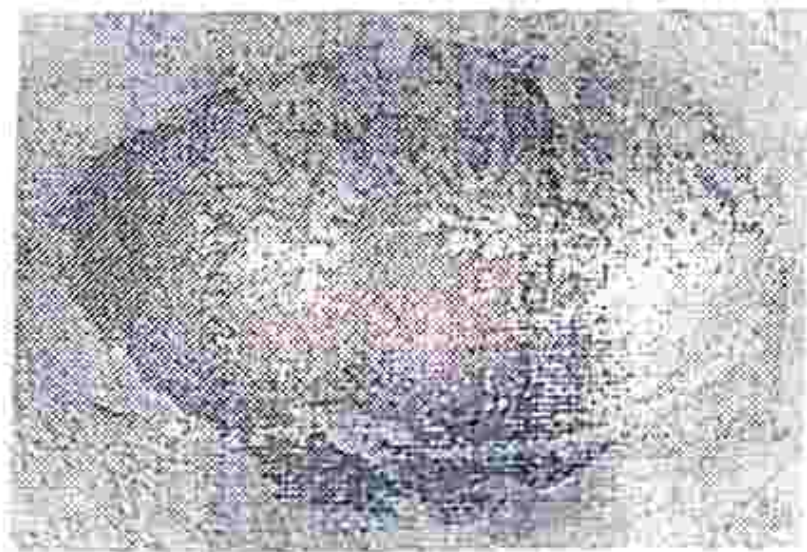
चित्र–246. अन्य पुरातात्विक अवशेष (सिरुआ) :

1. सुराही का ढक्कन; 2. पकी मिट्टी की गोली;
3. चीनी मिट्टी जैसे वर्त्तन का टुकड़ा;
4. हड्डी अवशेष, और 5. कुँआ का अवशेष

बनगाँव (भगवतीस्थान)

सहरसा जिला मुख्यालय से 8 कि०मी० पश्चिम एक पक्की सड़क से जुड़ा विशाल ब्राह्मण बहुल गाँव है, बनगाँव। अपनी विशालता के लिए यह मिथिला प्रसिद्ध है। गाँव के निकट पहुँचकर यदि बाँयी सड़क से आगे बढ़ा जाय तो गाँव के बाहर दक्षिण-पश्चिम कोने पर सड़क के बाँयी ओर संतशिरोमणि, मिथिला प्रसिद्ध लक्ष्मीनाथ गोसाईं की कुटी मिलती है । यह एक दर्शनीय स्थल है । यहाँ का नवनिर्माण 1855 खीष्टाब्द में स्व० उदित नारायण सिंह द्वारा हुआ था और गोसाईंजी की मूर्ति की स्थापना फरवरी 2000 में हुई । एक विस्तृत क्षेत्र में यह कुटी फैली हुई है । गोसाईं लक्ष्मीनाथ परसरमा निवासी पंडित बच्चा झा के पुत्र थे और इनका जीवनकाल था, 1793 से 1872 खृगीष्टाब्द। परसरमा एक गाँव है जो सहरसा जिला में है। इस कुटी के निकट से गाँव में प्रवेश करने पर इस गाँव के कुल की देवी, भगवतीस्थान पहुँचा जा सकता है जो गाँव के मध्य में है।

विशालता ही नहीं सुशिक्षा के लिए भी यह गाँव मिथिला में प्रसिद्ध रहा है। सुखी-सम्पन्न इस गाँव का एक-एक मकान पक्का है और कई अट्टालिकाएँ भी देखने को मिलती हैं। मध्य गाँव से भी एक पक्की सड़क गुजरी है। हो सकता है कभी यह गाँव रहा हो, लेकिन इस समय तो इसे एक छोटा नगर ही कहना उचित होगा। लोग मृदुभाषी और व्यवहार कुशल है। आतिथ्य-सत्कार इस गाँव की परम्परा रही है।

मध्यगाँव स्थित भगवती स्थान करीब पाँच कट्ठा के भूभाग में चाहरदिवारी से घिरा है। यहाँ एक नींव पर दो मन्दिर हैं, शिवमन्दिर और देवी मन्दिर। शिवमन्दिर की रूपरेखा तो सामान्य ही है, लेकिन देवी मन्दिर उड़ीसा के जगन्नाथ मन्दिर का प्रोटोटाईप कहा जाय तो उपयुक्त होगा। मन्दिर का रुख पश्चिम की ओर है और इसके प्रवेशद्वार के निकट ही महिषा (बलि देने के लिए लकड़ी का बना विशेष यन्त्र) है। महिषा देखने से पता चलता है कि विशेष अवसर के अतिरिक्त भी यहाँ बलिप्रदान होता ही रहती है। यहाँ की मूर्ति हमेशा वस्त्र से ढकी रहती है और दर्शनार्थी को मुख के अतिरिक्त देवी के अन्य अंगों का दर्शन नहीं होता है। सनातन धर्म का दो प्रमुख अंग है, वैष्णव और शाक्त। इन दोनों ही अंगों के देवी और देवता भी भिन्न हैं। शाक्त की अपेक्षा वैष्णव धर्म के

देवी-देवताओं की विविधता अधिक है। यहाँ की देवी शाक्त की अपेक्षा वैष्णव धर्म के निकट अधिक मुझे दिखाई पड़ती हैं । यह लक्ष्मी और पार्वती की समरूपा हैं ।

यहाँ उपस्थित सामान्यजन एवं पुजारी से पर्याप्त अनुनय-विनय के बाद भी मुझे मूर्त्ति, मूर्त्ति के रूप में देखने को नहीं मिली । पुजारीजी तो कुछ नरम भी हुए लेकिन एक सामान्यजन का कहना था "माइक कियो वस्त्र उतारिकें, ककरो आनेकें देखए देतैक, एहि तरहक धृष्टता अहाँ नहि करी ।" मूर्त्ति का जो अंश मैं देख पाया और वस्त्र के उभार से जो कुछ अनुमान किया, इस आधार पर यह मूर्त्ति करीब सवा तीन फीट ऊँची, कसौटी पत्थर और किसी शौकिया मूर्त्तिकार द्वारा उत्कीर्ण अनुकृति मूर्त्ति बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी की है । मूर्त्ति स्थापना के कुछ ही समय के बाद बनगाँव बिल्कुल जनशून्य हो गया था और धीरे-धीरे यह जंगल हो गया । आधुनिक निवासी पन्द्रहवीं शैताब्दी के बाद के हैं। मन्दिर निर्माण और रख-रखाव सुरुचिपूर्ण है, लेकिन मूर्त्ति की स्थापना का ढंग बेढंगा है, वैज्ञानिक नहीं ।

यहाँ मैं मूर्त्ति दर्शन के सम्बन्ध में कुछ शास्त्रीय विवेचन करना आवश्यक समझता हूँ । जहाँ कहीं प्राचीन धार्मिक मूर्त्तियाँ हैं, वह सब किसी न किसी समय अपने ज्ञान और कला-कौशल के माध्यम से धर्म प्रचार के लिए मूर्त्तिकार द्वारा धर्मज्ञानी की देख-रेख में उत्त्कीर्ण की गई थी । सामान्य जन के लिए जाग्रत देवी-देवता प्रतीक रूप में हैं। इसे ढक कर रखना अधर्म है क्योंकि इससे मूर्त्ति का प्रभाव नष्ट होता है । मूर्त्ति को वस्त्र या आभूषण अलग से देना आवश्यक नहीं । मूर्त्ति में इसकी आवश्यकता जहाँ कहीं होती हैं, मूर्त्ति में ही आप उत्त्कीर्ण पायेंगे । प्राचीन मूर्त्तियाँ मात्र धर्म का प्रतीक चिह्न ही नहीं बल्कि प्राचीन मिथिला का ऐतिहासिक दर्पण भी है । इसमें यहाँ का प्राचीन इतिहास और संस्कृति छिपी है । मिथिला का एक प्रतिशत भी पुजारी शास्त्र नहीं जानता और वह मूर्त्ति का रहस्य नहीं जानने के कारण इसके प्रति लोगों में आधारहीन बातें फैलाता रहता है । सनातन धर्म का दिन-प्रतिदिन हो रहे ह्रास का एक कारण यह भी है । मूर्त्ति को कुछ देने से मनाही नहीं है, लेकिन वह चरण में अर्पित किया जाय और आवश्यक विधान के बाद उसे वहाँ से हटा लिया जाय, शास्त्रीय विधान यही है । पुजारियों द्वारा मूर्त्ति ढककर रखने का एक प्रमुख कारण है इसका अंग-भंग होना । ऐसी मूर्त्तियों की पूजा शास्त्र वर्जित है । लेकिन यह विधान आज के सन्दर्भ में

विशेषकर प्राचीन मूर्त्तियों पर लागू नहीं होता । प्रथम स्थापना के समय इस विधि का कट्टरता से पालन होना चाहिए । प्राचीन मूर्त्तियों की स्थापना पहले ही हो चुकी होगी । अत: यह नियम उसके साथ लागू नहीं होता और वह पूजनीय है ।

बनगाँव की भगवती कीमती कसौटी पत्थर पर उत्कीर्ण है जो पॉलिशदार (ओप लेपित) है । इन्हें चार हाथ हैं, दाँयीं ओर नीचे के हाथ में है मुद्रा या पुष्प और ऊपर के हाथ में शंख, यह लक्ष्मी का प्रतीक चिह्न है।बायीं ओर के नीचे के हाथ में कमण्डल और ऊपर के हाथ में त्रिशूल है, मूर्त्ति के नीचे शक्ति का प्रतीक चिह्न सिंह भी उत्कीर्ण है । अत: मूर्त्ति का बाँया अंग पार्वती का है । इस प्रकार की यह मूर्त्ति कोई अकेली नहीं है । अन्य स्थानों में भी मुझे इस प्रकार की मूर्त्तियाँ मिली हैं। मिथिला का मूर्त्ति विधान भारत के अन्य हिस्सों की मूर्त्तियों से भिन्न रहा है, यहाँ ही मूर्त्ति में कई मूर्त्तियों के प्रतीक-चिह्न स्थापित कर एक नई परिकल्पना की गयी थी जिसका पूजा विधान भी उपलब्ध रहा होगा जो अब अनुपलब्ध है । लक्ष्मी और पार्वती दोनो ही वैष्णवी हैं, पार्वती शंकर की अर्द्धांगिनी हैं और शंकर हैं शाक्त। शाक्त की अर्द्धांगिनी वैष्णवी कैसे हो सकती हैं यह विचारणीय है। लेकिन यह तपस्विनी पार्वती का प्रतिरूप होने के कारण वैष्णवी हो ना स्वाभाविक है। अत: इस मूर्त्ति के सामने छाग की बलि देना कहाँ तक उचित है यह भी एक विचारणीय प्रश्न है । यदि यह परम्परा रही है तो कब से और क्यों? लक्ष्मीनाथ गोसाईं की यह आराध्य देवी थी । क्या गोसाईंजी भी छाग की बलि दिया करते थे? मैं समझता हूँ यह किसी पंडा का आविष्कार है जो अपनी स्वार्थपूर्त्ति के लिए लोगों को उल्टा सीधा समझाता रहता है। मुझे न तो पंडाजी के प्रति और न ही जन सामान्य के प्रति कोई आक्रोश है, यदि कोई आक्रोश है तो एक ढोंग के प्रति जो इस समय सम्पूर्ण मिथिला में फैला हुआ है । यहाँ मुझे जो शब्द सुनने को मिले इससे बढ़कर और कोई अपशब्द हो ही नहीं सकता । मैं मानता हूँ कि यहाँ के लोग अपशब्द बोलने वाले सामान्य थे । लेकिन कोइलख में यही अपशब्द मुझे मुखियाजी के मुख से 1999 के मई महीने में सुनना पड़ा था। अत: इस तरह की भावना परिपाटी के कारण उत्पन्न हुई है । इसमें किसी व्यक्ति का दोष नहीं ।

चित्र–247, भगवती (बनगाँव)

महिषी

सहरसा जिला मुख्यालय से 17 कि०मी० दूर पश्चिम-दक्षिण की ओर एक गाँव है महिषी । जिला मुख्यालय से इस गाँव तक पक्की सड़क है । पहले यह गाँव कोशी नदी की एक शाखा तिलयुगा नदी के पूर्वी तट पर अवस्थित थी । यह तिलयुगा नदी अब कोशी नदी के नियंत्रण के क्रम में पूर्वी तटबन्ध के अन्दर विलीन हो चुकी है और महिषी अब कोशी नदी के पूर्वी तटबन्ध के पूरब है । आठवीं शताब्दी में भारत प्रसिद्ध मैथिल विद्वान मंडन मिश्र और इनकी पत्नी विदुषी भारती यहीं हुए थे । इन दोनों से शास्त्रार्थ के लिए आदि शंकराचार्य को दो बार जन्म लेना पड़ा था ।

महिषी का सिद्धपीठ उग्रतारा स्थान मिथिला में प्रसिद्ध है और आध्यात्मिक महत्त्व की दृष्टि से देवी-स्थानों में यह स्थान प्रथम है । कहा जाता है कि सती का शरीर शंकर को शान्त करने के लिये विष्णु ने अपने चक्र से कई खण्डों में विभाजित कर दिया था । सती के विभाजित अंगों में से आँख का डिम्ब यहीं गिरा था । यह देवी स्थान गाँव के दक्षिण बहुत ही शान्त, सुन्दर और स्वच्छ है। स्थान में प्रवेश करते ही आध्यात्मिकता का स्पन्दन होने लगता है । यहाँ देवी मन्दिर के अतिरिक्त भी कुछ और मन्दिर हैं, जिनमें नवीन और प्राचीन कई और भी मूर्त्तियाँ स्थापित हैं । पुजारी आवास के अतिरिक्त एक धर्मशाला भी इसी परिसर में है । यह सम्पूर्ण परिसर चहारदिवारी से घिरा है । इस देवीस्थान के प्रति ग्रामीण कितने सजग हैं, इसका एहसास यहाँ का रखरखाव देता है । देवी मन्दिर का वास्तुशिल्प पुराना है । इस मन्दिर के गर्भगृह में उत्तम किस्म के कसौटी पत्थर पर उत्कीर्ण, करीब साढ़े तीन फीट ऊँची देवी की मूर्त्ति खड़ी है । मूर्त्ति का मात्र मुख प्रदर्शित है, अन्य सभी अंग, पीठिका सहित वस्त्र से ढके रहते हैं । विशेष आग्रह के बाद भी पुजारी अनावृत मूर्त्ति का दर्शन नहीं होने देता । मूर्त्ति अंग-भंग है, शायद यही कारण है कि पुजारी मूर्त्ति नहीं दिखाना चाहता । प्रदर्शित मुख भी क्षतिग्रस्त है और मूर्त्ति का एक चौथाई से अधिक अंश मिट्टी के नीचे है या नीचे का अंश खंडित है । मूर्त्ति का मुख देखने से पता चलता

है कि यह ग्यारहवीं या बारहवीं शताब्दी की पालशैली की मूर्ति है । यद्यपि यह शैली और कालनिर्णय मात्र मुख देखकर नहीं किया जा सकता तथापि मैंने कुछ यही अनुमान किया है ।

देवी का नाम उग्रतारा कैसे पड़ा, यह मूर्ति देखने के बाद ही पता चलेगा। प्राचीन मूर्त्ति होते हुए भी और विशेष आग्रह के बाद भी मूर्ति को मूर्ति के रूप में नहीं दिखाना मैं अनुचित समझता हूँ। धार्मिक प्राचीन मूर्त्तियों का आध्यात्मिक दृष्टि से महत्त्व तो है ही, इसके अतिरिक्त यह देश की अमूल्य पुरातात्त्विक धरोहर भी है । हो सकता है सर्वसाधारण के लिए यह गम्भीर बात नहीं हो, लेकिन मेरा अनुभव कहता है कि इसके पीछे कुछ षडयंत्र निश्चित रूप से हुआ करता है । कुंठाग्रस्त कुछ पुजारी भी यही व्यवहार किया करते हैं । प्राचीन मूर्त्तियाँ सर्वसाधारण के लिए ध्यानमंत्र जैसी प्रभावशाली होती हैं, यदि मूर्त्ति मूर्त्ति रूप में प्रदर्शित हों । ऐसा नहीं होने से दर्शक वह आध्यात्मिक लाभ नहीं प्राप्त कर सकता है जो उसे मिलना चाहिये । धर्म के अन्तर्गत मूर्त्ति की परिकल्पना भी इसी दृष्टि से की गई हैं । हमारा एक भी प्राचीन शास्त्र नहीं कहता है कि मूर्त्ति को आवृत किया जाय । प्रत्येक पुजारी जानता है कि अंग-भंग मूर्त्तियों की पूजा शास्त्र विहित नहीं है । यह जानते हुए भी यदि वह दान-दक्षिणा के लिए लोगों से पूजा करबाता है तो वह दण्ड का अधिकारी है । लेकिन शास्त्र का यह नियम विशेषकर प्राचीन मूर्त्तियों पर अब प्रभावी नहीं है । अत: अंग-भंग मूर्त्ति भी पूजनीय है । किन्तु इस स्थिति को छिपाकर लोगों को ठगना एक अपराध है ।

देवी उग्रतारा की मूर्त्ति जिस किसी भी स्थिति में है, आध्यात्मिक रूप से प्रतिष्ठा प्राप्त हैं और यहाँ प्रत्येक श्रद्धालुओं की इच्छा पूर्ण होती है । यह स्थान सिद्ध है और मूर्त्ति है जाग्रत । मात्र पुजारी की ही गतिविधि भ्रामक है । देवी उग्रतारा के मन्दिर के बरामदे में और इसी परिसर के एक अन्य देवालय में कई प्राचीन मूर्त्तियों का अवशेष बहुत ही सुरुचिपूर्ण ढंग से और अनावृत प्रदर्शित हैं । इनमें से किसी का भी महत्व देवी उग्रतारा से कम नहीं है । इन अवशेषों को देखने से पता चलता है कि महिषी के आस-पास का क्षेत्र प्राचीन काल से ही वाममार्गियों का केन्द्र रहा है । क्योंकि ये अवशेष इसी क्षेत्र के पास-पड़ोस से एकत्रित किये गए हैं ।

उग्रतारा मन्दिर परिसर में ही कई प्राचीन मूर्त्तियाँ एक कक्ष में पूजित हैं । इन्हीं मूर्त्तियों में क्षतिग्रस्त एक मूर्त्ति प्राचीन (सातवीं शताब्दी से पूर्व की) देवी

तारा की भी है । मेरा अनुमान है कि इस मूर्त्ति के क्षतिग्रस्त होने के बाद ही नवीन मूर्त्ति (ग्यारहवीं शताब्दी के आस-पास) की स्थापना हुई थी । यद्यपि यह बात दावा पूर्वक नहीं कही जा सकती क्यों कि नवीन मूर्त्ति क्षतिग्रस्त होने के कारण आवृत्त है और पुजारी इसे किसी को दिखाना नहीं चाहता । पेशा पर आघात की आशंका के कारण ही मूर्त्ति को आवृत्त रखा गया है जो पुजारी की अज्ञानता की उपज है । प्राचीन तारा मन्दिर का अवशेष इस परिसर में यत्र-तत्र देखा जा सकता है । प्राचीन तारा मूर्त्ति और बिखरे पड़े अन्य मूर्त्ति के अंश एक ही शैली की हैं जो समकालीन होने का प्रमाण है ।

इन अवशेषों में भगवान बुद्ध, सूर्य, एक देवी, प्राचीन तारा की क्षतिग्रस्त मूर्त्ति और वीर हनुमान के अतिरिक्त एक ध्वजस्तम्भ एवं एक प्राचीन पाषाण चौखट का टुकड़ा भी सम्मिलित है । प्राचीनकाल में बड़े-बड़े धर्मस्थानों के मध्य एक ध्वज स्थापित करने की परम्परा रही थी । यह ध्वज पत्थर का और स्थान से सम्बन्धित धर्म विशेष का प्रतीक चिह्न लिये हुए हुआ करता था । यहाँ का ध्वजस्तम्भ अवशेष देवी मन्दिर का है । इस ध्वजस्तम्भ की तरह चौखट का वह अवशेष भी किसी देवी के मन्दिर का है जिसके नीचे के हिस्से में यमुना की मूर्त्ति उत्त्कीर्ण है । पाषाण चौखट का टुकड़ा भी किसी बड़े स्थान की ओर इशारा करता है ।

आज का वैज्ञानिक युग हर दिशा में ऊँचाई पर है लेकिन मूर्त्ति निर्माण की दिशा में आज भी हम प्राचीन युग से पीछे हैं । प्राचीन मूर्त्तियों में उच्च परिकल्पना, विधान, शैली और तकनीक अपनाई गई है । ये मूर्त्तियाँ खण्डित हो या अखंड, इन्हें वस्त्र से ढक कर रखना उन धर्माधिकारियों की परिकल्पना की अवहेलना, शास्त्रीय नियम की अवमानना और आजीवन तपे मूर्त्तिकारों की कृतियों का अपमान करना है । इससे भी बढ़कर है धार्मिक नियमों की अनदेखी करना । मात्र महिषी को इसके लिए दोषी नहीं माना जा सकता, यह तो सहरसा की संस्कृति ही है । बनगाँव का भगवतीस्थान और सहरसा शहर का रक्तदन्तिका स्थान इसका उदाहरण है । रक्तदन्तिका की स्थापना का अभी तीसरा भी दशक नहीं बीता है, लेकिन इस मूर्त्ति को मूर्त्ति के रूप में दर्शन करना दुर्लभ है । सहरसा ही नहीं यह संक्रमण अन्य जिलों में भी देखने को मिलता है, यथा दरभंगा जिला का कबिलपुर स्थित भगवती स्थान, मधुबनी जिला का

कोइलख भद्रकाली स्थान और बाथों नामक गाँव में (दरभंगा जिला) विष्णु स्थान । लेकिन इन जिलों के सैकड़ों स्थान इस संक्रमण से दूर रहने के.कारण इसे परिपाटी नहीं मानकर व्यक्तिगत पाखण्ड माना जा सकता है ।

प्रत्येक देश आज पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए प्राचीन धरोहरों को विकसित करने में पानी की तरह पैसा बहा रहा है । भारत सरकार और बिहार सरकार भी इसमें पीछे नहीं है । इस योजना के अन्तर्गत समाजसेवी संगठन या सरकारी एजेंसियाँ जो इसे मूर्त्तरूप देना चाहती हैं, उसे बहुत सोच-समझकर और अध्ययन कर पाँव आगे बढ़ाना चाहिए । मिथिला में पर्यटन की दृष्टि से अनेकों स्थान उपयुक्त होते हुए भी उपेक्षित रहने के कारण भी मनमानी के शिकार हैं। अभी तक एक भी ऐसा स्थान नहीं जहाँ पहुँचकर पर्यटक को अपनी यात्रा सार्थक लगे । मूर्त्ति ढककर रखने का ही प्रतिफल है बनगाँव में वैष्णवी देवी के आगे बलिप्रदान होना इस प्रकार की विसंगतियों का दोषी मात्र बनगाँव ही नहीं बल्कि कई अन्य वे स्थान भी हैं, जहाँ प्राचीन मूर्त्तियाँ ढककर रखने की परम्परा है ।

चित्र–248, देवी उग्रतारा (महिषी)
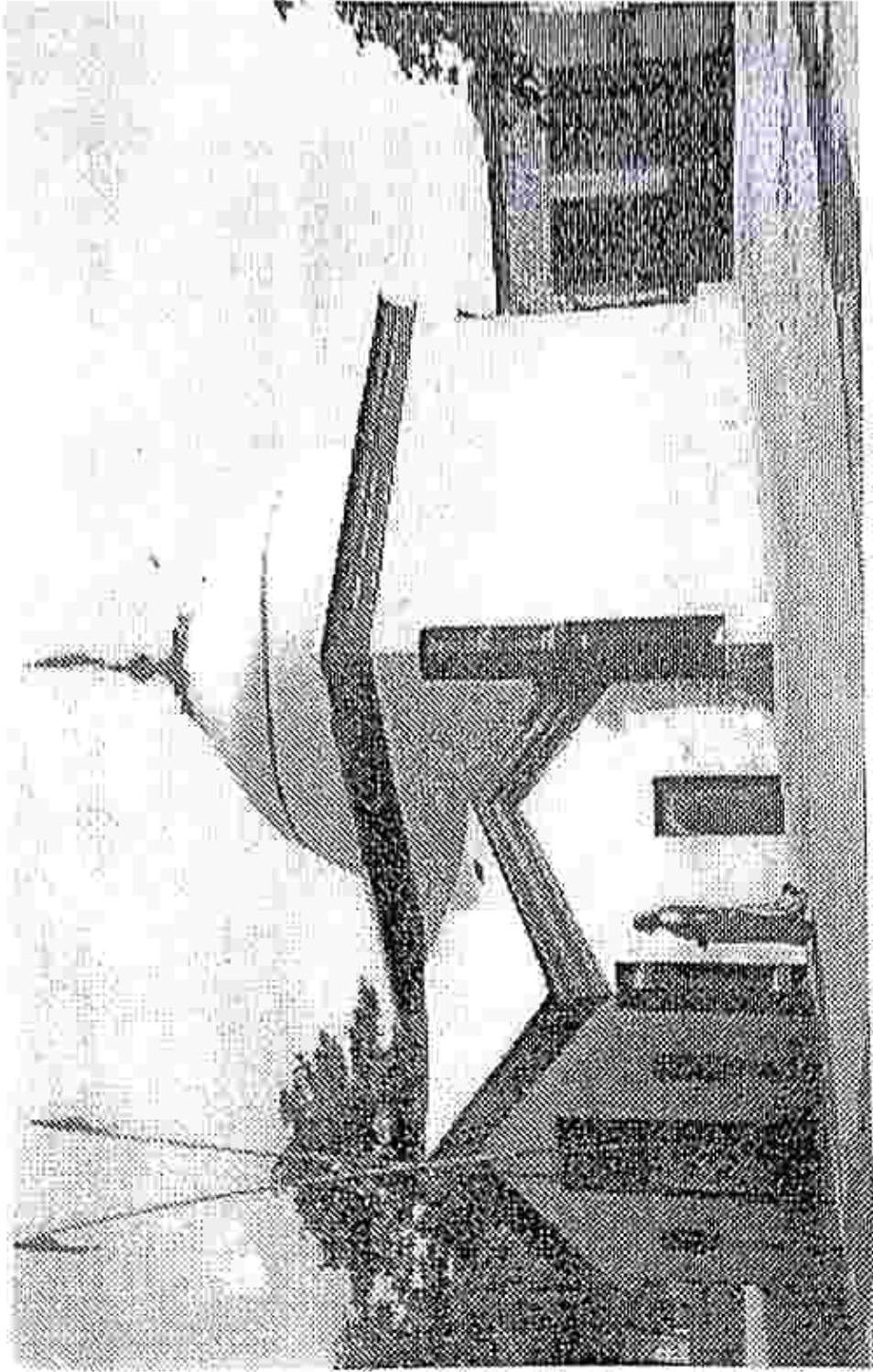
चित्र–249, उग्रतारा मन्दिर (महिषी)
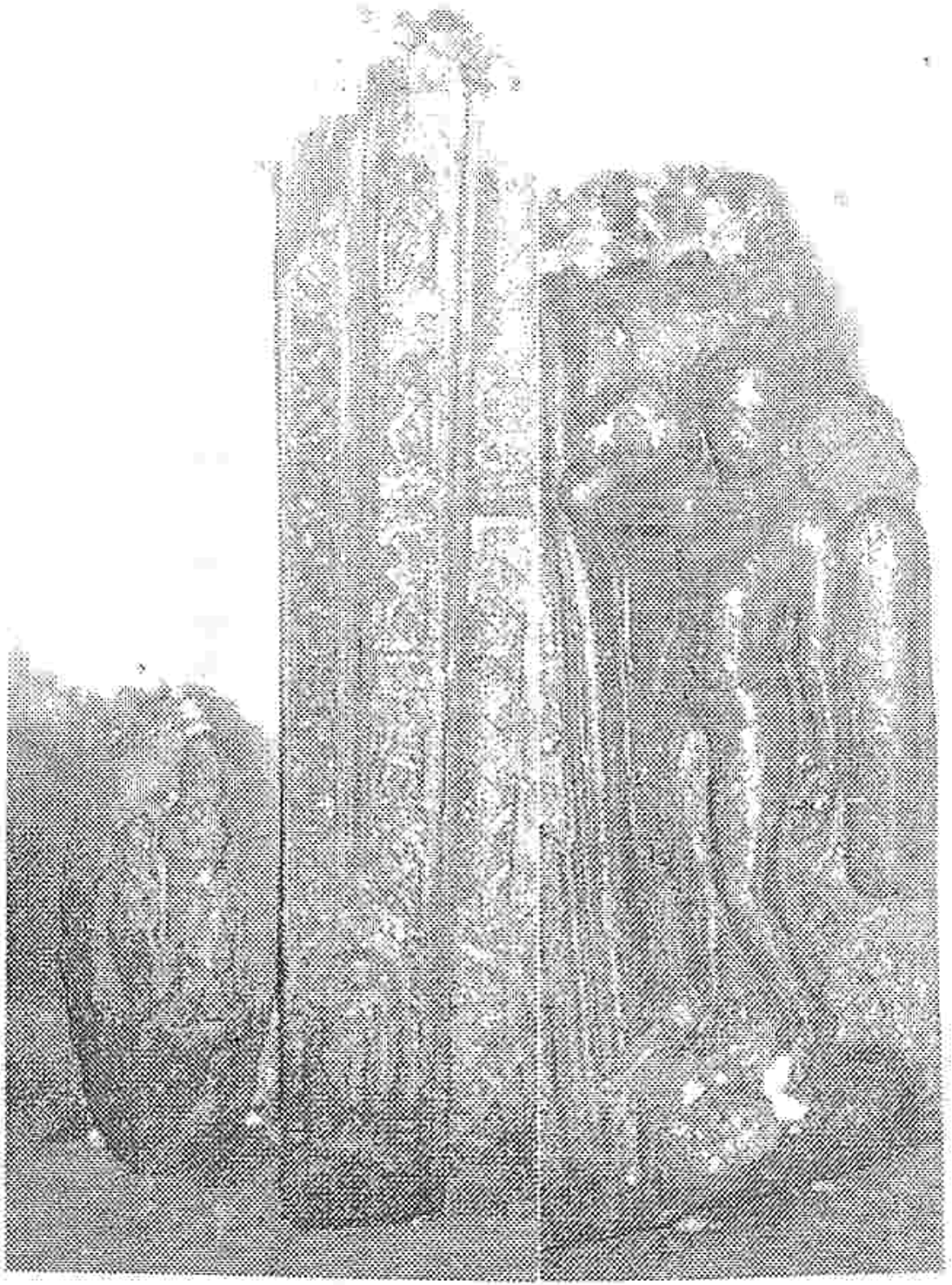
चित्र–250, उग्रतारा मन्दिर अवशेष (महिषी)

चित्र–251, देवी तारा (महिषी)

चित्र–252, भगवती (महिषी)

चित्र–253, भगवान बुद्ध (महिषी)

चित्र–254, ध्वज–स्तम्भ अवशेष (महिषी)

शिवनगर (गाण्डीवेश्वर स्थान)

मिथिला में इस नाम के कम से कम तीन गाँव हैं जिन्हें मैं जानता हूँ। खोज से पता चलता है कि इन गाँवों का नामकरण चौदहवीं शताब्दी के बाद हुआ है और इस से पूर्व ये स्थान वीरान रहे थे। शिवलिंगों की प्राप्ति ही इन गाँवों के नामकरण का आधार है। एक शिवनगर है दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्व-दक्षिण की ओर करीब 40 किलोमीटर दूर और यह प्रसिद्ध गाँव कोर्थ का एक टोला है। दरभंगा जिला मुख्यालय से उपर्युक्त दिशा और दूरी पर ही इसी नाम का एक और गाँव है इटबा-शिवनगर। यह गाँव दरभंगा-बिरौल पथ पर हाबीडीह से आगे और पररी के निकट है। यहाँ गुप्तकालीन खण्डहर में एक पंचमुख शिवलिंग और पार्वती की छोटी सी मूर्त्ति मिली है। यह सम्पूर्ण गाँव ही ईंटों की ढेर (खण्डहर) पर बसा है। तीसरा शिवनगर जो इस लेख का मुख्य विषय है, यह मधुबनी जिला के बेनीपट्टी अनुमंडल से करीब 14 कि०मी० दूर पश्चिम-दक्षिण की ओर एक पक्की सड़क के किनारे है। इस सड़क के दक्षिण है गाँव शिवनगर और उत्तर में इस गाँव का देवालय गाण्डीवेश्वरस्थान। गाण्डीवेश्वर महादेव का शिवलिंग अर्द्धअण्डाकार, कसौटी पत्थर और करीब 10 ईंच व्यास का है।

गाण्डीवेश्वर स्थान एक प्राचीन तालाब के उत्तरी भिण्डे पर चारो ओर से चाहारदिवारी से घिरा है। इस अहाते में कई मंदिर हैं। इन मंदिरों में चार शिवलिंग, रामजानकी, भगवती, उमा-महेश्वर के अतिरिक्त और भी कई मूर्त्तियाँ नवीन एवं प्राचीन हैं। एक ही स्थान पर चार शिवलिंग का होना इस बात का प्रमाण है कि अन्य स्थानों से भी शिवलिंग यहाँ लाये गये हैं। यहाँ एक शिवलिंग सतह से करीब 8 फीट नीचे है। इसमें पार्वती की मूर्त्ति उत्कीर्ण है।

भीठभगवानपुर, महादेवमठ, डोकहर, तिरहुता, मंगरौनी, भोजपरौल, बनवारी, वसुदेवा, सिमरिया-भिण्डी आदि कई स्थानों में उमा-महेश्वर की मूर्त्तियाँ मिली हैं, लेकिन गाण्डीवेश्वर स्थान की उमा महेश्वर की मूर्त्ति आकार में सबसे छोटी

है । यह करीब 15 ईंच ऊँची और 8 ईंच चौड़ी है । कसौटी पत्थर की यह मूर्त्ति मिथिला शैली और कर्णाट काल की है ।

गाण्डीवेश्वर स्थान में नवमीं-दसवीं शताब्दी का एक शिला-स्तम्भ-खण्ड भी है । इसे स्तम्भ कहा जाय या मूर्त्ति-पीठिका, कुछ तय कर पाना कठिन है । क्योंकि इसका ओर छोर सीमेंट से ढँका है । मैं इसे द्वादश आदित्यशिला नाम देता हूँ । इस पर बारह आदित्य (सूर्य) की मूर्त्ति और अलंकरण के अतिरिक्त दो भक्तों की भी मूर्त्तियाँ उत्कीर्ण हैं । द्वादश आदित्य की एक अनुपम और विशाल मूर्त्ति (बारहवीं शताब्दी) विष्णु-बरुआर में उपलब्ध है । यह शिला एक नहीं बल्कि दो शिलाओं को मध्य से जोड़ा गया है जो उस विशाल सूर्य-मंदिर का दो पाखा है जिसमें भगवान सूर्य की मूर्त्ति रही होगी । भगवान सूर्य की वह मूर्त्ति और मंदिर-अवशेष यहीं कहीं धरती के नीचे है ।

यहाँ उपलब्ध मूर्त्तियों में से जिसने मुझे सबसे अधिक आकर्षित किया वह है एक महत्त्वहीन शिला जिस पर एक देवी जैसी मूर्त्ति उत्कीर्ण है । यह शिला ठीक वैसी ही है जैसी मशाला-पीसने की शिला हमलोगों के घरों में हुआ करती है । इसका आकार है 12" × 9" । इस शिला पर उत्कीर्ण मूर्त्ति प्रस्तर शिल्प की अति प्राचीन भी हो सकती है और किसी शौकिया मूर्त्तिकार द्वारा उत्कीर्ण विगत कुछ दशक या सौ वर्ष प्राचीन भी । लेकिन यदि यह कुछ दशक या सौ वर्ष प्राचीन होती तो जिस तरह घिस चुकी है, सम्भव नहीं था । अत: मैं यह मानकर चलता हूँ कि यह प्रस्तर-शिल्प की प्रारम्भिक कृति है । इस तरह मूर्त्तिपीठिका का आकार जो यहाँ की मूर्त्तियों में देखने को मिलता है, इसी काल में सुनिश्चित हुआ होगा ।

यह शिला जहाँ कहीं मिली उस स्थान की प्राचीनता आँकी जा सकती है । खोज करने पर पता चला है कि उमा महेश्वर की मूर्त्ति, आदित्यशिला और यह शिला-खण्ड जिस पर देवी उत्कीर्ण है, यहीं स्थित तालाब में मिली थीं । गाण्डीवेश्वर स्थान के सम्बन्ध में जो कथा यहाँ प्रचलित है, वह मुझे मान्य नहीं । क्योंकि यह मनगढंत है, पुरातात्त्विक से आधार हीन । लेकिन यहाँ उपलब्ध मूर्त्तियाँ इस स्थान की प्राचीनता का ठोस प्रमाण है, यदि यह इसी तालाब में मिली थीं । शिवलिंगों पर अंकित जो आघात का चिह्न है वह भी इसे अत्यन्त प्राचीन घोषित करता है।

चित्र–255, मूर्त्ति शिला (गाण्डीवेश्वर स्थान)
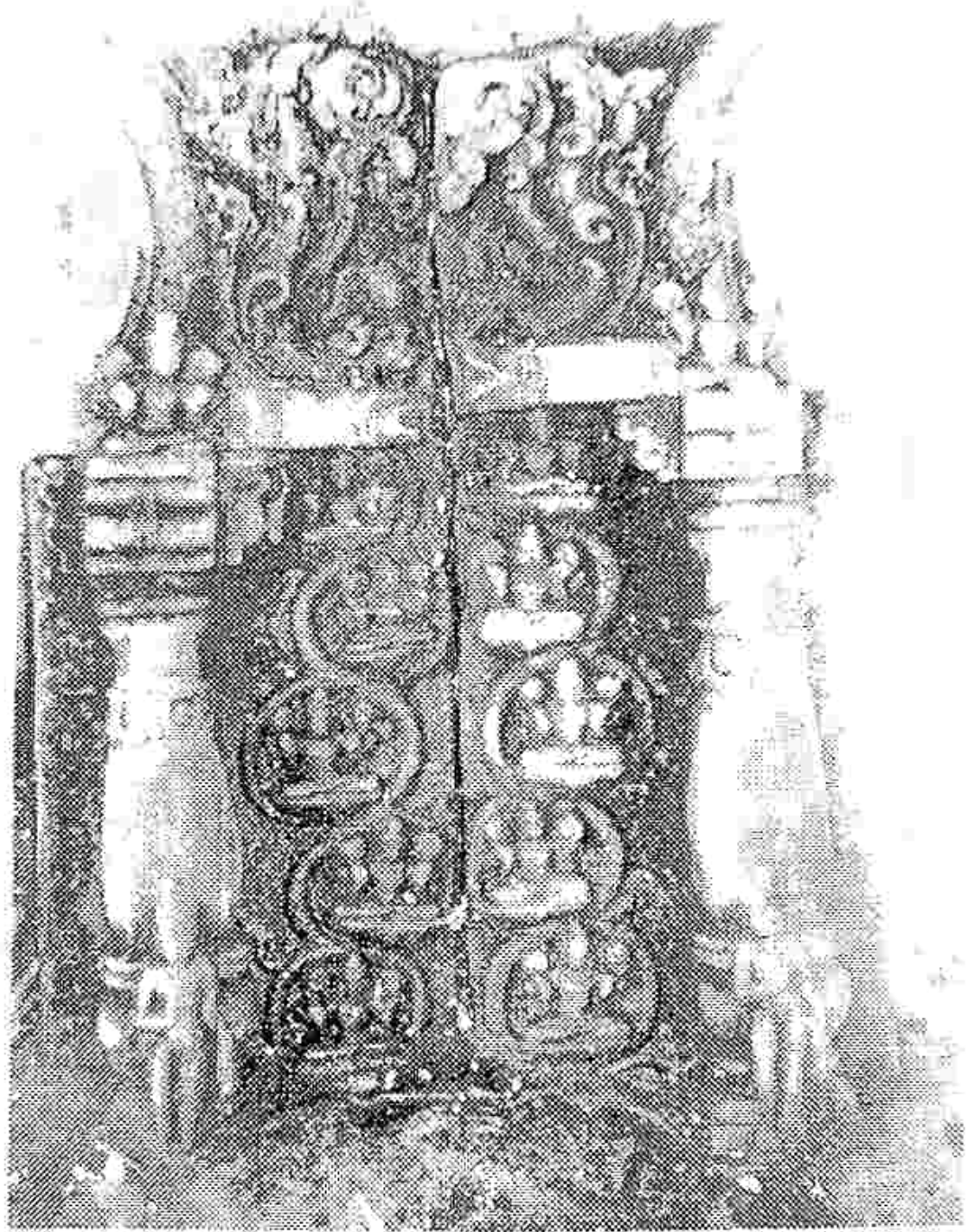
चित्र–256, द्वादश आदित्य शिला
गाण्डीवेश्वर स्थान

चित्र–257, उमा महेश्वर (गाण्डीवेश्वर स्थान)

दर्शनीय मिथिला

नवम पूष्प
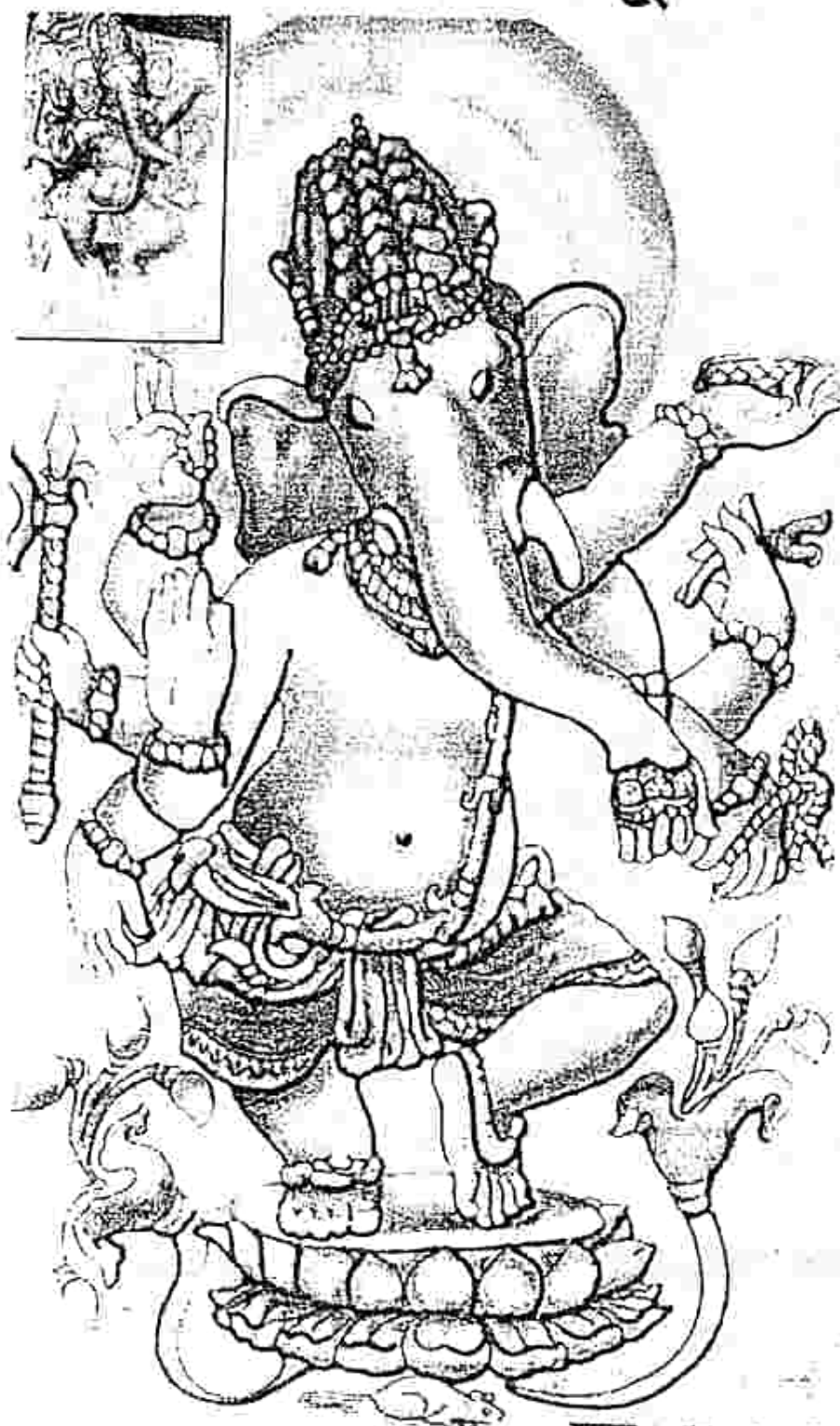
एस० एन० सत्यार्थी

नगरडीह

मिथिला का एक नाम 'वृहद विष्णु पुराण के अंश **'मिथिला महात्म्य'** में **रत्नगर्भा** कहा गया है जो सार्थक है । विगत कुछ सौ वर्षों में इसके गर्भ से सैकड़ों रत्न निकले हैं और अभी हजारों रत्न इसके गर्भ में हैं, जिनकी जानकारी किसी को नहीं है । ये रत्न स्वतः मिथिला के गर्भ से निकलते रहते हैं । इसी तरह का एक रत्न नगरडीह नामक गाँव के रूप में अभी–अभी प्रकाश में आया है । यह गाँव दरभंगा जिला के जाले प्रखण्ड में प्रसिद्ध नगर कमतौल से 9 कि० मी० पश्चिमोत्तर दिशा में है ।

नगरडीह नामक गाँव एक प्राचीन नदी–अवशेष के पश्चिमी तट पर बसा है । यहाँ की **सिरिया बाबा कुटी** नामक स्थान से दो प्राचीन मूर्त्तियाँ मार्च 2003 के प्रथम सप्ताह में गायब हो गई और 13 रोज बाद ये मूर्त्तियाँ इस स्थान से करीब 3 कि० मी० पूर्व–दक्षिण दिशा के **खजुरबाड़ा** नामक गाँव में छिपाई हुई मिलीं । अब ये मूर्त्तियाँ पुनः अपने पुराने स्थान में पहुँच चुकीं हैं । कसौटी पत्थर की ये दोनों मूर्त्तियाँ रत्नों से भी अधिक कीमती हैं । इनमें से एक मूर्त्ति की लम्बाई है 26 ईंच जो गंगा की मूर्त्ति है और दूसरी मूर्त्ति 30 ईंच ऊँची यमुना की हैं । ये दोनों ही मूर्त्तियाँ यहीं नदी–अवशेष में करीब 120 वर्ष पहले हल जोतने के समय मिली थीं । तब से लेकर अब तक ये लगातार पूजित रही हैं । इन्हें भगवती और भगवान के नाम से यहाँ पूजा जाता है । पुजारी का नाम है श्रीनारायण यादव और इसी नाम के कारण इस स्थान को लोग सिरिया बाबा कुटी कहते हैं ।

सिरिया बाबा कुटी करीब एक एकड़ विस्तृत टीले के मध्य एक खपडैल माकान में है । यह टीला प्राचीन मंदिरों का एक खण्डहर है । कभी यह जंगल रहा था जिसका साम्राज्य अभी भी टीले पर दिखाई पड़ता है । जंगली पेड़ पौधों से भरा यह टीला एक स्तूप जैसा है । इस पर जगह–जगह अभी भी प्राचीन मंदिरों की दीवाल और गुप्तकाल से लेकर पालकाल तक की ईंटें स्वतः झाँकती नजर आती हैं । यह टीला ईंटों का खण्डहर हैं । पालकालीन ईंटें

छोटी हैं और गुप्तकालीन बड़ी–बड़ी । बड़े आकार की एक ईंट का माप है– 12.5 X 10 X 2.5 ईंच । लोगों का कहना है, इस खण्डहर में इससे बड़े आकार की ईंटें भी मिलती हैं ।

गंगा–यमुना की मूर्त्तियाँ अन्धराठाढ़ी और महिषी में मिली हैं । ये मूर्त्तियाँ मंदिर के चौखटो का अंश हैं । नगरडीह की मूर्त्तियाँ पूजा गृह की मूर्त्तियाँ हैं । इनके स्वतन्त्र मंदिर रहे होंगे और पूजा भी स्वतन्त्र रही होगी । यहाँ की दोनों मूर्त्तियाँ दो काल की हैं और इनके मूर्त्तिकार भी दो रहे थे । गंगा की मूर्त्ति अधिक परिष्कृत है और यमुना की मूर्त्ति से प्राचीन भी है । मेरा अनुमान है– इस स्थान के खण्डहर में या नदी अवशेष में और भी कई देवी–देवताओं की प्राचीन मूर्त्तियाँ दफन हैं ।

सिरिया बाबा कुटी का महत्त्व तब और बढ़ जाता है, जब हम मिथिला की प्राचीन भौगोलिक बनाबट पर ध्यान केन्द्रित करते हैं । यह खण्डहर **खिरोई** (क्षीरोदकी) नदी अवशेष के पश्चिमी तट पर है । वस्तुतः यह नदी–अवशेष किसी साधारण नदी की नहीं बल्कि प्राचीन मिथिला की धमनी का अवशेष है । नदी अवशेष जाले और जोगियारा के मध्य से लेकर गौतमाश्रम तक लगातार है और इसके पाट की चौड़ाई जगह–जगह 300 से 400 मीटर तक फैली हैं । प्राचीन काल में **क्षीरोदकी** मिथिला की एक प्रमुख नदी थी । इस नदी के दायें–बायें तट पर अनेकों प्राचीन तीर्थ हैं । **गौतमाश्रम, अहल्या स्थान, नटराज की मूर्त्ति, अग्निमूर्त्ति और सूर्यमूर्त्ति** इसी नदी के तटों पर मिले हैं ।

दरभंगा शहर मिथिला की हृदयस्थली है । इसके पश्चिम से छोटी **बागमती नदी** बहती है । इस नदी को **व्याघ्रमती** भी कहा गया है । दरभंगा नगर दो भागों में बँटा है । दक्षिणी भाग को लहेरियासराय और उत्तरी भाग को दरभंगा कहा जाता है । लहेरियासराय से एक कि० मी० पश्चिम एकमी एक गाँव है । इस गाँव के पास ही बागमती नदी के साथ एक और नदी पश्चिमोत्तर दिशा से आकर संगम करती है । इस नदी को **खिरहर** (क्षीरोदकी) कहा गया है । इस समय खिरहर नदी का उद्‌गम स्थल है कमतौल नगर से

पश्चिम एक चौर और अब यह नदी बरसाती नदी के नाम से जानी जाती है । ब्रह्मपुर के पूर्वोत्तर और अहियारी गाँव के पश्चिमोत्तर दिशा में **गौतमाश्रम** है । यहाँ तीन कुण्ड क्षीरोदकी नदी–अवशेष पर गौतम कुण्ड के नाम से प्रसिद्ध है । **अहल्या स्थान** अहियारी गाँव में है । इस नदी का उद्‌गम स्थल इस चौर को नहीं माना जा सकता । जाले और जोगियारा के मध्य से होते हुए गौतम कुण्ड तक इस नदी का अवशेष स्पष्ट है । क्षीरदोकी का अर्थ है दूध जैसा स्वच्छ और स्वास्थ्य वर्धक जल वाली नदी । प्राचीन वागमती का यही परिपथ रहा था । नवीन वागमती तेरहवीं शताब्दी के बाद प्राकृतिक उथल–पुथल से उभर कर बहने लगी है । नगरडीह ही नही गिरिजा स्थान से लेकर डिहलाही तक अनेकों देवस्थान इस नदी के तट पर हैं ।

हरलाखी के फुलहर गाँव में गिरिजा का प्राचीन मंदिर है । यहाँ गिरिजा के अतिरिक्त गणेश और महिषासुर मर्दिनी की प्राचीन मूर्त्तियाँ हैं । नगरडीह में गंगा–यमुना की मूर्त्तियाँ मिलीं हैं और अनुमान है और भी कई मूर्त्तियाँ अभी इस खण्डहर में हैं । गौतमाश्रम और अहिल्यास्थान इसी नदी तट पर हैं । इन स्थानों से थोड़ा पश्चिम बढ़ने पर रतनपुर में प्राचीन शिवलिंग है और अनेकों और भी पुरातात्त्विक अवशेष मिले हैं । इनमें से सूर्यमूर्त्ति, गणेशमूर्त्ति और वराहमूर्त्ति प्रमुख हैं । प्राचीन मंदिर के पत्थर–अवशेष यहाँ बिखरे पड़े हैं । इसी नदी के तट पर और दरभंगा नगर से मात्र तीन कि० मी० पश्चिम एक गाँव है तारालाही । इस गाँव में नटराज शिव की विशाल प्राचीन प्रतिमा मिली है ।

दरभंगा नगर से पाँच कि० मी० दक्षिण–पश्चिम एक गाँव है डिलाही । यह गाँव क्षीरोदकी नदी के हद जो बरहेता गाँव से दक्षिण है, इसके पश्चिमी तट पर बसा है । यहाँ सूर्य और अग्नि की प्राचीन प्रतिमा मिली हैं । गाँव देकुली जो लहेरियासराय से मात्र तीन कि० मी० पूर्व–दक्षिण की ओर है, यहाँ एक प्राचीन तालाब में मंदिर अवशेष के अतिरिक्त सूर्य, गणेश और भगवती की प्राचीन मूर्त्तियाँ मिली हैं । इसी तरह इस गाँव से कुछ ही दूर स्थित होरलपट्टी नामक गाँव में अनेकों पुरातात्त्विक महत्त्व के पत्थर अवशेष एक देवस्थान में

बिखरे पडे हैं । प्राचीन काल से ही मिथिला नदियों का जाल रहा है । जल देवी होने के कारण गंगा–यमुना की पूजा यहाँ अत्यन्त प्राचीन, रही है । **वरसाम, खड्रक और नगरडीह** में स्वतान्त्र तथा **अन्धराठाढ़ी** और **महिषी** में ये मूर्तियाँ मंदिर अवशेष में मिले हैं । गंगा–यमुना का प्रतीक चिह्न है मंगलघट और फूलडाली । गंगा का वाहन मकर और यमुना का वाहन कच्छप है ।

258. सिरिया बाबा कुटी, नगरडीह

259. गंगा मूर्त्ति, नगरडीह

260. यमुना मूर्त्ति, नगरडीह

देकुली

वैदिक धर्म से सम्बन्धित आध्यात्मिक चिन्तान, मनन और अनुशीलन के क्रम में मिथिला शदियों तक भारतवर्ष उपमहाद्वीप का प्रतिनिधित्व करती रही थी । हो सकता हैं आज का भारत इस सच्चाई को गम्भीरता से नहीं ले । क्योंकि मैथिल स्वयं मिथिला के इस महत्त्व से अनभिज्ञ हैं । आज का युग प्रमाण खोजता है । भारत के पास कभी पुष्पक विमान रहा था, अस्त्र–शस्त्र के माध्यम से प्रकृति की तीन शक्तियाँ– वायु, अग्नि और जल इसके अधीन थी । लेकिन इन बातों की चर्चा आज सिर्फ कहने और सुनने के लिये बची है । प्रमाण के अभाव में अविश्वनीय लगती है । ऐसी बात नहीं कि इनके कुछ भी प्रमाण आज उपलब्ध नहीं हैं, प्रमाण पर्याप्त हैं । लेकिन अन्वेषण के अभाव में जिस तरह भारत इन बातों को सिद्ध करने में असमर्थ है, मिथिला भी इसी परिस्थिति का सामना कर रही है । मिथिला को इसे सिद्ध करने के लिये पुरातात्त्विक सहयोग चाहिये । यह कार्य सरकार के अधीन है और सरकार को इस तरह के कार्यों में अभिरुचि नहीं । फलतः इस तरह का कुछ भी कार्य मिथिला में हुआ ही नहीं है ।

प्रकृति अपना संतुलन स्वयं बनाये रखती है । मिथिला के प्रति सरकार उदासीन है, लेकिन प्रकृति नहीं । जिसका प्रमाण है **ब्रह्मस्थान देकुली** । दरभंगा जिला में देकुली तीन हैं जिसे यहाँ के निवासी इसे **देकुलीधाम, देवकली और देकुली** के नाम से पुकारते हैं । देकुलीधाम बिरौल प्रखण्ड में बहेड़ी–सिंघिया मुख्यपंथ पर और देवकली लहेरियासराय–बहेडी मुख्य पथ पर जिला मुख्यालय से मात्र तीन कि० मी० पूर्व–दक्षिण की ओर है । इन दोनों ही स्थानों में मिले पुरातात्त्विक अवशेष, इन्हें मिथिला का महत्त्वपूर्ण प्राचीन नगर घोषित करते हैं । तीसरी देकुली जो इस लेख का शीर्षक है, दरभंगा–बहेड़ा मुख्यपथ पर **सोनकी वासुदेवपुर और डगरशाम** से पूरब तथा कमला नदी के पश्चिमी तट पर नारिबान्ध के निकट है ।

सोनकी से लेकर लगातार नारिबान्ध तक दरभंगा–बहेड़ा मुख्यपथ के

दोनों ओर उच्चस्तर के प्राचीन बस्तियाँ हैं जो छोटी–छोटी पहाड़ी जैसी दिखाई पड़ती हैं । इसी तरह के एक टीला पर बसा है ग्राम देकुली । इस ग्राम के दक्षिण–पूरब छोड़पर करीब पाँच कट्ठा भूभाग में सामान्य सतह से 10 फीट ऊँचा एक टीला है । इस टीला के मध्य एक प्राचीन पीपल का पेड़ खड़ा है । इस पेड़ के प्रांगण में, जड़ में और पेड़ पर प्राचीन मंदिर के कई अवशेष बिखरे पड़े हैं । इसे ब्रह्मस्थान कहा जाता है । इस टीला के निकट अभी भी तीन तालाब हैं– दक्षिण में छोटकी पोखरि, दक्षिण–पूरब में बड़की पोखरि और पूरब में नन्दी पोखरि । पेड़ के आगे कुछ अलंकृत पत्थर के टुकड़े, कुछ पेड़ की जड़ में मूर्त्तित पत्थर के टुकड़े और एक अलंकृत पत्थर का टुकड़ा पेड़ की जड़ से पाँच फीट ऊपर पेड़ के आगोश में जकड़ा खड़ा है । पत्थर के सभी टुकड़े काले रंग के और विभिन्न काल के हैं । शिल्पित पत्थर अवशेष पर तोड़फोड़ का स्पष्ट लक्षण है जो विगत समय में यहाँ हुए धार्मिक संघर्ष की ओर इशारा करता है । यह प्राचीन काल में राज्य सम्पोषित धार्मिक स्थान रहा था । इस मंदिर की मूर्त्तियाँ कहीं, यहीं के धरती या जलाशाय में दबी पड़ी हैं । यह पीपल का पेड़ मिथिला की आत्मा है जो प्राचीन मिथिला का झंडा लेकर मिथिलावासी को ललकार रहा है । कहता हैं अब भी आखें खोल– देख प्राचीन मिथिला क्या थी और आज तुम कहाँ जा रहे हो ! मेरा अनुमान है, प्राचीन मंदिर की मूर्त्तियाँ इसी टीला में दबी–पड़ी उद्धार की राह खोज रही हैं ।

मिथिला में पीपल पेड़ की पूजा अत्यन्त प्राचीन है । पीपल के पेड़ का वैज्ञानिक महत्त्व कुछ भी हो, आध्यात्मिक महत्त्व यह स्वयं लेकर उत्पन्न होता है । जहाँ कहीं प्राचीन धार्मिक स्थान रहा था, पीपल का पेड़ स्वयं उत्पन्न होकर इसका संकेत देता है । यह सिद्धान्त प्रमाणिक है जिनके अनेकों उदाहरण मुझे मिले हैं । मेरा अनुमान है जहाँ कहीं प्राचीन मंदिर या मूर्त्तियों के अवशेष धरती के गर्भ में होते हैं, ऐसे स्थान में पीपल का पेड़ तेजी से बढ़ता और फैलता है । साथ ही यह पत्थर अवशेष को अपने अंक में ले लेता है । ज्यों–ज्यों वृक्ष में वृद्धि होती है, पत्थर अवशेष वृक्ष के सहारे धरती से बाहर

निकलता रहता है और समय के अन्तराल से यह पूर्णतः बाहर निकल आता है । इस तरह पीपल के पेड़ को यदि **प्राकृतिक पुरातात्त्विक यन्त्र** कहा जाय तो अनुचित नहीं होगा ।

आज की तिथि से करीब 50 वर्ष पहले देकुलीधाम में एक शिवलिंग की उत्पत्ति पीपल के पेड़ गिरने से हुई थी । करीब 35–40 वर्ष पहले एक पेड़ के नीचे से **भोजपरौल** (मधुबनी जिला) में चार विशाल विभिन्न मूर्त्तियाँ प्राप्त हुई । बहेड़ा के निकट **धरौरा** ग्राम ब्रह्मस्थान में विशाल पीपल के पेड़ की जड़ से शिवलिंग बाहर झाँकता नजर आता है । **जमथरि** (मधुबनी जिला) का तान्त्रिक गौरी–शंकर, पेड़ के नीचे ही मिला था । घनश्यामपुर प्रखण्ड का एक गाँव है **शाहपुर गोनौन** । यहाँ के दुर्गा स्थान में देकुली की तरह ही प्राचीन मंदिर का एक अवशेष पीपल की जड़ से तीन फीट ऊपर उठा वृक्ष के अंक में पूजित है । ग्राम **देकुली** (देवकली) में एक स्थान पर कुछ प्राचीन मूर्त्तियाँ और मंदिर अवशेष जमा थे । इनके ऊपर पीपल का पेड़ निकल आया और यह अवशेष आँख से ओझल हो गया । फलतः इस पेड़ को काट दिया गया और तब कहीं इन अवशेषों को मुक्ति मिली । इस तरह के उदाहरण इतने ही नहीं और भी हैं । प्राकृतिक इस गुण का उपयोग पुरातात्त्विक अन्वेषण में किया जा सकता है लेकिन इसका परिणाम देर से (पाँच–सात पीढ़ी के बाद) मिलता है । पीपल के इस गुण को विद्युतउर्जा में बदला जा सकता है और इस तरह के यन्त्र पुरातात्त्विक अन्वेषण में सहायक सिद्ध हो सकते हैं ।

भाषा विज्ञान के अनुसार देकुली नामधारी स्थानों में पुरातात्त्विक अन्वेषण आँख मूँद कर किया जा सकता है । ऐसा करने से 95 प्रतिशत सफलता मिलने की सम्भावना बनी रहती है । इस देकुली के निकट के अन्य ग्राम यथा, सोनकी, वासुदेवपुर, डगरशाम आदि स्थानों में पत्थर की प्राचीन मूर्त्तियाँ अभी नहीं मिली हैं । वासुदवेपुर में शिवमंदिर और शिवलिंग मिलें हैं । लेकिन मेरा अनुमान है आगे चलकर इन स्थानों में भी इस प्रकार की मूर्त्तियाँ मिल सकती हैं । मिथिला का यह भूभाग प्राचीन काल में आध्यात्मिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा था । इस भूखण्ड के दो ओर मिथिला की दो प्रसिद्ध नदियाँ, **जीवछ** और

कमला बहती हैं । इन दोनो नदियों का संगम **नवानी** के पास **त्रिमुहानी** में होता है जो इस देकुली के निकट पूर्व–दक्षिण में है । कमला नदी के पूर्वीतट पर प्रसिद्ध धार्मिक स्थान जहाँ पुरातात्त्विक अवशेष मिले हैं, **भंडारिसम, नेहरा, हावीभौआर, नवादा, बहेड़ा और धरौरा हैं । जीवछ के पश्चिमीतट पर अन्दामा, देवकली, होरलपट्टी, दरभंगा शहर और असगाँव–धर्मपुर बहुत पहले ही प्रकाश** में आ चुके हैं । इस स्थिति में कमला और जीवछ के मध्य का यह पाट सूना हो, सम्भावना नगण्य है । उत्तर में सकरी, दक्षिण में बहेड़ी, पूरब में बलान नदी और पश्चिम में बागमती नदी के मध्य का स्थान, प्राचीन मिथिला का महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक भूभाग रहा था । इस भूभाग के मध्य अभी तक करीब 100 पुरातात्त्विक स्थान पाये गये हैं और आगामी समय में इससे भी अधिक स्थानों के प्रकाश में आने की सम्भावना है । जनक की राजधानी और सीता की उत्पत्ति इसी भूभाग में हुई थीं । जिसका वृहद् वर्णन मैंने अपनी दो पुस्तकों, **'मिथिलापुरी कहाँ ?'** और **'मिथिलापुरी'** में किया है ।
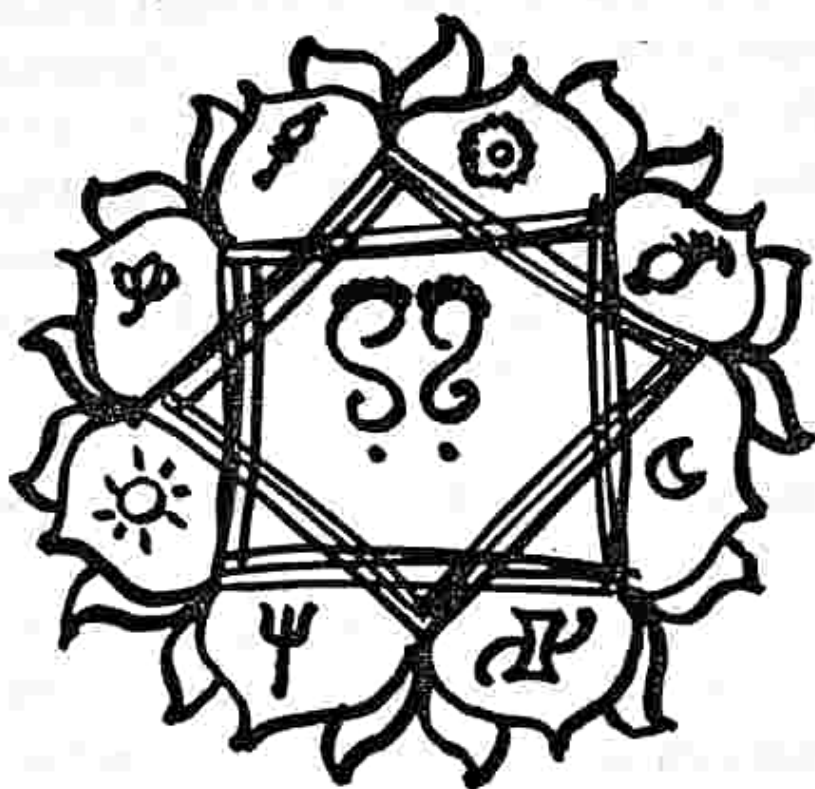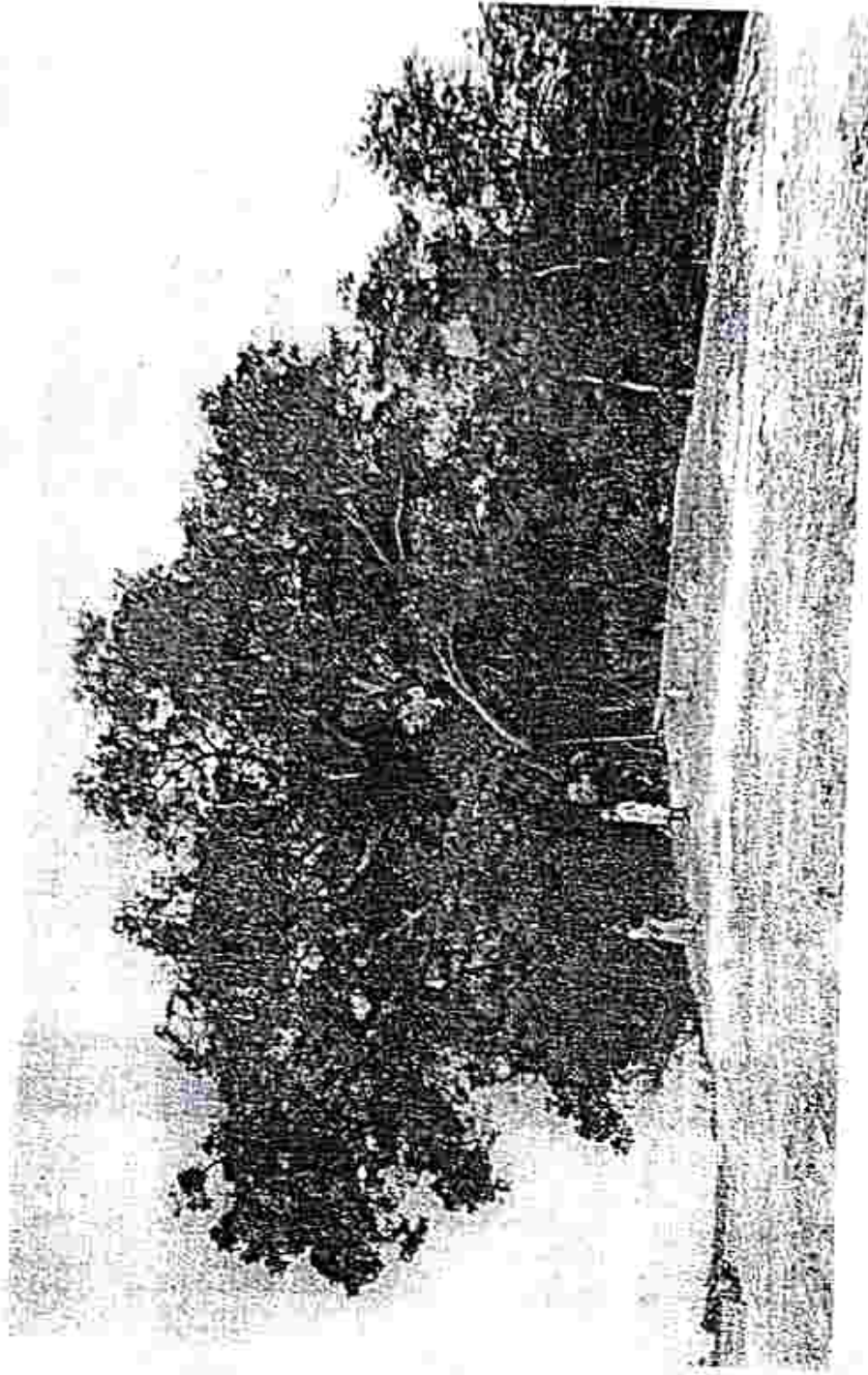
261. बह्मस्थान, देकुली
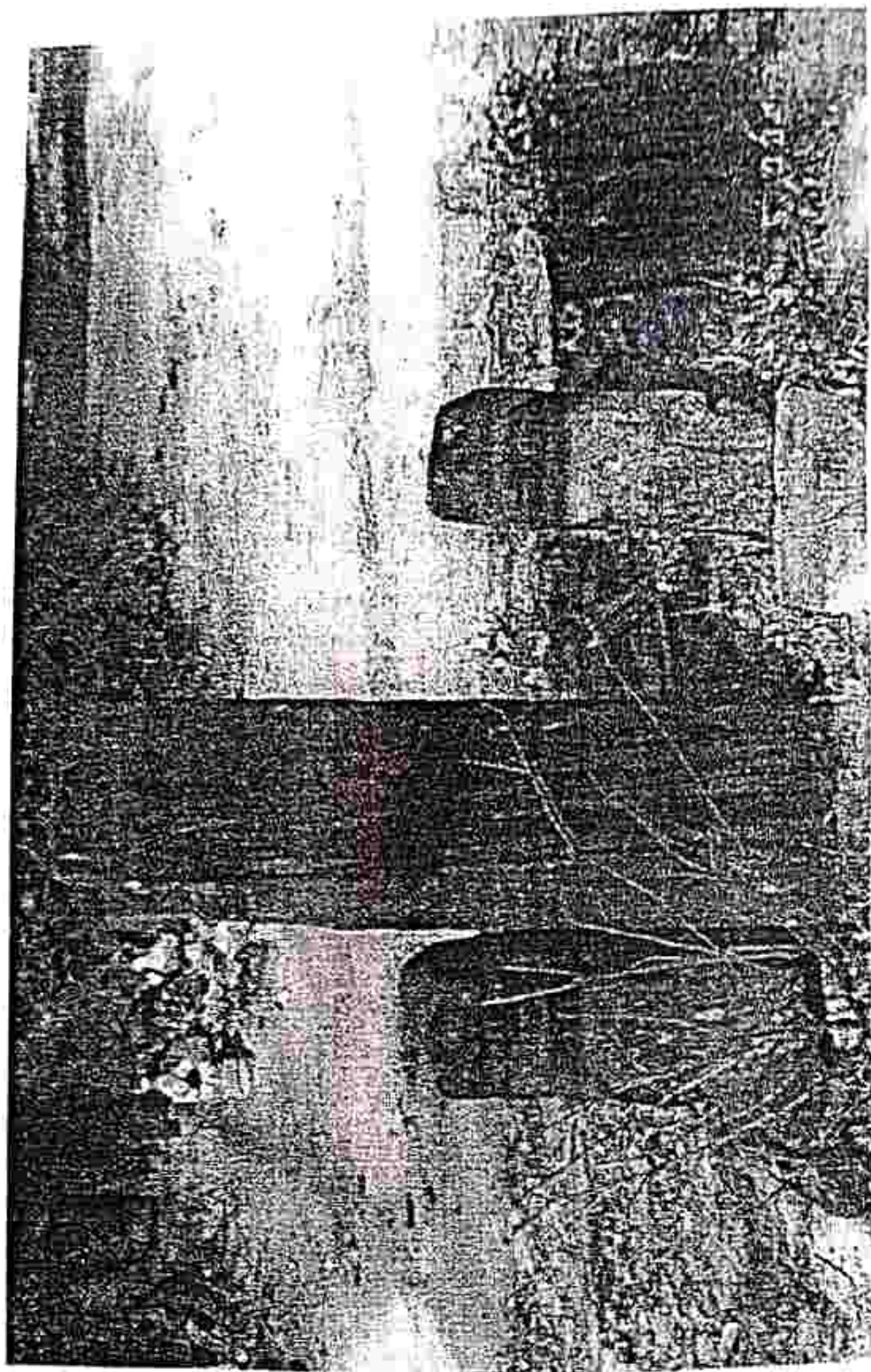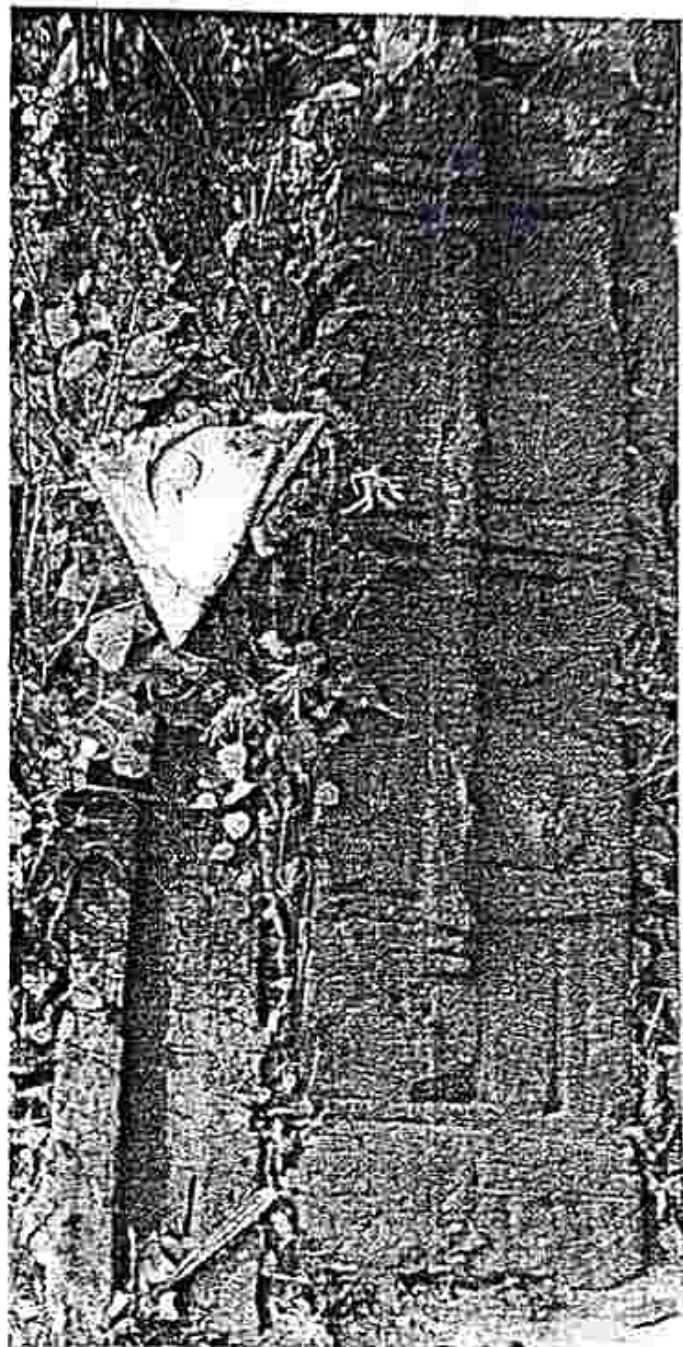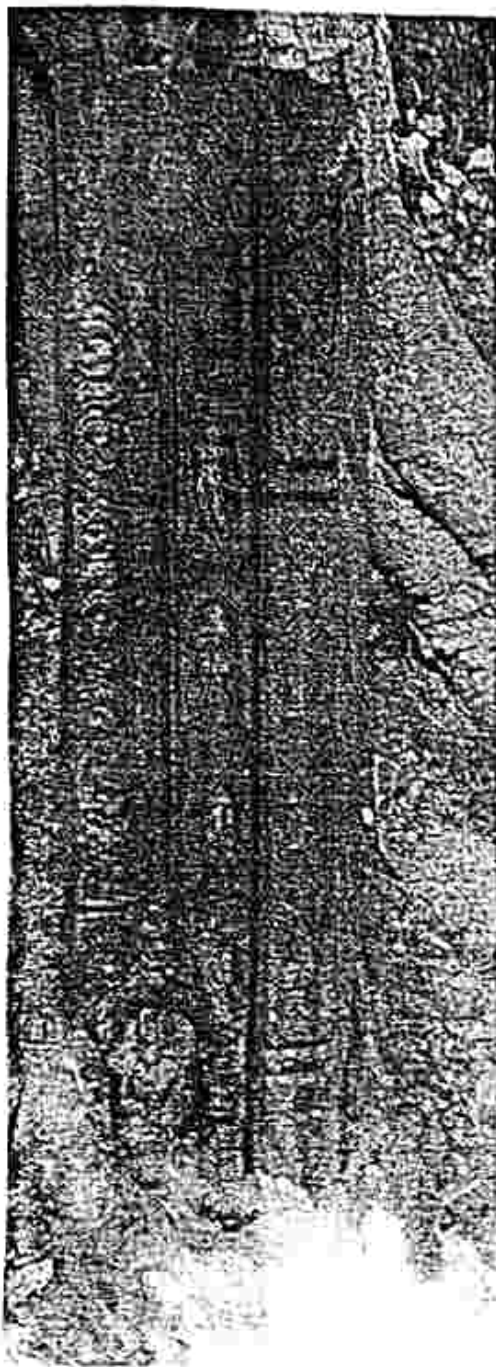
262. मंदिर अवशेष, देकुली

263. मंदिर अवशेष, देकुली

264. मंदिर अवशेष शिल्प, देकुली

265. पेड़ पर टिका मंदिर अवशेष, देकुली

भगवती स्थान नवादा

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूरब करीब 30 कि० मी० दूर, कमला नदी की एक शाखा के पूर्वीतट पर ब्राह्मण बहुल एक गाँव है नवादा । इस नदी के पश्चिमी तट पर विस्तृत फैले जनशून्य एक उच्चस्तरीय वासस्थान के मध्य नवादा भगवती का दर्शन मैने पहली बार 1949 ई० में किया था । तब से लेकर अभी तक मैने कई बार यहा की यात्रा की है । इच्छा रहते हुए भी आज तक कभी भी मुझे भगवती का आसन देखने को नहीं मिला । मेरे मानस पटल पर इस भगवती का जो चित्र अंकित है, उनमें और अहल्या स्थान की **पीढ़ी** में कोई अन्तर नहीं । यहाँ आसन की पूजा की जाती है । हाबीडीह और यहाँ के सम्बन्ध में किंवदन्ती मैं बचपन से ही सुनता आ रहा हूँ । इसमें कुछ सच्चाई है भी या नहीं, ढोस प्रमाण आज तक प्रस्तुत करने का किसी ने प्रयास नहीं किया । नवादा भगवती स्थान का आध्यात्मिक महत्त्व आज का नहीं बल्कि अत्यन्त प्राचीन है । इस महत्त्व से ही आकर्षित एक पुजारी हाबीडीह से प्रतिदिन पूजा करने यहाँ आया करता था । यह घटना एक सौ वर्ष से भी अधिक पुरानी है । एक रोज वह पुजारी भगवती की मूर्त्ति तो अपने साथ हाबीडीह ले गया लेकिन आसन इसी स्थान में रह गया । कहा जाता है कि इस घटना के कारण दोनों गाँव के मध्य कुछ विवाद भी हुआ था । लेकिन नवादा वासी मूर्त्ति लौटा लाने में असमर्थ रहे थे । तब से नवादा में मात्र आसन की पूजा होती है । गाँव हाबीडीह नवादा से करीब 10 कि० मी० दक्षिण है ।

नावादा भगवती स्थान लोगों के मध्य तो चर्चित है लेकिन इतिहास में अभी तक स्थान पाने में असमर्थ रहा है । हाबीडीह की भगवती इतिहास प्रसिद्ध हैं । पंडित परमेश्वर झा कृत **'मिथिला तत्त्वविमर्श'** और डॉ० उपेन्द्र ठाकुर कृत **'मिथिलाक इतिहास'** में इसकी चर्चा हुई है । इन दोनों ही पुस्तकों के अनुसार कर्णाट–वंशीय राजा **रामसिंहदेव** की पत्नी **सौभाग्यवती** (सुहब) के आदेश से मंत्री **कर्मादित्य** ने **हैहट्ट देवी** की स्थापना की थी । इस सम्बन्ध में एक शिलालेख प्रसिद्ध है–

"अब्दे नेत्र शशांकपक्ष (212) गणिते
श्रीलक्ष्मणक्ष्मापतेर्मासि श्रावण संज्ञके
मुनितिथौ स्वात्यां गुरौ शोभने ।
हाबीप (त्त) ट्टन संज्ञके सुविदिते
हैहट्टदेवीशिवा कर्मादित्य सुमन्त्रिणेह
विहिता सौभाग्यदेव्याज्ञया ।। 1 ।।"

पंडित झा और डॉ० ठाकुर दोनों ने ही इस श्लोक को उद्धृत किया है । लेकिन दोनों के विवरण में विरोधाभास है । पंडित झा का कहना है, यह श्लोक मूर्त्ति के सिंहासन में है और डॉ० ठाकुर इसे **चण्डेश्वर कृत कृत्यचिन्तामणि का अन्तर्लेख** मानते हैं । इस तरह के विरोधाभास का कारण है, विचार–सम्प्रेषन । मेरा अनुमान है, दोनों में से एक भी विद्वान ने मूर्त्ति देखने का कष्ट नहीं किया था । अर्थात् पुरातात्त्विक अन्वेषण की कमी के कारण ही इस तरह का विरोधाभास है । श्लोक के अनुसार चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही देवी की स्थापना हुई थी । इसे बीते करीब 700 वर्ष हुए हैं । इसके बाद शीघ्र ही यवन आक्रमण मिथिला पर हुआ था । जिसमें यह स्थान जनशून्य हो गया । स्थापना के समय इस स्थान का नाम नवादा ही था इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं । इस स्थिति में यह स्थान भी **'हाबीपट्टन'** हो सकता है । नवादा भगवती स्थान में मंदिर अवशेष एवं कुछ अन्य मूर्त्ति अवशेष की पूजा भगवती के नाम पर होती है । हाबीडीह की मूर्त्तियाँ मैने निकट से देखी है । यहाँ दो मूर्त्तियाँ, एक महिषासुर मर्दिनी और एक हैहट्टदेवी (पार्वती) की हैं । किसी भी मूर्त्ति में अभिलेख नहीं है । इन मूर्त्तियों का मैने फोटोग्राफ भी किया है और दर्शनीय मिथिला के प्रथम पुष्प में चर्चा भी की है । नवादा भगवती स्थान की चर्चा मैने तृतीय पुष्प में की है जो सर्वेक्षण के अभाव में स्वतन्त्र शीर्षक से नहीं, **वहेड़ा** वराह स्थान शीर्षक के अन्तर्गत है । यदि हाबीडीह और नवादा की मूर्त्ति में कभी हेराफेरी हुई थी तो इसे आज भी ठोस प्रमाण मे स्पष्ट किया जा सकता है । यदि ऐसा नहीं हुआ था तो इस किंवदन्ती का पटाक्षेप होना चाहिये । स्थायी आध्यात्मिक महत्त्व के लिये इस तरह का कदम उठाना

अत्यावश्यक है ।

संचार सुविधा के कारण पर्यटन का विकास तेजी से उभर रहा है । इस स्थान को भी इसके लिये विकसित किया जा सकता है । लेकिन इसके लिये कुछ मौलिक परिवर्त्तन आवश्यक हैं । प्राचीन मूर्त्ति या मूर्त्तिअंश का प्रदर्शन वैज्ञानिक ढंग से होना चाहिये ताकि पर्यटक इसे देख कर अध्ययन और चिन्तन कर सकें । मिथिला में प्राचीन मूर्त्तियों का प्रदर्शन बिल्कुल ही दयनीय स्थिति में है । यहाँ मूर्त्तियाँ सिन्दूर, फूल और वस्त्र से ढक दी जाती हैं जो अवैज्ञानिक है । प्राचीन मूर्त्तियों को दर्शक के स्पर्श से दूर रखना चाहिये, साथ ही दर्शक के लिये यह बिल्कुल स्पष्ट होना भी आवश्यक है । प्राचीन मूर्त्तियों में फूल, माला, आभूषण, मुकुट, वस्त्र आदि अलग से देने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि यह सब इसमें उत्कीर्ण होते हैं ।

पुजारियों में प्राचीन मूर्त्तियों की पहचान होती नहीं, फलतः वे इसका कुछ भी नाम दे दिया करते हैं । इस तरह के कई उदाहरण हैं । मूर्त्ति के आवृत रहने के कारण अन्यलोग इस भूल को पकड़ नहीं पाते हैं । यह एक विसंगति हैं । इससे निजात पाना आवश्यक है । मूर्त्ति की गलत पहचान के कारण पूजा विधान का गलत होना स्वभाविक है ।

कहा जाता है– "आज की तिथि से करीब 100 वर्ष पहले **हैहट्टदेवी (पार्वती)** नवादा भगवती स्थान में थीं । एक पुजारी द्वारा उठा लिये जाने के कारण इस समय यह मूर्त्ति हाबीडीह भगवती स्थान में है । इसके लिये दोनों गाँवों के मध्य संघर्ष भी हुआ था, लेकिन भगवती वापस नहीं मिलीं ।"

हैहट्टदेवी कभी नवादा भगवती स्थान में थीं या नहीं, उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर इसका निर्णय लिया जा सकता है । यह स्थान 1790 ई० से पूर्व एक खण्डहर था । जिसका जीर्णोद्धार दरभंगा महाराजा **माधवसिंह** की पत्नी **मधुलता** देवी के हाथों **मधुलतेश्वर शिवलिंग** की स्थापना से हुई । पं० परमेश्वर झा की लिखी पुस्तक **मिथिला तत्त्वविमर्श** नवादा–हाबीडीह विवाद से पूर्व की है । इस पुस्तक में हैहट्टदेवी को हाबीडीह की कहा गया है । हाबीडीह में दरभंगा महाराज का कार्यालय रहा था । नवादा–हाबीडीह विवाद

के समय निपटारा में दरभंगा राज का हाथ निश्चित ही रहा होगा और मूर्त्ति नवादा को नहीं मिलना, साबित करता है– हैहट्टदेवी कभी भी भगवती स्थान नवादा में थीं ही नहीं ।

नवादा भगवती स्थान और इसके आसपास जो पुरातात्त्विक साक्ष्य मिले हैं, वह इस स्थान को बहुत प्राचीन और विशाल धार्मिक स्थान साबित करता है । पुरातात्त्विक साक्ष्य मिलने के बाद भी उन स्थान का अधिक अन्वेषण नहीं कर, उपलब्ध वस्तु के बाद नव निर्माण करना, पुरातात्त्विक साक्ष्य मिटाना है । नवादा भगवती स्थान में भी यही हुआ है । फलतः यहाँ प्राचीन काल की मुख्य मूर्त्ति नहीं है और भगवती–सिंहासन के नाम पर जिस शिलाखण्ड की पूजा होती है, वह शिलाखण्ड प्राचीन मंदिर के मुख्य दरबाजा का पत्थर–अंश है । मिथिला के प्राचीन मंदिरों में गर्भगृह के मुख्य द्वार का चौखट पत्थर का हुआ करता था । इस तरह के द्वार–अंश का अवशेष दरभंगा जिला में **देकुली** (सोनकी से 4 कि० मी० पूरब), **अन्दामा, देवकली, होरलपट्टी, रतनपुर, पाली** (अहिरैन), **तिलकेश्वर स्थान, कोर्थ** आदि स्थानों में मिलें हैं । प्राचीन काल में राज्य सम्पोषित देव स्थानों के मंदिरों में यह व्यवस्था देखने को मिलती हैं । मंदिर अवशेष के अतिरिक्त नवादा भगवती स्थान में खण्डित एक गणेश मूर्त्ति, एक छोटे आकार की गणेश मूर्त्ति, बुद्धमूर्त्ति एक और एक टूटा हुआ किसी बड़ी मूर्त्तिपीठिका का गन्धर्व अंश है । इस मंदिर के आसपास मशाला पीसने की दो शिला और एक लोढ़ा मिला है । भगवती स्थान से कुछ ही दूर पूर्वोत्तर दिशा में मिट्टी खोदने के समय एक घड़ा मिला था । यह घड़ा तेरहवीं–चौदहवीं शताब्दी का लगता है । दो शिवमंदिर के अतिरिक्त यहाँ एक नाग मंदिर भी है जिसमें नाग देवता पूजित हैं । भगवती मंदिर, शिव मंदिर तथा नाग मंदिर आदि बहुत प्राचीन नहीं है । नाग मंदिर और नाग मूर्त्ति तो बिल्कुल ही नवीन है ।

स्थान की आस्था से मनोकमना की पूर्त्ति होती है । नवादा भगवती स्थान को यह वरदान प्राप्त है । ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है, क्योंकि सदियों तक यह स्थान आस्था का केन्द्र रहा था । यहाँ सैकड़ों वर्षों तक

पूजा–पाठ, होम–यज्ञ हुए थे जिससे स्थान तपा–तपाया और सिद्ध है । आन्तरिक विश्वास से फल की प्राप्ति होती है, यह यश इस समय इस स्थान को प्राप्त है ।
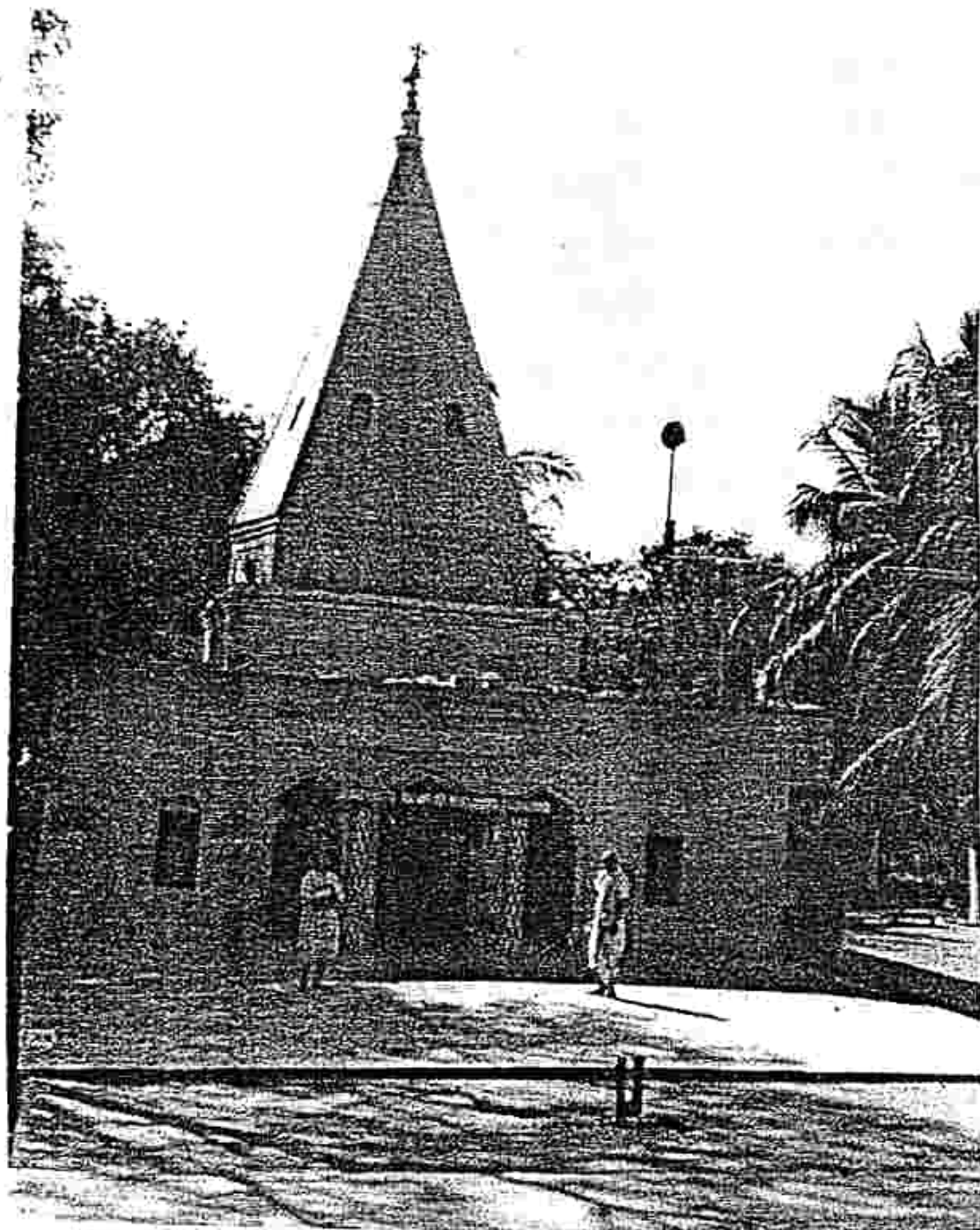
266. भगवती मंदिर, नवादा

267. हैहट्टदेवी, हावीडीह

268. महिषासुरमर्दिनी, हावीडीह
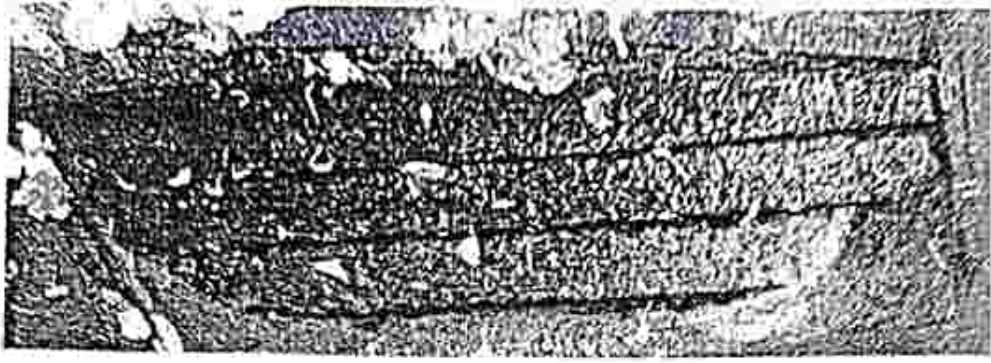
मन्दिर अवशेष
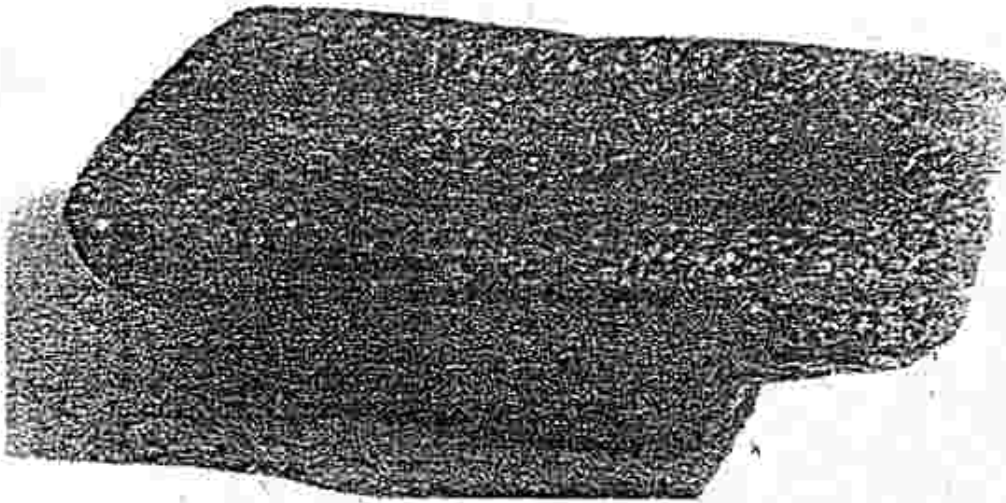
सिलौट

लोढ़ी
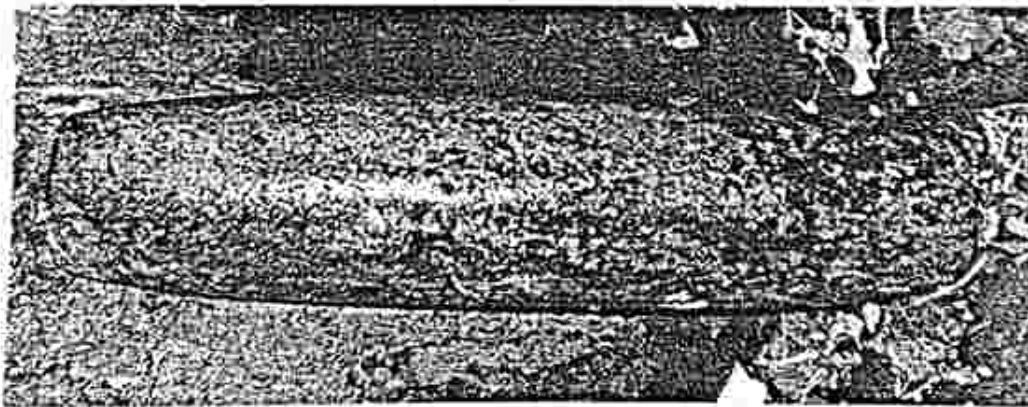
269. पुरातात्विक अवशेष, नवादा
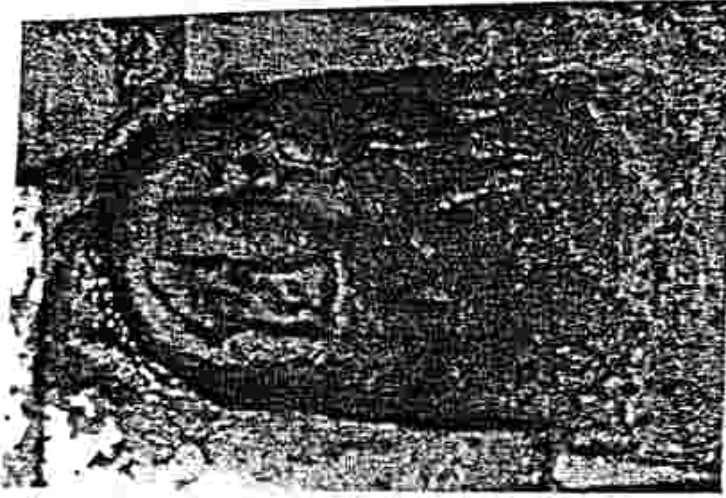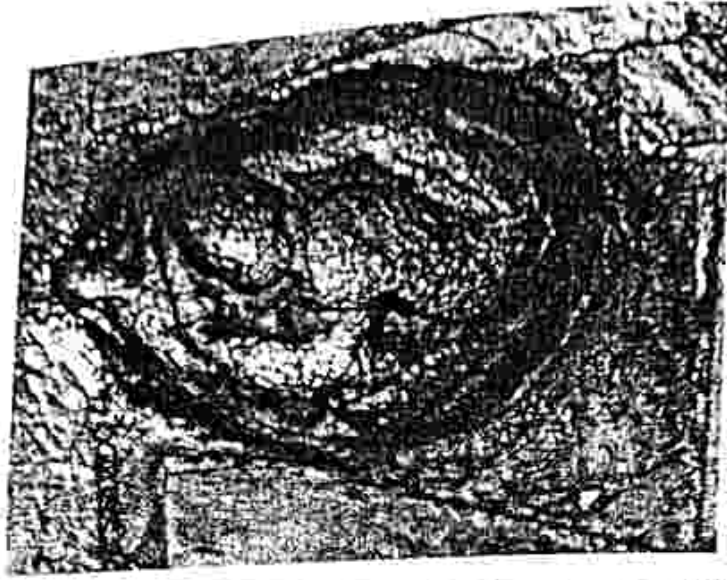
270. पुरातात्विक अवशेष, नवादा

271. पुरातात्त्विक अवशेष, नवादा

272. नाग मन्दिर, नवादा

भच्छी की त्रिमूर्त्ति

अभी तक हमलोग विश्व में सात आश्चर्यों की बात कहते और सुनते रहे हैं । आठवें आश्चर्य की बात अभी नहीं हुई है लेकिन मैं समझता हूँ कि विगत कुछ सौ वर्षों से मिथिला में एक ऐसी घटना घट रही है जिसके आगे विश्व का सातों आश्चर्य फीका है और अब बात होनी चाहिये मात्र एक घटना की । मिथिला की इस घटना का नाम है अंकुरित मूर्त्ति, अंकुरित लिंग, अंकुरित देवी या अंकुरित देवता ।

मिथिलामें विगत कुछ सौ वर्षों से एक भी वर्ष रिक्त नहीं जाता है, जब कहीं न कहीं देवी–देवता या शिवलिंग मिट्टी के नीचे या पानी से बाहर, नहीं आते हों । शिवलिंग या मूर्त्तियाँ जो कसौटी पत्थर की हुआ करती है, सैकड़ों की संख्या में अभी तक बाहर आ चुकी हैं । इन्हीं शिवलिंगों और मूर्त्तियों को अंकुरित कहा जाता है । पेड़–पौधे तो हर कहीं अंकुरित होते हैं लेकिन यह मिथिला की ही भूमि है जहाँ पत्थर की मूर्त्तियाँ और शिवलिंग अंकुरित होते हैं ।

इसी तरह की एक मूर्त्ति वर्ष 1981 ई० में भच्छी नामक गाँव में, **भद्रेश्वर नाथ महादेव स्थान** में मंदिर के आगे मिली । यह मूर्त्ति **ब्रह्मा** की है, लेकिन इसे सिर्फ ब्रह्मा कहना गलत होगा । ब्रह्मा की मूर्त्ति चतुर्मुखी होती है और इन्हें हाथ चार होते हैं । इन हाथों में वेद या वेद, कमण्डल और अक्षमाला होती हैं तथा वाहन स्वान और हंस की चर्चा शास्त्रों में है । यह मूर्त्ति इस वर्णन से कुछ भिन्न है । इन्हें मुख तीन हैं हाथ चार और वाहन हंस । दाढ़ी–मूछ और तोंद निकली हुई है । कमलासन पर मूर्त्ति बैठी है और हाथों में हैं, क्रमशः दायें नीचे से बायें नीचे तक अक्षमाला, त्रिशूल, गदा और कमण्डल । यदि मुख एक होता और हाथों में अक्षमाला, वेद और कमण्डल तथा वाहन हंस होते, तब भी मूर्त्ति की पहचान ब्रह्मा के रूप में की जा सकती थी लेकिन ऐसा नहीं है, दो मुख और दो प्रतीक चिह्न, त्रिशूल तथा गदा ब्रह्मा से भिन्न हैं जो शिव और विष्णु का अंश, है । इस तरह यह मूर्त्ति मात्र ब्रह्मा की ही नहीं होकर, **ब्रह्मा, विष्णु**

और **महेश** की है । मिथिला में इस प्रकार की यह पहली मूर्त्ति है, जो भच्छी में मिली हैं । इस मूर्त्ति का आकार है 16½ X 8 ईंच ।

1981 ई० में मूर्त्ति मिली, चारों तरफ शोर हो गया, लोग झुंड के झुंड यहाँ पहुँचने लगे, पहले की अपेक्षा पूजा–अर्चना और व्यवस्था भी बढ़ गई । लेकिन यह क्रम कुछ ही समय तक बना रहा, मूर्त्ति अन्तर्ध्यान हो गई । खोज प्रारम्भ हुई, पुलिस को भी सूचित किया गया लेकिन मूर्त्ति नहीं मिली । धीरे–धीरे समय बीतता रहा, बीस वर्ष गुजर गये, बात ठंढ़ी हो गई । गत वर्ष (2001 ई०) सावन में ब्रह्मा जी कहीं से घूमते–घूमते पुनः यहाँ आ पहुँचे । समय रात का था अतः किसी ने नहीं देखा कि ये किधर से आये । अनुमान किया गया, यह स्थान इन्हें प्रिय है और अब ये इस स्थान को छोड़ कहीं और जाने वाले नहीं । हो सकता है पहली बार कुछ मान–दान में कमी रही हो जिससे स्थान छोड़ गये, अब मानदान और बढ़ा है । प्रत्येक रविवार, माघ चतुर्दशी, अनन्त चतुर्दशी और सम्पूर्ण सावन महीना में यहाँ पूजा अर्चना चलती ही रहती है । दूर–दूर से इलाके के लोग आते रहते हैं । सावन भर कमरथुआ **कमलामण्डप** से जल लाकर इन्हें सिक्त करता है । कमलामण्डप यहाँ से दो कि० मी० पश्चिमोत्तर दिशा में खैरा गाँव से उत्तर है । यहाँ देवी कमला का मण्डप नदी तट पर है जो सिद्ध स्थान है और कमला नदी यहाँ होकर बहती है ।

यादव बहुल भच्छी गाँव के मुखिया हैं श्री अरुण कुमार यादव । कर्मठ और समाज सेवी अरुणजी गाँव के कई उत्साही युवकों के साथ मिलकर भद्रेश्वर नाथ स्थान का रखरखाव स्वयं सम्हाले हुए हैं । सम्पूर्ण गाँव का सहयोग इन्हें प्राप्त है । गाँव में कई जातियाँ– बरही, हलुआई, वैश्य, संन्यासी, मंडल, देवहरि, माली, सूड़ी, नोनियाँ, ततमा, मुसहर, मल्लिक (डोम), मुसलमान आदि हैं । गाँव का रकबा है 1787 बीघा । यहाँ तीन प्रमुख डीह है । मुख्य डीह पर गाँव है, एक पर राजकीय बुनियादी विद्यालय और एक पर भद्रेश्वर नाथ महादेव का मंदिर ।

भद्रेश्वर स्थान की विशेषता

गाँव में सबसे ऊँचा यह स्थान है, सतह से 10 फीट ऊँचा । प्रथम सर्वे में इस स्थान के पास सात एकड़ जमीन थी जो अब मात्र डेढ़ एकड़ है । इस रकबा के मध्य करीब पाँच कट्ठा जमीन सबसे ऊँची है जिस पर है शिव मंदिर । आधुनिक शैली का मंदिर पर्याप्त ऊँचा है । यहाँ इससे पूर्व कई मंदिर बने और गिरे हैं । यह मंदिर पूर्व रुख का है और इसके आगे पूर्वोत्तर दिशा में इसी डीह पर एक प्राचीन और विशाल पीपल का पेड़ है । पीपल की जड़ में प्राचीन मंदिर के पत्थर अवशेष के अतिरिक्त एक प्रतीकात्मक वराह मूर्त्ति भी है । ये सभी पूजित हैं ।

मंदिर में महादेव **भद्रेश्वरनाथ** का शिवलिंग जो कुछ क्षतिग्रस्त है, के अतिरिक्त ब्रह्मा की मूर्त्ति और अष्टभुज गणेश की अंगभंग एक मूर्त्ति है । गणेश की यह मूर्त्ति दो खण्डों में विभाजित हैं और दोनों ही खण्ड यहाँ हैं । इन्हें देखने से पता चलता है कि मूर्त्ति का आकार 42 X 9 ईंच रही थी । मूर्त्ति पालकालीन और कसौटी पत्थर की है ।

ब्रह्मा की मूर्त्ति मंदिर के आगे और पूर्व दिशा में सतह से करीब 8 फीट ऊपर मिली थी । इस सतह पर ईंटे हैं । यहाँ की एक ईंट का आकार है 12 X 8 X 2¼ ईंच । भच्छी गाँव के पश्चिम एक प्राचीन नदी बहने का अवशेष है जिसे कमला नदी का अवशेष कहा जाता है । यह नवीन नाम है ।

उपलब्ध सामग्रियों के अध्ययन से पता चलता है कि भद्रेश्वरनाथ स्थान में 14 वीं शताब्दी तक कम से कम तीन बार मंदिर बने और धाराशायी हुए थे । प्रथम बार आठवीं शताब्दी के पूर्व और दूसरी बार ग्यारहवीं शताब्दी के आसपास भूकम्प के कारण मंदिरें धाराशायी हुए । ब्रह्मा की मूर्त्ति कर्णाट कालीन और मिथिला शैली की है । इसमें अभिलेख भी है । अभिलेख की लिपि है तिरहुता और प्राचीन होने के कारण यह पढ़ा नहीं जा सका है । कर्णाटकाल 1097 ई० से 1324 या 26 ई० तक रहा था । इस काल में पुनः

मंदिर बने और मूर्त्तियों की स्थापना हुई । लेकिन मुसलमानी आक्रमण ने इसे ध्वस्त कर दिया । ब्रह्मा की मूर्त्ति शीघ्रता में छिपाई गई थी, लेकिन छिपाने वाला मारा गया और मूर्त्ति अपने जगह पर बनी रही ।

भच्छी का पौराणिक महत्त्व

दरभंगा जिला मुख्यालय से पूर्व दक्षिण की ओर करीब 22 कि० मी० दूरी पर यह गाँव बहेड़ी प्रखण्ड में पड़ता है । मुख्यालय से एक मुख्य पथ हाबीडीह होते हुए बिरौल अनुमंडल तक गया है । यहाँ से 20 कि० मी० पूरब–दक्षिण और हाबीडीह से करीब पाँच कि० मी० पश्चिम एक गाँव है उजैना । जहाँ से मात्र दो कि० मी० दक्षिण यह गाँव सम्पर्क सड़क से जुड़ी है । सम्पर्क पथ पघारी पहुँच कर दरभंगा–बहेड़ी मुख्य पथ से जुड़ जाता है । यहाँ तक पहुँचने का रास्ता सुगम है और चार पहिया गाड़ी भी आसानी से उजैना होकर पहुँच सकती है । भच्छी के चारों ओर भूमि उपजाऊ हैं, मध्य में वसा है यह गाँव । इससे इसका पुरातात्त्विक महत्त्व और बढ़ जाता है । इस गाँव के चारों ओर और भी कई महत्त्वपूर्ण मिथिला के तीर्थ स्थान हैं । **हाबीडीह** इतिहास प्रसिद्ध गाँव हैं । यहाँ भगवती, विष्णु, सूर्य, गणेश आदि की प्रचीन मूर्त्तियाँ मिलीं हैं । **त्रिमुहानी** में कार्तिक और माघी पूर्णिमा में विशाल मेला लगता है । **सिरुआ** के मनोरडीह में वर्ष 2001 ई० में कई वर्त्तन, चाँदी के सिक्के, जाँता, मानव कंकाल, खोपड़ी आदि खुदाई में मिले थे । भच्छी के निकट ही है गाँव **शिवराम** । यहाँ अभी तक कुछ मिला तो नहीं है, लेकिन नाम कहता है कि यहाँ की भूमि भी अपने उदर में कुछ वस्तु छिपा रखी है । आसपास के गाँवों के नामः **बिठौली, महुली, उजैना, पघारी** आदि भी सार्थक हैं, लेकिन यहाँ कुछ खोज की आवश्यकता है ।

शास्त्र–पुराण, लोकोक्ति, इतिहास आदि इस क्षेत्र के सम्बन्ध में मौन नहीं है । वृहद् विष्णुपुराण इस क्षेत्र को रामायण काल से जोड़ता है । लेकिन इसे समझ पाने के लिये कुछ ऐतिहासिक ज्ञान आवश्यक हैं ।

मिथिला की उत्पत्ति जनक राजवंश से हुई है । इस वंश में 54 या 56

जनक हुए थे जिनमें से तेईसवें जनक **सीरध्वज** की पुत्री थीं जगत् जननी **सीता** । जिनका व्याह राम से इसी क्षेत्र में हुआ था । मिथिला का यह केन्द्रीय भाग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । विद्यापति चौदहवीं शताब्दी में हुए । उन्होंने जनक की राजधानी के सम्बन्ध में कहा है–

जनकपुर दक्षिणांशे सप्तयोजन व्यतिक्रमे ।
डीजगल महाग्रामे गेहास्तु जनकस्य च ।।
यमुना सरितां (श्रेष्ठा) सदा बहति वेगगा।

आधुनिक जनकपुर धाम काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं । इसका यह नाम सत्रहवीं शताब्दी का है, जिसका इतिहास है । विद्यापति जिस जनकपुर की चर्चा करते हैं, वह इस समय मधुबनी जिला के बाबूबरही से पश्चिम तिरहुता नामक ग्राम है । यहाँ से 28 कोस दक्षिण जनक की राजधानी विद्यापति ने माना है । वाल्मीकि रामायण और वृहद विष्णुपुराण भी इसका समर्थन करता है । इस सम्बन्ध में **'मिथिलापुरी कहाँ'** नामक पुस्तक में विस्तार से चर्चा हुई है और कोर्थ नामक गाँव जो घनश्यामपुर प्रखण्ड में है, मिथिलापुरी अर्थात जनक की राजधानी साबित होती है । इस सम्बन्ध में वृहद विष्णुपुराण कहता है–

वलां बहुप्रभावेगां यामुनीं जीवपुत्रिकाम ।
एवं वै मिथिलोपान्ते वसन्ग्रामेष्वनन्यधीः ।।

एक ओर **बलान नदी,** दूसरी ओर **जीवछ नदी** और मध्य में **यामुनी नदी** के तट पर है पवित्र भूमि **मिथिलापुरी** । मनीषियों के लिये यहाँ का वास उत्तम है । इस स्थान के दुर्ग और चौहद्दी के विषय में विस्तार से इस पुराण में चर्चा है । यह पुराण कहता है, यहाँ से पश्चिम बारह कोस तक विस्तार है उस स्थान का जहाँ सीता ब्याही गई थीं –

दुर्गात्पश्चिमतो भागे योजन त्रियात् परम् ।
यज्ञस्थल महेन्द्रस्य यत्रलाङ्ल पद्धतौ ।।
समुत्पन्ना महाभागा सीता राघववल्लभा ।

इससे साबित होता है, वह यज्ञस्थली जहाँ सीताराम एक हुए थे,

की राजधानी के सम्बन्ध में कहा है–

जनकपुर दक्षिणांशे सप्तयोजन व्यतिक्रमे ।
डीजगल महाग्रामे गेहास्तु जनकस्य च ।।
यमुना सरितां (श्रेष्ठा) सदा बहति वेगगा।

आधुनिक जनकपुर धाम काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं । इसका यह नाम सत्रहवीं शताब्दी का है, जिसका इतिहास है । विद्यापति जिस जनकपुर की चर्चा करते हैं, वह इस समय मधुबनी जिला के बाबूबरही से पश्चिम तिरहुता नामक ग्राम है । यहाँ से 28 कोस दक्षिण जनक की राजधानी विद्यापति ने माना है । वाल्मीकि रामायण और वृहद विष्णुपुराण भी इसका समर्थन करता है । इस सम्बन्ध में **'मिथिलापुरी कहाँ'** नामक पुस्तक में विस्तार से चर्चा हुई है और कोर्थ नामक गाँव जो घनश्यामपुर प्रखण्ड में है, मिथिलापुरी अर्थात जनक की राजधानी साबित होती है । इस सम्बन्ध में वृहद विष्णुपुराण कहता है–

वलां बहुप्रभावेगां यामुनीं जीवपुत्रिकाम ।
एवं वै मिथिलोपान्ते वसन्ग्रामेष्वनन्यधीः ।।

एक ओर **बलान नदी,** दूसरी ओर **जीवछ नदी** और मध्य में **यामुनी नदी** के तट पर है पवित्र भूमि **मिथिलापुरी** । मनीषियों के लिये यहाँ का वास उत्तम है । इस स्थान के दुर्ग और चौहद्दी के विषय में विस्तार से इस पुराण मे चर्चा है । यह पुराण कहता है, यहाँ से पश्चिम बारह कोस तक विस्तार है उस स्थान का जहाँ सीता ब्याही गई थीं –

दुर्गात्पश्चिमतो भागे योजन त्रियात् परम् ।
यज्ञस्थल महेन्द्रस्य यत्रलाङ्ल पद्धतौ ।।
समुत्पन्ना महाभागा सीता राघववल्लभा ।

इससे साबित होता है, वह यज्ञस्थली जहाँ सीताराम एक हुए थे, बहेड़ी–बहेड़ा के मध्य ही कहीं है । यह पुराण तो मिथिला के गाँव–गाँव को ही दर्शनीय मानता है और कहता है, इन स्थानों में घूमना चाहिये ।

विचरेन्मिथिला मध्ये ग्रामे ग्रामे विचक्षणः ।

कृष्ण के बड़े भाई बलदेव को ब्रह्महत्या का पाप लगा था । प्रायश्चित के लिये उन्हें मिथिला में घूमघूम कर तीर्थाटन करना पड़ा था । विद्यापति कृत **भूपरिक्रमा** नामक पुस्तक में विस्तार से इसकी चर्चा हुई है । यह पुराण भी केन्द्रीय मिथिला को ही महत्त्वपूर्ण मानता है । **वृहद् विष्णुपुरण** में मध्य मिथिला में कई शिवलिंगों की चर्चा है । इन में से भद्रेश्वरनाथ महादेव का प्राचीन नाम क्या रहा था, यह शोध का विषय है । यह शिव लिंग अत्यन्त प्राचीन है और इसकी चर्चा निश्चित ही की गई है ।
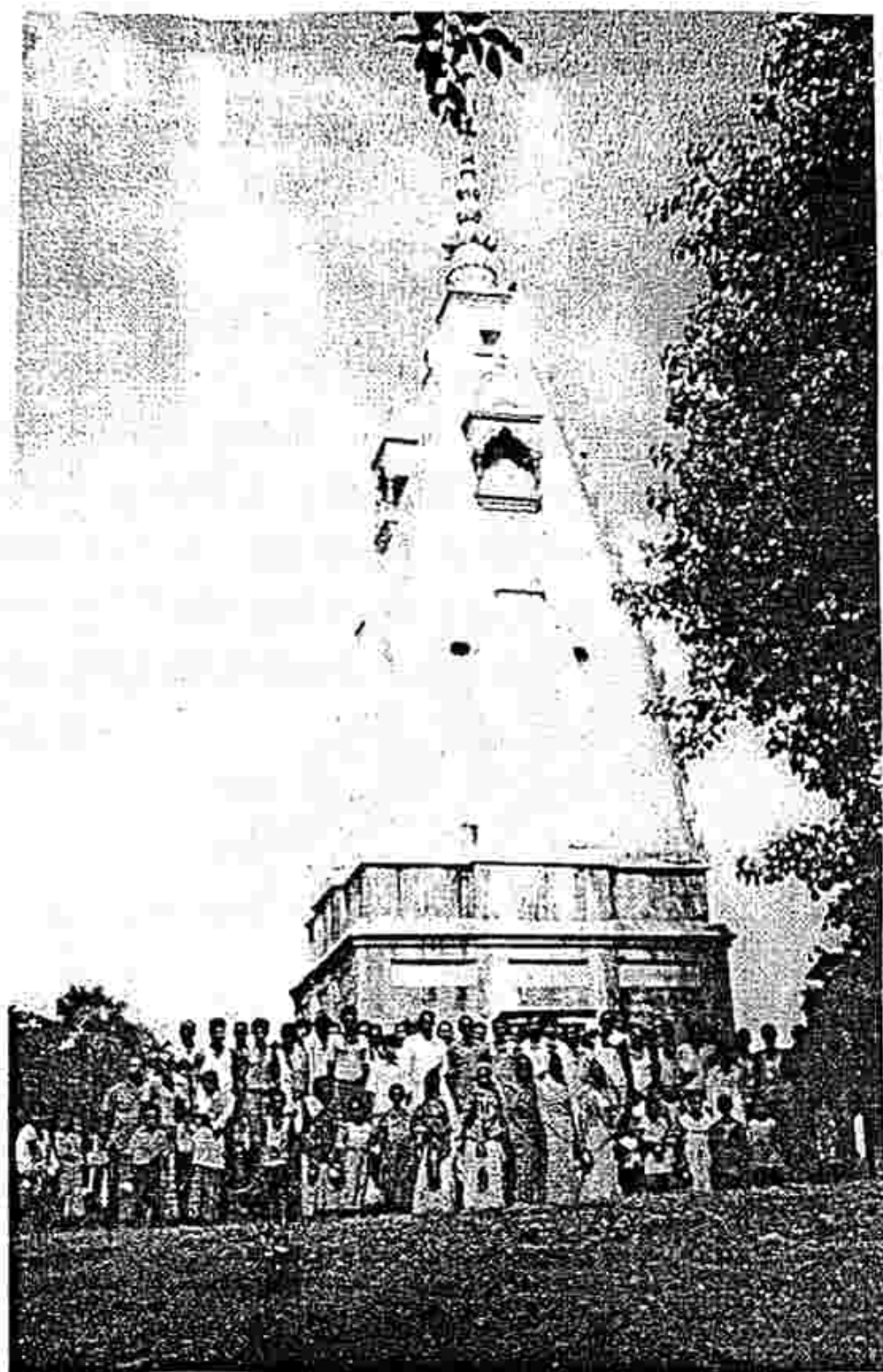
273. भद्रेश्वर मन्दिर, भच्छी

274. त्रिमूर्त्ति, भच्छी

275. गणेश मूर्त्ति, भच्छी

276. मूर्त्ति अभिलेख, भच्छी

वराह मूर्त्ति, भच्छी

गणेश मूर्त्ति, भच्छी
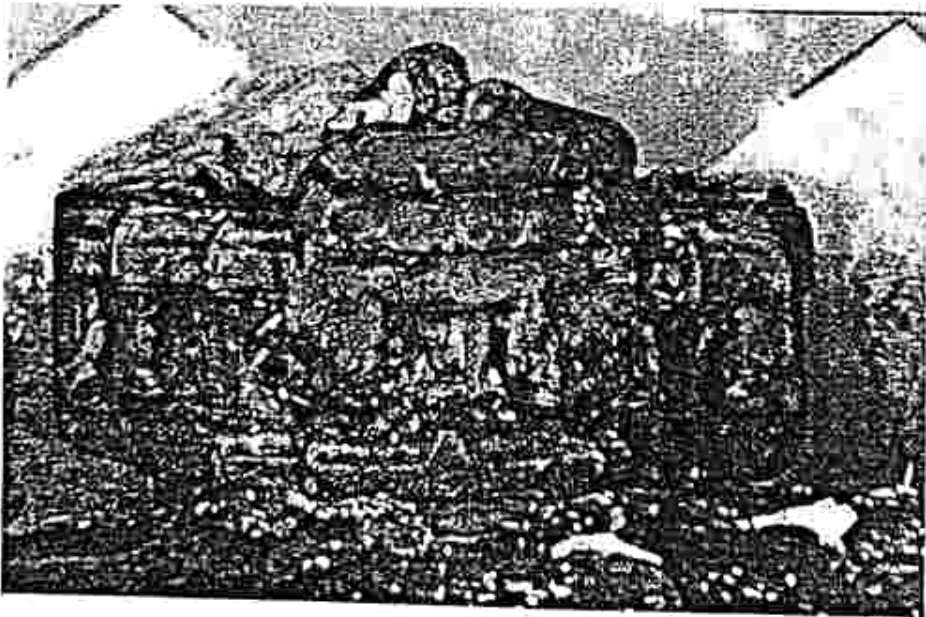
277. पुरातात्विक अवशेष, भच्छी

278. पुरातात्विक अवशेष, भच्छी

भरौड़ा या भरवाड़ा

तीक्ष्ण बुद्धि, प्रत्युत्पन्नमतित्व, सामाजिक अन्धविश्वास का कट्टर दुश्मन और नहले के लिये दहला साबित होने वाले मिथिला के एक प्रसिद्ध विद्वान का नाम है गोनू झा । जनश्रुति के आधार पर इनका जन्म स्थान दरभंगा जिला के सिंहवाड़ा प्रखण्ड से मात्र तीन कि० मी० उत्तर, सिंहवाड़ा–जाले मुख्यमार्ग पर आधुनिक नामधारी **भरवाड़ा** बाजार माना जाता है । लेकिन वस्तुतः भरवाड़ा बाजार नहीं होकर इनका पैतृक ग्राम **शंकरपुर या सकरपुर** रहा था जो इस बाजार का अब पश्चिमी हिस्सा है । इनके वासस्थान के चारों ओर इस समय मुसलमानों की घनी आबादी है । कभी इनका वासस्थान बहुत ऊँचा और विस्तृत रहा होगा जो अब सिमट कर कुछ सौ वर्गफीट में बचा हुआ है और समय की मार से वासस्थान की अधिकांश ऊँचाई अब घट चुकी है । फिर भी अपने आस–पास की भूमि से यह अब भी ऊँचा है । वासस्थान के पश्चिम से एक सड़क गुजरती है । इस सड़क के पश्चिम का भूभाग भी कभी गोनू झा का ही रहा होगा जो अब टुकड़ों में बँट चुका है । इस वासस्थान से कुछ ही दूर पश्चिम एक प्राचीन नदी अवशेष है जो उत्तर की ओर से आकर दक्षिण की ओर प्रवाहित है ।

जिसे इस समय गोनू झा का डीह कहा जाता है, इस वासस्थान पर अभी एक पोस्ट ऑफिस और **ओंकार पुस्तकालय** के दो मकान (दो विधायकों द्वारा विधायक कोष से निर्मित) हैं । प्रत्येक मकान में एक–एक कक्ष हैं । जनश्रुति आज की नहीं, सैकड़ों वर्ष प्राचीन होते हुए भी यहाँ की आबादी अभी तक गोनू झा के नाम पर एक संकेत पट भी नहीं लगा पाई है । धिक्कार है यहाँ के वासियों को जो मिथिला की इस धरोहर को सुरक्षित रखने में असमर्थ है या इसकी आवश्यकता नहीं समझता है ।

तुलसीदास की रामायण आज घर–घर प्रचलित है, विद्यापति के नाम पर प्रत्येक वर्ष कई लाख रुपये फूँके जाते हैं । इन विद्वानों से पूर्व हुए विद्वान गोनू झा की कथा–कहानियाँ तो मिथिला के घर–घर प्रचलित है, पर वासस्थान

सिर्फ कहने के लिये है, कोई चिह्न नहीं और न कोई पट । गोनू झा की एक मूर्त्ति मुझे कालीस्थान (पूर्वी पंचायत, भरवाड़ा) में देखने को मिली है । कम से कम यह मूर्त्ति या इसी तरह की दूसरी मूर्त्ति तो यहाँ स्थापित की जा सकती थी ? इस डीह पर जो दो मकान बनें हैं, वह बहुत पुराना नहीं है । प्राचीन ओंकार पुस्तकालय के मकान में पोस्ट ऑफिस है । इस पुस्तकालय का नाम जीवित रखने के लिये विधायक कोष से दो नये मकान ओंकार पुस्तकालय के नाम से बने हैं । 2001--2002 का मकान विधायक श्री विजय कुमार मिश्र के ऐच्छिक कोष से बना है । क्या माननीय विधायक जनश्रुति से अनविज्ञ थे ? इनके द्वारा लगाया गया पट भी गलत है । पट में ओंकार के स्थान पर **अंकार** है । क्या माननीय विधायक निरक्षर हैं ?

मिथिला में कर्णाटवंश का शासन चौदहवीं शताब्दी के दूसरे दशक तक रहा था । 1324 या 26 ई० में यह मुसलमानों के हाथ में चला गया । इसके बाद लगातार पन्द्रहवीं शताब्दी तक मिथिला अशान्त रही थी इस अवधि में प्रत्येक गाँवों का नाम बदल गया । क्योकिं लोग अपना पुराना घर–बार छोड़कर इधर–उधर भागते रहे थे । जब शान्ति स्थापित हुई, प्रत्येक लोगों के लिये प्रत्येक गाँव नया था और नवीन नामकरण हुआ । इसका प्रमाण मैथिलों के मूलग्राम प्रथा में निहित है । यह प्रथा **कर्णाटवंशीय राजा हरिसिंह देव** के समय 1310 ई० में प्रारम्भ हुई थी जो पंजीप्रथा के नाम से प्रसिद्ध है । इस पंजीप्रथा के अनुरूप गोनू झा का मूलग्राम **कर्महे सोन करियाम** रहा था । इस मूल के लोग वत्स गोत्रीय थे । पंजी पुस्तिका में उल्लखित है– **"सोन करियाम कर्महासं बीजी वंशधरः ऐ सुता महामहो० हरिब्रह्म, महामहो० हरिकेश, महोधूर्तराज गोनूकाः संकराढ़ीसं चन्देयी दौहित्राः"** । यह सोन करियाम ही आज शंकरपुर या सकरपुर के नाम से प्रसिद्ध है । 1980 के दशक में प्रखण्ड विकास पदाधिकारी **रघुनाथ पहाड़पुरी** ने अथक परिश्रम कर इनके सम्बन्ध में प्रर्याप्त प्रमाण एकत्र कर इनकी एक मूर्त्ति बनवायी थी ।

गोनू झा से सम्बन्धित कथा–कहानियों के कई संग्रह अभी तक प्रकाशित

* मिथिला तत्त्वविमर्श : पं० परमेश्वर झा, पृ०– 151 पूर्वार्द्ध

हो चुके हैं । इनमें से प्रमुख प्रकाशित पुस्तकें हैं –

1. **गोनू झा से हँसबोल लो – पुस्तक भंडार, लहेरियासराय**
2. **गोनू झा के चुटकुले – श्री रामदेव : भरवाड़ा**
3. **धूर्तशिरोमणि गोनू झाक किरदारी – प्रभुनाथ झा, भगीरथी देवी**
4. **शिरोमणि गोनू झा – उर्वशी प्रकाशन, पटना**
5. **एकटा छलाह गोनू झा – विभूति आनन्द, भवानी प्रकाशन**
6. **गोनू विनोद – मधुबनी**

इनके अतिरिक्त समय–समय पर पत्र–पत्रिकाओं में इनकी कहानियाँ प्रकाशित होती रही हैं । सर्व साधारण महान् विद्वान विद्यापति से भी अधिक प्रभावित गोनू झा से है । पंजी पुस्तिका की उपाधि **महाधूर्तराज** तत्कालीन उन पंडितों की देन है जो इनके प्रतिभा से जलते थे । प्रचलित इनकी कहानियाँ इनका जो व्यक्तित्व उभारती हैं, वह धूर्त का नहीं बल्कि अत्यन्त बुद्धिमान व्यक्ति का है । सही समय पर सही निर्णय लेकर उसे कार्यान्वित करना किसी धूर्त या ठग का कार्य नहीं, अत्यन्त बुद्धिमान का ही हो सकता है और यही सब कुछ इनकी कहानियों से उभरकर सामने आता है । गोनू झा दरवारी और गृहस्थ दोनों ही थे । यदि ये विद्वान नहीं होते, दरबार में स्थान पाना असम्भव था और गार्हस्थ्य जीवन की झाँकियों से इनकी कथाएँ अटीपड़ी है । कहा जाता है ओइनवारवंशीय राजा **भवसिंह** के ये समकालीन थे । कई लोग इन्हें कर्णाटवंशीय राजा **हरिसिंह देव** के समकालीन मानते हैं । गोनू झा के बुद्धिचातुर्य के आगे बड़े–बड़े विद्वान की बुद्धि कुंठित हो जाया करती थी । कहा जाता है– "एक बार चतुभुर्ज विष्णु मूर्त्ति के सामने कई लोग किसी विपदा के समय त्राहिमाम कर रहे थे । इसी बीच वहाँ गोनू झा आ पहुँचे । उन्हों ने लोगों से कहा, आपलोग व्यर्थ गिरगिरा रहे हैं । इस समय इन्हें स्वयं सहायता की आवश्यकता है, ये लोगों की सहायता क्या कर सकते हैं ? इनके चारों हाथ तो शंख, चक्र, गदा और पद्म से बँन्धे है । अभी इन्हें मैं चार चपत दूँ तो ये अपनी रक्षा स्वयं करने में भी असमर्थ हैं" । गोनू झा भगवती के अनन्य भक्त थे । उनकी अराधिका का मंदिर उनके घर से कुछ

दूर पूर्व उत्तर की ओर है । इस स्थान पर इस समय नवीन भगवती मंदिर आधुनिक शैली में बनाया गया है । लेकिन गोनू झा का पैतृक डीह अभी भी उपेक्षित है ।

गोनू झा की चिन्तन शैली आम लोगों से बिल्कुल ही भिन्न थी । ये प्रत्येक समस्या का समाधान व्यवहार के माध्यम से किया करते थे । इनके विद्यार्थी जीवन की एक घटना है– आज के लेखन शैली में प्रचलन है, गलतियाँ काट कर इस स्थान पर शुद्ध लेखन । पहले जमाने में अशुद्ध के स्थान पर एक चिह्न लगा दिया जाता था । इसे **'भेड़बा'** कहा जाता था । भेड़वा का अर्थ है – कृपया शुद्ध कर पढ़ें या लिखें । एक रोज पाठशाला में इसकी शिक्षा गोनू झा को मिली । इनका मन इसे मानने को तैयार नहीं था । दूसरे रोज ये नंगधरंग, माथे पर भेड़बा चिह्न लगाये पाठशाला पहुँचे । शिक्षक ने इनसे नंगधरंग होने का कारण पूछा । इन्हों ने माथे का भेड़बाचिह्न दिखा दिया और कहा– "मुझे नंगा नहीं समझें, मेरे माथे पर शुद्धि का चिह्न अंकित है ।"

अकबर और बीरबल की कथायें सम्पूर्ण भारत में प्रचलित हैं । जो प्रसिद्धि बीरबल को मिली, गोनू झा को नहीं । बीरबल से पहले गोनू झा हुए थे । सच्चाई यह है कि गोनू झा के शिष्य थे बीरबल । वे गोनू झा के सिद्धान्त का अनुसरण कर ही प्रसिद्धि पाये थे । बीरबल की कई कथाएँ गोनू झा की कथाओं की अनुकृति है । उदाहरण के लिये राज्य में कितने अन्धे हैं और गदहा कौन, लिया जा सकता है । देवी–देवता सर्व शक्तिमान होते हैं । इन्हें प्रसन्न करने के लिये कठिन साधना की आवश्यकता पड़ती है । लेकिन गोनू झा सहज बुद्धि से इन्हें अपने अनुकूल बनाने में विश्वास रखते थे । "एक टोकरी धान" इसका उदाहरण है । असम्भव लगने वाला कार्य भी ये चुटकी में हल कर लिया करते थे । राजा, काजी, चोर की कथा इसके लिये लिया जा सकता है । महाधूर्त्तराज गोनू झा के स्थान पर यदि **महाबुद्धिराज गोनू झा** कहा जाय तो अधिक उपयुक्त होगा
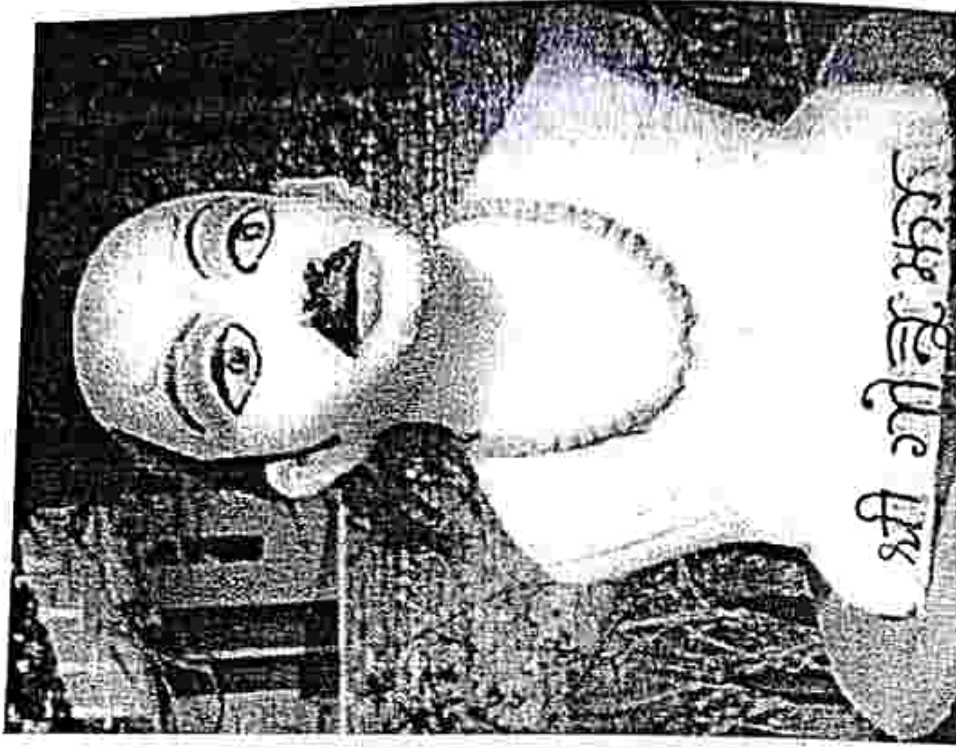
गोनू झा मूर्ति – भरवाड़ा
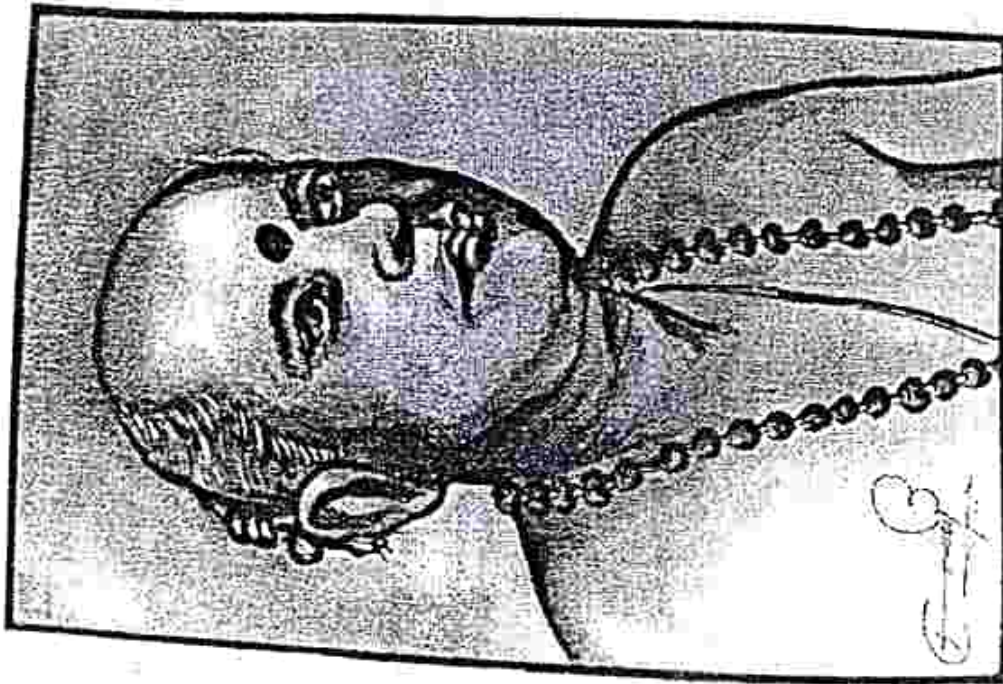
हास्य सम्राट गोनू झा

279. गोनू झा, भरवाड़ा
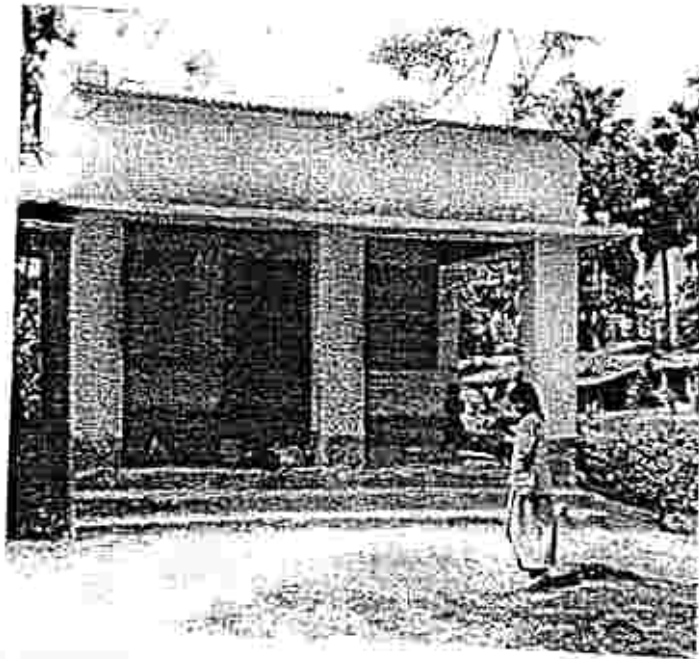
280. ओंकार पुस्तकालय, भरवाड़ा

281. ओंकार पुस्तकालय नामपट्ट, भरवाड़ा
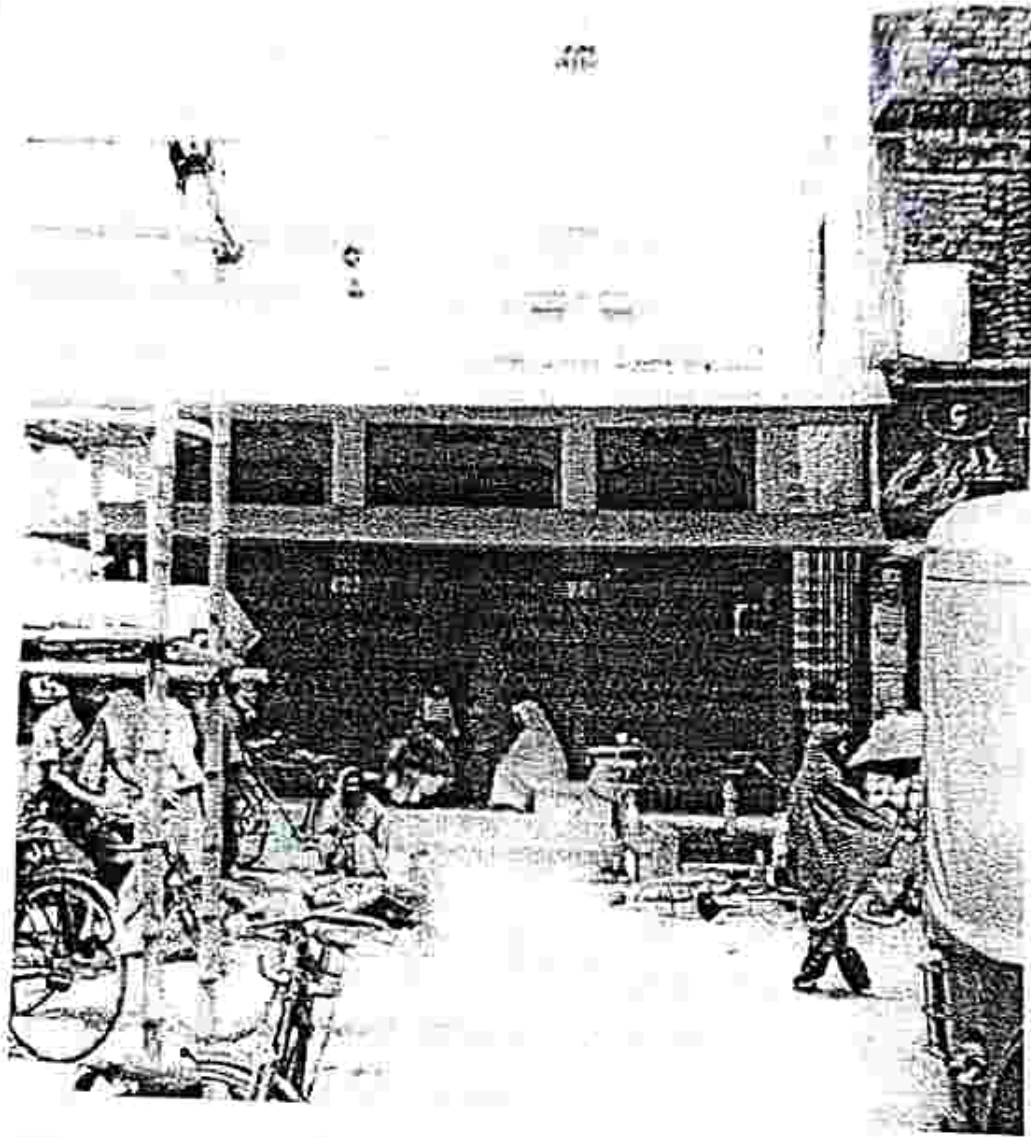
282. भगवती स्थान, भरवाड़ा

विसपी

महाकवी विद्यापति का जन्म स्थान अकाट्य प्रमाणों की अनुपस्थिति में विसफी या विसपी, **गजरथपुर** में राजा शिवसिंह द्वारा दिये गये ताम्रपत्र के आधार पर माना जाता हैं । इस ताम्रपत्र के सम्बन्ध में भी मतभेद है । मूल ताम्रपत्र अब उपलब्ध नहीं है, उपलब्ध ताम्रपत्र पर संदेह व्यक्त किया जाता है । इस ताम्रपत्र में लिखा है–

.... **श्री गजरथपुर समस्त प्रक्रिया विराजमान श्री मद्रामेश्वरी बरलब्ध प्रसाद भवानी भक्ति भावना परायण रुपनारायण महाराजाधिराज श्रीमान् शिवसिंह देव पदासमर विजयिनः जरइल तप्पायां विस्पीग्राम वास्तव्य सकललोकान् भूकर्षकोथ समादिशान्ति जातमस्तु भवतां ग्रामोयमझामिः सप्रक्रियाभिनव जयदेव महाराज पंडित ठक्कुर श्री विद्यापतिभ्यः शासनीयकृत्य प्रदत्तो**............

इस अभिलेख का शब्द **शासनीयकृत्य प्रदत्तो** से स्पष्ट है, विपसी ग्राम विद्यापति को शासन के लिये दान में मिला था । इनका जन्म स्थान विसपी रहा था, इसका कहीं उल्लेख नहीं है । पंजी पुस्तिका में विद्यापति के कुल का प्रारम्भ **कर्मादित्य त्रिपाठी** से हुआ है । जिनका मूलग्राम था **विशवार गढ़** और गोत्र **काश्यप** । इस विशवार गढ़ के स्थान पर विद्वान अब **विसपी गढ़** लिखने लगे हैं, जो गलत है । विशवार गढ़ कहाँ रहा था, अभी इसकी जानकारी नहीं है । इस स्थान का नाम बदल चुका है ।

कर्मादित्य त्रिपाठी आगे चलकर कर्मादित्य ठाकुर के नाम से प्रसिद्ध हुए । राज सेवा में इनका योगदान उल्लेखनीय रहा था । यह परिवार कर्णाटशासन के समय से ही राजसेवा में संलग्न था । त्रिपाठी कर्मादित्य ठाकुर की पाँचवें पीढ़ी में हुए थे **गणपति ठाकुर** । कर्मादित्य ठाकुर से लेकर विद्यापति ठाकुर तक वंशावली क्रमशः है, कर्मादित्य ठाकुर, देवादित्य ठाकुर, धीरेश्वर ठाकुर, जयदत्त ठाकुर और गणपति ठाकुर । राजपंडित महामहोपाध्याय विद्यापति ठाकुर गणपति ठाकुर के पुत्र थे । ग्राम विसपी दान में मिलने के बाद यह परिवार **विशैवार विसपी मूल** का कहाने लगा था ।

जन्मस्थान की खोज का अन्त अभी नहीं हुआ है ।

जनश्रुति के आधार पर **गजरथपुर शिवेसिंहपुर** को माना जात है । यह ग्राम इस समय लहेरियासराय से 5 कि० मी० दक्षिण है । शिवसिंह की राजधानी के सम्बन्ध में भी मतैक्य नहीं है । शिवसिंह के पिता थे देवसिंह । इनकी राजधानी बागमती नदी के तटपर गजरथपुर रहा था । बाद में शिवसिंह अपनी राजधानी यहाँ से हटाकर कहीं दूसरी जगह ले गये, जनश्रुति यही है ।

विद्यापति का कार्यकाल 1374 ई० से 1436 ई० माना जाता है । महाकवि विद्यापति को अधिकांश लोग कवि और गीतकार, के रूप में इनके द्वारा रचित और प्रचारित विद्यापति पदावली के कारण जानते हैं । लेकिन इन्हों ने 17 या 18 पुस्तकों की रचना की थी जो विभिन्न विषयों की हैं । विद्यापति गीतकार, कवि, कथाकार, नाटकार, इतिहासकार, भूगोल विद, राजनीतिज्ञ, कर्मकाण्डी, ज्योतिषी आदि—आदि रहे थे । आधुनिक मैथिली भाषा का तो इन्हें जन्मदाता ही माना जाता है । इनकी लिखी पुस्तकें हैं –

1. **मणिमंजरी**
2. **गोरक्ष विजय**
3. **कीर्त्तिलता**
4. **कीर्त्तिपताका**
5. **शैव सर्वस्वसार**
6. **विभागसार**
7. **वर्षकृत्य**
8. **गयापत्तलक**
9. **दानवाक्यावली**
10. **गंगावाक्यावली**
11. **दुर्गाभक्ति तरंगणी**
12. **लिखनावली**
13. **श्रीमद्भागवत**
14. **पुरूष परीक्षा**
15. **भूपरिक्रमा**
16. **ज्योतिष दर्पण**

आदि—आदि

विद्यापति की विद्वत्ता के ज्ञान के लिये मात्र तीन पुस्तकें – लिख्नावली, पुरुष परिक्षा और भूप्ररिक्रमा का अध्ययन ही पर्याप्त हैं । इन पुस्तकों में विविध विषयों का ज्ञान, गागर में सागर की तरह संकलित हैं । इन्हें इतिहास और भूगोल का ज्ञान कितना था, यह जानना चाहें तो **भूपरिक्रमा** पढ़ें । आधुनिक इतिहास की नींव भूपरिक्रमा में मिलती है । इस पुस्तक में कई देशों के विवरण हैं । इनमें से **जनकदेश विवरणम्** विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

मिथिला के कई ऐतिहासिक और धार्मिक स्थानों के विवरण इस लेख में हैं । इनके ऐतिहासिक और भौगोलिक विवरण के आगे आज का इतिहासकार भी चकित है । जबकि यह विवरण 700 वर्ष पुराना है । मेरा अनुमान है, विद्यापति के जन्मस्थान और कार्यक्षेत्र के लिये भूपरिक्रमा के विवरण को खोज का विषय बनाया जा सकता है । इस पुस्तक में विद्यापति ने जिन स्थानों का उल्लेख किया है, वे स्थान उनके निकट से देखे हुए थे और यह तभी सम्भव है, जब कोई व्यक्ति ऐसे स्थान में लम्बे अवधि तक रहा हो । इसमें ध्यान देने की बात है शीर्षक और उल्लखित स्थान । जनक देश शीर्षक होते हुए भी मध्य मिथिला के उत्तर से दक्षिण तक के कुछ स्थानों का विवरण ही इस लेख में क्यों हैं ? विद्यापति उन्हीं विषयों को चुनते थे, जिनका विशदज्ञान इन्हें प्राप्त होता था । इस लेख में भी यही हुआ है और यह इसलिये हुआ हैं, क्योंकि ये स्थान इनका देखा हुआ था ।

देश–विदेश के कई विद्वानों का मानना हैं, 'भारतीयों में कभी इतिहास लेखन की रुचि नहीं रही थी । इस तरह के लोगों के लिये भूपरिक्रमा एक **तमाचा** है । इतिहास लेखन के क्रम में आधुनिक विद्वान किसी भी स्थान के दिग्दर्शन (लोकेशन) के लिये किसी प्रमुख स्थान से दिशा और दूरी की शैली व्यवहार में लातें हैं । कई लोग तो इसका भी पालन नहीं कर पाते हैं । भूपरिक्रमा में इस शैली का उपयोग एक दक्ष अमीन की तरह हुआ है ।यथा–

जनक की राजधानी

जनकपुर दक्षिणांशे सप्तयोजन व्यतिक्रमे ।
डिजगल महाग्रामे गेहास्तु जनकस्य च ।।
जनकपुरो दक्षिणे च पञ्चक्रोश व्यतिक्रमे ।
विशोरो हि महाग्रामे बहिः स्थितः ।।

डिजगल महाग्रामे गेहास्तु जनकस्य च ।
यमुना सरितां सदा बहति वेगगा ।।

डिजगलदक्षिणे भागे योजनार्द्ध व्यतिक्रमे ।
गिरिजा संज्ञको ग्रामो विश्रुतो देशवासिभिः ।।
प्राचीन मंदिरं तत्र पुष्करणी द्वयान्तरे ।

गौतमकुण्ड और अहल्या स्थान

गिरिजा दक्षिणे भागे पञ्चक्रोश व्यतिक्रमे ।।
आहारी ग्रामो महाग्रामो गौतमकुण्डस्य सन्निधौ ।
अहल्यावटश्च पूजितः ह्रस्वा नदीषु विश्रुता ।
कमलानदी नातिदूरे चाहारीपत्तनस्य च ।।

भूपरिक्रमा, जनकदेश विवरणम्

जनक की राजधानी, गिरिजा स्थान, गौतमकुण्ड और अहल्यास्थन के दिगदर्शन के लिये दो दिशा, दूरी और भौगोलिक परिदृश्य भी उपस्थित किये गये है । ताकि पहचान में कोई गलती नहीं हो सके । इसी तरह और भी कई स्थानों और तीर्थों स्थानों की चर्चा हुई हैं, वे सभी जनकपुर से लेकर जनक की राजधानी डिजगल महाग्राम के 12 कोस दक्षिण तक हैं । अर्थात् मध्य मिथिला के उत्तर से लेकर 40 कोस दक्षिण तक है । विद्यापति के समय तक कपिलेश्वर स्थान, विदेश्वर स्थान आदि प्रकाश में नहीं आया था । आज का प्रसिद्ध सिंहेश्वर स्थान की चर्चा नहीं है । विद्यापति का जन्मस्थान और कार्यक्षेत्र इसी 40 कोस के अन्तर्गत रहा था । यह लक्ष्य ही विद्यापति की जन्मस्थली खोजने में सहायक सिद्ध हो सकता है ।

कर्णाटशासन काल से ही विद्यापति का कुल इस शासन में उच्च पदों पर आसीन रहा था । कर्मादित्य ठाकुर का कार्यकाल था **रामसिंहदेव** का कार्यकाल । राजा रामसिंह देव के समय कर्मादित्य ठाकुर इनके मंत्री थे । हाबीडीह शिलाभिलेख है–

"अब्दे नेत्र शशांकपक्ष (212) गणिते श्री लक्ष्मणक्ष्मापतेर्मासि श्रावण संज्ञके मुनितिथौ स्वात्यां गुरौ शोभने । हावीप (त्त) ट्टन संज्ञके सुविदिते हैहट्टदेवीशिवा कर्मादित्य सुमन्त्रिणेह विहिता सौभाग्यदेव्याज्ञया "।।

इस शिला लेख के अनुसार लक्ष्मण संवत् 212, श्रावण मास, शुक्लपक्ष, श्वातीनक्षत्रयुक्त वृहस्पति दिन और सप्तमी मिथि को रानी **सौभाग्यवती देवी** के आज्ञा से मन्त्री कर्मादित्य ने पार्वती (हैहट्टदेवी) की स्थापना हावीपट्टन में की । रानी सौभाग्यवती देवी (सुहब देवी) राजा रामसिंहदेव की पत्नी थीं ।

मुसलमानी आक्रमण के कारण कर्णाटशासन का पतन राजा हरिसिंहदेव के समय हुआ था। कुछ समय बाद मिथिला का शासन **करद** रूप में पंडित कामेश्वर ठाकुर को मिला । पंडित कामेश्वर ठाकुर का वंश आगे चलकर **ओइनवारवंश** के नाम से प्रसिद्ध हुआ । महाकवि विद्यापति इसी वंश के प्रसिद्ध राजा **शिवसिंह** के मन्त्री और राजपंडित थे । मात्र शिवसिंह ही नहीं, शिवसिंह के पिता **देवसिंह** से लेकर शिवसिंह की पत्नी **लखिमा देवी** के राज्यकाल तक विद्यापति इस कुल के सेवक और सखा दोनों ही रहे थे । विद्यापति का निधन गंगातट पर 1436 ई० में हुआ था, ऐसा ही अनुमान किया जाता है । इनके जन्म और मृत्यु के सम्बन्ध में जो अभिलेख उपलब्ध है, वह है–

विद्यापतिक आयु अवसान ।
कार्तिक धवल त्रयोदशि जान ।।

विद्यापति शिव के अनन्य भक्त थे । इन्हें अपने मृत्युकाल का ज्ञान था । जब वह समय आया, ये गंगा के शरण में चल पड़े । समस्तीपुर जिला के **वाजितपुर** पहुँच कर गंगा किनारे इनका निधन हुआ था । अभी इनके स्मरण में यहाँ विद्यापति रेलवे स्टेशन है ।

विसपी, जिसे इस समय विद्यापति का जन्म स्थान माना जाता है, मधुबनी जिला का यह एक प्रखण्ड मुख्यालय है । यहाँ आबादी के मध्य एक एकड़ ऊँचे भूभाग को चहारदिवारी से घेर कर उत्तर की ओर विद्यापति

स्मारक, दक्षिण ओर एक चबुतरा पर विद्यापति की मूर्त्ति और पश्चिम ओर एक सांस्कृतिक मंच बना है । बिसपी के निकट से ही एक प्राचीन नदी बहती है । दरभंगा–जयनगर मुख्य पथ पर दरभंगा जिला का एक प्रखण्ड मुख्यालय है केवटी । यहाँ से विसपी करीब 10 कि० मी० पश्चिम दिशा में है । यहाँ तक पहुँचने के लिए इस मुख्य पथ से ही एक अन्य पक्की सड़क निकल कर विसपी तक जाती है । केवटी से करीब दो कि० मी० उत्तर दरभंगा–जयनगर मुख्य पथ पर बाँयी ओर संकेत के लिये एक विशाल द्वार भी सम्पर्क पथ पर बना है ।

विसपी दानपत्र
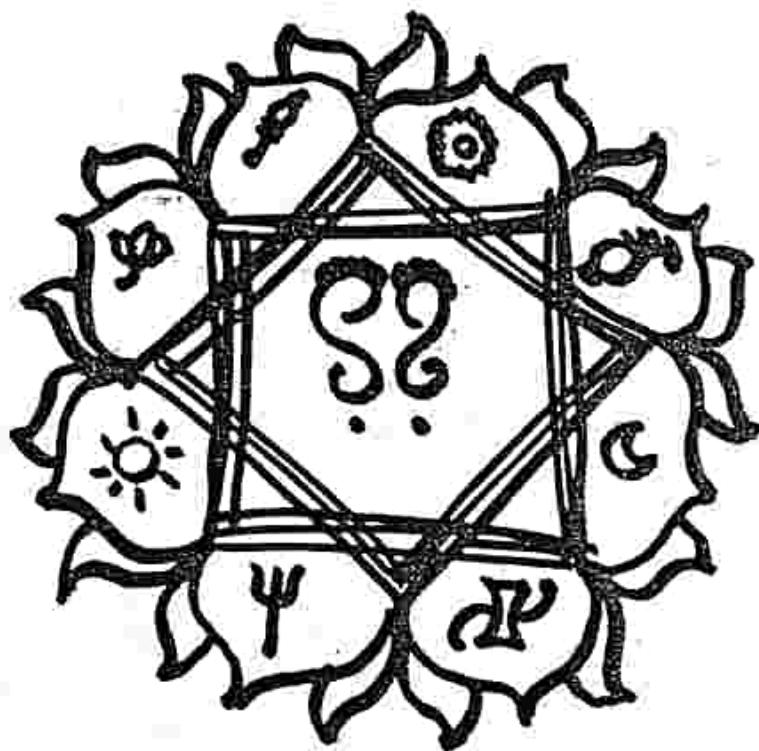
सौजन्य : चन्द्रधारी संग्रहालय, दरभंगा

विद्यापति, दरभंगा

विद्यापति, बिसफी
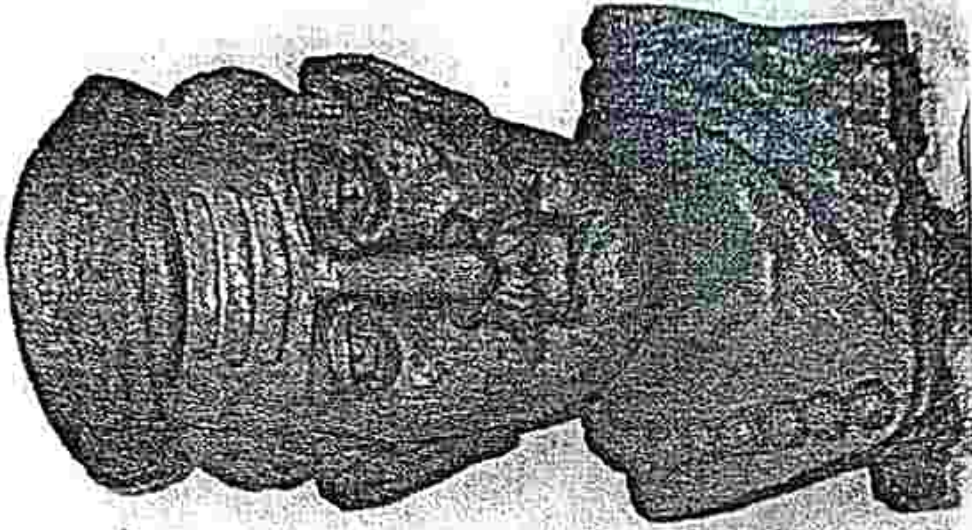
284. महाकवि विद्यापति
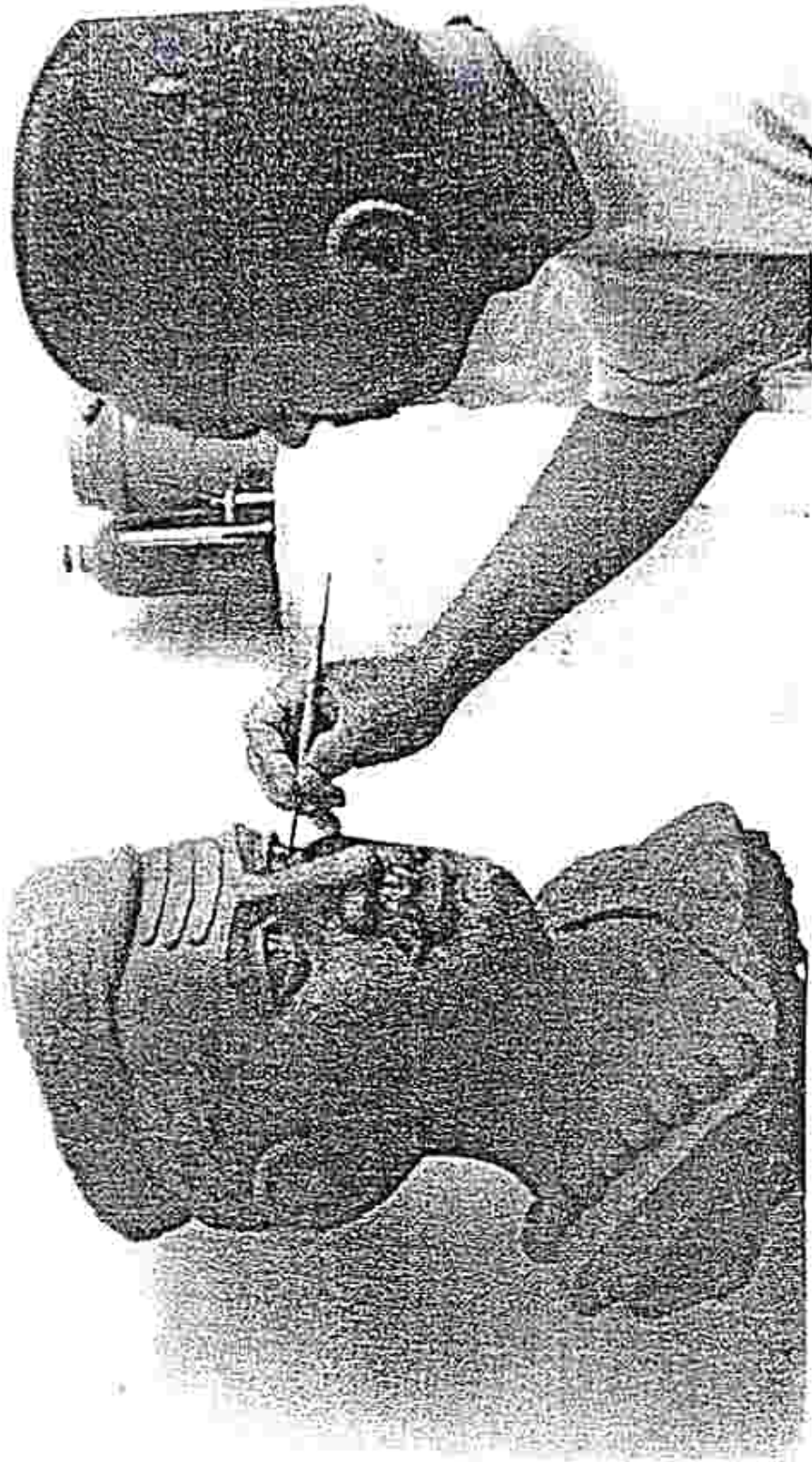
285. मूर्त्ति निर्माण, मूर्त्तिकार राजेश
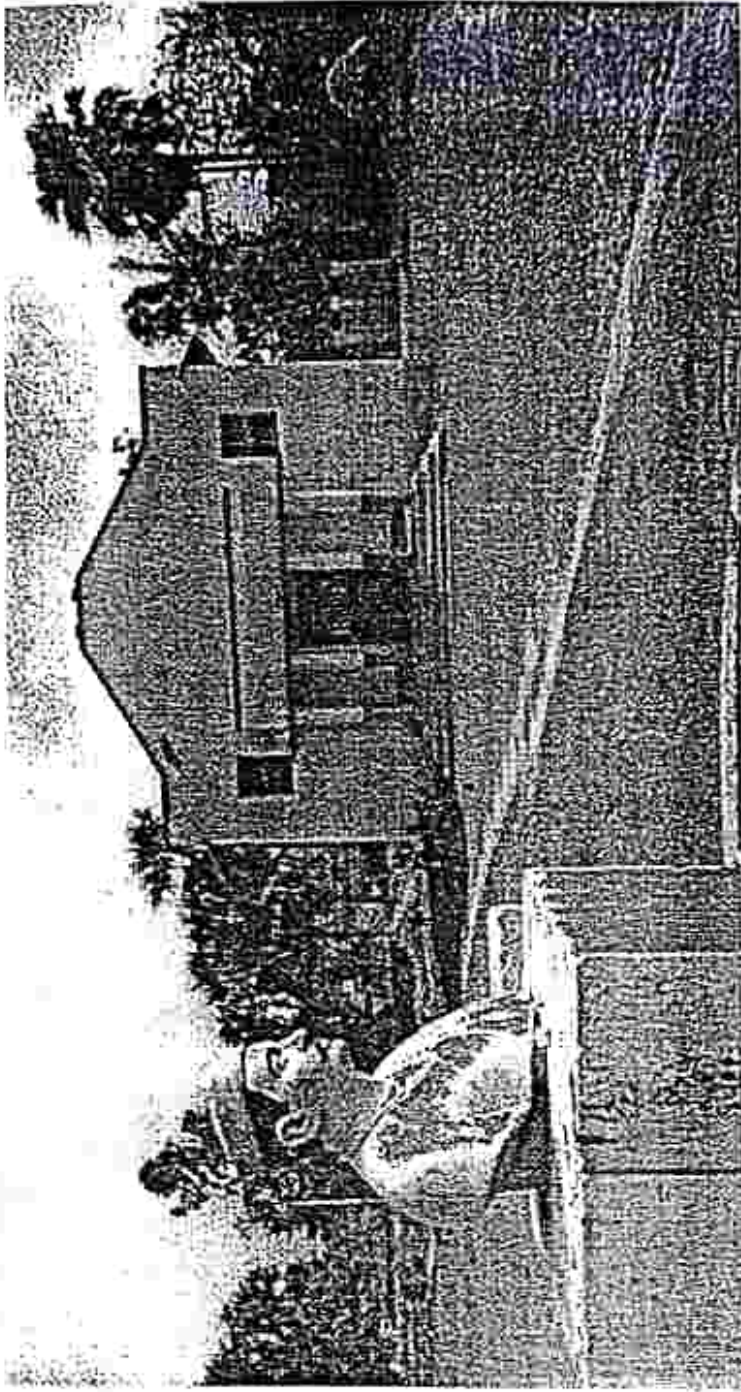
286. विद्यापति स्मारक, बिसपी

कपिलेश्वर स्थान

दरभंगा जिला मुख्यालय से उत्तर करीब 32 कि० मी० दूर केवटी–रहिका मुख्य पथ पर केवटी से उत्तर और रहिका से दक्षिण एक धार्मिक स्थान है **कपिलेश्वर स्थान** । जनश्रुति के अनुसार यहाँ का शिवलिंग प्रसिद्ध विद्वान कपिल मुनि द्वारा स्थापित और प्राचीन है । मिथिलाके प्राचीन और अति प्रसिद्ध धार्मिक स्थानों, उच्चैठ, कुशेश्वर स्थान, सिंहेश्वर स्थान, विदेश्वर स्थान, उग्रतारा स्थान आदि की श्रेणी में ही कपिलेश्वर स्थान का भी महत्त्व है । यहाँ विशेष शिवपूजा के अवसरों की तो बात ही कुछ और है, प्रत्येक रविवार को विशेष रूप से पूजा–अर्चना होती है । इस अवसर पर दूर–दूर से लोग यहाँ पहुँचते हैं और मेला जैसा दृश्य रहता है ।

शिवमंदिर परिसर में मुख्य मंदिर के अतिरिक्त और भी कई छोटे–छोटे मंदिर हैं । अंगभंग कई प्राचीन मूर्त्तियाँ, एक प्रतीकात्मक वराह मूर्त्ति, गणेश मूर्त्ति एक, एक विष्णु मूर्त्ति, नन्दी और शिवलिंग प्राचीन हैं । इसके अतिरिक्त दो पार्वती की भी नवीन मूर्त्तियाँ हैं । यहाँ का दो मुख्य मंदिर, शिवमंदिर और पार्वती मंदिर, दरभंगा महाराजा माधवसिंह द्वारा बनबाया गया था । शिव मंदिर पश्चिम रुख का और पार्वती मंदिर पूरब रुख का है । इस परिसर से पश्चिम बाजार और बाजार से पश्चिम एक बहुत बड़ा तालाब है । दो प्राचीन मूर्त्तियाँ, गणेश और विष्णु बुरी तरह क्षतिग्रस्त हैं । कसौटी पाथर की इन मूर्त्तियों का कहना है– "यह स्थान एक लम्बी अवधि तक खण्डहर रहा था । आधुनिक परिदृश्य, नव निर्माण का है ।"

चौदहवीं शताब्दी में कपिलेश्वर स्थान, विदेश्वर स्थान, सिंहेश्वर स्थान, कुशेश्वर स्थान, उग्रतारा स्थान, उच्चैठ आदि भूमिगत रहा था । सोलहवीं शताब्दी के बाद ही ये सभी स्थान प्रकाश में आयें हैं । यदि ये सभी स्थान उस समय प्रकाश में रहे होते तो विद्यापति ने अपनी पुस्तक **भूपरिक्रमा** में इसकी चर्चा की होती । लेकिन ऐसा नहीं है । आठवीं–नवीं शताब्दी में कपिलेश्वर स्थान जाग्रत रहा था, क्योंकि वृहद विष्णुपुराण के **मिथिला महात्म्य** अंश में इसकी चर्चा हुई है । क्षतिग्रस्त उपलब्ध मूर्त्तियाँ पाँचवीं–छठी शताब्दी की लगती हैं । इससे कपिलेश्वर स्थान की प्राचीनता आँकी जा सकती हैं ।
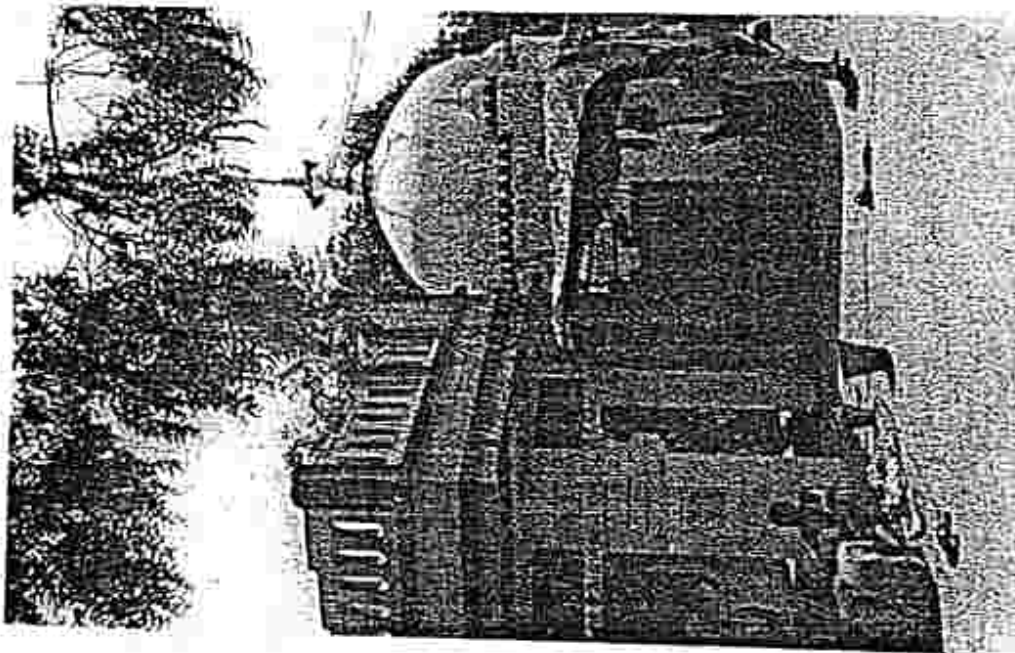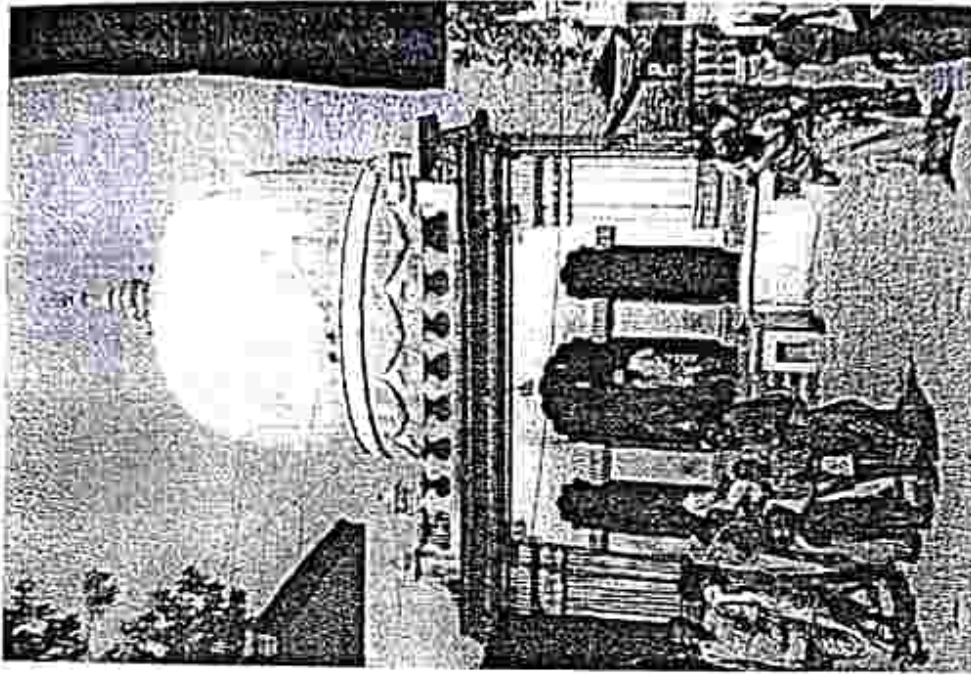
287. शिव–पार्वती मन्दिर, कपिलेश्वरस्थान
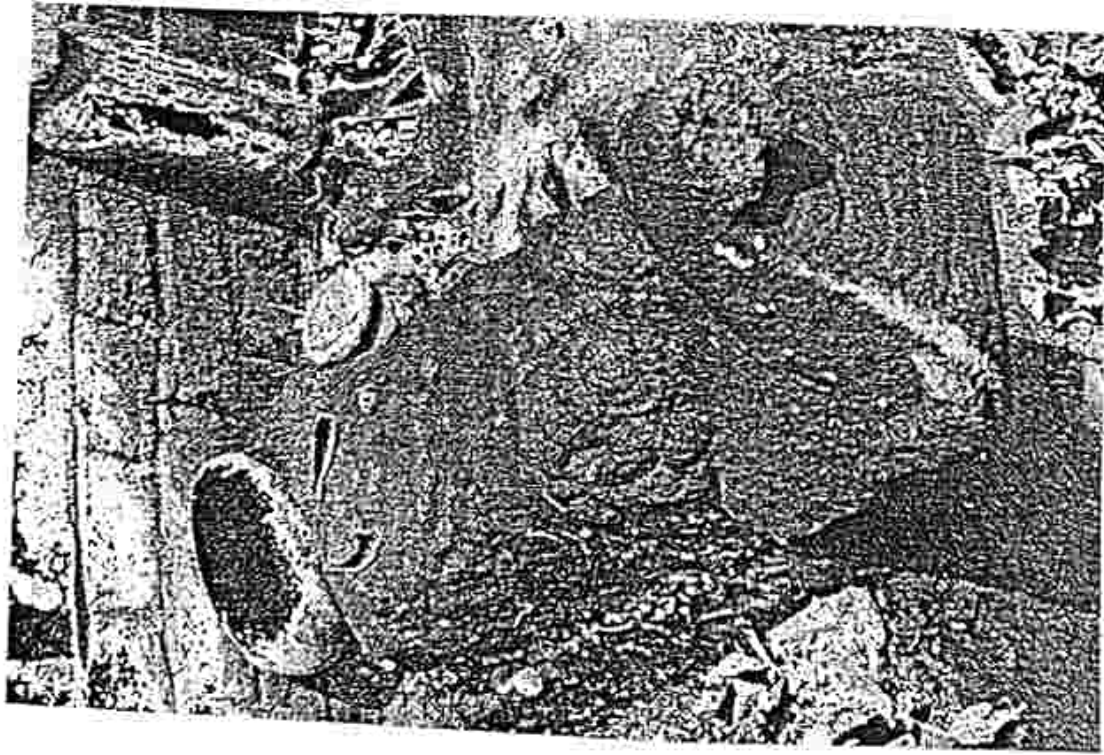
288. गणेश एवं वराह मूर्त्ति, कपिलेश्वरस्थान

289. विष्णु मूर्त्ति, कपिलेश्वरस्थान

ABOUT THE AUTHOR

Birth : December 15, 1939, **Birth Place** : Korth, **Father's Name** : Sarb Narayan Jha, **Block** : Ghanshyampur, **Dist.** : Darbhanga, **Education** : Diploma in Commercial Arts (1963) from Govt. School of Arts & Crafts, Patna, **Service** : Artist cum Photographer, Health Department, Govt. of Bihar

Published Books :

1. PURATATWA KA UPEKSHIT GADH KORTHU
2. PRATIBIMBANKAN (PHOTOGRAPHY)
3. BHAGWAN BHASKAR - Asgaon-Dharmapur
4. PRACHIN PASHAN PRATIMAYEN - Darbhanga Zila
5. PAURANIK KORTH
6. MITHILA KI PAURANIK MURTIKALA (Part - I)
7. MITHILAKSHAR, UDVHAVA AUR VIKAS
8. DARSHNIYA MITHILA (PUSHPA - 1 to 8)
9. ARIPAN

Hobby : Deep interest in Technical Experimentation

Correspondance : E/44, Housing Board Colony
Laheriasarai - 846 001
Darbhanga (Bihar)

Phone : 06272-40114

Vismrit Mithila Prakashan
E/44, Housing Board Colony
Laheriasarai, Darbhanga
(Bihar)